स्व. राजा बहादुर लाला सुखदेवसहायजी, जौहरी

लाला ज्वालाप्रसादजी जौहरी

# आचाराङ्ग सूत्रम्.

## प्रथम श्रुतस्कंध

### शस्त्रपरिज्ञानामक प्रथममध्ययनम्

* प्रथमोद्देशः *

सु० सुना, मे० मैंने आ० आयुष्मान् ते० उन भ० भगवानने ए० ऐसा म० कहा० इ० ॥१॥ इस लोक में ए० कितनेक को णो० नहीं स० समझ भ० होती है, तं० यह ज० यथा पु० पूर्व आ० या दि० दिशा से

सुयं मे आउसं तेणं भगवया एव मक्खायं ॥ १ ॥ इह मेगेसिं णो सण्णा भवइ,

श्री महावीर परमात्मा के पाटवीय गणधर श्री सुधर्मा स्वामी अपने शिष्य श्री जंबुस्वामी से कहते हैं कि अहो आयुष्मान जंबु भगवान के मुखारविन्द सेमैंने सुना है, उन्होंने ऐसा कथन किया था ॥१॥

मा० आया अ०म हूं दा दक्षिन वा० या- दिशा से आ० आया अ० मैं हूं प० पश्चिम वा या दि० दिशा से आ० आया अ० मैं हूं उ० उत्तर वा० या० दि० दिशा से आ० आया अ० मैं हूं उ० ऊंची वा० या दि० दिशा से आ० आया अ० मैं हूं अ० नीची दि० वा० या० दि० दिशा से आ०

तेजहा पुरत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, दाहिणाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, पच्चत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, उत्तराओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, उड्ढाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, अहे दिसाओ वा आगओ अहमंसि, अणयरीओवा दिसाओ अणुदिसाओवा आगओ अहमंसि, एव मेगेसिंणो णाय भवइ

इस जगत के कितनेक जीवों को ऐसा ज्ञान नहीं है कि मैं पूर्व दिशा से, दक्षिण दिशा से, पश्चिम दिशा से, उत्तर दिशा से, ऊंची दिशा से, नीची दिशा से अथवा ईशानादि विदिशा से और * अनुदि

१८ द्रव्यदिशा १ पूर्व, २ दक्षिण, ३ पश्चिम, ४ उत्तर, यह ४ दिशा, ५ ईशान, ६ अग्नि, ७ नैऋत्य, ८ वायव्य यह चार विदिशा, इन आठो की अंतराल ऐसे १६ हुए १७ ऊंची और १८ नीची १८ भावदिशा १ समूर्छिम, २ कर्म भूमि, ३ अकर्मभूमि, ४ अन्तरद्विपा, ये चार मनुष्य के भेद, ५ बेइन्द्रिय ६ तेइन्द्रिय ७ चौरिन्द्रिय ८ पंचेन्द्रिय येचार त्रस तिर्यंच ९ पृथ्वी, १० अप्, ११ तेउ, १२वायु, ये चार सत्व १३अग्रबीज, १४ मूलबीज, १५ स्कन्धबीज १६ पर्वबीज १७ देव और १८ नारकी

# आचारग सूत्र की-प्रस्तावना

प्रणम्य श्रीजिनाधीशं, श्रीगुरूणामनुग्रहात्, लिख्यते सुखबोधार्थं, आचारंगार्थवार्तिकं ।१।
सुतरांशब्दशास्त्रेण येषा बुद्धिरसस्कृता ॥ व्यामोहो जायते तेषा, दुर्गमवृत्तिविस्तरे ॥२॥
ततोवृत्ति समुद्धृत,सुलभा लोक भाषया॥ धर्मस्य परोपकाराय, आचारांगार्थ वार्तिक ॥३॥

अर्थ—सकल इष्टार्थ की सिद्धि के कर्ता श्री जिनेश्वर भगवान् को नमस्कार कर के श्री गुरुदेव महाराज के अनुग्रह से सर्व जीवों को शास्त्र के सूक्ष्म-गहन अर्थ का सुख से बोध हो इसलिये इस आचारांग शास्त्र की वार्तिका अर्थात् भाषान्तर-हिन्दी अनुवाद करता हूं ॥ १ ॥ मूल सूत्र तो मागधी भाषा में है और उस का विस्तृत अर्थ बताने के लिये कितने आचार्यों ने इस का संस्कृत भाषा में भी अनुवाद किया है इस समय उक्त दोनों भाषा का ज्ञान बहुत अल्प मनों को रहगया है जिस से वह भी अर्थ दुरभिगम होगया है तत्पश्चात् कितनेक आचार्यों ने आचारग का गुर्जर भाषा में भी अनुवाद किया है परंतु गुर्जर भाषा एक देशी होने से सब देश में सर्व लोगों को इस का बोध होना असंभवित है परंतु हिन्दी के प्रायः सब देश में माननीय समझ में आवे ऐसी हिन्दी भाषा होने से हिन्दी अनुवाद की आवश्यक्ता मान उस पूर्वाचार्यों कृत वृत्ती से समुद्धृत कर सब लोगों को सुलभता से

रा र इ ने न र र तकारिन न द्वे ने प आगा नि सूत्र रा हिन्दी मनाद् किया है ॥ २ ॥ श्री जिनेश्वर भगवान् ने अनादि निधि द्वादशांग में जिनवाणी का कथन किया है जिस में सब से मान्य पना इस आचारांग शास्त्र का है यत' अंगाणाय किं सारो ? आयारो, तस्स किं हवइ सारो ? अणुउग स्सो सार तस्सविय परूवणासार, सारं पण्णवणाए चरणं, तस्सविहोइ निव्वाण, निव्वाणस्सय सार अव्वावाहं जिणाविंति प्रश्न—सर्व अंगमें सारभूत अंग कौनसा है ? उत्तर—आचारांग, प्रश्न आचारांग सार भूत क्यों है ? उत्तर जिस में करणानुयोग का कथन किया है इस लिये सबसे प्रथम करणानुयोग—क्रिया—आचार का प्रतिपादन करना यही उत्तम है क्यों कि आचार जैसा विचार होता है शुद्धचार से विचार की भी शुद्धि होती है आचार और विचार दोनों की शुद्धि होने से कर्मोंका क्षय होता है और कर्म क्षय होने स निर्वाण (मोक्ष) पद् की प्राप्ति होती है निर्वाण की प्राप्ति होने से निराबाध निर्विकल्प सुख की प्राप्ति होती है इस लिये निराबाध सुखेच्छु जीवों को अपने आचार का सुधारा करने की परमावश्यकता जान इस आचारांग शास्त्र को द्वादशांगी में प्रथम पद दिया है इस आचारांग शास्त्र के दो श्रुतस्कंध हैं—जिस में से प्रथम श्रुतस्कंध में आभ्यन्तर (अन्तःकरण) की शुद्धि करने षट्काय जीवों का आदि आत्मतत्त्व का विवेचन नव अध्ययन में किया है और दूसरे श्रुतस्कंध में बाह्यक्रिया का सुधारा करने पिंडविशुद्धि आदि का १६ अध्ययन में कथन किया है दोनों श्रुतस्कंध के २५ अध्ययन हैं आंतरिक शुद्धि और बाह्यशुद्धिका तादृश स्वरूप दर्शाने दोनों

आया अ० मैं हूं अ० दूसरी वा० वा दि० दिशा से अ० अनुदिशासे आ० आया अ० मैं हूं ए०एसे ए० कितनेक को णो० नहीं णा० ज्ञान भ० होता है अ० है मे० मेरा आ० आत्मा उ० उत्पन्न होने वाला ण० नहीं मे० मेरा आ० आत्मा उ० उत्पन्न होनेवाला के० कोन अ० मैं अ० था इ० यहां से चु० मरकरके इ० इस संसारमें पे० परभव में भ० होवूंगा २ से० अब जं० जो पु० और जा० जाने स० स्वमति करके प० जिनोपदेशसे अ० दूसरे के अं० समीपे वा० या सो० श्रवण करके तं० वह इस प्रकार पु० पूर्व वा० या दि० दिशा से आ० आया अ० मैं हूं जा० यावत् अ० दूसरी वा० या० दि०

अत्थि मे आया उववाइए णत्थि मे आया उववाइए, के अहंआसि ! के वा इओ चुओ इह पेच्चा भविस्सामि? २ से ज पुण जाणेज्जा सहसम्मइयाए परवागरणेण अण्णेसिं अंतिए वा सोच्चा तं जहा-पुरत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि जाव अण्णयरिओ वा दिसाओ अणुदिसाओ वा आगओ अहमंसि । एव मेगेसिं णो

शा से आया हूं एसेही कितनेक जीवों को एसा भी ज्ञान नहीं है कि मेरा आत्मा उत्पन्न होता है या नहीं, मैं कोन था और यहां से मृत्यु के पिछे परभव में क्या होवेंगा २ पूर्वोक्तजीव स्वयं जातिस्मरण ज्ञान से, तीर्थंकर व केवली के कहने से, या दूसरे किसी के पास से श्रवण कर जान सकते हैं कि-मैं पूर्व दिशासे यावत् विदिशासे आयाहूं एसे ही कितनेक को एसा भी ज्ञान नहीं होता है कि-मेरा आत्मा पुनर्जन्म को प्राप्त

दिशाम अ० अनदिशा मे या० या० आ० आया अ० मैं हूं ए० ऐसे ए० कितनेक को णो० ज्ञान म० होता है अ० है म० मेरा आ० आत्मा उ० उत्पन्न होनेवाला जो० जो इ० इस दि० दिशा से अ० विदिशा म वा० या अ० जाता है म० सर्व दि० दिशा से अ० विदिशा से जो० जो आ० आया अ० फिरता है सो० मैं हूं ॥३॥ मे उन को भा आत्मवादी, लो लोकवादी क कर्म्मवादी कि क्रियावादी॥४॥ अ किया च० समुच्चया। अ मने का० कराया प समुच्चयार्थ म मैनेक करनेवाले को स० अच्छा भ०जाना ए०इतन ही

णाय भवइ अत्थि मे आया उववाइए जो इमाओ दिसाओ अणुदिसाओ वा अणुसं
चरइ सव्वाओ दिसाओ सव्वाओ अणुदिसाओ जो आगओ अणुसंचरइ सोहं३ से आया
वादी, लोगावादी कम्मावादी किरियावादी,४ अकरिस्सं चहं, कारवेस्सं चहं, करओया
वि समणुन्ने भविस्सामि एयावंति सव्वावंति लोगंसि कम्मसमारंभा परिजाणियव्वा

होनेवाला है कि जो आत्मा उस दिशा से या विदिशा से आया है जो दिशा में विदिशा से या सब दिशा से आया हुवा है वह मैं हूं ॥३॥ उक्त कथनानुसार जो जाननेवाले होते हैं उन कों ही आत्मवादी कर्म्मवादी और क्रियावादी कहते हैं ॥४॥मैने किया मैने कराया और करने वालेको भलाजाना, मैं करताहुं मैं कराताहूं और करने वालेको अच्छा जानताहूं मैं करूंगा, मैं कराउंगा, और करने वालेको अच्छा जानुंगा इनका मन वचन कायासे तिगुने करनेमे सबभेद २७ हुवे येह कर्म बांधनेके कारण भूत क्रियाओंके भेद जानना

स० सर्व लो०लोकमें क० कर्म बांधने के स्थान प०जानने योग्य भ०होते हैं॥८॥अ० नहीं जानने वाला क० कर्म्मोंको ख० निश्चय अ० यह पु० पुरुष जो० जो इ० इस दि० दिशामें अ० विदिशामें या० या भ भ्रमण करते हैं स० सर्व दि० दिशामें स० सर्व अ० विदिशा में सा० फिरते हैं अ० अनेक रु० प्रकारकी जो० योनियों में स० जाते हैं वि० तरह २ के फा० स्पर्श प० भोगवते हैं॥६॥त० तहां ख० निश्चय भ० भगवानने प परिज्ञा शुद्ध समझ प०करी ७ इ०इस० चे० निश्चय जी जीवितव्य केलिये०प वन्दनार्थ मा० मानार्थ पू० पूजार्थ ना० जन्म म० मृत्यु मो० मोचनार्थ दु० दुःखप्रतिघातार्थ ८ ए०इतने सं०

भवति ॥५॥ अपरिण्णायकम्मा खलु अयं पुरिसे जो इमाओ दिसाओ अणुदिसाओ वा अणुसंचरइ, सव्वाओ दिसाओ सव्वाओ अणुदिसाओ साहेति, अणेगरूवाओ जोणिओ संधेइ, विरूवरूवे फासे पडिसंवेदेइ॥६॥तत्थखलु भगवया परिण्णा पवेइया,७ इमस्सचेव जीवियस्स परिवंदण माणण पूयणाए, जाइमरण मोयणाए, दुक्खपडिघायहेउ,८एयावंति

उपर्युक्त क्रियाको नहीं जानने वाला पुरुष सर्वदिशा विदिशामें परिभ्रमण करता हुआ अनेक योनियोमें उत्पन्न होता है और अनेक प्रकारके दुःखों को अनुभवता है६ उनक्रियाओंके विषय में भगवानने शुद्ध समज(ज्ञप रिज्ञा और प्रत्याख्यान परिज्ञा ) करी है ७ निश्चयही इस अनित्य जीवितव्यकेलिये, प्रशंसाकेलिये, पूजा अर्थात् वस्त्र पात्रादिककेलिये जन्म मरणसे मुक्त होने केलिये और दुःखों को दूर करने केलिये उपर्युक्त

मर्व लो० लोकमें क० कर्मोपार्जन करने के स्थान प० जानने योग्य भ० होते हैं ज० जिसको० ए० ये लो० लोकमें क० कर्म्मसमारंभ प० जाने हुवे भ० होते हैं से० वे हु० निश्चय मु० साधु प० शुद्ध संयमी इ० एसा बे० कहताहुं

सव्वावत्ति लोगसि कम्मसमारंभा परिजाणियव्वाभवंति जस्सेते लोगसि कम्म समारंभा परिण्णाया भवति सेहु मुणी परिण्णायकम्मेत्ति बेमि, ॥१॥

※ इति सत्य परिण्णाअध्ययणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो ※

क्रियाओं में प्रवर्तते हैं ८ पूर्वोक्त इतने सब कर्म्मो पार्जन करनेके स्थान जानने योग्य होते हैं सर्वज्ञ परमात्माने फरमाया है कि जिनोंने पूर्वोक्त क्रियाके भेदोंको ज्ञान प्रज्ञासे जाने हैं और प्रत्याख्यान परिज्ञासे त्यागे हैं वेही शुद्ध संयमी मुनि हैं एसा मैंने श्रीमहावीर परमात्माके मुखारविंदसे श्रवण कियाहै और वैसाही तेरेप्रति कहताहुं

यह शस्त्र परिज्ञा नामक प्रथम अध्ययनका प्रथम उद्देशा समाप्त हुआ. इस उद्देशामें जीवका अस्तित्व दर्शाया; अब जीवोंके रक्षण केलिये जीव की कायाका पृथक् २ स्वरूप बताते हैं—

(द्वितीयउद्देश)

भ० आर्तध्यान्त लो० लोक प० ज्ञान रहित दु० दुर्लभबोधी अ० विशिष्ट ज्ञान रहित अ० इस लो०

अट्टे लोए परिजुण्णे दुस्संबोहे अविजाणए, अस्सिं लोए पव्वहए तत्थ तत्थ पुढोपास

लोकमें प पचते हैं त वहां २ पु पृथक २ पास देखो, आ आतुर प० दु ख देते हैं ॥ १ ॥ सं० है पा प्राणी पु पृथिव्याश्रित ल लज्जा पाते पु अलग २ पा देखो ॥ २ ॥ अ साधु मो हम हैं इ ऐसा प कितनेक प कहतेहुवे ज परंतु वि अनेक तरहके स० शस्त्र से पु० पृथ्वीकायिकजीव क० कर्म्म स० आरंभ से पु० पृथ्वीका स० शस्त्र से स आरंभ करतेहुवे अ० अन्य, अ० अनेक प्रकारके पा० प्राणी की विहिं हिंसा करते हैं ॥ ३ ॥ त० तहां स० निश्चय भ० भगवानने प० शुद्ध समज प०

आतुरा परितावेति ॥ १ ॥ संतिपाणा पुढोसिया लज्जमाणा पुढो पास॥ २ ॥ अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं पुढविकम्मसमारंभेणं पुढवीसत्थ समारंभमाणा अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ३ ॥ तत्थखलु भगवया परिण्णा

इस जगत में जीव इष्टका वियोग अनिष्टका संयोग रूप आर्त ध्यान ध्याते विषय कषायरूप अग्निमें पचते सर्व प्रकारसे शक्तिहीन बने अजान होरहे हैं कि जिनोंको समझाना बहुत कठिन होगया है वे बिचारे गरिब पृथ्वीकायके जीवोंका आतुर होकर के परिताप उपजारहे हैं ॥ १ ॥ ( पृथ्वीकायाधिकार ) एक राइजितनी पृथ्वीके खण्डमें जीवोंके असंख्यात अलग २ शरीर रहे हैं उसमें पृथक् २ असंख्यात जीवों का निवासस्थान जानकर ज्ञानी जन उनकी हिंसा करते हुवे लज्जित होते हैं ॥ २ ॥ इस जगत में कितनेक बौद्ध मतादिक के भिक्षुक कहते हैं कि हम साधु हैं परन्तु पृथ्वीकायिक जीवों की अनेक तरह के

कही । इम म ममुष्यपाश्वामी जी० जीवितव्यके लिये प वंदनार्थ मा० मानार्थ पू० पूजार्थ जा० म न्ममरणस मा छुटन के लिये दु०दुःख मतिघातार्थ से वे स स्वयमेव पु०पृथ्वी का स०शस्त्र से स० आरंभ करता है अ० दुमरे पास पु० पृथ्वीका स० शस्त्र से स० आरंभ कराताहै अ० दुसरे को सा०पा पु० पृथ्वी का म० शस्त्र से आरंभ करते को स० अच्छा जानताहै त उसे से० वह अ० अहितकता तं० उसे से० वह अ अबोधकर्ता ॥ ४ ॥ से अप तं उसे सं० जानतेहुए आ० आदरने योग्य स० सावधानपने

फ्वेइया । इमस्सचेव जीवियस्स परिवंदण माणण पूयणाए जाइमरण मोयणाए दुक्खप डिघायहेउं से सयमेव पुढविसत्थ समारंभइ अण्णेहिं वा पुढविसत्थं समारभावेइ अण्णेहिं वा पुढविसत्थ समारंभते समणुजाणइ। तं से अहियाए तं से अबोहिए ॥४॥

शस्त्रों से हिंसा करते हुवे पृथ्वीके आश्रय से रहे हुवे अन्य अनेक प्रकार के त्रस स्थावर जीवोंको भी मारते हैं, इसलिये जो वे साधु का नाम धराते हैं वह मिथ्या है ॥ ३ ॥ श्री श्रमण भगवतने फरमायाकि जो आ युष्यका निर्वाह करने केलिये, वंदना गुणानुवाद केलिये, सत्कार सन्मान केलिये, जन्म मरणसे मुक्तहोने केलिये, ( धर्मार्थ ) शारीरिक दुःख का निवारण करने केलिये, स्वयमेव पृथ्वीकायिक जीवकी हिंसा क रता है दूसरे के पास कराता है, और हिंसा करते को अच्छा मानता है, उसको इस हिंसाके फल अहित दुःख के देनेवाले और बोधबीज ( सम्यक्त्व ) के नाश करने वाले होवेंगे ॥ ४ ॥ वैज्ञानिक तीर्थंकरादि

सो॰ सुन करके स॰ निश्चयार्थ भगवानके अ॰ साधु के अं समीप इ॰ यहां ए कितनेक को णा॰ ज्ञान भ होता है ए यह स॰ निश्चय गं॰ ग्रन्थी ए॰ यह स॰ निश्चय मो मोह ए यह स निश्चय मृत्यु एस॰ यह स॰ निश्चय णि॰ नरक इ ऐसा होतेहुए भी ग॰ गृद्धि लो लोक, जं॰ जो वि विविध प्रकारके स॰ शस्त्र से पु॰ पृथ्वी का क॰ कर्मारंभ से पु॰ पृथ्वी का स शस्त्र से स॰ आरंभ करते हुए अ अन्य अ॰ अनेक प्रकार के पा॰ प्राणी वि॰ मारते हैं ॥ ५ ॥ से॰अथ॰ बे॰मैं कहता हुं अ॰ अपि

से त सबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाए सोच्चाखलु भगवओ अणगाराणं वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवति - एसखलु गंथे, एसखलु मोहे, एसखलु मारे, एसखलुणिरए, इ-च्चत्थं गढिएलोए, जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं पुढवीकम्म समारंभेणं पुढवीसत्थं समारं-भमाणे अण्णे अणेगरूवेपाणे विहिंसइ ॥ ५ ॥ से बेमि - अप्पेगे अंध मब्भे अप्पेगे-

महात्माओं का सद्बोध श्रवण कर आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादिक हैं उनको अङ्गीकार करते हैं, वे समझ ते हैं कि पृथ्वी कायाका आरंभ निश्चय से ज्ञानावरणीयादि अष्ट कर्म्मबंधका कारण है, मोहका कारण है, मृत्यु का कारण है, तथा नरक का कारण है ऐसा होते हुवे भी अपने कार्योंमें गृद्धहो कर के मनुष्य अनेक प्र कारके शस्त्रोंसे पृथ्वी तथा पृथ्वीके आश्रित अनेक त्रसस्थावर जीवों की हिंसा करते हैं ॥ ५ ॥ श्री जम्बु

संभावनायां ष० कितनेक भे० अपको अ० भदे अ संभावनायां ५ कितनेक अ० भपधे ` छेदे (ऐसे सर्व स्थान) पा पाद भेदे प पाद छेदे, गु गुल्फ जं० जंघा जा ढींचण उ०साथल, क कम्मर, णा नाभी, उ पट, पा० पसली, पि० पृष्ट उ छाति, हि हृदय, थ० स्तन , खं०स्कन्ध, बा० भुजा, ह हस्त, अ अंगुली ण० नख, गी० ग्रीवा, ह दाढी, हो० ओष्ट दं० दांत जि० जिव्हा, ता० तालु, ग० गाल,

अधमच्छे अप्पेगे पायमब्भे अप्पेगे पायमच्छे, अप्पेगे गुंफमब्भे२ * अप्पेगे जंघमब्भ२

अप्पेगे जाणुमब्भे २, अप्पेगे उरुमब्भे२, अप्पेगे कडिमब्भे २ अप्पेगे णाभिमब्भे २,

अप्पेगे उयरमब्भे २, अप्पेगे पासमब्भे २, अप्पेगे पिट्ठिमब्भे २, अप्पेगे उरमब्भे २,

अप्पेगे हियय मब्भ २, अप्पेगे थणमब्भे २, अप्पेगे खंधमब्भे २, अप्पेगे बाहुमब्भे२,

स्वामी सुधर्मा स्वामी से प्रश्न करते हैं कि हे नाथ! पृथ्वी काय के जीवों को कर्ण, नेत्र घ्राण जिव्हा तथा मन वचन नहीं है तो वे वेदना कैसे वेदते हैं? तदनन्तर सुधर्मा स्वामी एसा उत्तर देते हैं कि जैसे कोइ जन्मान्ध और जन्म बधिर पुरुषको कोइ २ मनुष्य मिलकर उसके पैरसे लगाकर शिरतक के प्रत्येक अङ्ग को अ नुक्रम २ भालादि शस्त्रसे भेदे और खड्गादि शस्त्रसे छेदे, तब वह जन्मान्ध जन्म बधिर पुरुष जैसी अव्यक्त

---

* जहां जहां २ का अंक दिया है वहां वहां पहिले कहे हुए दोनो शब्दों की तरह दूसरी वक्त यह ही शब्द कहके मब्भेके स्थान मच्छे कहना

ग कपोल, क कण्ण, णा०नासिका, अ आंख, भ भंवर णि० कपाल सी मस्तक अ कितनेक
स मूर्च्छित करे अ० कितनेक उ मारडाले ॥ ६ ॥ ए इस तरह स शस्त्र से स आरंभ करनेवालोंको

अप्पेगे हत्थमब्भे २ अप्पेगे अंगुलि मब्भे २ अप्पेगे नह मब्भे २ अप्पेगे गीवमब्भे
२ अप्पेगे हणुयमब्भे २ अप्पेगे होट्ठमब्भे २ अप्पेगे दंतमब्भे २ अप्पेगे जीहमब्भे
२ अप्पेगे तालुमब्भे २ अप्पेगे गलमब्भे २ अप्पेगे गंडमब्भे २ अप्पेगे कण्णमब्भे २
अप्पेगे नासमब्भे २ अप्पेगे अच्छिमब्भे २ अप्पेगे भमुहमब्भे अप्पेगे णिडालमब्भे २
अप्पेगे सीसमब्भे अप्पेगे सपमारए अप्पेगे उद्दवए ॥ ६ ॥ एत्थ सत्थं समारंभमा

वेदना वेदता है परंतु किसी प्रकार बता नहीं सकता वैसेही पृथ्वी कायके एकेन्द्रि जीव असंम ० स वेदन
हैं परंतु बता नहीं सकते हैं तथा जैसे कोइ मूर्च्छित मनुष्य को अनिष्ट दुःख देवे तथा देहादिमें मारडाले, तो
वह जैसी अव्यक्त वेदना वेदता है, वैसेही पृथ्वीकाय के जीव अव्यक्त वेदना वेदते हैं ॥ ६ ॥ जो पृथ्वी
काय के जीवोंकी हिंसामें प्रवृत्त होता है उसे नतो आरंभ का ज्ञान होता है और न प्रत्याख्यान होता है

---

☞ जो धर्म के लिए हिंसा करने में दोष नहि समझते हैं उनको भगवान के इन वचनोंका ख्याल रखनी चाहिए

इ एमी आ हिंसा भ असमज भ० होती है ए० इस तरह स० शस्त्र से भ आरंभ नहीं करते का इस के आ० हिंसा की प० समझ भ० होती है ॥ ७ ॥ तं० उसे प० जाण करके मे० पंडित ने० नहीं ज स्वयं पु० पृथ्वीका स० शस्त्र से स० आरंभकरे, ने० नही दुसरे के पास पु० पृथ्वी का स० आरम, करावे ने० नही दूसरे पु० पृथ्वी कायका स० शस्त्र से म० आरंभ करते को स० अच्छा जाने ज० जिनको ए० ये पु० पृथ्वीकर्म्म समारंभ का प० ना नकर साग भ० होता है से० उन को इ० *निश्चयाय मु० मुनि (साधु) पं० शुद्धसंयमी इ० एसा बे० कहता हुं* ॥ ८ ॥

एस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णाया भवंति।एत्थ सत्थ असमारंभ माणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति ॥ ७ ॥ तं परिण्णाय मेहावी नेव सय पुढवीसत्थ समारभेज्जा, नेवण्णेहिं पुढवी सत्थ समारंभावेज्जा, नेवण्णे पुढवीसत्थं समारभंते समणुजाणेज्जा जस्से पुढवि कम्म समारंभा परि ण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णाय कम्मेति बेमि ॥ ८ ॥

जिससे उस निरंतर हिंसा जन्य पाप लगताही रहता है और जो ज्ञानी पृथ्वीकी हिंसा से निवृत्त हुवे हैं उन को आरंभ का ज्ञान व त्याग होता है, अत एव उनको पाप नहीं लगता है ॥ ७ ॥ इसलिये बुद्धिमान पुरुष पृथ्वीकाया के आरंभ का कर्मबंध का कारण जान करके उसकी हिंसा करे नहीं, दूसरे के पास करावे नहीं, और जो आरंभ करता हो उसे अच्छा जाने नहीं इस तरह से पृथ्वी कायिक जीवोंको हिंसाकी भ

षित कर्था मान कर परित्याग करते हैं उनकोही शुद्धसंयमी मुनि मानना एसा भगवान का कथनानुसार मैं कहताहुं ॥ ८ ॥

इति सत्थपरिण्णाअज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो

☞ इति शस्त्र परिज्ञा नामक प्रथम अध्ययनका द्वितीय उद्देशक समाप्त हुआ ॥ अब अप्कायके जीवों की हिंसाका स्वरूप कहते हैं

( तृतीयोद्देश )

से० अब बे० मैं कहताहूं से० वे० ज० यथापि अ माधु उ० आर्यकतव्य के करनेवाले णि० मोक्षमार्ग प० प्रतिपन्न अ० अमाया को कु करते हुये वि कहे हैं आ जिन स० श्रद्धा से नि० निकले हैं त० उसी श्रद्धासे अ० पाले वि० छोड करके वि० शंका पु पूर्वसंयोग प० करा वी० वीर पुरुषों म० मुक्तिका मार्ग ॥१॥ लो० पानी ष०

से बेमि से जहावि अणगारे उज्जुकडे णियायपडिवण्णे अमायं कुव्वमाणे वियाहिते जाए सद्धाए णिक्खंते तमेव मणुपालिज्जा विजहित्ता विसोतियं (पाठन्तरे पुव्वसंजोग)

अब हे जंबु ? मैं तेरेसे कहताहूं कि पूर्वोक्त रीतिसे पृथ्वी कायाके आरंभ से जो निवृत्त है वे साधु सरल संयम को पालने वाले, मोक्षमार्ग में प्रतिपन्न, कपट नहीं करने वाले कहे हैं उन्हे उचित है कि जिस श्रद्धासे संसार का त्याग करके संयम लिया है उसीही श्रद्धासे शंका तथा पूर्व संयोग को त्याग करके भगवान का

और आ० आत्मा मे भ० देसकरके भ न होय भ० भय ॥ - ॥ से० अब वे० मैं करता हूं णे नहींज
म० स्वयं मा० मोक को ( अपकाय ) भ० नहीं हैं एसा माने णे० नहीज अ० आत्मा को अ० नास्तित्व
माने नै जो भो० अपकायकी अ शंका करता है से वह आ० आत्मा की अ०शंका करता है जे० जा भ०
आत्मा की अ० शंका करता है से० वह लो० लोककी अ० शंका करता है ॥ १ ॥ ल० लज्जा पाते पु०

पणया वीरा महावीहिं। १ लोगंच आणाए अभिसमेच्चा अकुतो भयं।२।से बेमि णेव सयं लोगं
अब्भाइक्खेज्जा णेव अत्ताणं अब्भाइक्खेज्जा जे लोयं अब्भाइक्खति से अत्ताणं अ
ब्भाइक्खति ज अत्ताण अब्भाइक्खति से लोयं अब्भाइक्खति ॥३॥ लज्जमाणा पुढो

पालन करे क्योंकि यह मुक्तिका मार्ग तीर्थंकरादि शूरवीरों का आराधा हुआ है ॥ १ ॥ श्री जिनेश्वर
भगवान के कथनसे पानी को सजीव जानकर संयम पाले जिससे किसिभी जीवको भय नहीं होवे ॥ २ ॥
अब अहो जंबु मैं कहता हुं कि सत्पुरुषों को अपूकायिक जीवोंके विषय शंकाशील न होना चाहिये
और आत्मा का अस्तित्व में भी शंकाशील न होना चाहिये जो लोक(अपकाय) के जीवोंकी शंका करता है
वह आत्मा के विषय में शंका करता है जो आत्मा के विषय शंका करता है वह लोक की शंका करता है
एसे शंकाशील होनेसे नास्तिक बन भ्रष्ट हो जाता है ॥ ३ ॥ इस जगत में कितनेक बौद्धमतादिक के
भिक्षुक शरीभिन्न होते हुवे कहते हैं कि हम साधु हैं परंतु वे पानीके जीवोंकी विविध प्रकार के शस्त्रों से

अलग २ प्रास देखो अ० साधु मो० हम हैं प किते क प० करते हुवे ज० परंतु वि० विविध प्रकारके स० शस्त्र से उ पानी का क० कर्मसमारंभ करते हैं उ० पानीका० स० शस्त्रसे स० आरंभकरते अ० अन्य अ अनेक प्रकारके पा० प्राणी वि० मारते हैं ॥४॥ त तहां स निश्चय भ० भगवानने प० शुद्ध समज प० कही इ० इस ये० सुखुपार्थ जी जीवितव्यके लिये प वन्दनार्थ मा० मानार्थ पू० पूजार्थ जा० जन्ममरण मो मोचनार्थ दु० दुःख प्रतिघातार्थ से० वह स स्वयमेव उ० पानी का स० शस्त्र स स० आरंभ करता है अ० दुसरे के पास या०

पास अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं उदयकम्मसमारंभेणं उदयसत्थं समारंभमाणा अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ४ ॥ तत्थ खलु भगवया परिण्णा पवेइया । इमस्सचेव जीवियस्स परिवंदण माणण पूयणाए जाइमरणमोय-णाए दुक्खपडिघायहेउं से सयमेव उदयसत्थं समारंभति अण्णेहिं वा उदयसत्थं

हिंसा करते हैं जिससे पानीके आश्रित रहे हुवे अनेक स्थावर त्रस जीवों की हिंसा होती है इसलिये वे जो साधुका नाम धराते हैं सो मिथ्या है ॥ ४ ॥ श्री भगवानने फरमाया कि जो आयुष्यका निर्वाह करने केलिये, यश महिमा पूजा केलिये, सत्कार सन्मान केलिये, जन्म मरण के दुःखों से छूटने केलिये, शारीरिक व मानसिक दुःख का निवारण करने केलिये स्वयंही अप्कायके जीवोंकी घात करता है, दूसरे के पास कराता है, दूसरे करते हुवे को अच्छा मानता है उसको अप्काय के जीवोंका आरंभ अहित का कर्ता

पा व पानी को म मस म स आरंभ कराता है अ अन्य या प० उ० पानी का स० शस्त्र से स० आरंभ करते को स० अच्छा जानता है त उस से० वह अ० अहित कर्ता तं० उसे से० वह अ अबोध कर्ता॥५॥द्वितीय उद्देशा में देखो ॥ ३ ॥ से० अब बे० मैं कहता हूं से० है पा० माणी उ० उदक नि० आश्रित जी० जीव

समारंभावेति अण्णे वा उदयसत्थं समारंभते समणुजाणाइ तं से अहियाए तं से अबोहिए ॥ ५ ॥ से तं संबुज्झमाणे आयाणीय समुट्ठाए सोच्चा खलु भगवओ अणगाराणं वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवइ एस खलु गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु णिरए, इच्चत्थं गढिए लोए जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं उदयकम्म समारंभेणं उदयसत्थं समारंभमाणा अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ६ ॥ से बेमि

तथा मिथ्यात्व का बढाने वाला होगा ॥ ५ ॥ वैज्ञानिक तीर्थंकरादि महात्माओं का सबोध श्रवण करके आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादिक है उनको अङ्गीकार करते हैं वे समझते हैं कि अप्काय का आरंभ निश्चय से कर्मबंध का कारण है, मोहका कारण है, मृत्यु का कारण है, तथा नरक का कारण है ऐसा होते हुवे भी म नुष्यादि जीव अपने कार्य में गृद्ध बन करके अनेक प्रकारके शस्त्रों से पानीकी व पानीके आश्रय रहे

अ० अनेक इ० इस में ख० निश्चय भो० अहो अ साधु को उ० पानीके जी० जीव वि० कहा स० सत्र से चे० सचेत अ० विचारकर पा० देखो पु० असगर स० शस्त्र प० कहे हैं अ० अथवा अ अदत्ताद्रान ॥ ७ ॥ क० कल्पता है णे० इसको क० कल्पता है णे० इसको पा० पीनेको अ अथवा वि० विभूषाके लिये पु० असगर स शस्त्र से वि० हिंसा करते हैं ए० यह कथन ते० उन का णो० नहीं णि० न्याय का

संति पाणा उदयनिस्सिया जीवा अणेगे, इह खलु भो अणगाराण उदयजीवा विया हिया, सत्थं चेत्थ अणुवीइ पास पुढो सत्थ पवेदितं अदुवा अदिन्नादाण ॥ ७ ॥ कप्पति णे कप्पति णे पाउं अदुवा विभूसाए पुढो सत्थेहिं विउट्टंति एत्थवि तेसिं णो

हैं और जिन प्रवचन में निश्चये मत्स्वरूप जीव अणगार को बताये हैं एसा ज्ञान साधुको होना चाहिये और अग्नि क्षारादि शस्त्रसे निर्जीव बना हुआ पानी को ग्रहण कर अपना कार्य चलाना परतु सचित पानी कदापि ग्रहण नहीं करना, क्योंकि उसे ग्रहण करने में जीवोंकी चोरी लगती है, और जिनाज्ञा का लोप होता है ॥ ७ ॥ कितनेक मतावलम्बी कहते हैं कि हमारे शास्त्रमें पानी को पीने में व स्नान शोभा करने के वास्ते ग्रहण करन में कुच्छभी दोष नहीं है एसा कहकर वे अनेक प्रकारके शस्त्रों से पानीकी हिंसा करते हैं न उनका यह कथन असमीचीन है ॥ ८ ॥ इस तरह जो अपूकायिक जीवों की हिंसा में प्रवर्तता है उन्हे न का ज्ञान है और न प्रत्याख्यान है, जिससे उसको निरंतर हिंसा जन्य पाप लगताही रहता है और

पा उ पानी को म सस म स आरंभ कराता है अ अन्य ना प उ पानी का स सत्र से स भारंभ करते को स० भच्छा जानता है तं० उस से० वह भ महित करता तं० उसे से० वह अ मबोध कर्ता॥५॥द्वितीय उद्देशामें देखो ॥ ६ ॥ से० अब वे० मैं कहता हूं सं० है पा प्राणी उ० उदक नि० आश्रित जी० जीव

समारभावेति अण्णे वा उदयसत्थं समारंभंते समणुजाणाइ तं से अहियाए तं से अबोहिए ॥ ५ ॥ से तं संबुज्झमाणे आयाणीय समुट्ठाए सोच्चा खलु भगवओ अणगाराणं वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवइ एस खलु गथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु णिरए, इच्चत्थं गढिए लोए जमिण विरूवरूवेहिं सत्थेहिं उदयकम्म समारंभेण उदयसत्थं समारभमाणा अण्णे अणगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ६ ॥ से बेमि

तथा मिथ्यात्व का बढाने वाला होगा ॥ ५ ॥ वैज्ञानिक तीर्थंकरादि महात्माओ का सबोध श्रवण करके आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादिक है उनको अङ्गीकार करते हैं वे समझते हैं कि अपकाय का आरंभ निश्चय से कर्मबंध का कारण है, मोहका कारण है, मृत्यु का कारण है, तथा नरक का कारण है ऐसा होते हुवे भी मनुष्यादि जीव अपने कार्य में गृद्ध बन करके अनेक प्रकारके शस्त्रों से पानीकी व पानीके आश्रय रहे हुवे अनेक त्रस स्थावरजीवों की हिंसा करते हैं॥६॥अहो

अ० अनेक इ० इस में ख० निश्चय मो० अहो अ साधु को उ० पानीके जी० जीव वि० कहा स० शस्त्र से चे० सचेत अ० विचारकर पा० देखो पु० असगर स० शस्त्र प० कहे हैं अ० अथवा अ० अदत्तादान ॥ ७ ॥ क० कल्पता है ण० हमको क कल्पता है णे० हमको पा० पीनेको अ० अथवा वि० विभूषाके लिये पु० असगर स० शस्त्र से वि० हिंसा करते हैं ए० यह कथन ते उन का णो० नहीं णि० न्याय का

सति पाणा उदयनिस्सिया जीवा अणेगे, इह खलु भो अणगाराण उदयजीवा विया हिया, सत्थं चेत्थ अणुवीइ पास पुढो सत्थ पवेदितं अदुवा अदिन्नादाण ॥ ७ ॥ कप्पति णे कप्पति णे पाउं अदुवा विभूसाए पुढो सत्थेहिं विउट्टंति एत्थवि तेसिं णो

है और जिन प्रवचन में निश्चये जलरूप जीव अणगार को बताये हैं एसा ज्ञान साधुको होना चाहिये और अग्नि क्षारादि शस्त्रसे निर्जीव बना हुआ पानी को ग्रहण कर अपना कार्य चलाना परन्तु सचित्त पानी कदापि ग्रहण नहीं करना, क्योंकि उसे ग्रहण करने में जीवोंकी चोरी लगती है, और जिनाज्ञा का लोप होता है ॥ ७ ॥ कितनेक मतावलम्बी कहते हैं कि हमारे शास्त्रमें पानी को पीने में व स्नान शोभा करने के वास्ते ग्रहण करने में कुच्छभी दोष नहीं है एसा कहकर वे अनेक प्रकारके शस्त्रों से पानीकी हिंसा करते हैं

न उनका यह कथन असमीचीन है ॥ ८ ॥ इस तरह जो अप्कायिक जीवों की हिंसा में प्रवर्त्तते हैं उन्हे न का ज्ञान है और न प्रत्याख्यान है, जिससे उसको निरंतर हिंसा जन्य पाप लगताही रहता है और

॥ ८ ॥ द्वितीय उद्देशो समत्तो ॥ ० ॥

णिकरणाए ॥८॥ एत्थ सत्थं समारंभमाणस्स इच्चेते आरम्भा अपरिण्णाया भवंति एत्थ सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं उदयसत्थं समारंभेज्जा, णेवण्णेहिं उदयसत्थं समारंभावेज्जा, उदयसत्थं समारंभंतेवि अण्णे ण समणुजाणेज्जा जस्सेते उदयसत्थं समारंभा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णायकम्मेत्ति बेमि ॥ १ ॥

जो ज्ञानी जन अप्कायकी हिंसासे निवृत्त हुएहैं उनको आरंभ का ज्ञान व त्याग होता है, अत एव उनको पाप नहीं लगता है, इसलिये अप्कायके आरंभ को कर्म बंधका कारण जान करके बुद्धिमान अप्काय की हिंसा स्वयंकरे नहीं, दूसरे के पास करावे नहीं, और करते को अच्छा जाने नहीं, इस तरह से अप्कायकेजीवोंकी हिंसा को अहित कर्ता मानकर जो परित्याग करते हैं उनकोही में शुद्धसंयमी साधु कहता हूं एसा श्री श्रमण भगवान का कथन है

* इति सत्थपरिण्णाज्झयणस्स तइओद्देसो सम्मत्तो *

* यह शस्त्र परिज्ञा नामक प्रथम अध्ययन का तृतीय उद्देशक पूर्ण हुआ आगे अग्निआरंभ विषय बोध करते हैं

नोट—महाभारत के अनुशासन पर्व में पानी को अनेक जीवोंका स्थान कहा है

(चतुर्थ उद्देश)

तृतीयउद्देशमें देखो ॥ १ ॥ जे० जो दी० दीर्घलोक (वनस्पति) का स० शस्त्र के खे० खेदज्ञ से० वे अ० अशस्त्र के खे० खेदज्ञ जे० जो अ० अशस्त्रके खे० खेदज्ञ से० वे दी० दीर्घलोक के स० शस्त्र के खे० खेदज्ञ ॥ २ ॥ वी० वीर पुरुषोंने ए० यह अ० जीतकरके दि० देखी है सं० संयमवन्त स० सदा अ०

सेबेमि णेव सयं लोग अब्भाइक्खेज्जा णेव अत्ताण अब्भाइक्खेज्जा जे लोगं अब्भाइक्खति से अत्ताणं अब्भाइक्खति जे अत्ताणं अब्भाइक्खति से लोगं अब्भाइक्खति ॥ १ ॥ जे दीहलोगसत्थस्स खेयन्ने से असत्थस्स खेयन्ने जे असत्थस्स खेयन्ने से दीहलोय सत्थस्स खेयन्ने ॥ २ ॥ वीरेहिं एय अभिभूय दिट्ठं संजतेहिं सया जतेहिं सया अपमत्तेहिं ॥ ३ ॥

अब मैं कहता हूं कि अहो प्रभु ! सत्पुरुषों को अग्निकायके जीवोंके विषय शंकाशील न होना चाहिये और आत्मा का अस्तित्वमें भी शंकाशील न होना चाहिये जो अग्निकायकी शंका करता है व आत्माका अस्तित्वकी शंका करता है और जो आत्माका अस्तित्व की शंका करता है वह अग्निकायकी शंका करता है ऐसें शंकाशील होनेसे नास्तिक बन भ्रष्ट होजायगा ॥ १ ॥ जो दीर्घलोक (वनस्पति काय) का शस्त्र जो अग्नि है उसका जानकार है वह ही अशस्त्र जो संयम उसका जानकार है और जो संयम का जानकार है वह वनस्पति के शस्त्र का जानकार है ॥ २ ॥ संयमवन्त, सदैव जितेन्द्रिय, तथा

जितेन्द्रिय अ० अप्रमादि ॥ ३ ॥ जे० जो प० प्रमादी गु० गुणस्थित से उनको हु० निश्चय दं० ऐसी प० करते ४ उ उस प० आप करके मे० पंडित इ० अब णो नहीं ज० जो मैंने पु० पूर्व अ० किया प० प्रमाद म ॥ ४ ॥ छ लज्जापात पु० पृथक् २ पा० देखो अ० साधु मो० हम है ए० कितनेक पु० करतेहुए ज० यद्यपि वि० विविध प्रकारके स० शस्त्रसे अ० अग्निकर्म स० आरंभ करनेसे अ० अग्नि को स० शस्त्रसे म आरंभ करते हुवे अ० दूसर अ० अनेक प्रकारके पा० प्राणी वि० मारते हैं ॥ ५ ॥ द्वितीय उद्देशा में

जे पमत्त गुणट्ठिए से हु दंडे पवुच्चति। तं परिण्णाय मेहावी इयाणि णो जमहं पुव्व म

कासी पमादेणं ॥ ४ ॥ लज्जमाणा पुढो पास अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा जमिणं

विरूवरूवेहिं सत्थेहिं अगणिकम्मसमारमेण अगणिसत्थं समारभमाणे अण्णे अणे

गरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ५ ॥ तत्थ खलु भगवया परिण्णा पवेइया इमस्स चेव जी

अप्रमत्त ऐसे वीर पुरुषोंने कर्मरूप शत्रु को नष्ट करके यह बात साक्षात् देखी है ॥ ३ ॥ जो अग्नि काया का आरंभ करते है वे दुःखी कहलाते है ऐसा जानकर विद्वान निश्चय करते हैं कि मैंने जैसा प्रमाद के वश में भूतकालमें अग्निका आरंभ किया वैसा अब नहीं करूंगा ॥४॥ इस जगत में कितनेक बौद्धमतादि क के भिक्षुक नगमिदे होते हुए कहते है कि हम साधु है परंतु वे अग्निके जीवों की विविध प्रकार के श स्त्रोंसे हिंसा करते हैं जिससे अग्निके आश्रित रहे हुए अनेक त्रस स्थावर जीवोंकी हिंसा होती है इसलिये

देखो ॥ ६ ॥ द्वितीय उद्देशामें देखो ॥७॥ से० अब वे० मैं कहता हुं पा० प्राणी पु० पृथिव्याश्रित त० तृणा

वियस्स परिवंदणमाणणपूयणाए जाइमरणमोयणाए दुक्खपडिघायहेउ से सयमेव अगणिसत्थं समारंभति अण्णेहिं वा अगणिसत्थं समारंभावेइ अण्णेहिं अगणि सत्थं समारभमाणे समणुजाणति त से अहियाएतंसे अबोहिए॥६॥से त संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाए सोच्चा खलु भगवओ अणगाराणं वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवति एस खलु गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे एस खलु णिरए, इच्चत्थं गढिए लोए जमिण विरूवरूवेहिं सत्थेहिं अगणिकम्मसमारंभेण अगणिसत्थं समारभमाणे अण्णे अणे-गरूवे पाणेविहिंसइ ॥ ७ ॥ से बेमि संति पाणा पुढविणिस्सिया तणणिस्सिया पत्तणि-

ये जो साधु का नाम धरावे हैं सो मिथ्यात्वि ॥ ५ ॥ श्री श्रमणभगवानने फरमाया कि जो आयुष्यका निर्वाह केलिये, यश महिमा पूजा केलिये, सत्कार सन्मान केलिये जन्म मरण से छूटने केलिये, शरीरिक व मानसिक दुःख का निवारण करने केलिये स्वयं ही अग्नि कायके जीवों की घात करता है दूसरेके पास कराता है और दुसरे घात करते हुए को अच्छा जानता है उसको अग्नि कायका आरंभ अहित का कर्ता तथा मिथ्यात्वका बधने वाला होगा ॥ ६ ॥ अब वैज्ञानिक तीर्थंकरादि महात्माओंका सद्बोध श्रवण करके

श्रित प० पत्ता के आश्रित क० काष्ट के आश्रित गो० गोबर के आश्रित क० कचवर [ कचरा ] के आ श्रित सं० है सं० उडतेहुए पा० प्राणी आ० अथवा स० उडकर पडते हैं प० प० अ० अग्निको स० निश्च यात पु० स्पर्शताहुवा ए० कितनेक सं० संकुचितपना को आ० प्राप्त होते हैं जे० जो सं० संकुचितपना को आ० प्राप्त होते हैं ते वे त० तहां प० मूर्च्छित होते हैं जे० जो त० तहां प० मूर्च्छित होते हैं ते० वे स०

रिसया कट्ठणिस्सिया गोमयणिस्सिया कयवरणिस्सिया संति सपातिमा पाणा आहच्च संपयंति य अगणिंच खलु पुट्ठा एगे संघाय मावज्जाति जे तत्थ संघाय मावज्जंति ते तत्थ परियाविज्जाति जे तत्थ परियाविज्जंति ते तत्थ उद्दायति ॥ ८ ॥ एत्थ सत्थं

आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादिक है उनको अङ्गीकार करते हैं वे समझते हैं कि अग्निकाया का आरंभ नि श्चय से कर्म बन्धका कारण है मोहका कारण है मृत्यु का कारण है तथा नरक का कारण है एसा होते हुए भी मनुष्यादि अपने कार्य में गृद्ध बनकर के अनेक प्रकारके शस्त्रों से अग्नि का व अग्नि आश्रित रहे हुवे अनेक त्रस स्थावर की हिंसा करते हैं ॥ ७ ॥ अब अहो जंबु मैं कहताहु कि पृथिवी, तृण, पत्र, काष्ट गोमय, ( छाणे ) और कचवरके आश्रित अनेक जीव रहते हैं सिवाय पतंगीये प्रमुख अकस्मात् आकार, उसे प्रज्वालित अग्निमें पडते हैं अग्निमें पडने से कितनेक का शरीर संकोचको प्राप्त होता है जिन जीवों का शरीर संकुचित होजाता है वे जीव वहां मूर्च्छित होते हैं और जो जीव मूर्च्छित होते हैं वे जीव वहां ही

बता व माण्मुक्त होते हैं ॥ ८ ॥ दूसरा उद्देशामें देखो ॥ ९ ॥ द्वितीय उद्देशामें देखा ॥ १० ॥

समारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णाया भवंति एत्थ सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति ॥ ९ ॥ तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं अगणिसत्थं समारंभेज्जा णेवन्नेहिं अगणिसत्थं समारंभावेज्जा अगणिसत्थं समारभंते वि अण्णे ण समणुजाणेज्जा जस्से ते अगणिकम्म समारंभा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णाय कम्मेत्तिबेमि ॥ १० ॥ इति सत्थपरिण्णाज्झयणस्स चउत्थो उद्देसो सम्मत्तो

मरजाते हैं ॥ ८ ॥ जो अग्नि कायकी हिंसामें प्रवृत्त होता है उसे नतो आरंभ का ज्ञान होता है और न प्रत्याख्यान होता है जिससे उसे निरंतर हिंसा जन्य पाप लगताही रहता है और जो ज्ञानीजन पृथ्वी कायाकी हिंसा से निवृत्त हुये हैं उनको आरंभ का ज्ञान व त्याग होता है अतएव उनको पाप नहीं लगता है ॥ ९ ॥ इसलिये बुद्धिमान् पुरुष अग्नि कायाके आरंभ को कर्म बंधका कारण जान करके स्वयं अग्नि कायकी हिंसा करे नहीं दूसरे के पास करावे नहीं, और जो हिंसा करता होवे उसे अच्छा भी जाने नहीं इस तरह अग्नि कायकी हिंसा को अहित कर्ता जान कर जो परित्याग करते हैं वे कोटी मे शुद्ध संयमी मुनि कहाते हैं ऐसा भगवान का कथनानुसार मैं कहताहूं ॥ १० ॥ यह शस्त्र परिज्ञानामक प्रथम अध्ययन का चतुर्थ उद्देश पूर्ण हुआ आगे वनस्पति का रक्षण दर्शाते हैं

त० इस लिये णो० नहीं क करूंगा स० सावधान म० जान करके म० बुद्धिमान अ० निर्भयी वि० मान करके है उस का अ० जो णो नहीं करे ए० एसा व० निवर्ते ए० इस से अधिक ए० यह अ० साधु इ० एसा प० कहता हूं ॥ १ ॥ जे० जो गु० गुण से है आ० संसार जे० जो आ० संसार से० वे गु गुण ॥ २ ॥ उ उर्ध ऊर्ध्व अ० अधो ति० तिर्यक् पा० दिशाओंमें पा० देखताहुआ रू० रूप पा० देखता है सु० सुनताहुआ स० शब्दों सुनता है उ० ऊर्ध्व अ० अधो ति० तिर्यक् पा० दिशाओं में मु० मूर्छित होता हुआ रू० रूपमें मु० मूर्छित होता है स० शब्दादिक में भी ए० यह लो०लोक वि०कहा ए०

तं णो करिस्सामि समुट्ठाए मत्ता मतिमं अभयं विदित्ता तं जे णो करए एसोवरए एत्थोवरए एस अणगारेत्ति पवुच्चइ ॥ १ ॥ जे गुणे से आवट्टे जे आवट्टे से गुणे ॥२॥ उड्ढं अहे तिरियं पाइणं पासमाणे रूवाइं पासइ सुणमाणे सद्दाइं सुणइ उड्ढं अहे तिरियं पाइणं मुच्छमाणेरूवेसु मुच्छति सद्देसुयावि एस लोगे वियाहिए एत्थ अगुत्ते अणाणाए

अहो बुद्धिमान! जो वनस्पति को सजीव समझकर सावधान होता है कि मैं साधु सब जीवों का रक्षक हुआ हूं इसलिये वनस्पतिकी भी हिंसा नहीं करूंगा इस तरह जिन प्रवचन में रक्त हो करके जिसने वनस्पति काय के आरंभ का त्याग किया है वह ही अणगार है एसा मैं कहता हूं ॥ १ ॥ जो शब्दादि विषय हैं सो ही संसार का कारण है और जो संसार का कारण है सोही शब्दादि विषय हैं ॥ २ ॥ मनुष्य ऊंची नीची

इस में अ० अगुप्त अ० आज्ञाबाहिर पु० वारंवार गु० गुणआस्वादता व वक्रता स० समाचरे प० प्रमा
दी आ० घर में आ० रहे ॥ ३ ॥ द्वितीय उद्देशा में देखो ॥ ४ ॥ द्वितीय उद्देशा में देखो ॥ ५ ॥ द्वितीय

पुणो पुणो गुणासाते वंक समायारे पमत्ते आगार मावसे ॥ ३ ॥ लज्जमाणा पुढो
पास अणगारा मात्ति एगे पवयमाणा, जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं वणस्सइ कम्म
समारंभेण वणस्सइ सत्थ समारंभमाणे अण्णे अणगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ४ ॥ तत्थ

और पूर्वादिक तिर्च्छी दिशाओंमें अवलोकन करता हुआ अनेक पदार्थ देखता है, सुनता हुआ अनेक शब्द श्रवण करता है देखे तथा सुने हुए रूप तथा शब्द में आसक्त होता है ऐसेही रस गंध और स्पर्श के विषय आसक्त होता है ये विषय कहाते हैं इन पूर्वोक्त विषयों में जो प्रवर्तता है वह जिनाज्ञा से बाहिर है वह वारम्वार शब्दादि विषयों को आस्वादता है वह असंयम का आचरण करने वाला प्रमादी हो कर घर में रहता है ॥ ३ ॥ इस जगत में कितनेक बौद्ध मतादिक के भिक्षुक अरिहन्ते होते हुए कहते हैं कि हम साधु हैं परंतु ये वनस्पति के जीवों की विविध प्रकार के शस्त्रों से हिंसा करते हैं जिनसे वनस्पति के आश्रित रहे हुए अनेक त्रस स्थावर जीवों की भी हिंसा होती है इसलिये वे जो साधु का नाम धराते हैं सो मिथ्या है ॥ ४ ॥ श्री भगवान्ने फरमाया कि जो आयुष्यका निर्वाहकेलिये, यशमहिमा पूजा के लिये, सत्कार सन्मान केलिये, जन्म मरण के दुःख से छूटनेकेलिये, शारीरिक व मानसिक दुःख का निवारण

उन्हा में न्हा ॥ ३ ॥ ४० अब बे० कहता हूं इ० इसकाभी आ उत्पत्ति होने का स्वभाव ए० इसकाभी

खलु भगवया परिण्णा पवेइया इमस्स चेव जीवियस्स परिवन्दणमाणणपूयणाए जाइ मरण मोयणाए दुक्खपडिघायहेउ स सयमेव वणस्सइसत्थं समारभइ अण्णेहिं वा वणस्सइ सत्थं समारंभावेति, अण्णे वा वणस्सइ सत्थं समारम्भमाणे समणुजाणइ तं से अहियाए तं से अबोहिए ॥ ५ ॥ से तं संबुज्झमाणे आयाणीय समुट्ठाए सोच्चा खलु भगवओ अणगाराण वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवइ एस खलु गंथे एस खलु मोहे एस खलु मारे, एस खलु णिरए इच्चत्थं गढिए लोए जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं वणस्सइकम्मसमारंभेणं वणस्सइसत्थं समारम्भमाणे अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ

करनेवालेको, स्वयंही वनस्पति काय के जीवों की घात करता है, दूसरे के पास कराता है, और घात करते हुए को अच्छा मानता है, उसको वनस्पति काय का आरंभ अहित का कर्ता अबोध का कर्ता होगा ॥५॥ वैज्ञानिक तीर्थंकरादिक महात्माओं का अपरोक्ष श्रवण करके आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादिक है उनको अंगीकार करने से वे समझते हैं कि वनस्पतिकायका आरंभ निश्चय से कर्मबंधका कारण है, मोहका कारण है, मृत्यु का कारण है तथा नरक का कारण है ऐसा होते हुए भी मनुष्यादि जीव अपने कार्य में

भा० उत्पत्ति होनेका स्वभाव इ० इसकाभी वु० वृद्धि धम इ यह भी चि० सचित्त ए० यहभी चि० सचित्त इ० यह छि० छेदने से मि० सूकता है ए० यहभी छि० छेदने से सूकती है इ० यहभी आहारक ए० यहभी आ० आहारक इ० यहभी अ० अनित्य ए० यहभी अनित्य इ० यह अ० अशाश्वत ए० यहभी अ० अशाश्वत इ० यहभी च० चयोपचित ए० यहभी च० चयोपचित इ० यहभी

॥ ६ ॥ से बेमि इमपि जाइधम्मयं एयपि जाइधम्मयं इमपि वुड्ढिधम्मयं एयपि वुड्ढि धम्मयं इमंपि चित्तमत्तय एयंपि चित्तमंतय, इमपि छिन्नं मिलाति एयपि छिन्नमिलाति, इमपि आहारग एयपि आहारग, इमपि अणिच्चय एयपि अणिच्चय, इमंपि असासयं एयंपि असासयं, इमपि चओवचइअ एयपि, चओवचइय इमपि विपरिणामधम्मय

गृद्ध बन करके अनेक प्रकार के शस्त्रों से वनस्पति कायके तथा वनस्पति के आश्रय रहे हुए त्रस स्थावर जीवों की हिंसा करते हैं ॥ ५ ॥ अब अहो जंबु! वनस्पति का सचैतन्यपना मैं बतलाता हूं जैसे अपना शरीर का स्वभाव उत्पन्न होने का है वैसाही वनस्पति का स्वभाव उत्पन्न होने का है जैसे शरीर वृद्धि पाता है वैसेही उसकी वृद्धि होती है जैसे शरीर में चित्त है वैसे उसमेंभी चित्त है जैसे शरीर को काटने से सूकजाता है वैसे ही उसको काटने से सूकजाती है जैसे शरीर को आहार की जरूरत है वैसेही उसको आहार की जरूरत है, जैसे शरीर अनित्य है वैसेही यह भी अनित्य है जैसे शरीर अशाश्वत है वैसेही यहभी अशाश्वत

वि० विपारिणामिकधर्मी ए० यहभी वि० पारिणामिक धर्मी है ॥ ७ ॥ द्वितीय उद्देशामें देखो॥ ८ ॥

ण्यंपि विपरिणामधम्मय ॥ ७ ॥ एत्थ सत्थ समारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरि-
ण्णाया भवति एत्थ सत्थ असमारभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवति तं
परिण्णाय मेहावी णेव सयं वणस्सइ सत्थं समारंभेज्जा णेवण्णेहिं वणस्सइ सत्थ
समारम्भावेज्जा णेवण्णेहिं वणस्सइ सत्थं समारभंते समणुजाणेज्जा जस्सेते वणस्सइ
सत्थ समारम्भा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णाय कम्मेत्तिबेमि ॥ ८ ॥ इति
सत्थपरिण्णाज्झयणस्स पंचमोद्दसो सम्मत्तो * * * *

है, जैसे शरीर का चयउपचय होता है वैसेही उनका भी चयउपचय होता है जैसे शरीर अनेक विकार पा
ता है वैसेही वह भी अनेक विकार पामता है इसलिये वनस्पति सचित्त है ॥ ७ ॥ जो वनस्पतिकाय के
जीवों की हिंसा में प्रवृत्त होता है उनको आरंभ का ज्ञान होता है और न प्रत्याख्यान होता है जिससे
उनको निरंतर वनस्पति काय की हिंसा जन्य पाप लगता रहता है और जो ज्ञानी जन वनस्पति काय की
हिंसा से निवृत्त हुए हैं उनको आरंभ का ज्ञान व त्याग होता है, इसलिये उनको पाप नहीं लगता है इस
लिये वनस्पति काय के आरंभ को कर्म बंध का कारण जान कर उसकी हिंसा आपस्वयं करे नहीं, दूसरे
के पास करावे नहीं, और हिंसा करने वाले को अच्छा भी जाने नहीं उनकोही मैं सच्चा शुद्धसंयमी साधु

स० अव व करता हूं सं० है इ० ये० त० त्रस पा०प्राणी त० वह ज यथा अं० अण्डज पो० पोतज, ज० जरायुज र० रसज स० स्वेदज स समूर्छिम उ० उद्भिज उ० औपपातिक ए० यह स० त्रसका संसार इ० एसा प० कहलाता है मं० अज्ञानी अ० जन्ममरण करते हैं ॥ १ ॥ णि० आलोचकर प० देखकर प०

से बेमि संति मे तसा पाणा तंजहा—अंडया, पोयया, जराउया, रसया, ससेययया, समुच्छिमा, उब्भिया, उववातिया, एस संसारेत्ति पवुच्चति मंदस्स अवियाणओ ॥१॥ णिज्झाइत्ता पडिलेहित्ता पत्तेय परिणिव्वाणं सव्वेसिं पाणाणं सव्वेसिं भूयाणं सव्वेसिं

कहता हूं॥८॥यह शस्त्र परिज्ञानामक प्रथम अध्ययनका पंचम उद्देशा पूर्ण हुआ अब त्रसजीवों का संरक्षण बताते हैं

अब मैं कहता हूं कि हे जम्बु? ये जो आगे कहेंगे सो त्रस प्राणी हैं उनके आठ भेद इस प्रकार हैं— १ अण्डे से उत्पन्न होवे वह अण्डज, पक्षी आदि, २ थैली से उत्पन्न होवे वह पोतज हस्ती आदि ३ जेरसे उत्पन्न होवे सो जरायुज गाय भैंसादि, ४ रससे उत्पन्न होवे सो रसज कृमि आदि, ५ स्वेदसे उत्पन्न होवे वह स्वेदज युकादि, ६ स्वयमेव उत्पन्न होवे वह समूर्छिमे चींटी मक्षिकादि, ७ भूमी फोडकर उत्पन्न होवे वह उद्भिज तीडादि, ८ उत्पन्न होवे सो औपपातिक देव नारकी इसतरह आठ प्रकार के त्रस जीवों का समुह को संमारंभेश्वा कहते हैं एसे त्रस के संसार में अज्ञजन परिभ्रमण करते रहते हैं ॥ १ ॥ अहो जंबु मैं अच्छी तरह शोध विचार कर कहता हूं कि बेइन्द्रियादि सर्व प्राणीओं के वनस्पतिस्यादि सर्व भूतों को

मरककों प० मुत्तमिय है स० सर्व पा० माणीकों स० सर्व भू० भूतकों स० सर्व जी० जीवकों स० सर्व स० सत्त्वकों अ० असाता अ० अमिय म० महाभय कर्ता इ० एसा मे० कहताहूं ॥ २ ॥ त० भास पाते हैं पा० माणी दि० दिशाविदिशामें त० तहां २ पु० पृथक् २ पा० देखो आ० आतुर प० दुःख देते हैं से०

जीवाणं सव्वेसिं सत्ताणं असातं परिणिव्वाणं महब्भय दुःखत्तिबेमि ॥ २ ॥ तसंति पाणा दिसोदिसासु य तत्थ तत्थ पुढो पास आतुरा परितावेंति संति पाणा पुढो सिया ॥ ३ ॥ लज्जमाणा पुढो पास अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं तसकायसमारंभेण तसकायसत्थं समारंभमाणा अण्णे अणगरूवे पाणे वि

पञ्चेन्द्रियादि सब जीवों को और पृथिव्यादि सर्व सत्त्वों को एक सुखही मियकारी है दुःख अमिय और महाभय का कारण है ॥ २॥ ये सब माणी चारों ओर के दुःख से भय भीत रहते हैं तथापि विषय कषाय से मुग्ध बने हुवे मनुष्य अपना अनेक मकार का स्वार्थ को पूर्ण करनेकेलिये उनको परिताप उपजाते हैं, इस दुःख से भयभीत बन कर बिचारे पृथिव्यादिक का आश्रय प्राप्त कर अलग २ रहते है कि हमको कोइ न सतावे ॥ ३ ॥ इन जगत में कितनेक बौद्ध मतादिक के भिक्षुक शरमिन्दे होते हुए कहते हैं कि हम साधु हैं परन्तु वे विविध मकार के शस्त्रों से त्रस काय के जीवों की हिंसा करते हैं जिससे त्रस काया के आश्रित रहे हुवे त्रस स्थावर जीवों की भी हिंसा होती है इसलिये वे जो साधु का नाम धराते हैं सो मि

ह पा० भावी पु पृथिव्याश्रित ॥ ३ ॥ द्वितीय उद्देशामें देखो ॥ ४ ॥ द्वितीय उद्देशामें देखा ॥ ५ ॥ हि

हिंसइ ॥ ४ ॥ तत्थ खलु भगवया परिण्णा पवेइया इमस्स चेव जीवियस्स परिवंदण माणण पूयणाए जाइमरणमोयणाए दुक्खपडिघायहेउं से सयमेव तसकायसत्थं समारभतिअण्णेहिं वा तसकाय सत्थं समारभावेइ अण्णेहिं वा तसकाय सत्थ समारंभमाणे समणु जाणाति तं से अहियाए तं से अबोहिए ॥ ५ ॥ से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाए सोच्चा खलु भगवओ अणगाराणं वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवइ एस खलु गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु णिरए इच्चत्थ

ध्या है (४) इसमें श्री भगवानने शुद्ध समज दी है निश्चय सेही जो जीव आयुष्य का निर्वाह केलिये, यश महिमा पूजा केलिये, सत्कार सन्मान केलिये, जन्म मरण के दुःख से मुक्त होने केलिये, शारीरिक व मानसिक दुःख निवारण करने केलिये स्वयंही त्रस काय के जीवो की घात करता है, दूसरे से कराता है और घात करने वाले को अच्छा मानता है, उसको त्रस काय का आरंभ अहित का कर्ता तथा अबोध का कर्ता होगा (५) वैज्ञानिक तीर्थंकरादि महात्माओं का सदोप श्रवण करके आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादिक है उनको अङ्गीकार करते हैं व समझते हैं कि वनस्पतिकाय का आरंभ निश्चय से कर्मबंध

तीय उद्देशामें कहो ॥ ५ ॥ से० अब ब० म कहता हूं अ कितनेक अ शरीरार्थ व० मारते हैं अ० कितनेक अ०चर्मके लिये व०मारते हैं अ०कितनेक मं० मांस के लिये व०मारतेहैं अ० कितनेक सा० लोहिके लिय व० मारते हैं अ० कितनेक हि० हृदयके लिये व० मारते हैं ए० ऐसेही पि० पित्त के लिय, व० वसार्थ, पि० पांखार्थ, पु० पुच्छार्थ वा० केशार्थ सि० शृंगार्थ वि० विषाणार्थ दं० दांतार्थ दा० दाढार्थ न० नखार्थ ण्हा० नाडी के लिये अ० अस्थि के लिये अ० अस्थिकी मिंजी के लिये अ० स्वार्थ अ० अ-थ अ० कितनक हिं० माराथा मे० मुझे इ० ऐसा वा० या व० मारते हैं अ० कितनेक हिं० मारते हैं मे०

गढिए लोए जमिण विरूवरूवेहिं सत्थेहिं तसकायसमारंभेण तसकायसत्थं समारम माणे अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ६ ॥ से बेमि अप्पेगे अच्चाए वहंति,

का कारण है मोहका कारण है, मृत्यु का कारण है तथा नरक का कारण है एना दुष्मी जीव अपने कार्य में गृद्ध बनकरने अनेक प्रकार के शस्त्रों से त्रस काया की तथा त्रस काया के आश्रय रहे हुए अनेक त्रस स्थावर जीवों की हिंसा करते हैं ॥५॥ अहो जम्बु ! अब मैं कहता हूं कि इस जगत में कितनेक अज्ञानी जीव त्रस जीवों को शरीर के निमित्त मारते हैं [ जैसे कि सुवर्णपौरुष सिद्ध करने केलिये सब यात्री बत्तीस लक्षण युक्त पुरुष को मारते हैं ] कितनेक चर्म केलिये मारते हैं कितने मांस कालिये मारते हैं, ऐसेही कितनेक रक्त, हृदय, पित्त, चरबी, पांखे, पूंच्छ, बाल, शृंग, विषाण, [शृगाल शृंगआदि] दांत,

मुझको इ० एसा प मारते हैं अ० कितनेक हि मार्ग्ग मे मुझको इ० एसा शा० या व मारते हैं ॥७॥

अप्पेगे अजिणाए वहति, अप्पेगे मंसाए वहति, अप्पेगे सोणिताए वहंति, अप्पेगे हिययाए वहंति एव पित्ताए, वसाए, पिच्छाए, पुच्छाए, वालाए, सिंगाए, विसाणाए, दंताए, दाढाए, नहाए, ण्हारुणीए, अट्ठीए अट्ठिमिंजाए, अट्ठाए, अणट्ठाए, अप्पेगे हिंसिसु मेत्ति वा वहंति, अप्पेगे हिंसति मेत्तिवा वहति अप्पेगे हिंसिस्सतिमत्ति वा वहति ॥ ७ ॥ एत्थ सत्थं समारभमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णाया भवति एत्थ सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति तं परिण्णाय मेहावी

दाढ, नख, नस, हड्डी, तथा हड्डी किमिंजीके लिये, मतलब केलिये तथा कितनेक विनामतलब ( निरर्थक ) ही त्रस जीवों को मारते हैं, कितनेक इसने मुझे पहिले माराथा इसलिये मारते हैं, कितनेक यह मुझे मार रहा है और कितनेक यह मुझे मारेगा एसा जानकर मारते हैं यों अनेक प्रकार की कल्पना से लोको त्रस जीवों की घात नाना प्रकार से कर रहे हैं ॥ ७ ॥ जो त्रस काय के जीवों की हिंसा में प्रवृत्त होता है उसे न तो आरंभ का ज्ञान होता है और न प्रत्याख्यान होता है इसलिये उसको निरंतर हिंसा जन्य पाप लगता रहता है और जो ज्ञानी जन त्रस काय की हिंसासे निवृत्त हुवे हैं उनको आरंभ का ज्ञान व त्याग होता है अतः

द्वितीय उद्देशमें दूसरा ॥ ८ ॥

प० समर्थ ए० यह मुनि हु० होवे निवृत्तिकेलिये आ० उ०मेधावी अ० अहित इ० ऐसा न० नहीं क० करके जे०
जो अ० अभ्यंतर स्थित जा० जाणता है से० वह ब० बाह्य जा० जानता है जे० जो ब० बाह्य जा०

णेव सयं तसकाय सत्थं समारम्भेज्जा णेवण्णेहिं तसकाय सत्थं समारम्भावेज्जा, णेवण्णे
तसकायसत्थं समारंभंते समणुजाणेज्जा, जस्सेते तसकायसत्थे समारम्भा परिण्णाया
भवंति सेहु मुणी परिण्णाय कम्मेत्ति बेमि ॥ ८ ॥ इति सत्य परिण्णाज्झयणस्स छट्ठो
उद्देसो सम्मत्तो ॥

* • • • • • • *

पहू एजस्स दुगुंछणाए आयंकदंसी अहियंति णच्चा जे अज्झत्थं जाणइ से बहिया

पाप उनको पाप नहीं लगता है इसलिये त्रस काय का आरंभ को कर्मबंध का कारण जानकर उसकी हिंसा आप स्वयं करे नहीं, दूसरे के पास करावे नहीं, और हिंसा करने वाले को अच्छा भी जाने नहीं उन को ही में सच्चा शुद्ध संयमी साधु कहता हूं ॥ ८ ॥ यह छठा परीक्षा नामक प्रथम अध्ययनका छठ्ठा उद्देशा पूर्ण हुआ अब वायु काय का स्वरूप बताते हैं

\+ + + + + + +

जो दूसरे का दुःख को देखसकता है वह हिंसाको नहीं करता जानकर वायु काय की हिंसा से निवृत्त हो सकते हैं जो अपनी आत्माका सुख दुःख जानता है, वह परात्माका सुख दुःख जानसकता है जो परात्माका

माणता है से वह आभ्यंतर जा० माणता है ए इसतरह तु० तुल्य भ० परस्पर इ० यह सं० शांतिगत इ० मोसार्थी ण नहीं भ० भाच्छते हैं जी जीनेको ॥ १ ॥ द्वितीय उद्देशामें ॥ २ ॥ द्वितीय

जाणइ जे बहिया जाणइ से अज्झत्थं जाणइ एय तुल्ल मन्नोसिं इह संति गया दविया णावकंखंति जीविउं ॥ १ ॥ लज्जमाणा पुढो पास अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं वाउकम्म समारंभेणं वाउसत्थं समारंभमाणे अण्णे अ णेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ २ ॥ तत्थ खलु भगवया परिण्णा पवेइया इमस्सचेव जीवियस्स, परिवंदणमाणणपूयणाए, जाइमरणमोयणाए, दुक्खपडिघायहेउ, से

सुखदुःखजानसकताहै इव अपनी आत्माका सुख दुःखजान सकताहै यहदोनो बात परस्पर तुल्यहै, इसलिये जिन शासन केविषे शांत संयमवंत पुरुष वायुकायका आरंभसे जीनेकी वांच्छा नहीं करतेहैं ॥१॥इस जगतमें कितने क बौद्ध मतावेक के भिक्षुक शरमिन्दे होते हुए कहते हैं कि हम साधु हैं परंतु वे वायु काय के जीवों की विविध प्रकार के शस्त्रों से हिंसा करते हैं जिससे वायु काय के आश्रित रहे हुए अनेक त्रस स्थावर जीवों की भी हिंसा होती है इसलिये वे जो साधु का नाम धराते हैं सो मिथ्या है ॥ २ ॥ इसमें श्री श्रमण भगवानने शुद्ध समझ कही है जो इस असंयम जीवितव्य कोलिये, यश महिमा पूजा कोलिये, सत्कार सन्मान कोलिये, जन्म मरण के दुःख से मुक्त होने कोलिये, शारीरिक व मानसिक दुःख का निवारणकोलिये स्वयमे

उद्देशामें ॥ १ ॥ द्वितीय उद्देशामें ॥ ४ ॥-स० अब म म कहता हूं स० है स उदते पा माणी भा०

सयमेव वाउसत्थं समारभति, अन्नेहिं वा वाउसत्थं समारभावेति अण्णेहिं वा वाउसत्थ समारभंते समणुजाणइ तं से अहियाए तं स अबोहिए ॥ ३ ॥ से तं संबुज्झमाण आयाणीयं समुट्ठाए सोच्चा खलु भगवओ अणगाराण वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवइ एस खलु गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु णरए, इच्चत्थं गढिए लोए जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं वायुकम्मसमारंभेण वाउसत्थं समारभमाणे अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ४ ॥ से बेमि संति संपाइमा पाणा आहच्च संपयंति

स वायु काय के जीवों की घात करता है, दूसरे के पास कराता है, और घात करने वाले को अच्छा जानता है उसका वायुकाय का आरंभ अहित का कर्ता तथा अबोध का कर्ता होगा ॥ ३ ॥ वैमानिक तीर्थंकरादि महात्माओंका सदोध श्रवण करके आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादि है उनको अङ्गीकार करते हैं वे समझते हैं कि वायुकाय का आरंभ निश्चय मे कर्मबंध का कारण, मोहका कारण, मृत्यु का कारण, तथा नरक का कारण है ऐसा होते हुए भी मनुष्यादि जीव अपने कार्य में वृद्ध बनकर के अनेक प्रकार के शस्त्रों से वायु काय की तथा वायु काय के आश्रय रहे हुए त्रस स्थावर जीवों की घात करते हैं ॥ ४ ॥ अब अहो जंबु! मै कहता हूं कि इस वायु के साथ अनेक उड़ते प्राणीयों मच्छर आदि एकत्रित होकर पानी भीपे

भाकरके प० पड़ते हैं प च० फ० स्पर्श स निमपातें पु स्पर्श हुआ ए कित क स० सकुचित पना को भा० मास होते हैं जे० जो त० वहां स सकुचितपना को भा मात होते हैं ते वे त० वहां प० परिताप पाते हैं जे० जो त० वहां प० परिताप पाते हैं ते० वे त० वहां उ० मरजाते हैं ॥ ५ ॥ द्वितीय

य फारिस च खलु पुट्ठा एगे सघाय मावज्जति जे तत्थ सघाय मा वज्जति ते तत्थ परिया विज्जंति जे तत्थ परियाविज्जंति ते तत्थ उद्दायति ॥ ५ ॥ एत्थ सत्थं समारभमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णाया भवंति एत्थ सत्थ असमारभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति त परिण्णाय मेहावी णेव सय वाउसत्थ समारंभेज्जा णेवन्नेहिं वाउसत्थ समारंभावेज्जा णेवन्ने वाउसत्थ समारभते समणुजाणेज्जा जस्से ते वायुसत्थ स

आदि दुःखमद स्थान में गिरते हैं वे उस स्पर्श को स्पर्शते हुए सकुचित होते हैं जो वहां सकुचित होते हैं, वे वहां मूर्च्छा पाते हैं और जो वहां मूर्च्छित होते हैं, वे मृत्यु को मास होते हैं ॥ ५ ॥ जो वायु काय के जीवो की हिंसा में मवृत्त होता है, उसे नतो आरंभ का ज्ञान होता है और न मत्याख्यान होता है; जिससे उसको निरंतर वायुकाय की हिंसा जन्य पाप लगता रहता है और जो ज्ञानी जन वायुकाय की हिंसा से निवृत्त हुए हैं उनको आरंभ का ज्ञान व त्याग होता है अतः ऐसे उनको हिंसा जन्य पाप नहीं लगता है इसलिये वायुकाय का आरंभ को कर्मबंध का कारण मानकर उसकी हिंसा आप

उद्देशामें ॥ ६ ॥ ए० इन सब को अ० भी जा० जाने उ० कर्मबंधनेवाले जे० जो आ० आचार में न० नहीं र० रमते हैं आ० आरंभ करते हुए वि० संयम व० बोलते हैं छ० स्वछन्दाचारी अ० प्राप्त हुए आ० आरंभमें आसक्त प० करते हैं सं० कर्मबंध ॥ ७ ॥ से० वह व० ज्ञानादिलक्ष्मीयुक्त स० सब स० साधु का योग्य प० प्रज्ञासे अ० आत्मासे अ० अयोग्य पा० पापकर्म णो० नहीं अ० अन्वर्ये ॥ ८ ॥ तं० उसे

मारंभा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णाय कम्मेत्ति बेमि ॥ ६ ॥ एत्थपि जाण उवादीयमाणा, जे आयारे न रमति, आरंभमाणा विणयं वयति, छंदोवणीया, अज्झोव वण्णा, आरंभसत्ता पकरेंति संग ॥७॥ से वसुमं सव्वसमण्णागयपण्णाणेण अप्पा णेणं अकरणिज्जं पावकम्मं णो अन्नेसि ॥ ८ ॥ तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं छज्जी

स्वयं करे नहीं दूसरे के पास करावे नहीं, और हिंसा करने वाले को अच्छा भी जाने नहीं उनको ही में यद्धमपमी साधु कहता हूं ॥ ६ ॥ उक्त प्रकार से छरीकाय के जीवों का वध से कर्मबंधन होता हुआ जानकर भी आचार में न रहते हैं, आरंभ करते हुए हम संयमी है ऐसा बोलते हैं स्वेच्छा चारी ह मात्र काम भोगो में तल्लीन रहते हैं, और जो आरंभ में आसक्त रहते हैं, वे कर्मबंध करते हैं, ॥ ७ ॥ इसलिये ज्ञानादि भाव लक्ष्मी युक्त साधु को चाहिये कि अयोग्य पाप कर्म को आप समा चरे नहीं ॥ ८ ॥ उपर्युक्त कथन सर्वज्ञ प्रभुका जानकर पंडित पुरुषों का कर्तव्य है कि आप स्वतः छ

म जानकर मे पंडित ण० नहीं अस स्वयं छ छजीवनिका कायाका स० शस्त्र से स० आरंभ करे णे० नहीं अ० छजीवनीकायका स शस्त्र से स आरंभ करावे णे० नहीं ज म० अन्य छ छजीवनिकाय को स० शस्त्रसे भारंभ करते स० भलामाणे ज० जिस को ए० ये छ छजीवनिकाय के स० शस्त्र का म० आरंभ की प० परिज्ञा म० हुइ है से० उन को ही मु मुनि प० शुद्ध संयमी इ० एसा बे० मैं कहता हूं ॥ १ ॥

वणिकायसत्थं समारंभेज्जा, णेवण्णेहिं छज्जीवणिकायसत्थं समारंभावेज्जा, णेवण्णे छ ज्जीवणि कायसत्थं समारंभते समणुजाणेज्जा जस्से ते छज्जीवणिकायसत्थंसमारंभा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णाय कम्मेत्ति बेमि।१।इति सत्थपरिण्णा णाम पढम मज्झयणं सम्मत्तं ॥

जीवनिकाय की हिंसा करे नहीं, दूसरे के पास कदापि करावे नहीं और हिंसा करने वाले को अच्छा भी जाने नहीं इस तरह जो छजीवनिकाय की हिंसा से निवर्ते है, उनको ही मैं शुद्ध संयमी साधु कहता हूं ॥ १ ॥ यह प्रथम अध्ययन में छजीवनिकाय का स्वरूप कहा उस को ज्ञपरिज्ञासे जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से त्याग कर वह आचारवंत साधु होवे सो लोक काहिर शब्दादि विषय तथा रागादि कषाय इन को जिनप नाम जित मत एव लोक विजय नामक दूसरा अध्ययन श्री सुधर्मास्वामी कहते हैं

# ॥ अथ लोकविजयनामक द्वितीयमध्ययनम् ॥

ज० जो गु० विषय म० वे मू० संसारस्थान ज० जो मू० संसारस्थान से० वे गु० विषय इ० एसा म० वे गु० विषयार्थी म० महान प० परिताप स म० रहे प० प्रमादी त० यह ज० इस प्रकार मा० माता मे० मेरी पि० पिता मेरा भा० भ्राता मेरा भ० भगिनी मेरी भ० भार्या मेरी पु० पुत्र मेरा धू० पुत्री मेरी सु० पुत्रवधू स० मित्र स० स्वजन स० सम्बन्धी स० भरतणी मे० मेरे वि० विविध प्रकार के उपकरण प० परिवर्तन भो० भोजन वस्त्रादि मेरे इ० इस में ग० गृद्धि लोक व० रहते हैं प० प्रमादी ॥ १ ॥ अ०

ज गुणे से मूलट्ठाणे जे मूलट्ठाणे से गुणे इति से गुणट्ठी महता परियावेणं वसे पमत्ते तंजहा माया मे, पिया मे भाया मे, भइणी मे, भज्जा मे, पुत्ता मे, धूया मे, सुण्हा मे सहि, सयण संगंथ, संथुया मे विवित्तोवगरणपरियट्टण भोयणच्छायण मे, इच्चत्थं गढिए लोए वसे पमत्ते ॥ १ ॥ अहोयराओ परितप्पमाणे कालाकालसमुट्ठाइ संजो -

जो विषय हैं वे संसार के हेतु हैं, और जो संसार के हेतु हैं वे विषय हैं इसलिये जो विषयार्थी होते हैं, वे महादुःख पाते हैं, और कहते हैं कि—माता मेरी है, पिता मेरा है, भ्राता, भगिनी, स्त्री, पुत्र, पुत्री, पुत्रवधु, मित्र, स्वजन सम्बन्धि मेरे हैं वैसेही विविध प्रकार के उपकरण हाथी, घोडा, शयनासन मनुष्य, भोजन, वस्त्रादिक मेरे हैं एसी तरह विषयी लोक ममत्व धन और गृद्धि पन रहते हैं ॥ १ ॥

दिन य० प० रा० रात्रि प परिताप पातेहुए का० मतिमय स० सावधान हुवे ४० ४मोगार्थी अ० धन के लोभी आ लुब्ध स० सहसात्कार वि विषय में दृष चित्त ए० यहां स हिंसा में पु बारबार ॥ २ ॥ अ अल्प स निश्चयाथ वाची आ० आयुष्य, इ० यहां ए कितनेक मा० मनुष्यों को त० यह म० इस प्रकार सो० श्रोतेन्द्रिय की प० परिज्ञा प घटती है च० चक्षुकी प० परिज्ञा प घटती है घा० घाणेन्द्रिय की प० परिज्ञा प० घटती है र० जिव्हा की प० परिज्ञा प घटती है, फ० स्पर्शेन्द्रिय की प० परिज्ञा प० घटती है, अ० सन्मुख आती है, व वृद्धावस्था च० और ख निश्चय ५० मच्छी तरह

गद्वी, अट्टालोभी, आलुपे, सहसाकारे, विणिविट्ठचित्ते, एत्थ सत्थे पुणा पुणो ॥ २ ॥

अप्पं च खलु आउय इह मेगेसिं माणवाण तंजहा—सोयपरिण्णाणेहिं परिहायमाणे, चक्खुपरिण्णाणेहिं परिहायमाणे घाणपरिण्णाणेहिं परिहायमाणे, रसणपरिण्णाणेहिं परिहायमाणे, फासपरिण्णाणेहिं परिहायमाणे, अभिक्कंतं च खलु वयं संपेहाए तओ से

उक्त कुटुम्ब व सपाधिकोलिये महोरात्रि दुःखित होता हुआ, समयदु समय की कुछभी परवाह नहीं करता हुआ उद्यम करता है उक्त पदार्थ में ही लुब्ध होकर निडर पनेसे खात्र छिद्रादि अनेक कुकर्म करने में षट्काय के जीवों के प्राण वारंवार लूटता हुआ आयुः व्यतीत करता है, ॥ २ ॥ प्रथमतो मनुष्य का आयुष्यही अल्प है, उसमे भी जरा-वृद्धा वस्था प्राप्त होनेसे कान, आंख, नाक, जीव्हा,

गेस्तकरके त० तब मे० वे ग० एकदा मू० मूढभाव ज० उत्पन्न करते हैं ॥ २ ॥ जे० जिस की सा० या स० साथ ग० रहता है सं० व स० या पं० उस का ए० एकदा णि० पुत्रादि पु० पहिले प० छोडते हैं सो० वह वा० या ते० उन णि० पुत्रादिक कों प० पिछे से प० छोडदेता है ण० नहीं ते० वे त० तेरी ता० रक्षा के लिये वा० या स० शरण के लिये तु० तूभी ते० उन का ण० नहीं ता० रक्षा के लिये से० वे ण० नहीं हा० हास्य के लिये कि० क्रीडा के लिये, ण० नहीं र० आनंद के लिये ण० नहीं वि० विभूषा के लिये

एगया मूढभावं जणयंति ॥ २ ॥ जेहिं वा सद्धिं संवसति ते वा णं एगया णियगा पुव्विं परिवयंति, सो वा ते णियगे पच्छा परिवएज्जा । णालं ते तव ताणाए वा सरणाए वा तुमंपि तेसिं णालं ताणाए सरणाए वा । सेण हासाए ण किड्डाए, ण रतीए,

और शरीर इनकी शक्ति प्रतिदिन कमी होती जाती है उस वृद्धावस्था को देखकर विषयासक्त प्राणी इच्छा तृप्त करने में असमर्थ हो निरुत्साह बन जाता है, और अपना भागता है ॥ २ ॥ जिन पुत्र कलत्रादिकों के साथ वह वृद्धपुरुष रहता है, वेही एकदिन उस वृद्ध पुरुष को अशक्त जान पहिले ही छोड देते हैं वह वृद्ध पुरुष भी पीछे उन पुत्र कलत्रादि कों की निन्दा करता हुआ छोड ऐसा कदाचित पुण्योदयसे सुपुत्रादिक मिले और अपना वृद्ध पिताको न त्यागे तोभी वे उसका बचाव करने व शरण देने में समर्थ नहीं होते हो सकते है और वह वृद्ध भी उनका बचाव करने में व शरण देने में समर्थ नहीं होसक

इ० एसी स० सावधान हो करके अ० यथोक्त रुयमानुष्ठान ॥ ४ ॥ अं अवसर च और स० निश्चय इ० यह सं० देख करके धी० धैर्यवन्त मु० मुहूर्त मात्र भी णो० नहीं प० प्रमाद करे च वय अ० जाता है, जो यौवन ॥ ५ ॥ जी० जीवितव्य के लिये इ यहां जे० जो प० प्रमादी से वे ह० मारते हैं छे० छेदते हैं भी० भेदते हैं लु० लूटते हैं विलु० विशेष प्रकारे लूटते हैं उ० उद्वेग उपजाते हैं उ० त्रास देते हैं अ० नहीं किया क० करूंगा इ० एसा म० मानता हुवा ॥ ६ ॥ जे० जिसकी स० साथ स० रहता है त० वे ण० इसको णि० पुत्रादि पु० पहि

ण विभूसाए, इच्चेव समुट्ठिए अहोविहाराए ॥ ४ ॥ अंतरं च खलु इमं संपेहाए धीरो मुहुत्तमवि णो पमायए, वओ अच्चेइ जोव्वणं च ॥ ५ ॥ जीविए इह जे पमत्ता से हंता, छेत्ता, भेत्ता, लुंपित्ता, विलुंपित्ता, उद्दवित्ता, उत्तासइत्ता अकडं करिस्सामि त्तिमण्णमाणे ॥ ६ ॥ जेहिं वा सद्धिं संवसति ते वा णं एगया णियगा

ता है और वह वृद्ध हास्य, क्रीडा, रति तथा विभूषाके योग्य नहीं रहता है एसी वृद्धावस्थाको दु खदायी जानकर उत्तम पुरुष यथोक्त संयम अनुष्ठान में सावधान होते हैं ॥ ४ ॥ इस उत्तम अवसर का देख कर धीर पुरुष मुहूर्त मात्र भी धर्म क्रिया करने में प्रमाद नहीं करे, क्यों कि धर्म करने का समय और यौवन शिघ्री जाता है ॥ ५ ॥ एसा ज्ञान जिसको नहीं है वे जीव इस असंयम जीवितव्य के लिये प्रमत्त होकर के षट् काय के जीवों को मारते हैं, भेदते हैं, लूटते हैं, विशेष प्रकार से लूटते हैं प्राण रहित करते हैं, तथा त्रास

स पो० पासते है मा० वह त० उन पि० पुत्रादिक को प० पिछ १ ० भान्ताह पा० नहीं त वे त तेरा ता० रक्षण स० शरण के लिये तु० तूभी ते० उनका णा० नहीं ता० रक्षण स० शरण ॥७॥ उ० भोगवते यथा हुवा स० पास स० सञ्चय क० करे इ० यहां ए० एकेक अ० असयाभि भो० भोगवने के लिये त० सब से० उनको रो० रोगोत्पत्ति स० होती है ॥८॥ जे० जिसकी म माय स० रहता है वे० षण० उसको णि०

पुव्विं पोसति सो वा ते णियगे पच्छा पोसेज्जा । णाल ते तव ताणाए वा सरणाए वा

तुममपि तेसिं णाल ताणाए वा सरणाए वा ॥ ७ ॥ उवादियसेसेण वा सणिहीसणियओ

कज्जति इह मेगेसिं असजताण भोयणाए तओ से एगया राग समुप्पाया समुप्पज्जति

॥ ८ ॥ जेहिं वा सद्धिं संवसति ते वा ण एगया णियगा पुव्विं परिहरंति सो वा ते

देते है और एसा मानके करते हैकिओ किसीने आसक्त नहीं किया सो करुंगा ॥३॥ परंतु मंदभाग्ये जिसको किंचित्भी धनकी प्राप्ति नहीं होवे तो कुटुम्बी जन उसकी पोषणा करते हैं तथा समय पाकर धन प्राप्त कर वह भी कुटुम्बीजनोंकी पोषणा करता है परंतु वे कुटुम्बी जन उनकी पालना करने तथा शरण देने में समर्थ नहीं है, और वह भी कुटुम्बीजनो को पालने में तथा शरण देने में समर्थ नहीं होता है ॥ ७ ॥ उक्त प्रकारसे भोगवते यथा हुवा द्रव्य का सञ्चय करके रखते हैं, एसा मानते हैं, कि यह द्रव्य हम को तथा हमारे कुटुम्बकेउपभोगार्थ होगा परंतु अन्तरायोदयसे एकदा उनको रोगकी प्राप्ति होजाती है जिनसेंभि उस द्रव्य को

पुमाति पु० पहिले प छोडदेते हैं सो० वह ते० उन णि० पुत्रादिक को प० पिछे से प० छोडदेवे णा० नहीं वे ते त० तेरा ता० रक्षण के लिये स शरण के लिये तु तूभी ते० उनके णा० नहीं ता० रक्षण स० शरण के लिय ॥ ९ ॥ ए० एसा जा० जाण करके दु दुःख प० प्रत्येक को सा० सुख अ० नहीं गइ च० और स० निश्चय व० वय स० देख करके स० अवसर जा० जाणो प० पंडित ॥१०॥ जा० यावत् सो० श्रोतेन्द्रिय का ज्ञान अ० हीन न हुवा ने० चक्षुइन्द्रि का ज्ञान अ० हीन न हुवा घा० घ्राणेन्द्रिय का ज्ञान अ०

णियगे पच्छा परिहरेज्जा णालं ते तव ताणाए वा सरणाए वा, तुमपि तेसिं णाल ताणाए वा सरणाए वा ॥ ९ ॥ एव जाणितु दुक्ख पत्तेयं साय अणभिक्कत च खलु वय संपेहाए खणं जाण्माहि पंडिए ॥ १० ॥ जाव सोयपरिण्णाणेहिं अपरिहायमाणे, नेत्तपरि-

भोगव नहीं सकते हैं ॥८॥ जिसकी साथ वह रहता है व उस पुरुष को पहिले छोडदेते हैं और वह पुरुष भी उनको पिछे से त्याग देता है वे पुत्रादिक तेरा बचाव करने व शरण देने मे समर्थ नहीं होसकते हैं और तूभी उनका बचाव करने में व शरण देने में समर्थ नहीं हो सकता है ॥९॥ प्रत्येक जीव अपने सुख दुःख को अलग २ भोगते हैं एसा जान कर जबतक वृद्धावस्था प्राप्त नहीं हुइ एसी योवन वय को देखकर हे पंडित अवसर का पहिचान॥१०॥अहो भव्य जहां लग श्रोत्र, चक्षु, घ्राण, रस, और स्पर्श इन पांचो इन्द्रियों कि ज्ञान शक्ति कमी नहीं हुइ है, उस दरम्यान आत्माके अर्थ सयम अनुष्ठान का सम्यक् रीति

हिन नहीं हुवा र० रसेन्द्रिय का ज्ञान अ० हिन नहीं हुवा फा० स्पर्शइन्द्रिय का ज्ञान अ० हिन नहीं हुवा इ० इनका वि० विविध प्रकार के प० ज्ञान से अ० हीन न हुवा आ० आत्मा स० सम्यक् करे स० साधनकरेपा सेइ० एसा बे० मैं कहता हूं ॥ ११ ॥ इ० यह लोकविजय अ० अध्ययनका प० प्रथमोद्देश ॥

अ० अरति आ० दूर करे से० वे मे० पंडित ख० क्षणमें मु० मुक्त होते हैं अ० आज्ञाकी बाहिर पु०

ण्णाणहिं अपरिहायमाणे, घाण परिण्णाणेहिं अपरिहायमाणे रसपरिण्णाणेहिं अपरिहायमाणे, फास परिण्णाणेहिं अपरिहायमाणे इच्चेतेहिं विरूवरूवेहिं परिण्णाणेहिं अपरिहायमाणे आयट्ठसम्मं समणुवासेज्जासित्तिबेमि ॥ ११ ॥ इति लोगविजयज्झयणस्स पढमो देसो सम्मत्तो ॥ × × ×

अरइं आउट्टे से मेहावी खणसि मुक्के अणाणाए पुट्ठावि एगा णियट्टंति मंदा मोहेण

मे पालन कर एसा मैं कहता हूं ॥ ११ ॥ प्रथम उद्देशा में ज्ञानियों का भगत्याग कहा जो सह स्यागी होगा वह संयम में दृढ होगा यह आगे बताते हैं यह लोकविजय दूसरे अध्ययनका प्रथमोद्देश हुवा

संयम पालते ? कदाचित् अरति पैदा होजाय उसे ज्ञानी दूरकरे तब वह ज्ञानी शिघ्रही मुक्तिमास

स्पर्श प० एकेक णि निवर्त म० मूर्ख मो० मो में पा रहाहुवा ॥ १ ॥ अ० अपारिग्रही भ० होवुंगा स० सावधान हुवे ल० प्राप्त का० कामभोग अ० ग्रहण करे अ० आज्ञा बाहिर मु० साधु को प० भासिलेसते हैं ए० यहां मो० मोह में पु० वारवार स० आसक्त णो० नहीं इ० इधर के णो० नहीं पा० उधर के ॥२॥ वा० विमुक्त हु० निश्चय से जे ज० मनुष्य ज० जो ज० जन पा० पारगामी लो० लोभ लो अ० अलोभ से दु०

पाउढा ॥ १ ॥ अपरिग्गहा भविस्सामो समुट्ठाए लद्धे कामे अभिगाहेति, अणाणाए मुणिणो पडिलेहति, एत्थं मोहे पुणो पुणो सण्णा णो हव्वाए, णो पाराए ॥२ ॥ विमु त्ता हु ते जणा, ज जणा पारगामिणो लोभ अलोभेणं दुगछमाणे लद्धे कामे णाभि-

करे ( भरतजी की तरह ) और मोहसे आच्छादित बने हुए कितनेक मूर्ख अरति परिषह प्राप्त होने पर वीतराग की आज्ञासे बाहिर हो संयम से निवृत्त होते हैं अर्थात् भ्रष्ट हो जाते हैं, ॥ १ ॥ वे वेषधारी साधु कहते हैं, कि हम अपरिग्रही बनेंगे यों कहकर वे जिनाज्ञा के विरुद्ध कार्य कर लोगों से धनादि ठगकर प्राप्त काम भोगादिक को भोगते हैं इससे वे विषय की गवेषणा करते हुए वारवार मोहरूप कीचडमें फसते हैं वे न इधर के ( मुनि धर्म में ) रहते हैं न उधरके ( गृहस्थ धर्म में ) रहते हैं ॥ २ ॥ निश्चय से वही पुरुष त्यागी हैं कि जो शुद्ध संयम सदा पालते रहते हैं जो निर्लोभता से लोभका तिरस्कार करके प्राप्त कामभोगो को नहीं चाहते हैं अथवा मूलसे ही लोभको निर्मूल कर दीक्षित होते हैं, वे कर्म रहित होकर के

दुगाछा करते हुवे स० प्राप्त का० कामभोग णा० नहीं ग्रहण करे वि० विना लो० लोभ नि० निकले ए० यह अ० अकर्मी जा० जाने पा० देखे प० देख करके ण० नहीं अ० वांच्छता है ए० यहां अ० साधु इ० ऐसा प० कहलाता है ॥ ३ ॥ अ० अहोरात्रि प० परिताप पाते का० समय कु समय स० सावधान हो स० मनोगार्थी अ० अर्थ लोभी आ० मूर्छ स० विना विचारे करे वि० विविध वस्तु में मन ए० यहां स० शस्त्र से पु० वारंवार ॥४॥ से० वे आ० आत्मबलार्थ से० वे णा० ज्ञाति बलार्थ से० वे स० स्वजनबलार्थ मि० मित्र बलार्थ पे० प्रेत्य बलार्थ दे० देवबलार्थ रा० राज्यबलार्थ चो० चोरबलार्थ अ० अतिथिबलार्थ कि० कृपणबलार्थ

गाहइ विणावि लोभ निक्खम एस अकम्मे जाणति पासति पडिलेहाए णावकखति एस अणगारेत्ति पवुच्चति ॥ ३ ॥ अहोयराओ परितप्पमाणे, कालाकालसमुट्ठाइ, संजोगट्ठी, अट्ठालोभी, आलुपे, सहसाकारे, विणिविट्ठचित्ते, एत्थ सत्थे पुणो पुणो ॥४॥ से आयबले, से णाइबले, से सयणबले, से मित्तबले, स पेच्चबले, से देवबले, से

सर्वज्ञ सर्वदर्शी होते हैं ऐसा विचार करके जो लोभको नहीं चाहता है वही सच्चा अणगार कहाता है ॥३॥ अज्ञानी मनुष्य अहो रात्रि दुःखित होते हुवे, समय कुसमय की परवाह नहीं करते हुए, धन और स्त्री में आसक्त बन अनेक वस्तुओं में चित्तको स्थापन करते हुवे, बगर विचारे वारम्वार अनेक प्रकार के आरंभ समारंभ करते हैं ॥ ४ ॥ जगतवासी जीव शरीरका, ज्ञातिका, स्वजनका, मित्रका, प्रेत्यका, देवका

स० साधुबलार्थ इ० इत्यादि वि० विविध का० कार्यार्थ दं० दंड समारंभे स० देख करके भ० भय कृ० करे प० पाप से छूटना इ० ऐसा म० मानता हुआ अ० अथवा आ० आकांक्षा में ॥ ५ ॥ त० उसको प० ज्ञान करके मे० पंडित णे० नहीं स० स्वयं ए० ऐसे क० कार्यों से दं० हिंसा स० करे णे० नहीं अ० अन्य पास ए० ऐसे क० कार्यों से दं० करावे ए० ऐसे क० कार्यों से दं० हिंसा स० करने वाले अ० अन्यको नहीं स० अच्छा माने ॥ ६ ॥ एस० यह म० मार्ग आ० तीर्थंकरों ने प० कहा ज० जहां अ० अर्थ कुशल

रायबले, से चोरबले, से अतिहिबले, से किवणबले, से समणबले, इच्चेतहिं विरू वरूवेहिं कज्जेहिं दंडसमायाणं संपेहाए भया कज्जति पावमोक्खोत्ति मण्णमाणे अदुवा आससाए ॥ ५ ॥ तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं एएहिं कज्जेहिं दंडं समारंभेज्जा, णेवण्णेहिं एएहिं कज्जेहिं दंड समारंभावेज्जा, एएहिं कज्जेहिं दंडं समारंभंतेवि अण्णे णो समणुजाणेज्जा ॥ ६ ॥ एस मग्गे आरिएहिं पवेदिए, जहेत्थ कुसले णो वलिम्पिज्जासि

राज्यका, चोरका, अतिथिका, कृपण का तथा साधु का बल, इत्यादि अनेक प्रकारके बल केलिये प्राणाति पातादि पापाचरण करते हैं ऐसा जान करके कि यदि ऐसा कार्य नहीं करुंगा तो पूर्वोक्त शरीरादि बल नहीं होंगे; इस भयसे तथा पापसे छूटने केलिये अथवा अप्राप्त वस्तु को प्राप्त करने के लिये, प्राणातिपातादि पाप करते हैं ॥ ५ ॥ ऐसा जानकर पण्डित पुरुष उक्त कार्य साधने केलिये किसी प्रकार का पाप आप करे

न० नहीं लि० लेपाय इ० ऐसा वे मैं कहता हूं ॥७॥ इ० यह लो० लोकविजय अ० अध्ययन का बि० दूसरा उ० उद्देशा स० समाप्त

से० वे अ० अनंतवार उ० उच्चगोत्र में अ० अनंतीवार णी० नीचगोत्र में णो० नहीं ही० हीन णो० नहीं अ० अधिक णा० नहीं पि० वाञ्छे इ० ऐसा स० जानकर क० कौन गो० गोत्रवादी क० कौन मानवादी क० किस में वा० या ए० काइ गि० गृद्ध होवे ॥१॥ तं० इस लिये पं० पंडित णो० नहीं ह० हर्ष पावे णो० नहीं

त्ति वेमि इति लोगविजयज्झयणस्स वीओद्देसो सम्मत्तो * *

असइं उच्चागोए, असइं णीयागोए, णो हीणे, णो अतिरित्ते, णो पीहए इति संखाए के गोयावादी, के माणावादी, कंसि वा एगे गिज्झे ॥ १ ॥ तम्हा पंडिए णो हरिसे

नहीं, दूसरे के पास करावे नहीं, और पाप करते हुवे को अच्छा भी जाने नहीं ॥ ६ ॥ यह मार्ग तीर्थंकर भगवान ने फरमाया है इसलिये अपनी आत्मा कर्म से न लेपाय वैसे पंडित पुरुषों को वर्तना चाहिये यह लोक विजय नामक द्वितीय अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुआ इसमें संयम की दृढता बताई जो मान का निग्रह करेंगे वे संयम में दृढ रहेंगे इसलिये आगे मान निग्रह करने का कहते हैं + +

संसारी जीव अनंतवार ऊंच गोत्रमें और अनंतीवार नीच गोत्रमें उत्पन्न हो आया है इसमें कुच्छभी न्यूनाधिकता नहीं है (क्योंकि दोनों के कर्म वर्गणाके पुद्गल सरिखे हैं) ऐसा जान आठमदमें से एकही मदका स्थान वांच्छे नहीं जो जिसका मद करता है वह आगे उसी वस्तुमें की हीनता पाता है ऐसा

कु कोपे भू० मूर्खों को जा० मान करके प० विचार कर क सा० सुख स० सामितिवंत प मद देखनेवाले ते० वह म० यथा अ० अन्धपना व० बधिरपना मू० गुंगापना का० काणापना कु० टूंठापना खु० कुबड़ापना व बांकापना सा० कासापना स कावरापना स० सरोगीपना स० अपने प्रमाद से अ० अनेक प्रकार की जो० योनि में सं० प्राप्त होते हैं वि० विविध रूप का फा० स्पर्श प वेदते हैं ॥२॥ से० वह अ० अज्ञा

णो कुप्पे, भूएहिं जाण पाडिलेह सात समिते एयाणुपस्सी त जहा—अधत्त, बहिरत्त, मूयत्त, काणत्तं, कुटत्त, खुज्जत्तं, वडहत्तं, सामत्त, सबलत्त, सहलत्त, सहपमाएणे, अणेगरूवाओ जोणीओ संधाति विरूवरूवे फास पडिसंवेदेइ ॥ २ ॥ से अबुज्झ

जानकर कौन विद्वान गोत्रादिक का मद करेगा और कौनसी वस्तु में गृद्ध बनेगा ॥ १ ॥ इसलिये पंडित पुरुषों को ऊंच गोत्र का हर्ष तथा नीच गोत्रका विखवाद नहीं करना चाहिये, तथा सर्व जीवों को सुख प्रिय है, ऐसा समितिवंत सम्यक् प्रकारे विचारे और ऐसा जाने कि प्रमादी जीव कर्म के वश से अन्धापना, बहिरापना, गूंगापना, कानापना, टूंठापना, कुबड़ापना, बांकापना, कासापना, चित्रकाबरापना, शरीर का विरूपपना, इत्यादि अनेक दुःख से दुःखी होते हैं ऐसा सरोगपना अनेक प्रकार की योनियों में पाता है और विविध प्रकारके शीतोष्णादि स्पर्शादि दुःखों को भोगता है ॥ २ ॥ पूर्व स्वरूप को नहीं जानने वाला

ज्ञानघन इ० हनापहत ज० जन्म म० मरण में अ० भयत है ॥ ३ ॥ जी० जीवितव्य पु० अलग पि० प्रिय इ० इस लोक में मा० मनुष्य को ख० क्षेत्र व० वस्तु (घर) म० ममत्व करता हुवा ॥ ४ ॥ आ० रंगी रि वंगी म० मणि कु० कुंडल म० सहित हि० चांदि इ० स्त्रीओं प० गृद्ध होता हुवा तं० उस में र रक्त ॥ ॥ ण नहीं इ यहां त० तप वा० या द० दम वा० या णि० नियम दि० दिखते हैं स० सपूर्ण बा० मूर्ख जी जीवितार्थ मा० आलपाल करता मू मूर्ख वि० विपरीतपना को उ०जाता है ॥ ६ ॥ इ० इसको

माण हतोनहते जाइमरण मणुपरियट्टमाणे ॥ ३ ॥ जीविय पुढो पिय इह मेगेसिं माणवाणं खत्त वत्थु ममायमाणाण ॥ ४ ॥ आरत्तं विरत्त मणि कुंडल सह हिरण्णेण इत्थियाओ परिगिज्झ तत्थेव रत्ता ॥ ५ ॥ ण इत्थ तपो वा, दमो वा, णियमो वा, दिस्सति संपुण्णं बाले जीविउकामे लालप्पमाणे मूढे विप्परियास मुवेति॥६॥

पुन्य समार में हनापहत होता है॥३॥ प्रत्येक प्राणी को क्षेत्र घरादि सपत्ति पर ममत्व भाव होने से जीवितव्य बहुत प्रिय लगता है ॥ ४ ॥ अज्ञानी जीव तरह २ के वस्त्र, मणि, भुषण, धन, स्त्री आदि पदार्थों में लुब्धघन कर के उन में आसक्त होते हैं ॥ ५ ॥ इस समार में तप, व्रत, और नियम का कुच्छभी फल नहीं दीखता है केवल कष्टरूप है अज्ञानी मूढजीव तुच्छ जीवितव्य की कामना और भोगो की लालसा करते हुवे वि पर्यास भाव को प्राप्त होते हैं अर्थात् तप व्रत नियम जो सार हैं उनको असार बताते हैं और धन स्त्रियादिक

ण० नहीं अ० इच्छते हैं जे० जो म०मनुष्य धु०धुवचारी जा जन्म म०मरण प०जानकर च०चले स० संयम द० दृढ रहे ॥ ७ ॥ ण नहीं है का० कालका आ० अनागम स० सर्व पा० प्राणी को पि० प्रिय आयुष्य सु० सुखशाता दु० दुःख प्रतिकूल अ० अप्रियवध पि०प्रिय जीवितव्य जी० जीनेकी का० इच्छा रखने वाले स सर्व को जीवितव्य पि प्रिय ॥ ८ ॥ त० उसको प० ग्रहण करके दु० द्विपद च० चतुष्पद

इणमेव णावकंखंति जे जणा धुवचारिणो जातिमरण परिण्णाय चरे संकमणे दढे॥७॥

णत्थि कालस्स णागमो, सव्वे पाणा पियाउया, सुहसाया, दुक्खपडिकूला, अप्पियवहा, पियजीविणो, जीविउकामा सव्वेसिं जीविय पिय ॥ ८ ॥ तं परिगिज्झ दुपय चउप्पय अभिजुंजियाण, संसंचियाण, तिविहेण जावि से तत्थ मत्ता भवइ अप्पा वा, बहुया

जो असार हैं उनका सार बताते हैं ॥६॥ जो साधुजन मोक्षार्थी हैं वे इस प्रकार असंयम जीवितव्य को नहीं चाहते हैं और जन्म मरण को घोर दुःख जान कर संयम के विषे निश्चलपनसे प्रवर्तते हैं ॥७॥ कालतो अवश्यही आवेगा इसलिये जहां तक आयुष्य का अंत नहो वहां तक सब जीवों की दया पालना चाहिये क्योंकि सर्व जीव दीर्घायुष निराबाध सुख को चाहते हैं, सदैव सुख पूर्वक आयुः व्यतीत करना चाहते हैं दुःख रोग पीडा सब को प्रतिकूल है रोगग्रसित भी मरना नहीं चाहता है ॥ ८ ॥ जीवितव्य को परम प्रिय जाण करके उसके निर्वाह केलिये पापाचरण रूप व्यापार करके द्विपद चतुष्पद तथा थोडा और बहुत

भ व्यापार कर म० संचय करता वि० विविध जि० जितने से० उसके त० तहां म० प्रमाण म० होती है भ थोडा व० बहुत से० वे त० तहां ग० गृद्धि बना चि० रह भो० भोगवने को ॥ ९॥ त तब स० वे प० एकदा वि विविध प० शेष रहा सं० उत्पन्न हुवा म० महाउपकरण भ० होवे त० उसको से० वे प० एकदा दा कुटुम्ब वि० हिस्सा लेते हैं अ० चोर से० उसे अ० हरते हैं रा० राजा से० उसे वि० दंड लेता है णा० नाश पाता है वि० विनाश होता है से० वह भ० घर दा जलने से० वह द० जलता है इ० इस रीति से प पराथे कु० क्रूर क कर्म बा० अज्ञानी प० करता हुवा से उस दु० दुःख से मू० मूर्ख वि०

ना, से तत्थ गढिए चिट्ठइ भोयणाए ॥ ९ ॥ तओ से एगया विविहं परिसिट्ठं संभूयं महोवगरणं भवति, तंपि से एगया दायादा विभयंति, अदत्ताहारो वा से अवहरंति, रायाणो वा से विलुंपंति, णस्सति वा से, विणस्सति वा से, अगारदाहेण वा से डज्झइ इति से परस्सट्ठाए कूराइं कम्माइं बाले पकुव्वमाणे तेण दु-

खानेके लिये धन संचय करता है और उस धनादि में मन वचन और काया से गृद्ध रहता है ॥ ९ ॥ तदनंतर एकदा पुण्योदयसे नाना प्रकार की धनसम्पत्ति एकत्रित हो जाने तो उसको एकदा पापोदयसे गोत्रिज भाग करलेते हैं, चोर चोरी करजाते हैं, राजा लूटता है, व्यापारादि में क्षय होजाता है, तथा स्वतःही विनाशको प्राप्त होजाता है, अग्निप्रयोगसे जल जाता है इत्यादि अनेक तरह से धनक्षय प्रत्यक्ष में देखते हुवे भी अज्ञानी जीव परकेलिये अनेक प्रकारके क्रूर कर्म करते हुवे उस विनष्ट धनादिक के दुःख सेदुःखित

परीखपनाको उ० पाता है ॥ १० ॥ मु० तीर्थंकरों ने हु० निश्चय ए० यह प० कहा है अ० अओघ तीरने वाले ते ये ण० नहीं ओ० ओघ त० तीरे अ० तीर को प्राप्त नहीं हुवे ए० ये ण० नहीं ति० तीरगामी अ० नहीं पारगामी ए० ये ण० नहीं पा० पारगामी ॥११॥ आ० आदरणीय च० निश्चय आ० आदरकर त० उस ठा० स्थान में ण० नहीं चि० रहे वि० असत्य प० प्राप्त कर अ० अखेन्न त० उस ठा० स्थान में चि० रहे ॥ १२ ॥ उ० उपदेश पा० तत्त्वज्ञको ण० नहीं है ॥ १३ ॥ बा० मूर्ख पु० फिर णे० स्नेह का०

क्खेण मूढे विपरियासमुवेति ॥ १० ॥ मुणिणाहुएयं पवइयं अणोहतरा एते णय ओह तरित्तए अतीरंगमा एते णय तीरंगमित्तए अपारंगमा एते णय पारगमित्तए ॥ ११ ॥ आयाणिज्ज च आयाय तमि ठाणे ण चिट्ठइ, वितथं पप्पअखेयन्ने तमिठाणंमि चिट्ठइ, ॥ १२ ॥ उद्देसो पासगस्स णत्थि ॥ १३ ॥ बाले पुण णेहे कामसमणुण्णे असमित

होते हैं अर्थात् विपरीत भाव को प्राप्त होतेहैं ॥ १० ॥ तीर्थंकर भगवानने निश्चय से एसा वर्णन किया है, कि जो कुतीर्थिक तथा पार्श्वस्थादिक हैं, वे संसार समुद्रकेप्रवाह को तीरने में, तीरे पहोंचने में, पार होने में असमर्थ हैं अत एव न तो वे तीर सकते हैं, और न वे तीरपर पहुच सकते हैं, और न पार हो सकते हैं ॥११॥ क्योंकि अज्ञानी जीव आदरणीय जो संयम है, उसको ग्रहण कर उस संयम स्थान में नहीं तिष्ठते और कुगुरु के मिथ्या उपदेश को ग्रहण करके उसमेंही तिष्ठते हैं, इसलिये वे पार नहीं पहुचं सकतेहैं

कामभोग को अच्छा जाने अ० उपशमे नहीं दु०दुःखसे दु० दुःखा दु दुःखी को आ० आर्वतमें अ०पर्यटन करता है ऐसा पे० मैं कहता हूं ॥१४॥ इ० यह लो० लोकविजय अध्ययनका त तीसरा उद्देश ॥

त०तब मे०उनको ए०एकदा रो०रोग स०उत्पत्ति स होती है॥१॥जे जिसकेसा यास०साथस रहताहै ते वे ए एकदा पि०पुत्रादि पु पहिले सो०वह वा०या ते०वे णि०पुत्रादि प०फिर प० अवर्णवाद बोलता है णा०

दुक्खे दुक्खी, दुक्खाण मेव आवट्ट अणुपरियट्टइत्ति बेमि १४इति लोगविजयज्झयणस्स तइआहेसो सम्मत्तो * * *

ततो से एगया रोग समुप्पाया समुप्पज्जंति ॥ १ ॥ जेहिं वा सद्धिं संवसंति ते

॥ १० ॥ सम्यग् पुरुष को उपदेश देने की आवश्यकता नहीं है क्यों की वे सदैव न्यायपंथगामी होते हैं ॥ १३ ॥ परन्तु जो अज्ञानी जीव है, वह वारवार रागोदय से काम भोगों को भला जानता है इससे अदान्त दुःख के लिये दुःखी हो करके शारीरिक व मानसिक दुःख के चक्रमें पर्यटन करता रहता है ऐसा मैं कहता हूं ॥ १४ ॥ यह लोकविजय नामक द्वितीय अध्ययनका तृतीय उद्देशा पूर्ण हुआ आगे भोगको रोग रूप बताते हैं, × + × × +

उक्त प्रकार से भोग में अत्यंत लुब्ध विषयासक्त जीवों को अनेक रोगोंकी उत्पत्ति होती है ॥१॥ जिन पुत्र कलत्रादिक के साथ वह रहता है उनको सब रोगादिक की शांति होजाती है तब व पुत्र

नहीं ते वे त तेरी ता रक्षाकरे स० शरण देवे तु० तूभी ते उनको णा० नहीं ता० रक्षाकरे ता या स० शरण देनेमें शाला० जान करके दु० दुःख प० प्रत्येक २ सा० साता भो० भोग को अ अनुशोचनीय इ० यहां ए० कितनेक मा० मनुष्य को ति० त्रिविध जा जो कुछ से० उ को व० वहां म० प्रमाण म होता है अ थोडा व० बहुत से० वे० त० उसमें ग० गृद्धि, चि० रहते हैं भो० भोगवने में ॥ १॥ त० सब से० वे ए० एकदा

वा णं एगया णियगा पुव्वि परिवयति, सो वा ते णियगे पच्छा परिवएज्जा, णालं ते तव ताणाए वा सरणाए वा, तुमंपि तेसिं णालं ताणाए वा सरणाए वा ॥ २ ॥ जाणित्तु दुक्खं पत्तेयं सायं भोगामेव अणुसोयंति—इहमेगेसिं माणवाणं तिविहेण जाविसे तत्थ मत्ता भवइ, अप्पा वा बहुआ वा से तत्थ गढिए चिट्ठति भोयणाए ॥ ३ ॥

कलत्रादिक उस रोगीको निंदा करते हुवे छोड देते हैं वह भी उस पुत्र कलत्रादिक से वृद्ध हुवा उनकी निन्दा करता हुवा छोड देता है कदाचित् न छोडदेवे तो वे पुत्रादि तेरा रक्षण करने व तुझ को शरण देने में समर्थ नहीं होवेंगे और तूभी उनकी रक्षा करने व शरण देने में समर्थ नहीं होगा ॥ २ ॥ दुःख और सुख प्रत्येक को अलग २ ही होता है इस लोकमें कितनेक मनुष्यों को भोगकी इच्छा रहती है थोडा बहुत धनकी व खान पान की प्राप्ति हुइ है, उसमें मन वचन और काया के त्रियोग से गृद्ध बन मृत्यु पर्यन्त अतृप्त रहते हैं ॥ ३ ॥ उपभोग करते बचा हुवा या व्यापारादिसे प्राप्त हुवा धन कदाचित्

वि० दूर करे वी० वीर पुरुष ए तुम प सत्य मा स्वीकार कर ॥५॥ मे जिससे सि०
जो नहीं सि० कदाचित ॥६॥ इ ऐसा मान पा०नहीं बु०समजे मे० मो ज०मनुष्य मो०।
हुवा ॥७॥ थी० स्त्रीके लोभ में प्रवर्ते हुवे ते० वे भो०अहो व०बोलते हैं ए० यही आ०सुखस्थान है॥८॥ से०
वे दु० दुःख के लिये मो० मोह के लिये मा०मृत्यु के लिये ण०नरक के लिये ण नरक से ति०तीर्यंच के लिये
॥ ९ ॥ स० निरंतर मू० मूर्ख ध० धर्म प नहीं अ जाने उ० कहा वी० वीरप्रभु ने अ० अप्रमादी साधु
मे० महामोह ॥ १० ॥ अ० पूर्ण कु० चतुर को प० प्रमाद से० शांति म० मृत्यु स० वसे देखो भी० क्षण

णाववुज्झंति जे जणा मोह पाउडा ॥ ७ ॥ थी लोभ पव्वहिए ते भो वयंति एयाहिं
आयतणाइ ॥ ८ ॥ से दुक्खाए, मोहा , माराए, णरगाए, णरगतिरिक्खाए ॥ ९ ॥
सततं मूढो धम्मं णाभिजाणाति, उदाहु वीरे अप्पमादो महामोहे ॥ १० ॥ अल

होता है, वसी धन से कदापि सुख नहीं भी होता है ॥ ६ ॥ जो मनुष्य मोह से ग्रसित हुवे हैं; वे इस
परमार्थ को नहीं समझते हैं ॥७॥ जो पुरुष स्त्रीयों में आसक्त है; वे कहते हैं, कि दुनिया में सुख का स्थान
यही है ॥ ८ ॥ उन पुरुषों को ये धन और स्त्री दुःख केलिये, मोह कलिये, मृत्यु केलिये, नरक के लिये
तथा नरक से निकल कर तिर्यंचगति के लिये होते हैं ॥ ९ ॥ मोह में सदा मूढ बने हुए जीवो धर्म को
नहीं जानते हैं श्री महावीर देवने ऐसा फरमाया है कि स्त्री और धन महा मोहको उत्पन्न करने का कारण
है ऐसा जान साधुजन इनका विश्वास नहीं करे ॥ १० ॥ मोक्ष और ससार इन दोनों को देखकर के तथा

भगूत्समान म० उस न्मा ॥ ११ ॥ ण० मसृाते पा दस अ० पूर्व हो व० इनमोग स ए० पर ए० पसी तरह पा० दम्व मु मायु प० महामय ण० नहीं म मप करे कं० किसीका ॥ १२ ॥ ए० पर वी० वीर प०मशसा पाप मुने से०जो ण०नहीं नि०केदित होवे मा० संयम में म० नहीं मे मुझे दे०देवे न० नहीं कु० कोप करे थो० थोडा ल० मास करके ण० नहीं सि० निन्दे प० ना करे प पिछा फिर म० द्रिपेवाद प० पीछा फिरे ॥ १३ ॥ ए० ऐसा स० साधु को स संयम पालना चाहिये सि०

कुसलस्स पमादेण संति—मरणं सपेहार भिवुरधम्म सपेहार ॥ ११ ॥ णाल्ठ पास, अलं ते एएहिं, एय पास मुणी, महब्भय णातिवाएज्जा कंचणं ॥ १२ ॥ एस वीरे पसासिए, जेण णिवज्जइ आयाणाए, णमेदेति ण कुप्पेज्जा, थोवं लर्धुं ण खिसए, पडिसेहिओ परिणमेज्जा, पडिलाभिआ परिणमेज्जा ॥ १३ ॥ एयं मोण समणुवासि

शरीर को क्षण भङ्गुर जान करके चतुर पुरुषों को प्रमाद नहीं करना चाहिये ॥११॥ भोग भोगने से कदापि तृप्ति नहीं होती है इसलिये भोगोंकी अभिलाषा नहीं करनी चाहिये क्योंकि भोगो को महाभय का कारण जान कर मुनि किसी भी प्राणी का वध करे नहीं ॥ १२ ॥ जा साधु संयम पालने में विकल्पी खेदित नहीं होता है वह पराक्रमी मुनि प्रशंसनीय है भिक्षार्थ गये यदि कोइ भिक्षा न देवे तो उसपर क्रोध न करे, थोडा देवेतो निन्दा न करे, गृहस्थ ना कहेतो तुर्त पीछा फीर जाय, या भिक्षा प्राप्त होते ही पीछा चला जाय॥१३॥अहो मुनि ! तुमको सदैव इस तरह संयम पालना चाहिये, एसा श्री भगवान का कथनानुसार

ऐसा के० कहता हूं ॥ १४ ॥ ज इसलिये वि० विविध प्रकार के स० शस्त्र से लो लोक के लिये क कर्मस मारंभ क० करते हैं तं० वह इस प्रकार अ० आत्मार्थ पु० पुत्रार्थ धू पुत्रि के लिये सु० पुत्रवधूके लिये णा० ज्ञात्यर्थ धा धात्यर्थ रा० राजार्थ दा० दासार्थ दा० दासी के लिये क नोकर के लिये क० नोकरनी के लिये आ० आ

ज्जासि त्ति—बेमि ॥ १४ ॥ इति लोग विजयज्झयणस्स-चउत्थोद्देसो सम्मत्तो ✱

जमिण विरूवरूवेहिं सत्थेहिं लोगस्स कम्मसमारंभा कज्जंति, त जहा—अप्पणो से, पुत्ताणं, धूयाणं, सुण्हाणं, णातीणं, धातीणं, राईण, दासाण, दासीण, कम्मकराणं, कम्मकरीण, आएसाए, पुढो पेहणाए, सामासाए, पायरासाए, सणिहि—संनिचओ, कज्जइ इह मेगेसिं माणवाणं भोयणाए ॥ १ ॥ समुट्ठिते अणगारे आरिए अरियपण्णे आरियदंसी अय

मैं कहता हूं ॥ १४ ॥ यह लोकविजय अध्ययन का चतुर्थ उद्देशा पूर्ण हुआ इस उद्देशा में विषय त्याग कहा. जो विषयत्यागी होवेंगे वे परार्थ किया हुआ आहार ग्रहण करेंगे वह आगे बताते हैं ✱

जगतवासी लोको अपने स्वतः केलिये, पुत्रकेलिये, पुत्रीकेलिये, पुत्रवधू के लिये, ज्ञातिजन के लिये, धायमाता के लिये, राजा के लिये, दासके लिये, नोकरके लिये, नोकरनी के लिये, पाहुणा के लिये, स्वजन के लिये, संध्या का भोजन के लिये, प्रातभोजन के लिये, विनाशिक द्रव्य दही आदि के लिये, तथा अविनाशिक द्रव्य सोपारी आदि केलिये अनेक प्रकार के शस्त्रों से आरंभ करते हैं ॥ १ ॥ उपर्युक्त बोध

हृणा के अर्थ पु० भग्ना २ प० हिंसा करने के लिये सा० संध्या का भोमनार्थपा भाताभोमनार्थ से० विनाशिक अविनाशिक द्रव्य क करते है । पर ए० एकेक मा० मनुष्य भो भोमनार्थ ॥ १ ॥ स० सावधान हुवे भ० साधु अ० सरल मा० सरलबुद्धि जा० सरलदर्शी अ इस स० सावि में अ० देसा मे० य ण० नग्रहण करे ण० न ग्रहण करावे अ० ग्रहण करते को अच्छा नमाने ॥ २ ॥ स० सर्व गंधों प० जाण करके णि० निर्दोष प प्रवर्ते ॥ ३ ॥ अ० उपदेश रहित क क्रयविक्रय का ण० नहीं कि० क्रय कर ण० नहीं करावे कि० करते को ण० न अच्छा जाने ॥ ४ ॥ से०

सचित्ति अदक्खु, से णादिए, णादिआवए, णादियंतं समणुजाणए ॥ २ ॥ सव्वा मगाध परिण्णाय णिरामगधो परिव्वए ॥ ३ ॥ अदिस्समाणो क्रयविक्कएसु-से ण किणे ण किणावए किणंत ण समणुजाणए ॥ ४ ॥ से भिक्खू कालण्णे, बलण्णे मायण्णे

को काल भयन में सावधान, सरल स्वभावी, तत्वज्ञ तथा तत्वदर्शी मुनियों का कर्तव्य है, कि भिक्षार्थ निकले हुवे सदोष आहार को आप ग्रहण करे नहीं, दूसरे से ग्रहण करावे नहीं, और उस अशुद्ध आहार ग्रहण करने वाले को अच्छाभी जाने नहीं ॥ २ ॥ साधुओं का सदैव यही कर्तव्य है, कि सब दोषों का त्याग कर निर्दोष रीतिसे प्रवर्ते ॥ ३ ॥ क्रयविक्रय का उपदेश से रहित साधुको आहारादि वस्तु का क्रय विक्रय करना नहीं, कराना नहीं, और करते को अच्छा भी जानना नहीं ॥ ४ ॥ उन मुनियों को अवसर, आत्मबल, विभाग, अभ्यास, विनय, स्वमत, परमत, और भाव इनके का जाण हो सर्वथा ममत्व का त्याग

के भि० साधु का० कालज्ञ ब० बलज्ञ मा मात्रज्ञ से० खेदज्ञ स० क्षणज्ञ वि० विनयज्ञ स० स्वसमयज्ञ प परसमयज्ञ भा भावज्ञ प परिग्रह की अ० अममत्वपणे का० यथाकालअनुष्ठान करके अ नियाणा रहित दु० दोनों छि० छेद णि मोक्षार्थी ॥ ५ ॥ व० वस्त्र प पात्र कं कम्बल पा० रजोहरण उ स्थानआज्ञा च० और क० कटासन ए० इनमें चे निश्चय जा० ज्ञानहोवे ॥ ६ ॥ ल० प्राप्त हुआ आ० आहार अ० साधु मा० मात्रा जा० जाने से० उनको ज० यथा भ० भगवत ने प० फरमाया ॥ ७॥ ला० लाभ हुवे ण०

खेयण्णे, खणयण्णे, विणयण्णे, ससमयण्णे, परसमयण्णे, भावण्णे परिग्गहं अममायमाणे कालाणुट्ठाइ अपडिण्णे दुहओ छित्ता नियाई ॥ ५ ॥ वत्थ पडिग्गह कंबल पायपुंछणं उग्गहं च कडासणं एतेसु चेव जाणेज्जा ॥ ६ ॥ लद्धे आहारे अणगारे मातं जाणेज्जा, से जहेयं भगवया पवेइयं ॥ ७ ॥ लाभोत्ति ण मज्जेज्जा अलाभोत्ति

करना चाहिये और रागद्वेषका छेदन करके और कालोकाल अनुष्ठान करके किसीका फलकी वांच्छा विना मोक्षमार्ग के सन्मुख प्रवर्तना चाहिये॥५॥साधुओं को उचित है, कि वे अपने को चाहिये इतने वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण, स्थानक की आज्ञा, और आसन गृहस्थीकेपास से यथा विधि देखकर, याचकर ग्रहण करें ॥ ६ ॥ श्री भगवानने आहार का जो प्रमाण साधु को कहा है, उस प्रमाण का ज्ञान आहार प्राप्त होने समय रखना चाहिये ॥ ७ ॥ साधुको चाहिये कि लाभ होने पर खुशी न होवे और न मिले तब उदास नहीं

नहीं म० मदकरे अ० अलाभ होवे ण० नहीं सो० शोक करे ब० बहुत मिलने पर ण न संग्रहे प० परि ग्रह मे अ० आत्मा का अ० दूर रख अ० अन्यथा न०नहीं वृथे प० ममत्व सागे ॥८॥ ए० यह म० मार्ग अ तीर्थकरों न प० कहा है ज यथार्थ कु० होशयार णो०नहीं लि० लेपावे ति० एसा कहता हूं॥ ९ ॥ का० काम दु० दुरूंघनीय जी० जीवितव्य दुखभनीय का० कामका का अभिलापी ख० निश्चय अ० यह पुरुप से० व सो० शोक करता है मू० मुरता है ति० मयादभ्रष्ट होता है पि०दुःख पाता है प० परिता पाता है ॥ १० ॥ आ० दीर्घदर्शी लो० लोकदर्शी लो० लोक का अ० अधोभाग जा० जाने उ० उर्ध्व

ण सोएज्जा, बहुपि लधु ण णिहे परिग्गहाओ अप्पाण अवसक्केज्जा अण्णहा णं पासए परि हरेज्जा ॥ ८ ॥ एस मग्गे आरिएहिं पवेदिते, जहेत्थ कुसले णोवलिप्पेज्जासि त्तिबेमि ॥ ९ ॥ कामा दुरतिक्कमा, जीविय दुप्पडिवूहण कामकामी खलु अय पुरिसे, से सोयति, झूरति, तिप्पति, पिड्डति, परितप्पति ॥ १० ॥ आयतचक्खू लोगविपस्सी

होना ज्यादा मिलजायतो ज्यादा ग्रहण नहीं करना निष्परिग्रही रहना धर्मोपकरण को परिग्रहमें न देखना और उनपर ममत्व भी नहीं करना ॥ ८ ॥ पूर्वोक्त मोक्षमार्ग श्री तीर्थंकर महाराजने फरमाया है इसमें मग्न रहने वाले कुशल पुरुषको कर्म बंधसे लेपाते नहीं है एसा मैं कहता हूं ॥ ९ ॥ ये कामभोग अतीही दुर्जय हैं और जीवितव्य बढसकता नहीं है तथापि काम भोगके अभिलाषी पुरुष उनके लिये शोक करते झुरे

नाम जा० जाने ति तिर्च्छा भाग जा०जाने॥११॥ग० गृद्धि लो० लोक अ० परिभ्रमण करते हुवे सं०सधि
वि० मान इ० यह म० मृत्यु लोक में प० यह वी० वीर प० प्रशंसा किया हुवा जे० जो ब० बंधन से प०
निर्वते ॥ १२ ॥ ज० जैसा अं० अंदर त० तैसे बा० बाहिर ज० जैसा बा० बाहिर त० वैसा प० अं-
दर अ० अंदर पू० अशुची दे० शरीर को विभाग पा० देखता है पु० पृथक २ स० झरते प० पं

लोगस्स अहोभागं जाणति, उड्ढभागं जाणति, तिरियभागं जाणति ॥ ११ ॥ गढिए
लोए अणुपरियट्टमाणे संधिं विदित्ता इह मच्चिएहिं एस वीरे पसंसिए जे बद्धे पडि
मोयए ॥ १२ ॥ जहा अंतो तहा बाहिं जहा बाहिं तहा अंतो अंतो पूतिदेहंतरा

झूरता है, मर्यादा से भ्रष्ट होता है, पीडित होता है, और दुःख पाता है, ॥ १० ॥ जो दीर्घदर्शी ( आत्म
ज्ञानी ) दुनियाके विचित्र रंगको मानता है वह लोक का ऊंचा, नीचा तथा तिर्यक् भागको जानता है,
अर्थात् लोकमें जीव किस प्रकार उत्पन्न होते हैं उसे जान सकता है ॥ ११ ॥ विषय गृद्धि लोक संसार
में परिभ्रमण करते हैं इसलिये इसलोकमें ज्ञान दर्शन चारित्र रूप संधि ( प्राप्त अवसर ) को जानकर
जो छोडते हैं वेही वीर प्रशंसनीय होते हैं, और वेही पुरुष दूसरे संसारबन्धन से बन्धे हुवे जीवोंको मुक्त
करसकते हैं, ॥ १२ ॥ यह उदारिक शरीर जैसा अंदर से असार है वैसा बाहिर से भी असार
है, और जैसा बाहिर से असार है, वैसा अंदर से भी असार है इससे पण्डित पुरुषों को उचित है, कि शरीर

दित प० मारीमगवे ॥ १२ ॥ से० वे म० बुद्धिवन्त प० मान करके मा० नहीं प० फिर दु० उन ग्रप सा० धूकपरता मा० नहीं ते० उसमें वि० विमुख म० आप मा० मादरे ॥ १३ ॥ का० क र्तव्यम्याकुल स० निश्चय अ० यह पु० पुरुष ब० बहुतमायावी क० करे मू० मूढ पु० फिर त० उसे क० करता है लो० लोभ वे० वैर व० वृद्धि करे अ० अपनी आत्मा से ॥१५॥ ज०

णि पासति पुढो विसवेंति पडिए पडिलेहए ॥ १३ ॥ से मतिम परिण्णाय मा य हु लालपच्चासी मा तेसु तिरिच्छ मप्पाण मावायए ॥ १४ ॥ कासंकसे खलु अयं पुरिसे, बहुमायी, कडेण मूढे पुणो तं करेति लोभं वेरं वढ्ढेति अप्पणो ॥ १५ ॥ जमिणं प

के बाहिर मत्यक्ष ९ नवद्वारों मे झरते हुवे मलमूत्रादि को देखकर शरीर के अंदर का स्वरूप को पहिचानना और एसे नगर शरीर से ममत्व त्यागकर अपना आत्महित साधलेना ॥ १२ बुद्धिमानों का कर्तव्य है कि बाल बुद्धि न करे अर्थात—जैसे बच्चा मुखमें से पड़ती हुई लार ( थूंक ) को पीछा चूसलेता है, वैसे विद्वान वमनकिये हुवे काम भोगोंको नहीं ग्रहण करे और ज्ञानाभ्यासादिकमें विमुख भी न बने ॥ १४ ॥ कामी पुरुष मैंने यह किया और मैं यह करूंगा एसी चिन्ता में व्याकुल होता हुआ मायावी बनकर लोभी बनता है और इसीसे अपनी आत्मा की साथ वैरकी वृद्धि करता है, ॥ १५ ॥ महा गृद्धि पुरुष इस क्षणभङ्गर शरीर को अजर अमर करता हुआ इसकी वृद्धि केलिये सदैव चिन्तातुर रहता है, एसा देखकर मुनि शरीर

जिसलिये प० कहते हैं इ० यह प० निश्चय प० गृद्धिपाता है अ० अमरवत् म महा गृद्धि अ० अरति
पे० यह देखो ॥ १६ ॥ अ० अज्ञान कं० दुखी होवे हैं से० उसे त० तू जा० जान ज० जो मैं वे० कहता
हूं ॥ १७ ॥ ते० वे इ० यहां प पंडित प० कहते हुवे से उसे ह० मारनेवाले भे० भेदनेवाले छे० छेदनेवाले
लु० लूंटने वाले वि० छीनने वाले उ प्राणरहित करनेवाले करे अ नहीं किया क० करूंगा मि० इति एसा
म० मनमाना ज० जिसको वि० उपदेश करे प० नहीं अ० पूर्ण बा० अज्ञानी की स० संगतिसे जे० जो

रिकहिज्जइ इमस्स चेव पडिवूहणयाए अमरायइ महासड्ढी अट्ट—मेत पेहाए ॥ १६ ॥
अपरिण्णाय कंदति से तं जाणह जमहं बेमि ॥ १७ ॥ से इत्थ पंडिते पवयमाणे,
से हंता, भेत्ता, छेत्ता, लुंपिता, विलुंपिता, उद्दवइता, अकडं करिस्सामित्ति मण्णमाणे ज-

पर ममत्व रखे नहीं ॥ १६ ॥ जो जीव आत्मस्वभाव से अज्ञान हैं, वे जीव विषय तृष्णा के वश होकर के
अनेक दुःख भोगते हैं इसलिये हे भव्यों जो मैं कहता हूं उस उपदेश को मानो ॥ १७ ॥ अहो भव्यों ! इस
जगतमें अनेक कुमतियों परमार्थ के अज्ञान होने परभी पंडित नामकी उपाधि धारण करके निर्विकारी मुद्रा
वेष पहिनके जगत के तारक बन बैठते हैं और किसिने भी न किया एसा मन में मानते हुवे वे अनेक जीवों
को मारते हैं, काटते हैं, लूटते हैं, प्रपंच कर लोसते हैं समय पर प्राण भी हरण कर लेते हैं, और एसाही
उपदेश करके कर्म बंध करते हैं इसलिये एसे ढोंगीयों कि सोबत बिलकुलही करना नहीं चाहिये इतनाहीनहीं

साकमझा मे० वे प० बुद्धिमन्त म० पराकर्म करे ति० ऐसा वे० कहता हूं ॥ ५ ॥ णा० नहीं अ० उदासी म महन कर वी० वीर णो० नहीं स० धरे र खुशी म० जिसलिये अ० शांत चित्त वाला वी० वीर त० इसलिये वी० वीर ण० नहीं र रती धरे ॥ ६ ॥ स० शब्द फा० स्पर्श अ० सह ते णि० त्याग ण० खुशी इ० यह जी० जीवितव्य के लिये मु० साधु मो० संयम स० आदरकर धु० दुर करे क कर्म स० शरीर प मान्त मू० लूखा से० भोगने वी० वीर स

॥ ५ ॥ णारति महते वीरे, वीरेणो सहतेरतिं, जम्हा अविमणे वीरे, तम्हा वीरेण रज्जति
॥ ६ ॥ सद्देफासे अहियासमाणे णिव्विद णदिं इह जीवियस्स, मुणी मोण समादाय
धुमे कम्मसरीरग, पंतं लूहं च सेवति वीरा समत्त दंसिणो एसे ओघतरे मुणी तिन्ने

माग को जानने वाले साधु हैं ॥ ४ ॥ उक्त कथन को जानकर बुद्धिमान साधु लोक का स्वरूप को जानकर लोक संज्ञा (देखा देखी) को छोडे ॥ ॥ जो पराक्रमी साधु होते हैं वे किसी वाम पदार्थसे खुशी नहीं होते हैं वैसेही उदास नहीं होते हैं जिससे वे शान्त स्वभावी रहते हैं इसलिये ही रागरूपी वस्तु उनका पराभव नहीं कर सकता है ॥ ६ ॥ अहो साधुओं तुमको असंयम जीवितव्यके लिये शब्दादि काम भोगों की प्राप्ति होवे तो उसमें खुशी नहीं होना, परंतु संयम का अंगीकार करके कर्म और शरीर को नि स्सार बनाना समदर्शी वीर पुरुष लूखा आरे रूप भोग को से बन करे, एसा संसार समुद्रको पार होने

म्यग्दर्शी ए० यह ओ० संसार त० तिरने वाला मु० साधु ति० तिरता है मु० मुक्त होता है त्ति निवर्तता है बि० कहा त्ति० ऐसा कहता हूं ॥ ७ ॥ दु० मुक्तिगमन अयोग्य मु० साधु आ० आज्ञा बाहिर तु० तुच्छ गि गिलानपने व० बोलने को ए यह वी० वीर प० प्रशंसनीय अ० अतिक्रमें लो० लोक के सं० संयोग्य है ॥ ८ ॥ ए यह णा० न्याय प० कहा है ज० जो दु० दुःख प० कहा इ० यहां मा मनुष्य को त० उस दुःख से कु० हो श्यार प० परिज्ञा मु० करी ॥ ९ ॥ इ ऐसे क० कर्म प० जा स० सर्वथा जे० जो

मुत्ते विरते वियाहिते त्ति-बेमि ॥ ७ ॥ दुव्वसु मुणी अणाणाए, तुच्छए, गिलाति वत्तए एस वीरे पसंसिए, अच्चेइ लोय संजोय ॥ ८ ॥ एस णाए पवुच्चति, ज दुक्ख पवेदित इह माणवाण तस्स दुक्खस्स कुसला परिण्ण मुदाहरति ॥ ९ ॥ इति कम्मपरि-

वाला मुनिही तिरता है—मुक्त होता है, सावद्य योगसे निवर्तता है ऐसा मुनि बखाना गया है ऐसा मैं कहता हूं ॥ ७ ॥ तीर्थंकर की आज्ञा भंग करनेवाले स्वेच्छाचारी, प्रत्युत्तर देने में अचकाने वाले, तथा ज्ञान रहित मुनि मुक्ति गमनके अयोग्य होते हैं और जिनाज्ञानुसार चलने वाले, सर्व जंजाल से दूर रहने वाले पराक्रमी साधु इस लोकमें प्रशंसनीय बनते हैं ॥ ८ ॥ यही न्याय मार्ग कहा गया है इस संसार में तीर्थंकर भगवानने मनुष्योंको दुःख बताये हैं उसको कुशल पुरुष ज्ञानपरिज्ञासे जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञासे त्याग करते हैं ॥ ९ ॥ इस तरह कर्म का स्वरूप जानकर सर्वथा उपदेश करना कि जो परमार्थदर्शी हैं, वे मोर

मम्यगदर्शी से० वे आ अन्य में नहीं रमे ने० जो अ० अन्य में नरमे से० येही अ० मम्य गदर्शी ॥ १० ॥ ज० जैसा पु० पुण्यात्मा को क० कहते हैं त० तैसा तु० तुच्छात्मा को क० कहते है, ज जैसा तु० तुच्छात्मा को क० कहते हैं, त तैसा पु० पुण्यात्मा को क कहते हैं ॥ ११ ॥ म० भवि ह मारे अ० मनमानता, ए० इस तरहभी जा० जान से० श्रेय ति० इति ण० नहीं के कौन

ण्णाय सव्वसो । जे अणण्णदंसी से अणण्णारामे, जे अणण्णा रामे से अणण्णदंसी ॥ १० ॥ जहा पुण्णस्स कत्थति तहा तुच्छस्स कत्थाति, जहा तुच्छस्स कत्थति तहा पुण्णस्स कत्थति ॥ ११ ॥ अवियहणे अणातियमाणे एत्थपि जाण सेयं ति णत्थि केयं पुरिसे कचणए । एस धीरे पसंसिए जे बद्धे पडि मोयए उड्ढ अह तिरियं दि

मार्ग छोडकर अन्य मार्ग में रमण नहीं करते हैं और जो अन्य मार्ग में रमण नहीं करते हैं येही परमार्थ दर्शी होते हैं ॥ १० ॥ निःस्वार्थी मुनि जैसे राजा को उपदेश देते हैं वैसेही रंक को उपदेश देते हैं और जैसे रंकको उपदेश देते हैं वैसेही राजाको उपदेश देते हैं क्योंकि दोनों की आत्मा मोक्ष प्राप्ति केलिये तुल्य है ॥ ११ ॥ उपदेशको को श्रोताजन के अभिप्राय, जाति व धर्म इत्यादि का ज्ञान जरूरही रखना चाहिये क्योंकि अज्ञान पने से कदाचित अयोग्य उपदेश होजाय, और प्रतिपक्षी कदाचित राजा आदि सभा होतो देखके मनमें क्रोधित बनकर के उपदेशको मारे अपमान करे, तथा धर्म बुद्धि नष्ट धर्म हानी

यह पुरुष कं किस देवको नमता है, ए ऐसे वी० वीर प० प्रशंसनीय जे० जो ब बद्ध प छूडे उ० उर्ध्व अ० अधो ति तिर्यक् दि दिशा से ॥ १२ ॥ से० वे स० सर्व काल स सर्व प० प्रज्ञाचारी ण० नहीं लि० लेपाये छ० हिंसा से धी० धीर ॥ १३ ॥ से वे मे पण्डित जे० जो अ० कर्म को दूर करने से० सेदज्ञ, जे० जो व० और ब० बन्ध मो० मोक्ष म० गवेषक, ॥ १४ ॥ कु० केवलज्ञानी पु० और णो० नहीं ब० बन्धाये हुवे णो० नहीं मु० मुक्त बने हुवे से० वे ज० जो च० निश्चय आ० किया

सासु ॥ १२ ॥ से सव्वतो सव्व परिण्णाचारी ण लिप्पती छणपदेण वीरे ॥ १३ ॥
से मेहावी जे अणुग्घायणस्स खेयण्णे जे य बंधपमोक्ख मन्नेसी ॥ १४ ॥ कुसले
पुण णो बद्धे णो मुक्के । से जं च आरभे जं च णारभे अणारद्धं च ण आरभे

होवे इसलिये उपदेश विधि का ज्ञानविना उपदेश देने में कुच्छभी कल्याण नहीं होता है यह कौन पुरुष है, और किसदेव को नमस्कार करता है इत्यादि जान होकर धर्मोपदेशकों को सद्बोध करना चाहिए जो उर्ध्व, अधो, व तिर्यक् दिशामें कर्मसे बंधे हुए जीवको मुक्त कर सकता है, वह ही वीर पुरुष प्रशसनीय है ॥ १२ ॥ इस तरह जो पराक्रमी सत्पुरुष सदैव परिज्ञाचारी होते हैं वे हिंसादि दोषोंसे निर्लेप रहते हैं ॥ १३ ॥ जो कर्म को दूर करने में निपुण हैं, और बंध मोक्षको जानते हैं, वेही विद्वान पंडित कहे जाते हैं ॥ १४ ॥ जो केवल ज्ञानी परमात्मा है उनको न तो बंध है, और न मोक्ष है क्योंकी वे कृत कृत्य हैं

जं० जो च० निश्चय णा० नहीं किया अ० नहीं कियाहुवा ण नहीं आ० करे ॥ १५ ॥ ख० क्षण २ प० परिज्ञासे जान कर छोडे लो०लोककी संज्ञा, स०सर्व ॥१६॥ उ०उपदेश पा० तत्त्वदर्शी को ण०नहीं ॥१७॥ बा० अज्ञानी पु फिर णि० स्नेह का० कामको स० अनुमोदवे, अ० उपशम नहीं दु'ख जिसको दु० दुःखी हो दु० दु'ख के ही आ० चक्र में अ० परिभ्रमण करता है त्ति ऐसा कहता हूं ॥ १८ ॥ + ॥

॥ १५ ॥ छणं छणं परिण्णाय लोगसन्नं च सव्वसो॥१६॥ उद्देसो पासगस्स णत्थि ॥ १७ ॥ बाले पुणणिहे काम समणुण्णे असमितदुक्खे दुक्खी दुक्खाणमेव आ वट्ट अणुपरियट्टति त्तियेमि ॥ १८ ॥ इति लोगविजयज्झयणस्स छट्ठोद्देसो, इति लोगविजय णाम बीअ मज्झयण सम्मत्तं

* * *

ऐसा बनने की इच्छावाले को चाहिये कि उनोंने जो किया सो करना और मना किया सो नहीं करना ॥ १५ ॥ लोक संज्ञाको तथा हिंसाको क्षण २ में जान कर सर्व प्रकार से त्याग करे ॥१६॥ तत्वज्ञ पुरुषों को उपदेश की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वे सदैव न्यायपथगामी है ॥ १७ ॥ परंतु जो अज्ञानी जीव है, वे वारंवार रागोदय से काम भोगोंको अच्छा जानते हैं, इससे अनुपशान्त दु'खसे दु'खी होकर शारीरिक मानसिक दु'ख चक्र में परिभ्रमण करते हैं, ऐसा मैं कहता हूं ॥ १८ ॥ इति भाव लोक विषय कषाया दिकको विजय करने कि रीति बताने वाला द्वितीय अध्ययन पूर्ण हुवा ॥ आगे शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन परिसह सहन करने के लिये बताते हैं

× + ×

## ॥ अथ शीतोष्णीय नामक तृतीयमध्ययनम् ॥

सु० सोते हुवे अ० असाधु स सदा, मु साधु स० सदा जा० जागते हैं॥१॥ लो० लोक में जा जानो अ अहितके लिये दु० दुःख स० आचार लो० लोक का जा० जान कर ए० यहां स० शस्त्र से प० निवर्ते ॥ २ ॥ ज० जिस के लिये स शब्द रु रूप ग० गन्ध र० रस फा० स्पर्श अ० यह संसार कारण रूप भ० होवे से वे आ० आत्मा णा ज्ञान वे० वेद ध० धर्म जान ब० ब्रह्म प० प्रज्ञा से प० जानता है लो० लोक का मु० साधु ति० ऐसा व० कहना ध० धर्म का ज्ञान अं० ऋजु आ० आवर्त, सो सोग स सङ्ग म०

सुत्ता अमुणी सया । मुणिणो सया जागरंति ॥ १ ॥ लोयंसि जाण अहियाय दुक्ख, समयं लोगस्स जाणित्ता एत्थ सत्थो वरए ॥२॥ जस्सिमे सद्दा य, रूवा य, गंधा य, रसा य, फासा य, अहिसमन्नागया भवंति, से आयवं,णाणवं,वेयवं धम्मवं,बंभवं, पण्णाणेहिं परियाणति लोयं, मुणीति वच्चे धम्माविदुत्ति अजू आवट्टसोयसंग मभिजा

पापी जीव परमार्थ के अजान जागते हुवे भी सोते समान हैं, और धर्मार्थ उद्यमी बने हुए साधु परमार्थ दर्शी होने से सोते हुवे सदा जागते समान हैं, ॥ १ ॥ लोक में दुःख अहित कर्ता है ऐसा तू जान तथा लोकों का छकाय के जीवों का यथारूप आचार है, उसे जान करके निवृत्ति धारण हो ॥ २ ॥ जो पुरुष शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्श इनकी सुंदरता विरूपता में समभाव धारन करते हैं, रागद्वेष नहीं करते हैं वे पुरुष आत्मा, ज्ञान वेद, धर्म और ब्रह्मको जानते हैं, तथा ज्ञानबलसे लोककोभी जान सकते हैं, उनको

उसे भी जा० जानता है, सि० शीत उ० उष्ण चा० त्यागी से० वे नि निग्रन्थ अ० दुःख र० सुख स सहे फ दर्द नो० नहीं वे० वेदे, जा जागृत वे० वैरसे व० निवर्ते वी० वीर ए० यों दु० दुःख से प० छूटे हैं ॥ ३ ॥ ज० वृद्धावस्था म० मृत्यु व० वशपडे ण० मनुष्य स० निरंतर मू० मूर्ख ध० धर्म जा० नहीं जाणे ॥ ४ ॥ पा० देखकर आ० आतुर पा० प्राणी को अ० अप्रमत्त प० प्रवर्ते म जानकर ए० ऐसा म० बुद्धिवन्त पा० देखे॥५॥आ० आरंभ से उत्पन्न हुवा दु दुःख इ० यह ण० जानकर मा० मायावी

णति सीओसिणच्चाइ, से निग्गंथे अरतिरतिसहे, फरुसयं णो वेदेति जागरे वेरो
वरए धीरे एवं दुक्खा पमुच्चति ॥ ३ ॥ जरामच्चुवसोवणीए णरे सततं मूढे धम्मं
णाभिजाणति ॥ ४ ॥ पासिय आउरिए पाणे अप्पमत्तो परिव्वए । मंता एयं मइमं
पास ॥ ५ ॥ आरंभजं दुक्खमिणंति णच्चा, मायी पमाई पुण एइ गब्भं, उवेहमाणे

साधु करते हैं ऐसे धर्मज्ञ सरल स्वभावी साधु रागद्वेष और विषय कषायादि संसार चक्र का सम्बन्ध को जानते हैं सुखदुःख की जराभी दरकार नहीं करते हैं, संयममें आती हुइ मुश्किलों की तरफ ध्यान नहीं देते हैं, और सर्व के साथ वैरविरोध की निवृत्ति करते हैं वे सर्व क्लेशसे मुक्त होते हैं, । ३ ॥ वृद्धावस्था तथा मृत्यु के वशीभूत तथा निरंतर मूढ मनुष्य धर्म को नहीं जानते हैं ॥ ४ ॥ जगत जंतुओं को दुःखी देखकर साधुओं को संयम में अप्रमत्त विचरना चाहिये अहो बुद्धि मान् मुनि ऐसा जानकर तूभी वैसा दुःखी होने की इच्छा कर नहीं ॥ ५ ॥ जगत में जीव अनेक प्रकार

प० प्रमादी पु० फिर ए० आवे ग० गर्भ में प उपेक्षा करता स० शब्द रू० रूप में, अं० सरल मा० मृत्यु से सं० डरनेवाला म० मृत्यु से प छूटता है ॥ ६ ॥ अ० अप्रमत्त का० काम से उ० अलगरहे पा० पापकर्म से वी० वीर पुरुष आ० आत्मगुप्त जे० जो खे० खेदज्ञ ॥७॥ जे जो प० पर्यवजात स० शस्त्र के खे० निपुण से० वे अ० अशस्त्रके खे० निपुण जे० जो अ० अशस्त्रके खे० निपुण से० वे प० पर्यवजात स० शस्त्र के खे० निपुण ॥ ८ ॥ अ० निष्कर्मी को व० व्यवहार ण० नहीं वि० होता है, क० कर्म से उ०

सद्द रूवेसु अंजू, मारामिसंकी मरणा पमुच्चति ॥ ६ ॥ अप्पमत्तो कामेहिं उवरतो पावकम्मेहिं वीरे आयगुत्ते जे खेयन्ने ॥ ७ ॥ जे पज्जवजातसत्थस्स खेयन्ने, से असत्थस्स खेयन्ने, जे असत्थस्स खेयन्ने से पज्जवजात सत्थस्स खेयन्ने ॥ ८ ॥

के दुःख भोगवते हैं उस दुःखोत्पत्ति का मुख्य कारण आरंभ ही है प्रमादी व मायावी प्राणी वारंवार गर्भ में आकर के मृत्यु वश पड़ता है जो ज्ञानी महात्मा मृत्यु से डरते हैं, वे शब्दादि विषयों से दूर रहते हैं, और जो बाह्याभ्यन्तर सरलता से वर्तते हैं, वे मृत्यु के दुःख से मुक्त होते हैं ॥ ६ ॥ जो ज्ञानी दूसरे के दुःख को जानने वाले होते हैं, वे अप्रमादी आत्मगुप्त वीर पुरुष काम भोगसे तथा पाप कर्म से दूर रहते हैं, ॥ ७ ॥ जो शब्दादि विषय सेवने में प्राणी हिंसादि क्रिया को यथातथ्य जानता है, वह संयम का निपुण होता है और जो संयम का निपुण होता है, वह शब्दादि विषय को अनर्थकारी जानता है ॥८॥

उपाधि जा होती है ॥ ९ ॥ क० कर्म को प० देखकर क० कर्म मू० मूल जं० जो छ० प्राणी की घात प० देखकर स० सर्व स ग्रहणकर दो० दोनों अ० अन्तरसे से आ० त्याग करना ॥ १० ॥ तं० उसे प० जानकर त्यागे मे पण्डित वि० जानकर के लो० लोको वं० वमे लो० लोक संज्ञा से० पे म० बुद्धिवन्त प० पराक्रम करेंगे त्ति० ऐसा बे० मैं कहता हूं ॥ ११ ॥ + + +

अकम्मस्स ववहारो ण विज्जति, कम्मणा उवाही जायति ॥ ९ ॥ कम्मं च पडिलेहाए कम्ममूलं च जं छणं, पडिलेहिय सव्वं समायाय दोहिं अंतेहिं आदिस्समाणे ॥ १० ॥ तं परिण्णाय मेहावी विदित्ता लोगं, वंता लोगसन्नं, से मइमं परक्कमिज्जासित्ति बेमि ॥ ११ ॥ इति सीतोस्सणीयाज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो * *

निष्कर्मी को संसार नहीं है क्योंकि संसार परिभ्रमण रूप उपाधि मात्र कर्महीं है ॥ ९ ॥ कर्म के स्वरूप को देखकर तथा हिंसा को कर्म का मूल हेतु जानकर उससे दूर रहना और कर्म त्यागनेका जो उपदेश है उसे ग्रहण करके राग और द्वेष इन दोनों का परिहार करना ॥ १० ॥ बुद्धिमान् साधु रागादि शत्रुओं को अहितकर्ता जानकर उनका त्याग करें. वैसेही लोको को रागादि शत्रु की पाश में फसे हुए देख करके आप लोक संज्ञासे दूर रहा हुआ संयम मे पराक्रम करता रहे ऐसा मैं कहता हूं ॥ ११ ॥ यह

जा जन्म च० और बु० वृद्धत्व च० और इ० इस संसार में अ० आर्य पा० देख, भू० जीव आ० जान प० देख करके सा सुख व० इसलिये अति०तत्वज्ञ प परम ति०ऐसा ण०जाण करके स सम्यग्दर्शीण० नहीं क करे पा० पाप कर्म ऊ० मुक्त हो पा० फास से इ० इस संसार में म० मनुष्य के साथ, आ० आरंभ से उपजीवी उ० दोनों को देखनेवाला का कामभोग में गि० गृद्ध णि संचय क० करते हैं स० संचय करनेवाले पु० पुनरपि ए० आता है ग० गर्भ में ॥ २ ॥ ख० सभावना से० वे हा० हंसीम

जातिं च वुड्ढिं च इहज्ज पास । भूतेहिं जाणे पडिलेह सातं ॥ तम्हा तिविज्जो परमंति णच्चा । संमत्तदंसी ण करेति पावं ॥ १ ॥ उम्मुंच पासं इह मच्चिएहिं । आरंभजीवी उभयाणुपस्सी ॥ कामेसु गिद्धा णिचयं करेंति । संसिच्चमाणा पुणरेंति

शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन का प्रथमोद्देश पूर्ण हुआ आगे पापके फल तथा हितोपदेश कहते हैं

अहो मुनि तुम जन्म जरा के दुःख को देखो जैसे तुमको सुख प्रिय है, वैसेही सब को सुख प्रिय है ऐसा तत्वज्ञ बनकर मोक्षको जानता हुवा किसी भी प्रकार का पाप नहीं करना साधुको गृहस्थ के साथ बहुत परिचय नहीं रखना, क्योंकि वे आरंभ से उपजीविका करनेवाले हैं शारीरिक तथा मानसीक दुःख के देखने वाले है जो कामभोगमें आसक्त कर्म का संचय करते हैं वे कर्म से भारी बन फीर गर्भ में आते है

स्करी से ह मारे प० क्रीडा करे म०माने म० पूर्ण बा० अज्ञानी की स० संगति से बे० वैर ब० वृद्धी करे, अ अपनी आत्मा से ॥ २ ॥ त इस लिये ति० ऐसा तत्त्वज्ञ प० परम उत्कृष्ट ति० ऐसा ण० मानकर अ० दुःखदर्शी न० नहीं क० करे पा० पाप अ० अग्र च० और मू० मूल वि० दूर करे च निश्चय धी धीर पुरुष प० इनें छि० छेदकर अ० अपनेको णि० निष्कर्मी देखनेवाले ॥ ३ ॥ ए० यह म० मरण से प छूटता है, से० वे हु० निश्चय दि० देखें भ० डर मु० साधु लो० लोक के प० परम

गम्भं ॥ २ ॥ १ ॥ अवि से हासमासज्ज, हंता णंदीति मन्नाति, अलं बालस्स संगेण, वेरंवड्ढति अप्पणो ॥ ३ ॥ २ ॥ तम्हा तिविज्जं परम — ति णच्चा । अयङ्कदंसी ण करेति पाव ॥ अग्गं च मूलं च विगिंच धीरे । पीलछिंदियाणं णिक्कम्मदंसी ॥४॥३॥ एस मरणा पमुच्चति से हु दिट्ठी भए मुणी, लोकंसि परमदंसी, विवित्तजीवी

॥ १॥ अज्ञानीजीव कामासक्त बन हास्य मस्करी के वश जीवों को मारने में क्रीडा मानते हैं ऐसे अज्ञानी की संगति नहीं करना क्योंकि जैसी संगति वैसी असर होने से कुमार्ग में आत्मा भ्रमण करता हुवा दुःख के भोक्ता बनता है ॥ २ ॥ जो तत्ववेत्ता महामुनि हैं, वे मोक्षमार्ग को उत्कृष्ट जानकर नरक के दुःख को देखते हुवे पाप नहीं करते हैं इसलिये अहोधीरमुनि अग्र और मूल कर्मको दूर करो जिससे स्वतःको निष्कर्मी देखनेवाले होवोगे ॥ ३ ॥ उक्त गुण संपन्न मुनि संसारके दुःखों से डरता हुवा लोकमें रहे मोक्षको देखते हुवे

वर्ती वि विविक्त जी० जीवी उ० उपशान्त, स० समिति स० सहित स० सदायत्नी का० कालको वांच्छता प० प्रवर्ते ॥ ४॥ ब० बहुत च० और ख० निश्चय पा पापकर्म प० प्रगट से० संयम से धि० धैर्य कु० करे प इत से उ० निवर्त्या मे० पण्डित स० सर्व पा० पापकर्म झो भसावे ॥ ५ ॥ अ० अनेक प्रकारके चि० मन स० निश्चय अ० यह पु० पुरुष से० वे के घर (लोभ) म हरणकर पू० पूरते हैं से० वे अ० अन्य का वध के लिये अ० अन्य को परिताप अ० अन्य को ग्रहण करने, ज० जनपद व० वध के

उवसंते समिते, सहिते, सयाजते, कालकंखी परिव्वए ॥ ४ ॥ बहुंच खलु पावकम्मं पगडं सच्चसि धितिं कुव्वह, एत्थोवरए मेहावी सव्वं पावकम्मं झोसति॥५॥ अणेगचित्ते खलु अय पुरिसे से केयण अरिहइ पूरित्तए से अन्नवहाए अण्णप रियावाए अण्णपरिग्गहाए जणवयवहाए जणवयपरियावाए जणवयपरिग्गहाए

रागद्वेष रहित निविक्तजीवी, शान्तवर्ती, समिति युक्त, ज्ञानानंदी और सदैव यत्नावंत कर्मोंका क्षयकर अजरामर बने ॥४॥ अहो भव्य! यदि तुम मानते हो कि हमनें बहुत पाप किये हैं, तो अबतुम संयम में धैर्य धारण करो ऐसे धैर्य धारण करने वाले पण्डित पुरुष सर्व दुष्ट कर्मों का नाश करते है ॥ ५ ॥ जैसे कोइ चालणी में समुद्र का पानी भरना चाहता है, वैसेही संसारि जीव इच्छा पूर्ण करने के लिये मन को चोतरफ दोडाता है दुसरे को मारने, हेरान करने, कब्ज करने देशको लुटाने, देशको हैरान करने, तथा देशको कब्ज करने

लिये, म जनपद प परिताप देने केलिये अ० जनपद प० परिग्रहण करने ॥६॥ आ० सेवन करके ए० इस अर्थ को इ० ऐसे ही कितनेक स० सावधान हुवे त० इस लिये तं उसे वि दूसरा नो० नहीं से० सेवन करे णि निःसार पा देखकर णा० ज्ञानी ॥ ७ ॥ उ० उत्पात च० च्यवन ण० जानकर अ० संयम अंगीकार मु मुनि से० वे ण० नहीं छ० मारे ण० नहीं छ मरावे छ० मारते को सं० वे णा० अच्छा नहीं जाने ॥ ८ ॥ ण० नहीं इच्छे ण० विषयानन्द अ० आसक्त प० स्त्रीयों में, अ० आह्लादर्शी णि० निवर्तता पा० पाप क० कर्म से ॥ ९ ॥ को० क्रोध मा मान ह० हणे वी वीर लो० लोभ की पा० फास

॥ ६ ॥ आसेविचा एतमट्ठं इच्चेवेगे समुट्ठिया तम्हा तं बिइय नो सेवते णिसा-
र पासिय णाणी ॥ ७ ॥ उववायं चवण णच्चा अणण्ण चर माहणे,से ण छणे ण
छणावए छणंस णाणुजाणइ ॥ ८ ॥ णिव्विंद णदिं अरते पयासु , अणोमद
सी णिसन्नो पावेहिं कम्मेहिं ॥ ९ ॥ कोहाइ माण हणियाय वीरे । लोभस्स पा

को तत्पर रहते हैं ॥ ६॥ कितनेक भरतेश्वरादि महान् पुरुषोंने ऐसे अनेक आरंभ करके भी छोड दिया है अतमें संयम ग्रहण करके उपयवन्त बने हैं वे ज्ञानी काम भोगोको निःसार जानकर असंयम का सेवन नहीं करते हैं ॥ ७ ॥ अहो मुनि ! जन्म मरण सब को होता है एसा जानकर संयम अंगीकार करना और किसी जीव की घात करना नहीं, कराना नहीं और घात करते हुवे को अच्छा मानना नहीं ॥ ८ ॥ स्त्रीयों में आसक्तता त्यागने केलिये भोग के दुःखोंको विचारना और ज्ञानादि उत्तम वस्तुको धारन कर पाप कर्म

णि॰ नरक के दुःख म॰ बढे है त॰ इस लिये वी॰ वीर वि॰ निवर्ते व॰ वध से छि॰ छेदे सो॰ शोक स॰ हलका होकर गा॰ आनाजावे ॥ १ ॥ गं॰ ग्रन्थ प॰ जानकर इ॰ यहां व॰ आर्य वी॰ वीर सो॰ श्रोत प॰ जान कर च॰ विचरे द॰ दमता उ॰ ऊंचा आया ल॰ पाया इ॰ यहां मा॰ मनुष्यपणो णो॰ नहीं पा॰ प्राणीयों के पा॰ प्राणों का सं॰ समारंभ करे इ॰ ऐसा बे॰ कहता हूं ॥ १० ॥ * *

से णिरय महतं ॥ तम्हा य वीरे विरते वहाओ । छिंदिज्ज सोयं लहुभूयगामी ॥ १ ॥ गंथं परिण्णाय इहज्ज वीरे सोयं परिण्णाय चरिज्ज दंते ॥ उम्मज्ज लद्धुं इह माणवेहिं । णो पाणिणो पाण समारंभज्जासि—त्तिबेमि ॥ २ ॥ ॥ १० ॥ इति सीतो रसणियाज्झयणस्स—बीओ उद्देसो सम्मत्तो

* *

से दूर रहना ॥ ९ ॥ पराक्रमी साधु क्रोध और क्रोध का कारण मान इन दोनों का क्षय करते हैं, तथा लोभ से नरकादि दुःख की प्राप्ति होती है ऐसा जानते हैं इसलिये मोक्षार्थी मुनि को हिंसा तथा शोक संताप से दूर रहना उचित है परिग्रह को अहित कर्ता जान तत्काल छोड देना ऐसेही विषय का प्रवाहको अहित कर्ता जान इन्द्रियों को संयम में रखना इस मनुष्य जन्म में संयमधर्म तक उन्नति को आत्मा प्राप्त हुवी है ऐसा जान किंचित् मात्रभी हिंसा कदापि नहीं करनी ऐसा तीर्थंकर भगवान के कथनानुसार मैं कहता हूं ॥ १० ॥ यह शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा आगे परीसहों को जीत कर श्रमण पालनेवाले साधु कहाये जाते है सो बताते हैं

+ +

म० अवसर लो० लोक का जा० जाणकरके अ आत्मवत् व० दूसरे को पा० देख त० इस लिये ण मत् मारो ण० मत मरावो ॥ १ ॥ ज० जो यह अ० अन्योन्य वि० शरमसे प० देखकर ण० न करे पा पापकर्म किं० क्या त० वहां मु० साधुपना का का कारण, सि० होवे स० समभाव त० वहां उ० उपमा से अ० अपनीआत्मा वि० प्रशान्त करना ॥ २ ॥ अ० अन्योन्य प० संयम में ना ज्ञानी णो० नहीं प० प्रमाद क० कदापि आ० आत्मगुप्त स सदा धैर्यवत जा परत्रासे मा० मान से जा० निभावे ॥ ३ ॥

सधिं लोगस्स जाणित्ता, आयओ बहिया पास तम्हा ण हता ण विघायये ॥ १ ॥
जमिणं अन्तमन्नवितिगिच्छाए पडिलेहाए ण करेइ पावकम्मं किं तत्थ मुणि
कारण सिया समयं तत्थ उवेहाए अप्पाणं विप्पसायए ॥ २ ॥ अणण्ण परम ना
णी णो पमादे कयाइवी, आयगुत्ते सया धीरे, जायमायाइ जावए ॥ १ ॥ ३ ॥

अहो मुनि संसार में मुक्त होने का अवसर ( सधि ) प्राप्त होगया है अब प्रमाद नहीं करना और जैसे अपनी आत्माको देखता है वैसेही सब प्राणियों को देख कीसी को मारना नही और दूसरे पास मरानाभी नहीं ॥ १ ॥ निश्चयनयवादीका मत यह है, कि एक दूसरे के दक्षादेख पाप का त्याग करने से क्या साधुपना कारणभूत होता है अपितु नहीं किन्तु " समय समणा होइ " अर्थात् समता भाव याने शान्त स्वभाव में रमण करने सेही साधु होते हैं ॥ २ ॥ ज्ञानी मुनियों को संयम में कदापि प्रमाद न करना अपि तु सदैव आत्मा को वश कर धैर्यता धारण करना और संयम में यत्नावत होकर शरीर को निभाना ॥ ३ ॥

वि० वैराग रु० रूपमें ग० गमन करे म० बडा खु० छोटा वा० अथवा ॥ ४ ॥ अ० आगति ग० गति च० और प० जानकर दो० दोनोंको अ०आन्तरिक अ० त्याग करते से० वे ण० नहीं छेदित होवे ण० नहीं भेदित होवे, ण० नहीं जले, ण० नहीं मरे कं० किस से भी स० सर्व लोक में ॥२॥ अ० पीछेका पु० पूर्वका ण० नहीं स० याद करते हैं, ए० कितनेक कि० क्या अ० हुवा किं० क्या अ० होवेगा भा० कहते हैं ए०

विराग रूवेसु गच्छेज्जा महता खुड्डएहिं वा ॥ ४ ॥ आगतिं गतिं च परिण्णाय दोहिंवि अंतेहिं अदिस्समाणेहिं से ण छिज्जइ, ण भिज्जइ, ण डज्झइ ण हम्मइ कंचण सव्वलोए ॥ ५ ॥ अवरेण पुव्वं ण सरंति एगे, किमस्सतीतं किं वागमिस्सं भासति एगे इह माणवाओ जमस्सतीतं त आगमेस्सं ॥ १ ॥ ॥ ६ ॥ णा

मुनि को छोटे बडे सब रूपोंमें विराग रखना किसी में लुब्ध नहीं होना ॥ ४ ॥ आगति और गतिका स्वरूप का जानकर रागद्वेष से जो निवृत्त हुवे हैं वे महात्मा इस लोक के किसी पदार्थ से न छेदाते हैं, न भेदाते हैं, न जलते हैं तथा न मरते हैं एसे द्रव्य और भाव से आत्मा स्थिर होजाता है ॥ २ ॥ इस जगत में कितनेक भूत भविष्य के बनावों को याद नहीं करतेहैं और इस जीवको क्या क्या हुवाहै, और क्या क्या होगा उसे भी नहीं विचारते हैं और कितनेक तो कहते हैं कि जो सुख इसने गत काल में भोगा है, वह ही आगामी काल में भोगेगा इस तरह मनुष्यों की नानाप्रकार की कल्पना है ॥ ३ ॥ परन्तु जो तत्वज्ञ पुरुष

कितनेक इ० यहां मा० मनुष्यों भ० जो इसे होगया तं० वह भा० होवेगा ॥ ६ ॥ णा० नहीं अती अ० अर्थ ण० नहीं आगामीक अ० अर्थ, नि० निर्णय करे त० यथातथ्य जाननेवाले; वि० निवर्ते क० कल्पसे, ए० इसे देखनेवाला, णि० मलानेवाला ख० क्षय करे म० महा ऋषि ॥ ७ ॥ का० क्या अ० अरति के० कैसा आ आनन्द ए इसमें अ गृद्धता रहित च० विचरे स० सर्व हा० हास्य को प० छोडे, आ० आश्रित गु० गुप्तेन्द्रियपने प० प्रवर्ते ॥ ८ ॥ पु० पुरुष तु० तूंही तु० तेरा मि० मित्र है, कि०

तीतमट्ठं णय आगमेस्स । अट्ठं निअच्छंति तहा गताओ ॥ विधूतकप्पे एताणु पस्सी । णिज्झोसइत्ता खवए महेसी ॥ २ ॥ ॥ ७ ॥ का अरति ! के आणंदे ! एत्थपि अग्गहं चरे, सव्वं हासं परिच्चज आलीणगुत्तो परिव्वए ॥ ८ ॥ पुरिसा, तुम

हैं, वे एसा नहीं करते हैं व एसा कहते हैं, कि जैसे २ कर्म होते हैं, वैसे २ स्थान में उत्पन्न हो आत्मा सुख दुःख भोगता है इसलिये कल्पातीत, ( केवल ज्ञानी ) एतदनुदर्शी, तथा कर्मों को नाश करनेवाले महर्षि कर्म क्षय करते हैं ॥ ७ ॥ योगियों के मन में क्या तो सुखी और क्या उदासी होती है कदाचित् सुखी और उदासी आजावे तो वे उसमें तल्लीन पणा धारण नहीं करते हैं और सर्व हास्यादि कुतूहल को छोडकर कछुवे की तरह मन, वचन, और काया इन तीनों योगों को संयम में रखते हुवे विचरते हैं ॥ ८ ॥ अहो पुरुष ! तूंही तेरा मित्र है, अन्य बाह्य मित्र की क्यों इच्छा करता है ॥ ९ ॥ मित्र आत्मा जो कर्म

क्यों ब बाहिर का मि० मित्र इ चहाता है ? ॥ ९ ॥ जं जिस को जा० जानेगा उ० कर्म के नाश करनेवाला तं० उस को जा० जानेगा दू० मोक्ष जानेवाला जं० जिस को जा० जानेगा दू० मोक्ष जानेवाला तं० उस को जा० जानेगा उ० कर्म के नाश करनेवाला ॥ १० ॥ पु० पुरुष अ० आत्माको ही अ० मुक्त न बना ए० ऐसे दु० दुःख से प० छूटेगा ॥ ११ ॥ पु० पुरुष स० सत्य को ही स० जान स सत्य की आज्ञा में उ प्रवर्तक से० वे मे० पण्डित मा० मृत्यु से तिरते हैं स० युक्त ध० धर्म मा० ग्रहणकर से० श्रेय

मेव तुमं मित्तं, किं बहिया मित्त मिच्छासि ॥ ९ ॥ जं जाणेज्जा उच्चालइय तं जा णेज्जा दूरालइय, जं जाणेज्जा दूरालइयं, तं जाणेज्जा उच्चालइयं ॥ १० ॥ पुरिसा अत्ताण मेव अभिणिगिज्झ एवं दुक्खा पमोक्खसि ॥ ११ ॥ पुरिसा सच्चमेव स मभिजाणाहि सच्चस्साणाए स उवट्ठिर से मेहावी मार तरति सहिते धम्म मादाय

करने वाला मानेगा; उसी आत्मा को मोक्ष मात्र करने वाला जानेगा और जिसको मोक्ष मात्र करने वाला मानेगा उसीको कर्म क्षय करने वाला मानेगा ॥ १० ॥ अहो पुरुष ! तू तेरी आत्मा को विषय में गृद्ध मत बना इससे शीघ्रही दुःख से मुक्त होजायगा ॥ ११ ॥ अहो पुरुष तू सत्यकाही सेवनकर क्योंकी सब न्याय मार्गमें चलनेवाले ही तत्वज्ञ साधु संसार से तीर सकते हैं और धर्म को ग्रहण कर कल्याण को मात्रकर

म सम्यक् प्रकारसे देखता है ॥ १२ ॥ दु० दोनों से मरायाहुवा जी० अविनम्य के लिये प० वंदना मा० सन्मान पू० पूजा जं० जिस में प० कितनेक प० प्रमोद पाते हैं ॥ १३ ॥ म० ज्ञानादि सहित दु० दुःख पु० स्पर्श णो नहीं झ० व्याकुल होना पा० देखे द० मुक्ति लो० लोक आ० आलोच कर प० प्रपंचसे मु० छूटे वि० ऐसा बे० कहता है ॥ १४ ॥ + + +

सय समणुवस्सति ॥ १२ ॥ दुहओ जीवियस्स परिवंदण माणण पूयणाए, जंसि एगे पमोयति ॥ १३ ॥ सहिए दुक्ख मत्ताए पुट्ठो णो झझाए पासिम दविए लो यालोयपवंचाओ मुच्चति त्तिबेमि ॥ १४ ॥ इति सीतोसणीया ज्झयणस्स—तइओ उद्देसो सम्मत्तो। * * *

सकते हैं ॥ १२ ॥ रागद्वेषादि से कलुषित हृदय जिनका होरहा है ऐसे कितनेक कीर्ति, मान, पूजा के लिये हिंसा करनेमें प्रमोद पाते हैं ॥ १३ ॥ संयम पालते कदाचित् दुःखभी आजावे तो व्याकुल होना नहीं किसी प्रकार के भरम में पड़ना नहीं; परंतु ऐसा विचारना कि दुःख ही कर्मों का निकन्दन करने का कारण है ऐसे विचार से जो प्रवर्ती प्रवृत्त हैं; वेही सर्व लोक के प्रपंचों से छूटकर मुक्ति पाते हैं ऐसा मैं तीर्थंकर के कथनानुसार कहता हूं १४ ॥ यह शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन का तृतीय उद्देशा पूर्ण हुवा आगे कषायत्याग का उपदेश देते हैं × + ×

से० वे व० वमन करनेवाले को० क्रोध को मा० मान को मा० माया को लो० लोभ को ए० यह पा० वस्तुओंका दं० मत है, उ० निवर्ते हैं स० शस्त्र से जो प० संसारके अंत करनेवाले आ० आश्रव स० दूर करे ॥ १ ॥ जे० जो ए० एक को जा० जानता है से० वह स० सर्व जा० जानता है जे० जो स० सर्व जा० जानता है से० वह ए० एक जा० जानता है ॥ २ ॥ स० सर्व से प० प्रमादीको भ० डर है स० सर्व से अ० अप्रमादी ण० निडर है ॥ ३ ॥ जे० जो ए० एक णा० नमावे से० वे ब० बहुत णा० नमावे जे०

से वंता कोहं च, माणं च मायं च, लोभं च, एयं पासगस्स दंसणं उवरयसत्थस्स पलियंतकरस्स आयाणं सगडब्भि ॥ १ ॥ जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ । जे सव्वं जाणइ से एगं जाणइ ॥ २ ॥ सव्वतो पमत्तस्स भयं, सव्वतो अप्पमत्तस्स णत्थि भयं ॥ ३ ॥ जे एगं णामे से बहूणामे, जे बहूणामे से एगं

जो पुरुष अपने किये हुवे कर्मों को दूर करके यथोक्त रीतिसे संयम पालेगा वह क्रोध, मान, माया, तथा, लोभको दूर करेगा एसा तत्त्वदर्शी, शस्त्रत्यागी संसारांतकर्ता भगवान् श्री वीरप्रभुका दर्शन है ॥ १ ॥ जो एक परमाणु आदि सूक्ष्म वस्तु को जानता है वह सर्व पर्यायों को जानता है और जो संसार में वर्तमान सर्व पदार्थ को जानता है, वह एक घटिकादि वस्तु जानता है ॥ २ ॥ प्रमादी जीवों को सब वस्तु से भय है और अप्रमादी को किसी का भय नहीं है ॥ ३ ॥ जो एक मोहनीय कर्म को नमाता है,

ति० तिर्यंचदर्शी, से० वे द० दुःखदर्शी ॥ ९ ॥ से० वे मे० पण्डित अ० निवर्ते को० क्रोध से, मा० मान से, मा० माया से, लो० लोभ से, पे राग से, दो० द्वेष से, मो० मोह से, ग० गर्भ से, ज० जन्म से म० मरणसे, ण० नरक से, ति० तिर्यंचसे, और दु० दुःख से, ए० यह पा० वल्लभ का द० मत उ० निवर्तनेवाले स० शस्त्र से प० सनारान्त करनेवाले ॥ १० ॥ आ० आदान णि० निषेधक स० कर्मों को भेद

जे णिरयदंसी से तिरियदंसी, जे तिरियदसी से दुक्खदसी ॥ ९ ॥ से मेहावी अभिणिवट्टेज्जा-कोहच, माणच, मायच, लोहच, पेज्जच, दोसच, मोहच, गब्भच, जम्मच, मरणच, णरगच, तिरियंच, दुक्खच, एय पासगस्स दसणं उवरयसत्थस्स पलियंतकरस्स ॥ १० ॥ आयाणं णिसिद्धा सगडब्भि । किमत्थि उवाधि पासग-

नरक, तीर्यच तथा और दुःखों का त्याग करेगें ॥ ९ ॥ उक्त युक्ति से पंडित क्रोध, मान माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, गर्भ, जन्म, मरण, नरक तथा तीर्यचके दुःखों से अपनी आत्मा को बचावे यही मत शस्त्र त्यागी, ससार के अंत कर्ता श्री वीरप्रभुका है ॥ १० ॥ आते हुए कर्मों को संयम से रोक करके पूर्व को कर्मों को खपावे ऐसे कर्म क्षय कर जो केवल ज्ञानी हुए हैं, उनको अब कोनसी उपाधि है अपितु कुछभी उपाधि नहीं हैं ऐसा तीर्थंकर भगवान के कथनानुसार मैं

मेवाले कि० क्या? उ० उपाधि पा० कर्मकृतो ण नहीं है ण० नहीं है चि० ऐसा कहता हूं ॥११॥
इ० ऐसा सी० सीतोष्णीय णा० नामक त० तीसरा अ० अध्ययन स० समाप्त + +

स्स । णविज्जति णत्थि त्तिबेमि ॥ ११ ॥ इति सीतोसणीय अज्झयणस्स चउत्थो उ-
द्देसो इति सीतोसणीया णाम चउत्थ मज्झयण सम्मत्तं •

संपूर्ण हुआ इसमें मुनि को संयम का उपदेश करा यह सम्यक्त्व से होता है इसलिये आगे सम्यक्त्व का स्वरूप बतानेवाला चतुर्थ अध्ययन कहते हैं + + +

# अथ सम्यक्त्वनामकं चतुर्थमध्ययनम्

मे० अब मे० कहता हूं मे० जो अ० भूतकाल के, मे० जो प्रत्युत्पन्नकाल के, मे० जो आ० भविष्य कालके अ० अरिहंत भ० भगवन्त ते० वे स० सर्व ए० ऐसा आ० फरमाते हैं, ए० ऐसा भा० बोलते हैं, ए० ऐसा प० प्रतिपादन करते हैं ए० ऐसा प० प्ररूपते हैं स० सर्व पा० प्राणी स० सर्व भू० भूत स० सर्व भी जीव स० सर्व स० सत्व ण० नहीं ह० मारना ण० नहीं अ० ताडना ण० नहीं घा० घात करना ण०

से बेमि—जेय अतीता, जेय पडुप्पन्ना, जेय आगमिस्सा, अरहंता भगवंतो, ते सव्वेवि एव—माइक्खंति, एव भासंति, एव पण्णवंति, एव परूवेंति—सव्वे पाणा, सव्वे भूया, सव्वे जीवा, सव्वे सत्ता, ण हंतव्वा, ण अज्जावेयव्वा, ण परिघेतव्वा, ण परि

अहो जम्बू मैं कहता हूं कि गतकालमें जो अनंत तीर्थंकर हुवे हैं, वर्तमानकालमें बीस विहरमान तीर्थंकर हैं, और आगामी काल में अनंत तीर्थंकर होवेंगे वे सब अरिहंत भगवान ऐसा कहते हैं, ऐसा बोलते हैं, ऐसा बताते हैं, और ऐसा प्ररूपते हैं; कि बेइन्द्रियादि सर्व प्राणी, वनस्पत्यादि सर्व भूत पंचेन्द्रिया-

नहीं प० परिताप देना क० नहीं कि० किलामना देना उ० नहीं उ० उद्वेग उपजाना ए० यह ध० धर्म सु० शुद्ध णि० नित्य सा० शाश्वत स० लोक के दुःख को देख करके खे० खेदज्ञने प० फरमाया है तं० यह ज० यथा—उ० सावधान को अ० असावधान को, उ० दण्ड से निवर्ते को, अ० दण्ड से नहीं निवर्ते को, सो० सोपाधि को अ० निरुपाधी को, सं० समोगी को, अ० असजोगी को त० तथ्य इ० यह त० वैसा अ०

तावेयव्वा, ण किलामेयव्वा, ण उद्दवेयव्वा एस धम्मे सुद्धे, णितिए, सासए, समे च लोय खेयण्णेहिं पवेतिते—तंजहा उट्ठिएसुवा, अणुट्ठियसुवा, उवरयदंडेसुवा, अणुवरयदंडेसुवा, सोवहिएसुवा, अणोवहिएसुवा, सजोगेसुवा, असंजोगेसुवा, तच्च चेय तहाचेयं, अस्सिं चेयं पवुच्चइ ॥ १ ॥ त आइत्तु ण णिहे ण णिक्खित्तए जाणितु धम्म

दि सर्व जीव तथा पृथिव्यादि सर्व सत्व को मारना नहीं, ताडना नहीं, घात करना नहीं, परीताप उपजाना नहीं, किलामना देनी नहीं, तथा शरीर से प्राणों का व्यवच्छेद करना नहीं यही धर्म शुद्ध है, सनातन है, शाश्वत है ऐसा श्री सर्वलोक के जीवों के दुःख को जानने वाले श्री सर्वज्ञ महावीरप्रभु का फरमान है यह कथन किसके लिये किया है, सो बताते हैं जो धर्मकार्य करनेको सावधान हुवे हैं, या अभी भी प्रमादी पड़े हैं, जो सावधान होकर के पापके त्यागी बने हैं, या अभी त्याग नहीं किया, जो बाह्याभ्यन्तर सर्व उपाधि रहित हुवे हैं, या उपाधि सहित हैं, जो त्यागी हुवे, या न हुवे, इत्यादि सब प्राणियों के लिये उपर्युक्त

इस में ही वे० निश्चय प० कहागया है ॥ १ ॥ से उसे आ० आदरकर ण० नहीं णि छिपावे ण० नहीं णि० छोडे जा० जानकर ध० धर्म ज० यथातथ्य ॥ २ ॥ दे० देख के णि० वैराग में ग० चले णो० नहीं ए० लोकानुगत च० चले, ज० जिस को ण० नहीं इ० यह पा० ज्ञाति अ अन्य व० उस को क हां से होवे ॥ ३ ॥ दि० देखा सु० सुना म० माना, वि० जाणा अं० जो प० पर प० कही ॥ ४ ॥ स गृह होता प० लेपाता पु० वारम्वार जा० जाति में प० परिभ्रमण करे ॥ ५ ॥ अ० दिन को रा०

जहातहा ॥ २ ॥ दिठेहिं णिव्वेय गच्छेज्जा णो लोगस्सेसणं चरे ॥ जस्स णात्थि इमा णाति । अण्णा तस्स कओसिया ॥ १ ॥ ३ ॥ दिट्ठ, सुय, मय, विन्नाय, जमेयं परिकहिज्जइ ॥ ४ ॥ समेमाणा पलेमाणा पुणो पुणो जातिं पकप्पंति ॥ ५ ॥ अहो

धर्म यथातथ्य है सब प्रकार यह है, और इसभिनप्रवचन में यही धर्म कहा हुवा है ॥ १ ॥ ऐसा परम पवित्र धर्म को अंगीकार करने में प्रमाद नहीं करना और ग्रहण किये बाद प्राण जाने पर छोडना नहीं ॥ २ ॥ दुनिया के रंग राग में मोहित नहीं होते हुवे वैराग्य को धारण करना दुनिया की देखा देखी नहीं करना जिसको लोक की देखा देखी नहीं है, उसको अन्य आरंभ की प्रवृत्ति कहांसे होवे अर्थात् नहीं होवे ॥ ३॥ अहो प्रभु ! जो मैं करता हूं यह मेरा देखा हुवा है, सुना हुवा है, माना हुवा है, और अनुभव किया हुवा है ॥ ४ ॥ जो संसार में आसक्त बनकर फसे रहते हैं वे संसार में वारंवार परिभ्रमण करते हैं ॥ ५॥

रात्रि को ज ''यत्ना करता धी० धीर स० सदा आ० आगत प० प्रज्ञा प प्रमादी ब बाहिर पा देखे अ० अप्रमादी स० सदा प० पराक्रम करे चि० एमा वे० कहता हूं ॥ ९ ॥ ✿ ✿

जे० जो आ० आश्रव ते० वे प अनाश्रव, जे० जो प० अ'ाश्रव ते० वे आ आश्रव जे० जो अ० अनाश्रव ते० वे अ अनाश्रव ही ज० जो आ० आश्रव ते० वे आ० आश्रव ही ॥१॥ ए० इस प० पद को स०

य राओय जयमाणे धीरे सया आगयपण्णाणे पमत्ते बहिया पास । अप्पमत्ते सया परिक्कमिज्जासि—त्तिबेमि ॥ ९ ॥ इति सम्मत्त ज्झयणस्स पढमोद्देसो •

जे आसवा ते परिस्सवा । जे परिस्सवा ते आसवा ॥ जे अणासवा ते अपरिस्सवा, । जे अपरिस्सवा ते अणासवा ॥ १ ॥ एते पए संबुज्झमाण लोयंच आणा

इस लिये तत्त्वदर्शी धीर पुरुषों को प्रमादियों को धर्म से विमुख जानकर रात्रि दिवस उद्यमी बनकर सावधानपने वर्तना ऐसा मैं कहता हूं इति सम्यक्त्व नामक चतुर्थ अध्ययन का प्रथम उद्देशा पूर्ण हुआ

अब अन्यमत का निराकरण करते हैं + + ×

जो कर्मबन्ध करने के कारणभूत क्रियादि होते हैं, वे वैरागीपुरुषों को कर्मबन्ध से मुक्त कराने वाले होते हैं नमीराजर्षिवत् और जो कर्मबन्ध से मुक्त के कारण साधु आदि हैं वे मिथ्यात्वियों को कर्म के कारण होजाते हैं पालक प्रधान वत् तथा जो धर्मस्थान हैं वे किसि को निर्जराका स्थान नहीं भी होते हैं कुंडरिकवत् और जो निर्जराका स्थान नहीं है, वहां पर धर्म भी होजाता है एलायची कुमारवत् ॥ १ ।

समझनेवाला लो० लोक को आ० आज्ञा से अ० सम्यक् मानकर पु० अलग २ प० कहा ॥ २ ॥ अ० फ
रमाते हैं, णा० ज्ञानी इ० यहां पा० मनुष्यों को सं० संसारप्रतिपन्न को सं० समझनेवाले को वि० बुद्धि
वान को अ० आर्तवंत सं० धर्म समाचरे अ० अथवा प० प्रमादी अ० यथातथ्य इ० यह त्ति० ऐसा बे०
कहता हूं ॥ ३ ॥ न० नहीं अ० अनागम म० मृत्युमुखका अ० है, इ० स्वेच्छाचारी व० असंयमी
का० कालप्रसित णि० सपुर णि० सल्लालीन पु० अलग २ जा० जाति में प० फिरते हैं (अन्य आ

ए अभिसमेच्चा पुढो य पवेदितं ॥ २ ॥ अग्घाति णाणी इह माणवाणं संसार पडिव
न्नाणं संबुज्झमाणाणं विण्णाणपत्ताणं अट्टाविसंता अदुवा पमत्ता अहासच्चमिणं त्ति-
बेमि ॥ ३ ॥ नाणागमो मच्चुमुहस्स अत्थि इच्छापणीया वंकाणिकेया कालग्ग
हिआ णिचये णिविट्ठा पुढो पुढो जाई पकप्पति (पाठान्तरे)—इत्थ मोहे पुणो पुणो

रक्त पदों को समझनेवाले तीर्थंकर के कथनानुसार जगत् जन्तुओं को कर्मों से बचाते हुए देखकर धर्म के
लिये क्यों उद्यमी नहीं बनेंगे ॥ २ ॥ ज्ञानी महात्मा संसार में रहे हुवे सरलबोधी विद्वान प्राणीयों को इस
तरह से बोध करते हैं कि जिससे वे आर्तध्यान से व्याकुल और प्रमाद से प्रसित होते हुवे भी धर्माचरण
करलेते हैं, यह बात सत्य है ॥ ३ ॥ मृत्यु के मुख में रहे हुवे प्राणी को मृत्यु प्रसित नहीं करे ऐसाको कदा
पि होने का नहीं है तथापि मायारूपी पाप में फसे हुवे असंयमी प्राणी काल के मुख में रहते हुवे भी

वार्यकथन) इ यह मो० मोर पु पुनः २ ॥४॥ इ० यहां ए० कितनेक को त वहां २ सं परिचय भ० होता है भ० नीचगति में वा० उत्पन्न होवे हुवे फा० स्पर्श सं० वेदते हैं ॥ ५ ॥ चि० अति कू० खोटे क कर्म से चि० अति प दुःखदाइ स्थान में चि रहते है, अ० न रहे कू कुकर्म में णो० नहीं चि० अति प० दुःख स्थान में रहते हैं ॥६॥ ए कितनेक व० कहते हैं अ० अथवा पि णा० ज्ञानी, णा० ज्ञानी व करते हैं अ० अथवा पि० ए० एक ॥ ७ ॥ आ० यावंतः के० कितनेक लो० लोक में स० साधु मा०

॥ ४ ॥ इह मेगेसिं तत्थ तत्थ संथवो भवति अहोववाइए, फासे पडिसंवेदयंति ॥ ५ ॥ चिट्ठं कूरेहिं कम्मेहिं चिट्ठ परिविचिट्ठति, अचिट्ठं कूरेहिं कम्मेहिं णो चिट्ठं परिविचिट्ठति ॥ ६ ॥ एगे वयंति अदुवावि णाणी, णाणी वयंति अदुवावि एगे ॥ ॥ ७ ॥ आवंति केआवंति लोयंसि समणाय माहणाय पुढो विवाद वदंति से

भारम में तल्लासीन बन रहे हैं और एकेन्द्रियादि अनेक जाति में परिभ्रमण करते हैं ॥ ४ ॥ कितनेक जीवों को नारकी के दुःख का परिचय होता है, इस लिये वे वैसेही कर्मों कर उसीही स्थान में उत्पन्न हो कर दुःख भोगते हैं ॥ ५ ॥ जो जीव अती ही क्रूर कर्म करते हैं, वे आतेही दुःखस्थान में रहते हैं और जो अति क्रूर कर्म नहीं करते हैं, वे ऐसे दुःख स्थान में ज्यादा नहीं रहते है ॥ ६ ॥ जैसा श्रुत केवली उपदेश देते हैं, वैसाही केवल ज्ञानी उपदेश देते हैं और जैसा केवल ज्ञानी उपदेश देते हैं वैसाही श्रुत केवली उपदेश देते हैं, ॥ ७ ॥ इस जगत् में कितनेक साधु ब्राह्मण धर्म विरुद्ध बकते हैं; और कहते हैं कि

दो० दोष अ० अनार्यों के व० वचन मे० यह ॥९॥ व० हम पु० और ए० ऐसा भा० कहते हैं ए० ऐसा भा० भाषते हैं, ए० ऐसा प० प्ररूपते हैं, ए० ऐसा प० प्रगट करते हैं कि—स० सर्व प्राणी, स० सर्वभूत स० सर्व जीव स० सर्व सत्व, ण० न मारना, न० परवश करना, ण० न किलामना देना ण० न घात करना ण० न परिताप उपजाना ण० न उद्वेग उपजाना ए० इस में ही आ० जानो ण० नहीं है दो० दोष अ० आर्यों के व० वचन मे० यह ॥ १० ॥ पु० पहिले नि० उपास कर स मतान्तरों को प० मस्ये

ण—मेय ॥ ९ ॥ वयं पुण एव—माइक्खामो, एवं भासामो, एवं परूवेमो, एवं प भवेमो सव्वे पाणा, सव्वे भूया, सव्वे जीवा, सव्वे सत्ता, णहंतव्वा, णअज्जावेत-व्वा, ण किलामेअव्वा ण परिघेतव्वा, ण परियावेयव्वा, ण उद्वेयव्वा, एत्थवि जाणह णत्थित्थ दोसो—आरियवयण—मेयं ॥ १० ॥ पुव्वं निकाय समय पत्तेयं पत्तेयं पु-

नहीं है यह वचन अनार्य का है ॥ ९ ॥ और हम ऐसा कहते हैं ऐसा बोलते हैं, ऐसा प्ररूपते हैं कि किसी जीव को किसीभी प्रयोजन से मारना नहीं, दुःख देना नहीं, सताप उपजाना नहीं, किलामना देनी नहीं, जीव से शरीर पृथक् करना नहीं, इस में ही दोष नहीं है, और यही आर्यों का वचन है ॥ १० ॥ संसार भ्रमण अनन्तकी बोधप्राप्त देखकर प्रत्येक २ वादीयोंको हम पूछते हैं, कि अहो वादीयों तुम साता

क २ को पु० पूछते हैं इ० हम भो० अहो पा० परवादीयों ! किं० क्या मे० तुम को सा० साताको दु दुःख उ० कहते हो अ असाता को ? स सत्त के प्र प्रतिपक्षीयों भी ए० ऐसा बू० बोले स सर्व प्राणी० स० सर्व भूतों,स० सर्व जीवों स० सर्व सत्वों को अ०असाता अ० अप्रिय म० महाभय म० महा दुःख होवा है वि० ऐसा वे० कहता हूं ॥ ११ ॥ इ० ऐसा स० सम्यक्त्व अ० अध्ययन बी० दूसरा उ० उद्देशा ॥

उ० उपेक्षा कर ए० इन की बा० बाहिर के लो० लोक की से० वे स० सब लो० लोकमे जे० जो

च्छिस्सामो, ह भो पावाउया किं भे साय दुक्खं उदाहु असाय? समिया पडिव ज्ञेयावि एव बूया—सव्वेसिं पाणाणं, सव्वेसिं भूयाण, सव्वेसिं जीवाणं, सव्वेसिं स त्ताण, असायं अपरिणिव्वाणं महब्भयं दुक्खं त्तिबेमि ॥ ११ ॥ इति सम्मत्त ज्झ यणस्सबीओ देसो

* * *

उवेहेण बहियाय लोय से सव्व लोयसि जे केइ विन्नु ॥ १ ॥ अणुवीइ पास-

को दुःख कहते हो कि असाता को ? तब परवादी उत्तर देते हैं, कि सर्व प्राणी, सर्व भूत, सर्व जीव, सर्व सत्व को असाता अप्रिय है, महाभय का और दुःख का कारण है, ऐसा मैं तीर्थंकर की आज्ञानुसार कहता हूं ॥ ११ ॥ इति सम्यक्त्वाख्य चतुर्थ अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुआ आगे तप अनुष्ठान करते हैं

धर्म से विरुद्ध चलने वाले पाखण्डियों के तरफ लक्ष मतदो और इस तरह चलने वाले को विद्वान कहते

के• कोइ त्रि० विज्ञान ॥ १ ॥ अ० विचारकर ए० इन की पा० देख णि० छोडा दं० दंड जे० जो के० कोइ स• प्राणी क० कर्म प० छोडते हैं ण० मनुष्य मु० शरीर का ममत्व रहित प० धर्म त्रि० ऐसा सरल आ० आरंभ से उत्पन्न हुवा दु• दुःख णा० जाणकर ए ऐसे मा० कहा स० सम्यग्दर्शी ॥ २ ॥ ते० वे स० सर्व प• प्रवादीक दु• दुःख में कु० होश्यार प• परिज्ञा को मु० कहते हैं इ० ऐसा क० कर्म को प• जानकर स० सर्वतः ॥ ३ ॥ इ० यहां अ• आज्ञा इच्छक प० पण्डित अ० वे अस्नेही ए० एक

णिक्खित्त दंडा जे केइ सत्ता पलियं चयाति, णरे मुयच्चा, धम्मविदुत्ति अजू आ

रमजं दुक्खमिणन्ति णच्चा एवं माहु समत्तदंसिणो ॥ २ ॥ ते सव्व, पावादिया

दुक्खस्स कुसला परिन्नं मुदाहरंति इति कम्म परिण्णाय सव्वसो ॥ ३ ॥ इह आ

हैं ॥ १ ॥ अहो भव्य ! तू विचार कर देख कि जो आरंभ को दुःख का कारण जानकर त्याग करते हैं, और शरीर की किंचिन्मात्र दरकार नहीं रखते हुवे धर्म परायण तथा सरल स्वभावी बनकर कर्म तोडते हैं वेही सच्चे सम्यग्दर्शी हैं, ॥ २ ॥ दुःख क्षय करने का उपाय जानने में कुशल सर्व प्रवादी तीर्थंकर गणधरादिक ज्ञपरिज्ञा व प्रत्याख्यान परिज्ञा करते हैं कि ये सब बंध के कारण सर्वथा प्रकार त्यागना चाहिये ॥ ३ ॥ इस जगत् में जिनाज्ञा के इच्छक पण्डित मन और पवित्र अपनी आत्मा को अकेली मान शरीर को

आत्मा म० अपनी से देखकर पु० आप स० शरीर को क० कृश करे अ० आत्मा को ज० जीर्ण करे अ० आत्मा को ॥ ४ ॥ ज० जैसे जु० पुराने क० लकड़ को ह० अग्नि प० जलावे, ए० ऐसे आ० आत्मा स० समभावी अ० अस्नेह ॥ ५ ॥ वि० दूर करे को० क्रोध को अ० अकम्प रहवे इ० यह थि० थोडा आयुष्य स० उसे देखकर ॥ ६ ॥ दु० दुःख को जा० जान अ० अथवा आ० आगामी पु० अलग२

णाकस्सी पहिए आणिह एग—मप्पाणं सपेहाए धुणे सरीर, कसेहि अप्पाण जरेहि अप्पाणं ॥ ४ ॥ जहा जुन्नाइ कट्ठाइ हव्ववाहो पमत्थाति, एव अत्तसमाहिते अणिहे ॥ ५ ॥ विगिंच कोहं अविकंपमाणे इम णिरुद्धाउय संपेहाए ॥ ६ ॥ दुक्खंच जाण अदुवागामिस पुढो फासाईंच फासे, लोयं च पास विप्फंदमाण-

तप से कृश दुर्बल कर इसलिये अहो मुनि! तप से शरीर को दुर्बल करो जीर्ण करो ॥ ४ ॥ जैसे अग्नि पुराणा काष्ट को जल्दी जलाती है, वैसे ही स्नेही समभावी कर्मों का नाश शीघ्रही करते हैं ॥ ५ ॥ अहो मुनि! मनुष्य जन्म का आयुष्य अल्प है और इसमें भी आयुष्य प्रतिदिन कमी हो रहा है, ऐसा देखकर हिम्मत धारन कर क्रोध रुप शत्रु का नाश कर ॥ ६ ॥ क्रोधी पुरुष जिस प्रकार दुःख भोगव रहा है, और आगे को दुःख भोगवेगा, इस को जानकर क्रोध का नाश कर यदि त्याग नहीं किया तो आगे दुःख

फा० स्पर्श को फा० स्पर्श करे लो० लोक को पा० देख वि० परवश परेहुवे ॥ ७ ॥ जे० जो णि० निवर्ते पा० पापकर्म से अ० अति सुखी ( नियाणारहित ) ते० वे वि० कहलाये हैं ॥ ८ ॥ त० इस लिये वि० विद्वान णो० नहीं प० मले णि० ऐसा बे० कहता हूं ॥ ९ ॥ + +

अ० दमनकरे प० विशेष दमनकरे ज० छोड के पु० पूर्व संयोग हि० आदरकर उ० उपशम ॥ १ ॥ त० इस

॥ ७ ॥ जे णिव्वुडा पावेहिं कम्मेहिं अणियाणा ते वियाहिया ॥ ८ ॥ तम्हा तिवि

ज्जो णो पडिसंजलिज्जासि त्तिबेमि ॥ ९ ॥ इति सम्मत्त ज्झयणस्स-तइओद्देसो सम्मत्तो

आवीलए पवीलए णिप्पीलए जहित्ता पुव्वसंजोगं हिच्चा उवसमं ॥ १ ॥ तम्हा

भोगना पडेगा क्रोधादिक से लोक कैसे आकुल व्याकुल हो रहे हैं उसको देख ॥ ७ ॥ जो पाप कर्म से निवर्ते हैं, वे नियाणा रहित व अति सुखी कहाये हैं, ॥ ८ उक्त दोनो बातों को तपास कर बुद्धिमान का कर्तव्य है, कि कदापि किसीपे क्रोध नहीं करे ऐसा मैं कहता हूं इति सम्यक्त्वाख्य चतुर्थ अध्ययन का तृतीय उद्देशा पूर्ण हुवा आगे संयम में स्थित रहने का बोध करते हैं * *

साधु प्रथम सांसारिक प्रवृत्ति से निवृत्त होकरके उपशम युक्त प्रथम कम फिर विशेष ऐसे अनुक्रम से तप की वृद्धि करते हुवे शरीर का दमन करे ॥ १ ॥ इसलिये प्रश्न मन युक्त वीर मुनी बालता से अनुराग

लिये अ० दुर्मन रहित अविमन वी० वीर सा० स्वारवः (संयम अनुष्ठान में रहा हुआ) स समिती स सहित स० सदा ज यत्नवंत ॥ २ ॥ दु दुष्कर आचरने म० मार्ग वी० वीरों का अ० मोक्षगामी ॥ ३ ॥ वि० सूकावे मं० मांस सो० सोही ए० यह पु० पुरुष द० मोक्षार्थी वी० वीर आ० आदरणीय वि० कहे जे० जो धु० दूरकरे स० शरीर व० रहकर बं० ब्रह्मचर्य में ॥ ४ ॥ णे० नेत्र से प० विषय ग्रहण करनेवाले आ० कर्मादानरू श्रोतेन्द्रिय में ग० गृद्ध बा० अज्ञानी अ० छेदे नहीं ब० बन्धन अ०

अविमणे वीरे सारए समिए सहिते सयाजए ॥ २ ॥ दुरणुचरो मग्गो वीराण अ-
णियट्टगामीणं ॥ ३ ॥ विगिंच मंससोणियं एस पुरिसे दविए वीरे आयाणिज्जे वि
याहिए जे धुणाति समुस्सयं वसिता बंभचेरमि ॥ ४ ॥ णेत्तेहिं पलिछिन्नेहिं आयाण
सोयगढिए बाले अव्वोच्छिन्नबंधणे अणभिक्कंत संजोए तमसि अविजाणओ आणाए

युक्त तथा समिति आदि गुणों सहित रहना ॥२॥ मुक्ति प्राप्त करने वाले वीर पुरुषों का मार्ग बहुत ही कठिन है ॥३॥ अहो मुमुक्षु ! तू तेरा शरीर, रक्त, मांस तपश्चर्या से शुष्क कर क्योंकि जो ब्रह्मचर्य में सदैव स्थित रह कर तपश्चर्या से शरीर को दमन करता है वही पुरुष मुक्ति गमन योग्य होने से माननीय कहाया है, ॥ ४ ॥ जो पहिले भोगों को त्याग कर पीछे मोहोदय होने से नेत्रादि इन्द्रियों में आसक्त होते हैं, वे अज्ञानी किसी बन्धनसे मुक्त नहीं हैं ऐसे मनुष्य को जिनेश्वर भगवान की आज्ञाका लाभ प्राप्त नहीं होता है

छोडे नहीं सं० संजोग त० भ प्रकार में अ० आन अ० आज्ञा का ले० लाभ ण० नहीं चि० ऐसा वे० करता है ॥ ५ ॥ जि० जिसको ण० नहीं पु० पहिले प० पीछे म० बीच में त० उस को कु० क्या सि० कराय ॥ ६ ॥ से० व हु० निश्चय प० प्रज्ञावन्त बु० बुद्धिवत आ० आरम से निवर्ते स० सम्यक् प० इन को पा० जैसो ज० जिस से व० बधन व० वध घो रौद्र प० परिताप च० और दा० दारुण ॥ ७ ॥ प० छोडकर बा० बाहिर के च० निश्चय सो० स्रोत णि० निष्कर्मदर्शी इ० यहां म० मनुष्यभव में ॥ ८ ॥

लभो णत्थि त्तिवेमि ॥ ५ ॥ जस्स णत्थि पुरा पच्छा मज्झे तस्स कुओसिया ॥ ६ ॥

से हु पन्नाणमते बुद्धे आरभोवरए सम्ममेयंति पासह, जेण बध, वह, घोर, परिताय

च दारुण ॥ ७ ॥ पलिछिंदिय बाहिरग च सोय णिकम्मदसी इह मच्चिएहिं ॥ ८ ॥

ऐसा मैं कहता हूं ॥ ५ ॥ जिसको पहिले भी ज्ञानादि गुण की प्राप्ति नहीं हुई और पीछे भी नहीं है, तो मध्यभव में कहां से होगी ॥६॥ आरम में बन्ध बधन आदि अनेक दारुण भयकर दुःख की प्राप्ति होती है प्रज्ञावान ज्ञानीजन आरंभ से सदैव दूर रहते हैं इससे वे इसलोक में तथा परलोक में यथार्थ लाभ और सुख के भोक्ता बनते हैं ॥ ७ ॥ अहो मुनि ! इस मनुष्य भव में बाह्य प्रतिबन्ध का छेदन कर, आरम को छो ड, मोक्ष तरफ मन रखना चाहिये ॥ ८ ॥ कृत कर्म के फल अवश्यही प्राप्त होते हैं ऐसा जान सबको कर्म

क कर्म के स० सफल द० देख त० उस से णि० निवर्ते वे तस्मा ॥ ९ ॥ जे० जो स० निश्चय भो० अहो धी धीर स समितीवंत स० ज्ञानादि सहित स० सदा यत्नी स० निरंतर द० दर्शी आ० पापते निवर्ते अ० यथातथ्य लो० लोक मु० देखते पा० पूर्व प० पश्चिम दा० दक्षिण उ० उत्तर इ० ऐसा स सत्य में प० अति व्यवस्थित रहे ॥१०॥ सा० हम कहेंगे णा० ज्ञान धी वीर का स० समितिवंत का स० ज्ञानादि सहित का स सदायत्नीका स० सदादर्शी का अ० पाप से निवर्तने वाले का आत्मयती अ० यथा

कम्मुणो सफलत दहु तओ णिज्जति वेयवी ॥ ९॥ जे खलु भो वीरा, समिता, सहि-
ता, सयाजता सघडदसिणो, आतोवरया अहातहा लोग मुवेहमाणा पाईण, पडीण
दाहिणं, उदीण इति सच्चसि परिविचिट्ठिसु॥१०॥साहिस्सामो णाण वीराणं, समिताणं, स

पच के हेतुओं से सदैव दूर रहते हैं, ॥ ९ ॥ जो महात्मा सचे पराक्रमी, सत्यवृत्ति से वर्तनेवाले, ज्ञानादि गुणों में रमनेवाले, सदैव उपमी, कल्याण की तरफ द्रढ लक्ष्य रखने वाले, पाप से निवर्तने वाले तथा यथार्थ पने लोक को देखने वालेथे वे पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, तथा उत्तर ये चारों दिशाओं में रहते हुवे भी सत्य के ही धारी थे ॥ १० ॥ ऐसे गुणों से युक्त सत्पुरुषों का अभिप्राय मैं कहता हूं, कि तत्वदर्शीयों को किसी प्रकार की उपाधि नहीं है इति सम्यक्त्वाख्य चतुर्थ अध्ययन समाप्त हुआ जो सम्यक्त्वधारी होवेंगे वे

तथ्य मो लोक मु० देखनेवाले का कि० क्या है उ० उपाधी पा० केवली को न० नहीं है ण० नहीं है त्ति० ऐसा मैं कहता हूं ॥ ११॥ इ० ऐसा स० सम्यक्त्व अध्ययन स० सपूर्ण

हियाणं सयाजताण सघडदसीणं, आतोवरयाण, अहातहा लोग मुवेहमाणाणं किमत्थि उवाधि पासगस्स? णविज्जति णत्थि त्तिबेमि ॥११॥ इति सम्मत्त ज्झयणस्स चउत्थोदेसो सम्मत्तो इति सम्मत्त णाम चउत्थ मज्झयणं सम्मत्तं

चारित्र अंगीकार कर सकेंगे इसलिये चारित्र के कथन रूप लोकसार नामक पंचम अध्ययन कहता हूं

# आवंती नाम्ना प्रसिद्ध लोकसार नामकं पंचम मध्ययनम्

आ० जितने के० कितनेक लो० लोक में वि० हिंसा करते हैं अ०अर्थे अण निरर्थक वा० या ए० इतने में वे० निश्चय वि० उत्पन्न होते हैं ग० भारी से० उन को का० काम भोग त० तब से० वे मा० मृत्यु के मं० बीचमें ज० अब से० वे मा० मृत्यु के मं बीच में त० तब से० वे दू दूर णे० नहीं से० वे अं० मध्य णे० नहीं स० वे दू० दूर ॥ १ ॥ से० वे पा० देख फु० फूसार जि० जैसा कु० कुशाग्र प० अन्य विंदु भारे से णि० निवर्ते मा० वायु स प्रेरितहो पडे ए० ऐसा बा० अज्ञानी का जी० जीवितव्य मं० मंद

आवंती केयावंती लोयंसि विप्परामुसति अट्ठाए अणट्ठाए वा, एतेसु चेव विप्परा मुसेंति गुरु से कामा तओ से मारस्स अंतो जओ से मारस्स अतो तओ से दूरे णेव स अंतो णेव से दूरे ॥ १ ॥ से पासति फुसिय मिव कुसग्गे पणुन्न णिवतित

जो कोइ लोक में प्रयोजन से या निष्प्रयोजनसे जीवों की घात करते हैं, वे मृत्यु बाद उसीही योनि में उत्पन्न होते हैं जिनको भव भ्रमण करनेकोहै, उनको विषय से मुक्त होने में बहुतही कठिनता मालुम होती है इसही कारण से वे जन्म मरण रूप चक्रमें रहते हैं ऐसा होने से वे मुक्ति पंथसे दूर रहते हैं, इस तरह वे नतो सुख के भोक्ता बन सकते हैं, और न संसार से दूर हो सकते हैं ॥ १ ॥ सम्यग्दर्शी देखते हैं

इनमें मे० निश्चय अ० आरंभ से उपजीवी ए० यहांभी बा० अज्ञानी प० पचतेहुवे र० रमते हैं पा० पाप कर्म में अ० असरण को स० शरण इ० ऐसा मानते हुवे ॥ ८ ॥ इ० यहां मे० कितनेक ए० एकलविहारी भ० होते हैं, से० वे ब० बहुत क्रोधी, ब बहुत मानी, ब० बहुत मायावी, ब० बहुत लोभी, ब० बहुत रोगी, ब० बहुत धूर्त, ब० बहुत दुष्ट परिणामी आ० आश्रववाला, प कर्माच्छादित, उ० सावधान हो प० करते हैं "मा० मुझे के० कोइ अ० देखे" अ० अज्ञान प० प्रमादी दो० दोष से: मू० मूर्ख ध० धर्म णा० नहीं जा० जानता है ॥ ९ ॥ अ० आर्त प० प्रजा मा० मनुष्य क० कर्म बंध में को० प्रवीण जे० जो अ० नि

आरंभजीवी एत्थवि बाले परिपच्चमाणे रमति पावेहिं कम्मेहिं असरणं सरणत्ति म ण्णमाणे ॥ ८ ॥ इह मेगेसिं एगचरिया भवति । से बहुकोहे, बहुमाणे, बहुमाए, बहुलोहे, बहुरए, बहुनडे, बहुसढे, बहुसकप्पे, आसवसक्की, पलिओच्छन्ने, उट्ठियवायं पव्व यमाणे "मा मे केइ अदक्खू" अन्नाणपमाय दोसेण सततं मूढे धम्मं णाभिजाणति॥९।

चरण करते हैं ॥ ८ ॥ कितनेक साधु एकल विहारी होजाते हैं, वे बहुत क्रोधी, बहुत मानी, मायावी, लालची, पापीष्ट, रोगी, धूर्त, दुष्ट परिणामी, हिंसक और कुकर्मी होतेहुवे कहते हैं, कि हम आध्यात्मी धर्म दीपक हैं एसा मिथ्याप्रकाश करनेवाले अपने पाप छिपाते हैं, कि इसेने मुझे कोइ देखलेवे एसे रहते हुवे पनिम्ने विचरते हैं वे अज्ञान व प्रमाद से मूढ बन कर धर्म में कुच्छभी नहीं समझते हैं ॥ ९ ॥ अहो मनुष्यों ! विषय कषाय से पीडित जीवों कर्मबन्ध करने में कुशल पापानुष्ठान के अभिमुख

वर्ते नहीं अ० अयुक्ति प संसार को मोक्ष मा करे मा० भ्रमण म करते हैं त्ति ऐसा बे० कहता हूं॥१०॥

मा० यावंतः के० कितनेक लो० लोक में अ अनारंभ जीवी ए० इस में म० अनारंभ जीवी ॥ १ ॥
ए० इस से वय० निवर्तनेवाला सं० उसे झो० क्षय करनेवाला अ यह सं० सन्धि है ति० इति

अट्टास्स्या माणवा? कम्म कोविया जे अणुवरया अविज्जाए पलिमोक्खमाहु आवट्टमेव

मणुपरियट्टंति त्तिवेमि, इति—लोगसार ज्झयणस्स पढमोद्देसो ॥ १० ॥ *

आवंति केआवंति लोयसी अणारमजीवी एतेसु चेव मणारमजीवी ॥ १ ॥ एत्थो

अज्ञान से मोक्ष मानने वाले, अरहट घटिका के न्याय संसार में परिभ्रमण करते हैं ऐसा मैं कहता हूं ॥१०॥
यह पांचवा अलोकसार नामक अध्ययनका प्रथम उद्देशा पूर्ण हुवा आगे हिंसा से निवर्तने वाले ही साधु
होते हैं; ऐसा मैं कहता हूं + × +

इस जगत् में जो आरंभ के त्यागी साधु हैं वे गृहस्थ केलिये ,निपजाया हुआ निर्दोष आहार लेकर अना
रंभपने से रहते हैं, ॥ १ ॥ जो सावद्यानुष्टान का त्याग करते हैं वेही साधु कहे जाते हैं और सावद्या
नुष्टान का त्याग आर्य क्षेत्र, उत्तम कुलमें जन्म, शुद्ध श्रद्धा इत्यादि अवसर प्राप्त होने से होता है इसलिये
जिन साधु को ऐसा अवसर प्राप्त हुवा है वे सर्व प्रमाद का त्याग कर, शरीर को अशुचि का भंडार जान

अ० देख जे० जो इ० इस वि० शरीरका अ० यह ख० अवसर है ऐसा म० मान कर ॥ २ ॥ ए० यह म० मार्ग आ० आर्यों ने प० फरमाया उ० सावधान हो णो० नहीं प्रमाद करे जा० मानकर दु० दुःख प० प्र त्येक को सा० साता ॥ ३ ॥ पु० अलग २ छ० छान्दे इ० यहां मा० मनुष्यों के पु० अलग २ दु० दुःख प० कहा से० वे अ० अहिंसक हो अ० अमृषावादी हो पु० अलग २ फा० स्पर्श वि० सहन करे ए० यह स० सम्यक् प० पर्याय वि० कही ॥ ४ ॥ जे० जो अ० अगृद्ध पा० पापकर्म से उ० कहा ते० वह आ०

वरए तङ्कोसमाणे अय संधीत्ति "अदक्खू" जे इमस्स विग्गहस्स अयं खणेत्ति मन्नेसी॥२॥

एस मग्गे आरिएहिं पवेदिते उट्ठितो णो पमायए जाणि—त्तु दुक्खं पत्तेय सायं ॥ ३ ॥

पुढो छंदा इह माणवा । पुढो दुक्खं पवेदितं से अविहिंसमाणे अणवयमाणे पुट्ठो-

फासे विप्पणोल्लए एस समियापरियाए वियाहिते ॥ ४ ॥ जे असत्ता पावेहिं क

रर तथा क्षण २ में इस की पर्याय पलटती हुइ देखकर तप संयम में शरीर को झोंस देवे ॥ २ ॥ यह मार्ग तीर्थंकरों ने फरमाया है इसलिये सुख दुःख की भांति प्रत्येक को अलग २ होवी है ऐसा मान दीक्षित को प्रमाद नहीं करना चाहिये ॥ ३ ॥ इस संसार में मनुष्य के आशय व दुःख पृथक् २ हैं; इसलिये किसी की घात नहीं करना, असत्य नहीं बोलना, तथा आये हुए परीसहों को सम्यक् भावे सहन करना यही साधु प्रशंसनीय कहाया गया है ॥ ४ ॥ जो पाप में नहीं प्रवर्तते हैं उनपर भी कदाचित कर्मोदय से रोगोत्पत्ति

रोग ५ दुमे ६ ऐसे उ० करा पी० पीर फा० स्पर्श हि० सहन कर ॥ ॥ से० ये पु० पहिले छाडे प० पीछे छाडे भि० विसरने का धर्म वि विध्वंस धर्म अ० अध्रुव अ आनित्य अ० अशाश्वत च चयो पचय वि० विनाशिक धर्म, पा० देखो ए० इस का रु० रूप सं० सन्धि ॥ ६ ॥ स विचारकरनेवाले को ए० ज्ञानादि गुण में रमनेवाले को वि० कर्म से मुक्त होनेवाले को ण० नहीं म० मार्ग वि० व्रती को इति० ऐसा कहता है ॥ ७ ॥ आ यावंतः के० कितनेक लो लोक में प० परिग्रहवंत से० वे अ० थोरा बा० या

मोहिं उदाहु ते आयका फुसंति इति उदाहु धीरे ते फासे पुट्ठो हियासए ॥ ५ ॥ से पुव्वपेतं पच्छापेत भिउरधम्म, विद्धसणधम्म, अधुव, अणितिय, असासय, चयावचइय विप्परिण्णामधम्म पासह एय रुवसंधिं ॥ ६ ॥ समुप्पेह माणस्स एकायतणरतस्स इह विप्पमुक्कस्स णत्थि मग्गो विरयस्स त्तिबेमि ॥ ७ ॥ आवती

होनाय तो समभाव से सहन करे परन्तु पापाचार नहीं करे एसा तीर्थंकरोंने फरमाया है ॥ ५ ॥ यह शरीर पहिले पिछे एक वार तो अवश्यही छोडना पडेगा यह शरीर क्षण में नष्टवा है, रोगादिसे पीडित होता, वृद्धावस्थासे विरुप होता और अंतमें शव (मुरदा) बन करके भस्मीभूत होजाता है अहो मुनियों! इस शरीर के रूप का और इस अवसर का जरूर ही विचार करो ॥ ६ ॥ सम्यक् प्रकार से देखने वाले को ज्ञानादि गुणों के आयतन ( मोक्ष ) में रमण करने वाले को, कर्म रहित, तथा व्रतधारीयों को नरकादि में परिभ्रमण करने का रास्ता नहीं हैं, ॥ ७ ॥ इस संसार में जिन साधु की पास थोडा बहुत, छोटा बडा,

व बहुत, अ० छोटा थु० बडा चि० सचित अ० अचित प० इतने विष च० निश्चय प० परिग्रहवन्त ॥८॥
ए० यही ए० कितनेक को म० महाभय कर्ता भ० होता है लो० लोकों का आधार उ० उपेक्षासे ॥ ९ ॥
ए० इस के से० संग अ० त्याग करता से० वे सु० अच्छे प्रतिबोधी सु० अच्छे गुणसम्पन्न ऐसा ण० ना
णकर पु० पुरुषों ! प० परम दृष्टि वि० पराक्रमी ए० उस में ही ब० ब्रह्मचर्य चि० ऐसा बे० कहता हूं
॥ १ ॥ से० वे सु० सुना मैंने अ० अनुभवा मैंने, ब० बन्ध और मोक्ष च० निश्चय तु० तेरे अ० अनु

के आवती लोगंसि परिग्गहावंति—से अप्पंवा बहुयंवा, अणुंवा, थूलंवा, चित्तमंतंवा,
अचित्तमंतंवा, एतेसुचेव परिग्गहावंती ॥ ८ ॥ एवमेवेगेसिं महब्भय भवति लोगवि
त्तंच ण उवेहाए ॥ ९ ॥ एसे संगे अविजाणतो से सुपडिबुद्धं सूवणीयंति णच्चा -
पुरिसा! परमचक्खू विप्परिक्कमे । एतेसु चेव बंभचेरं त्तिबेमि ॥ १० ॥ से सुयंमे

सजीव निर्जीव परिग्रह रखे वे परिग्रही ही हैं ॥८॥ यह परिग्रहही कितनेक को नरकादि महाभयका कारण है वैसे
ही लोक का आचार आहार, भय, मैथुन और परिग्रहादि भी महाभय का कारण है इस को ऐसा बुद्ध जान
इनसे सदैव दूर रहना ॥ ९ ॥ परिग्रह के त्यागी साधुओं ही अच्छी तरह प्रति बोध पाकर निकले हुवे होते
हैं परिग्रह त्यागीकोही अच्छी तरह से ज्ञानादि गुणों की प्राप्ति होती है ऐसा मानकर अहो पुरुषों तुम
को समदृष्टी होना क्योंकि निष्परिग्रही और उत्तम गुण वाले सत्पुरुषों में ही ब्रह्मचर्य ( मोक्ष प्राप्ति ) का
गुण होता है ऐसा मैं कहता हूं ॥ १० ॥ अहो जम्बु ! मैंने सुना है, और अनुभव भी किया है, कर्मों से

मन से हो है, ए० इस से वि० निर्वेद अ० साधु दि० दिन को रा रात्रको ति० सहन करे ॥ ११ ॥
प० प्रमत्त व० बाहिर पा देख अ० अप्रमत्त प० प्रवर्ते, ए० यह मो साधु स० सम्यक् अ० पालना चाहिये त्ति० में कहता हूं ॥ १२ ॥ इ० ऐसा लो० लोकसार अ अध्ययन का बी० दूसरा उद्देशा ✽

आ० यावंत' के० कितनेक लो० लोक में अ० अपरिग्रही ए० इस में ही अ० अपरिग्रही सो० सुन के

अज्झत्थचमे, बंधपमोक्खो य तुज्झ अज्झत्थेव, पत्थ विरते अणगारे दीहरायं तिति क्खए ॥ ११ ॥ पमत्ते बहियापास । अप्पमत्तो परिवए ॥ एय मोणं सम्म—अणु वासिज्जासि त्तिबेमि ॥ १२ ॥ इति लोकसार मज्झयणस्स—बीओद्देसो ✽

आवंती केआवती लोयसि अपरिग्गहावंती, एएसु चेव अपरिग्गहावंती सोच्चावइ

मुक्त होना ' यह कार्य अपनी आत्मा से ही होता है इसलिय परिग्रह त्यागी मुनि को जीवन पर्यंत आये हुवे सब संकटों को निश्चल पने सहन करना ॥ ११ ॥ प्रमादीयों को धर्म से पराङ्मुख होते हुए देख साधु को अप्रमत्त पने विचारना ऐसे सम्यक् प्रकार से तीर्थंकर प्रणित संयम की क्रिया को सदैव पालना चाहिये ऐसा मैं कहता हूं ॥ १२ ॥ इति लोकसार नामक पंचम अध्ययनका तृतीय उदेशा पूर्ण हुवा आगे साधु को विषय परिग्रह की इच्छा का त्याग कराते हैं ✽ ✽

इस जगत में जो निष्परिग्रही होते हैं वे तीर्थंकरोंकी वाणी सुन और महात्मा व पंडितोंके वचनोंको अवधारन

मे मयावी प० पण्डित णि० अवधारकर ॥ १ ॥ स० समतासे ध० धर्म आ० आरिहंतने प० फरमाया ज० जिम प्रकार प० मैंने स० सन्धि झो० क्षय करे ए० ऐसे ही अ० अन्यत्र स० सन्धि दु० दुष्कर खपाने में भ० होती है इस लिये बे० कहता हूं णो० नहीं णि० गोपे वी० वीर्य ॥ २ ॥ जे० जो पु० पहिले उठे णो० नहीं प० पीछे पडे, जे० जो पु० पहिले उठे, प० पीछे पडे, जे० जो णो० नहीं पु० प

मेहावी पडियाण णिसामिया ॥ १ ॥ समियाए धम्मे आरिएहिं पवेदित्ते–जहेत्थ मए संधी झोसिए एव–मण्णत्थ संधि दुज्झोसए भवती तम्हा बमि णो णिहणेज्ज वीरियं ॥ २ ॥ जे पुव्वुट्ठाई णो पच्छाणिवाती । जे पुव्वुट्ठाई णो पच्छाणिवाती । जे पुव्वुट्ठाई पच्छाणिवाती, जे णो पुव्वुट्ठाइ णो पच्छाणिवाइ । सेवितारिसए सिया । जे

करके विवेकवन्त धन के सर्व परिग्रह का त्याग करते ही निष्परिग्रही बनते हैं ॥ १ ॥ श्री तीर्थंकर देवने समता में धर्म फरमाया है कि अहो मुमुक्षु ! जिसरीति मे मैंने कर्म क्षय किये हैं, उसीरीति से अन्य स्थान कर्म क्षय करना कठिन है इसलिये मैं कहता हूं, कि मेरा दृष्टांत लेकर अन्य मुमुक्षुओं को अपना पराक्रम छिपाना नहीं ॥ २ ॥ कितनेक सिंहकी तरह दीक्षा लेते हैं, और सिंहकी तरह ही पालते हैं पीछे पतित नहीं होते हैं, यथा अणगारवत्, २ कितनेक सिंहकी तरह दीक्षा लेते हैं, और शृगाल (सियाल) तरह शिथिल होजाते हैं कुण्डरिकवत् ३ कितनेक नतो दीक्षा ग्रहण करते हैं और न पतित होते हैं गृहस्थ या

पीछे उठे पो० नहीं प पीछे पडे, से० वे ता इस प्रकार शाक्यादि ति० कदाचित् जे जो प० मानकर सो लोक म० अन्याश्रित ए० यह पि० मानकर मु साधु ने प फरमाया ॥ ३ ॥ इ यहां आ० आ ज्ञाकांक्षी प० पण्डित अ० स्नेहरहित पु पूर्वापर रात्रि में ज० यत्नासे स० सदा सी० शील सं देखकर ॥ ४ ॥ सु० सुनकर भ० होवे अ० अनिच्छित अ अकषायीपने ॥ ५ ॥ इ० इस से पे० निश्चय जु० युद्ध कर किं० क्या ते० तुझे जु युद्ध लडना ब० बाहर से जु लडनेका अवसर ख० निश्चय दु० दुर्लभ

परिण्णाय लोगमण्णेसिता । एय णियाय मुणिणा पवेदित ॥ ३ ॥ इह आणाकंखी पडिते अणिहे पुव्वावररराय जयमाणे सया सील सपेहाए ॥ ४ ॥ सुणिच्चा भवे अ कामे अझंझे ॥ ५ ॥ इमेण चेव जुज्झाहि, किंते जुज्झेण वज्झओ, जुद्धारिह

शाक्यादि मतको जो प्रथम ज्ञान परिज्ञा से जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से त्यागे और फिर पार्श्वस्थ बन जाय तो उन्हे गृहस्थ ही जानना ऐसा श्री भगवान का कथन है ॥ ३ ॥ तीर्थंकर की आज्ञा आराधन करने की इच्छावाले साधु को रात्रि दिन प्रथम प्रहर तथा चतुर्थ प्रहरमें सदैव शील ( आचार ) को मोक्ष का अंग मान उसकी शुद्धिकी वृद्धि करना ॥ ४ ॥ विषय कषाय से दुर्दशा होती हुई सुन के स्वस विषय कषाय की इच्छा से रहित होवे ॥ ५ ॥ अहो मुनि ! तुम अपने शरीर के साथ युद्ध करो अन्य बाह्य युद्ध

॥ ३ ॥ ज० जिस तरह कु० कुशलपुरुषने प० परिज्ञा वि० विवेक भा० कहा, पु० ...ने प० फरमाया अज्ञानी ग० गर्भ में र० रमता है ॥ ७ ॥ अ० इसमें ही प० फरमाया है, छ० ... दु दुष्कर हिंसा में था० था ॥ ८ ॥ से० वे दु० निश्चय प० पक्ष से सम्यक् प्रकारे विधान किया ... पु० प मु० साधु अ० अन्यथा लो० स्वरूप को देखकर ॥ ९ ॥ इ० ऐसे क० कर्म को प० जानकर ... प० प

खलु दुस्सह ॥ ६ ॥ जहेत्थ कुसलेहिं परिण्णाविवेगे भासिते चुते हु बाले गब्भातिसु रज्जति ॥ ७ ॥ अस्सिं चेय पव्वुच्चति । रुवंसि वा छणंसि वा ॥ ८ ॥ से हु एगे संविद्धपहे मुणी अण्णहालोग–मुवेहमाणे ॥ ९ ॥ इति कम्मं परिण्णाय सव्वसो, से

करने में क्या फायदा है युद्ध के योग्य ऐसा शरीर फिर मिलना मुश्किल है ॥ ६ ॥ तीर्थंकरने विविध प्रकार के भाव जैसे फरमाये हैं, वैसे ही विवेकी पुरुष उन्हें श्रद्धते हैं, वे ही आत्म कल्याण कर सकते हैं और जिन वचनों का आशय समझे बिना विपरीत अर्थ करके धर्म से भ्रष्ट बननेवाले अज्ञानी जीव बारंबार गर्भ में उत्पन्न होते हैं ॥७॥ जिन शासन में ही ऐसा कहा जाता है कि विषयासक्त बननेवाला हिंसक होता है ॥ ८ ॥ निश्चय से साधु वह ही है कि लोकों की प्रवृत्ति धर्म विरुद्ध होते हुवे भी आप धर्म परायण बना रहे ॥९॥ बुद्धमपारी मुनि कर्म का स्वरूप को जानकर प्रत्येक जीवों के अलग २ सुख दुःख का विचार

स० मे ण० नहीं ।हिं० मारे सं० साधु णो० नहीं प० धीठ बने उ० जानता हुआ प८
साता ॥ १० ॥ य० सुयश: कांसी णा० न आरंभ करे कं० किंचित् स सर्व लोक ए०एक। —म रक्त
वि० विदिसी न देखे, नि० शुद्धाचारी अ० अरक्त प० स्त्रीयों में ॥ ११ ॥ से वे व० संयमी स० सर्व
स० साधु को योग्य प० प्रज्ञा से अ० आत्मा अ० नहीं करने योग्य पा० पापकर्म तं० उसे णो० नहीं अ०
गवेषे ॥ १२ ॥ जं० जो स० सम्यक्त्व पा० देखे, तं० वे मो० साधुत्व को पा० देखे; जं०जो मो०साधुत्व

ण हिंसति संजमति णो पगब्भति, उवेहमाणो पत्तेय साय ॥ १० ॥ वण्णादेसी णारभे कचण सव्वलोए, एग—प्पमुहे विदिसप्पतिण्णे निविण्णचारी अरए पयासु ॥ ११ ॥ से-वसुमं सव्वसमन्नागयपण्णाणेण अप्पाणेण अकरणिज्जं पावकम्मं तं णो अन्नेसी ॥१२॥ जं सम्म—ति पासह, तं मोणं—ति पासह, जं मोण—तिपासह तं सम्मं—

करे और धृष्टता का त्याग कर, संयम में प्रवर्तते हुये किसी भी जीव की हिंसा नहीं करे ॥ १० ॥ मुक्त के इच्छक मुनि सर्व लोक के पाप से निवृत्त होकर स्त्रीयों में विरक्त रहता हुवा आरंभ का सर्वथा त्याग करे और आसपास न देखता हुवा मात्र मोक्ष की तरफ ही दृष्टि रखे ॥ ११ ॥ ऐसे पवित्र साधु को सुबोधी बनकर अयोग्य पाप कर्म की तरफ कदापि दृष्टि नहीं करनी ॥ १२ ॥ जो सम्यक्त्व है, वह ही साधुपना है और जो साधुपना है, वह ही सम्यक्त्व है ॥ १३ ॥ यह साधुपना धैर्य रहित

का पा० देते, ते० वे स० सम्यक्त्व पा० देखे, ॥ १३ ॥ ण नहीं इ० यह स० शक्य ति० शिथिल अ० कायर गु विषयासक्त, वं० कपटी प० प्रमादी, गा० गृहनिवासी ॥ १४ ॥ मु० साधु मो० साधुत्व स० समादरके धु० दूरकरे क० कर्म स० शरीर प० हल्का ऌ० लूखा से० सेवननकरते हैं वी० वीर सम्यक्त्व दर्शी, ए० यही ओ० अघोघ त० तिरनेवाले मु० साधु ति० तिरे हुवे हैं मु० मुक्तहुवे हैं वि० विरक्त हुवे हैं त्ति० कहाये हैं वि० ऐसा कहता हूं ॥ १५ ॥ ❁ ❁

तिपासह ॥ १३ ॥ ण इम सक्कं सिढिलेहिं अद्दिज्जमाणेहिं, गुणासातेहिं, वकसमायरेहिं, पमत्तेहिं, गारमावसतेहिं ॥ १४ ॥ मुणी मोण समायाय धुण कम्म—सरीरगं, पत लूह सेवंति वीरा समत्तदंसिणो। एस ओहंतरे मुणी तिण्णे मुत्ते विरए वियाहिते—त्तिबेमि ॥ १५ ॥ इति लोगसार ज्झयणस्स—तइओद्देसो ❁

शिथिल मनवाले विषयासक्त, कपटी, प्रमादी, और गृहके ममत्वी धारन नहीं कर सकते हैं, ॥ १४ ॥ किन्तु साधु ही ऐसा वचन अंगीकार करके शरीर को शोषते हैं ऐसे सम्यक्त्वदर्शी वीर पुरुष रूक्ष, शुष्क आहार करते हैं, और ऐसे पराक्रमी सावद्यानुष्ठान से निवर्ते हुवे अघोघ तीरे हुवे विरक्तही प्रशंसाये गये हैं, ऐसा मैं तीर्थंकर का कथनानुसार कहता हूं इति लोकसार नामक पंचम अध्ययनका तृतीय उद्देशा पूर्ण हुवा आगे अयोग्य साधु को अकेले फिरने में दोष बताते हैं × +

ना गामाणुगामं दू० फिरतेहुवे दु० दुक्कर जाना दु० दुक्कर पराक्रमकरना भ० होवे अ० अव्यक्त(१) मि साधु को ॥ १ ॥ व वचनसेभी ए० कितनेक मो० मेराहुवा कु० कोपकरते हैं मा० मनुष्य व उन्नतमान न० नर म० महा मोहमें, मु० मुच्छावे सं० दुःख व० बहुत मु फिर दु० दुरुल्लघ यि अ अज्ञानको अ०

गामाणुगामं दूइज्जमाणस्स दुज्जातं दुप्परक्कंतं भवति अवियत्तस्स भिक्खुणो ॥ १ ॥

वयसावि एगे चोइआ कुप्पंति माणवा । उन्नयमाणे य णरे महता मोहेण मुज्झति

संबाहा बहवो भुज्जो दुरतिक्कमा अजाणतो अपासतो एयं ते मा होउ एयं कुसलस्स

अव्यक्त साधुको ग्रामानुग्राम विहार करना फीरना तथा उनका पराक्रम करना खराब है, उसपर चौभंगी उतारते हैं:-(१)सूत्र तथा वय से अव्यक्त साधु को एकिला रहना न कल्पे, क्यों की इससे संयम की तथा आत्माकी विराधना होवे (२) श्रुतसे अव्यक्त तथा वयसें व्यक्त साधु को एकिला फिरना कल्पे नहीं, अगीतार्थपना से संयम तथा आत्माकी विराधना होवे (३) श्रुत से व्यक्त तथा वय से अव्यक्त साधु को एकिला फिरना कल्पे नहीं बालपने से सब स्थान पराभवकारी होवे (४) तथा श्रुत से और वय से व्यक्त साधु को गुरुकी आज्ञा से एकिला फिरना कल्पता है परंतु विना आज्ञा एकिला फिरना कल्पता नहीं।१॥ कितनेक अभीमानी साधु हितशिक्षा का वचन मात्र से विवेक विकल बन गच्छ का परित्याग करते हैं ऐसे अज्ञान, अतत्त्व दर्शी वे अनेक असह्य दुःख प्राप्त होते हैं कि वे उनको दुरुल्लंघनीय होते हैं इसलिये अहो मुनि ! तुम

(१) वयसे अव्यक्त, वय सूत्रसे अव्यक्त गच्छमें रहनेवाला १६ वर्ष की वयका तथा गच्छ के बाहिर रहनेवाला ३० वर्षकी वय वाला श्रुतअव्यक्त गच्छमे रहनेवाले को आचारांगका ज्ञान तथागच्छके बाहिर रहनेवालेको नवपूर्वकी तीसरी वस्तु तकका ज्ञान नहीं हुआहोवे

नहीं देखनेवाले को प० ऐसी तरह म० मत होवो ए० यह कु० भरिहंत का द० अभिप्राय है ॥ २ ॥ स० सबु टष्टि रो, त० तन्मुक्ति स त० सत्मत्कार से तत्संज्ञा मे, त० तन्निवास, ज० यत्ना से प्रवर्तनेवाला ग० चित्तगवेषी, पं० पंथगामी, प० आज्ञानुवर्ती पा० सतुप्रेक्षक, ग० विचरे से० वे अ० आते प० जाते सं० संकुचन करते, प० प्रसारित करते वि निवर्तते स० प्रमार्जन करते ॥१॥ ए एकदा गु० गुणयुक्तको री० फिरते का० कायाके स्पर्श से स० आयेहुवे ए० एकदा पा० प्राणी उ० घात होय इ० इस लोक वे० वेदना

दगण ॥२॥ तद्दिट्ठीए, तम्मुत्तीए, तप्पुरक्कारे, तस्सनी, तन्निवेसणे, जय विहारी चित्त णिवाति पंथणिज्झाती, पलिबाहिरे, पासिय पाणे गच्छेज्जा । से अभिक्कममाणे पडिक्कम माणे संकुचमाणे, पसारेमाणे, विणियट्टमाणे सपलिमज्जमाणे ॥ २ ॥ एगया गुण-समियस्स रीयतो काय संफास—मणुचिन्ना एगतिया पाणा उद्दायंति, इह लोगवेयण

जो ऐसा न हो, ऐसा श्री वीर परमात्मा का फरमान है ॥ २ ॥ साधु का प्रधान कर्तव्य यही है कि सदैव गुरु की दृष्टिगोचर रहना गुरु मना करे उन की संगति नहीं करना, गुरु की आज्ञा सन्मान पूर्वक मानना गुरु के कार्यों पर पूर्ण श्रद्धा रखना, यत्ना से कार्य करना, गुरु के आने का मार्ग का अवलोकन करना, सर्व प्राणियों की रक्षा पूर्वक गुरु की साथ ग्रामानुग्राम विचरना, इतनाही नहीं अपितु जाते, आते, उठते, बैठते, भाते, अंग पूंजते इत्यादि सर्व कार्य करते गुरु की आज्ञा धारन करना ॥१॥ सद्गुणी मुनि को यत्ना पूर्वक वर्तते हुवे कदाचित जीव घात हो जावे तो उस पाप का उसी भव में क्षय हो सके इतनाही कर्मबन्ध होता है

प्र० वेदके क्षय करे जं जो आ० आकुट्टी क का०कर कर्म तं०उसे प० मानकरे वि० निवर्ते ए० ऐसे अ० अप्रमाद से वि० निवर्ति कि० कर, वे० ज्ञानी ॥ ४ ॥ से० अथ प० दीर्घदर्शी प० बहुत ज्ञानी उ०उपशान्त स० समिति स०सहित स०सदायत्नी द०देखके वि०विचार करते हैं अ०आत्मा का कि०क्या ए यह ज०स्त्री क० करेगी ए० यह से० उसे प परम आराम जा० जो है ला० लोक में इ० स्त्रीओं मु० साधु मु० निश्चय प० कहा है ॥ ५ ॥ उ० पीडित होवा गा० इन्द्रिय धर्म से अ० आपि णि० निर्बल आहार करे

वेज्जावढिर्य, ज आउट्टीकिय कम्मं तं परिण्णाय विवेग-मेति । एवं से अप्पमाएणं वि वेग किट्टति वेदवी ॥ ४ ॥ से पभूयदसी पभूयपरिण्णाणे उवसंते समिए सहिते स याजए दट्ठुं विप्पडिवेदेति अप्पाण,—" किमेसजणो करिस्सति, एससे परमारामे जाओ लागंसि इत्थिओ" मुणिणा हु एत पवेदित ॥ ५ ॥ उव्वाहिज्जमाणे गामधम्मेहिं अवि

कदाचित् कारणवशात् आकुट्टी—मानकर पाप करना पडे तो उस के लिये आचार्य समीप योग्य प्राय श्चित लेने से कर्म क्षय होते हैं, यह प्रायश्चित् अप्रमादीपने आचरने से कर्म क्षय होते हैं ऐसा आगम के ज्ञान महात्माओं का फरमान है ॥ ४ ॥ इसलिये दीर्घदर्शी, विशेषज्ञ, क्षमावान्, पंडित, गुप्तवृत्ति, सद्गुणी, और सदा यत्नावन्त साधु स्त्री को देख कर विचार करते हैं कि यह स्त्री मेरा क्या कल्याण करेगी! यह प्रमद् जीवों के मन को भ्रमित करती है यह हितशिक्षा श्री वीर प्रभुने दी है ॥ ५ ॥ यदि मोहादिक

अ० अपि मो० उणोदरी करे, अ० अपि उ० ऊंचे हाथ रख ग० काउसग करे अ० अपि गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करे, अ० अपि आ० आहार छोडे, अ० अपि च० छोडे इ० स्त्री से प० मन को ॥ ६ ॥ पु० पहिले दं० दण्ड प० पीछे फा० स्पर्श, पु० पहिले फ० स्पर्श प० पीछे दण्ड, इ० यह क० क्लेश सं० संग करनेवाले भ० होवें प० प्रतिलेखे आ० आगमिक आ० दुःख अ० सेवन नहीं करे ति० एसा बे० कहता हूं ॥ ७ ॥ से० वे णो० नहीं का० कथा करे णो० नहीं पा० देखे, णो० नहीं प० विचार करे णो०

णिव्वलासए, अवि ओमोदरिय कुज्जा अवि उड्ढं ठाण ठाएज्जा अवि गामाणुगाम दूइज्जा अविआहार वोछिंदिज्जा, अविचए इत्थीसु मण ॥ ६ ॥ पुव्वंदडा पच्छाफासा, पुव्वं फासा पच्छादंडा, इच्चेते कलहा संगकरा भवंति । पडिलेहाए आगमित्ता आणविज्जा अणासेवणाए त्तिबेमि ॥ ७ ॥ से णा कहिए, णोपासणिए, णोसंपसारए, णोममाए

उदय मे इन्द्रियों पिडित करे तो उसको शान्त करने के लिये तुच्छ आहार करे, अवमोदर्य आहार करे। एक स्थान खडा रहकर कायोत्सर्ग करे, ग्रामानुग्राम विहार करे; इतने प्रयत्न करते हुवे भी मन वश नहो वे तो आहार छोड देवे, अपितु स्त्री संग नहीं करे. ॥ ६ ॥ स्त्रीयों का संग किये पहिले संजोग मिलाने के लिये अनेक दुःख भोगने पडते हैं और संग किये बाद भी हीन शक्ति, रोग, नरकवास, आदि दुःख सहन करने पडते हैं इस तरह स्त्री को क्लेश की उत्पन्न करने वाली जान कर मुमुक्षुओं को उसका संग से सदैव दूर रहनाही कल्याण कारक है ॥७॥ ब्रह्मचारीयोंको स्त्री के शृंगार की कथा करना नहीं, स्त्री के

नहीं म ममत्व करे, णो॰ नहीं, क वैयावृत्य करे, व॰ वचनगुप्त, अ॰ आत्मागोप कर प॰ परिवर्जे स॰ सदा पा॰ पाप को प यह मो॰ साधुता स मच्छी मान वादू चि॰ ऐसा बे॰ में कहता हूं ॥ ४ ॥

से॰ मन बे॰ में कहता हूं तं॰ वह ज॰ यथा—अ॰ अपि ह॰ द्रह, प॰ प्रतिपूर्ण चि॰ रहे स॰ बरोबर भो॰ भूमीपर, उ॰ स्वच्छ सा॰ रक्षिता से॰ वह चि॰ रहता है सो॰ शास्त्रपारंगत से॰ वे पा॰

णा कयाकिरिए, वइगुत्ते, अज्झप्पसंवुडे, परिवज्जए सया पावं, एयं मोणं समणुवासेज्जा सि—त्तिबेमि ॥ ८ ॥ इति लोगसार ज्झयणस्स चउत्थो देसो सम्मत्तो ॥

सेबेमि—तं जहा अविहरए परिपुन्ने चिट्ठति समंसि भोमे उवसंतरए सारक्खमाणे । से चिट्ठति सोयमज्झगए, से पास सव्वतो गुत्ते । पास लोए महेसिणो, जे य पण्णाण

भगापांग देखना नहीं ३ स्त्री साथ एकासन बैठना नहीं, ४ स्त्री से प्यार करना नहीं, ५ स्त्री का कार्य करना नहीं ६ कि बहुना स्त्रीयों से वचन मात्र का उच्चार नहीं करना यों सर्व प्रकार से मन को संयम में रख कर पापाचारसे सदैव दूर रहना इस तरह ही साधुपना पाले ऐसा मैं श्री तीर्थंकर की आज्ञा नुसार कहता हूं ॥ ८ ॥ इति लोकसार नामक पंचम अध्ययन का चतुर्थ उद्देशा पूर्ण हुवा इस उद्देशा में स्त्री का संग त्यागने का कहा सो स्त्रीसंगत्यागी, सदाचारी सदैव होना इसलिये आगे सदाचार का स्वरूप बताने वास्ते द्रहका द्रष्टान्त बताते हैं

+ +

देखे स० सर्वगुप्त, पा० देखे लो० लोक म० महाऋषि म जो प० प्रज्ञावन्त प० प्रबुद्ध आ० आरंभ से० निवृत्त स० सम्यक भाव से पा देखते का० कालको कं० वांछते प० प्रवर्ते त्ति० ऐसा बे० मैं कहता हूं ॥१॥

मंतो पबुद्ध आरंभोवरया सम्म—मेयति पासह कालस्स कंखाए परिव्वयति त्तिबेमि ॥१॥ वितिगिच्छसमावण्णेणं अप्पाणेण णो लभति समाहिं ॥ २ ॥ सियावेगे अणुगच्छंति

जैसे कोई सपाट स्थान में + निर्मल जलसे भरा हुवा सुरक्षित जलाशय सदैव शुद्ध रहता है वैसेही कितनेक शुद्धाचारी आचार्यों ज्ञान जल से परिपूर्ण होकरके निर्दोष क्षेत्रों में रहकर जीवों का संरक्षण करते हुवे ज्ञान जल के प्रवाह की वृद्धि करते हुवे सुरक्षित रहते हैं इतना ही नहीं परंतु कितनेक साधु विवेक सहित मति बोध पाकर आरंभ से निवृत्त होते हैं और समाधि मरण की इच्छा करते हुवे दृढकी संयम पर्तते हैं ॥ १ ॥

---

+ द्रहकी चौभंगी एक ऐसा द्रह है कि जिसमें से पानी निकलता है और उस में आता है सीता सीतोदा नदीवत्, दूसरा ऐसा है की जिसमें से पानी नीकलता है परंतु आता नहीं है, पद्म द्रहवत्, तीसरा द्रह ऐसा है कि पानी आता है, परंतु निकलता नहीं है समुद्रवत और चौथा द्रह ऐसा है कि पानी आता भी नहीं है और नीकलता भी नहीं है वैसे ही कितनेक आचार्य प्रथम भांगा जैसे हैं स्वतः शास्त्र का अभ्यास करे और दूसरे को करावे गणधरादिवत्, दूसरा भांगावाला आचार्य श्रुत ग्रहण करे नहीं, परतु अन्य को भणावे, ती र्थकरवत्, तीसरा भांगा का आचार्य श्रुत ग्रहण करे परंतु अन्य को भणावे नहीं, चौथा भांगावाला आचार्य आप भणे नहीं और अन्य को भणावे नहीं प्रत्येक बुद्धवत

अ० असत्य हो० होता है अ० असत्य म० मानते हुये को ए० एकदा स० सत्य हो० होता है, अ० अ सत्य म० मानते हुये को ए० एकदा अ असत्य हो० होता है ॥ ४ ॥ स० सत्य ऐसा म० मानने वाले को स० सत्य वा० या अ० असत्य वा० या स० सत्य हो० होवे उ० विचारणासे अ० असत्य म० मानने वाले को स० सत्य वा० या अ० असत्य वा० या अ० असत्य हो० होवे उ० विचारणासे ॥ ५ ॥

असमियति मण्णमाणस्स एगया समियाहोति, असमियं—ति मण्णमाणस्स एगया अस मिया होति ४ समिय ति मण्णमाणस्स समिया वाअसमियात्रा समिया होति उवेहाए अस मिय ति मण्णमाणस्स समिया वा असमिया वा असमियाहोति उवेहाए।५।उवेहमाणो अणुवेह

जीवन शुद्ध श्रद्धते हैं २ कितनेक मध्यम दीक्षा ग्रहण करते समय तो सत्य मानते हैं और फीर किसिके बहकाने से भ्रमित होजाते हैं, तथा असत्य मानने लग जाते हैं ॥ ४॥ कितनेक सरल स्वाभावी दीक्षा ग्रहण करते समय दीक्षा का कुच्छभी मतलब नहीं समझते हैं परंतु जैसे २ तत्त्वों का स्वरूप की पहिचान होती जाती है, वैसे २ श्रद्धालु बन जाते हैं, और कितने पाखण्डी मिथ्याग्रही बन जिनवचन को सदैव असत्य ठहराते हैं ।५। जो सम्यक् ज्ञानी हैं, उनकी असत्य व सत्य दोनों भावों यथार्थ विचारणासे सम्यक् भगवतीके

वि० वितिगिच्छा स० युक्त को अ० आत्मा को णो० नहीं ल० प्राप्त होवे स० समाधि ॥ २ ॥ सि० गृहस्थ ए० कितनेक अ० समझते हैं अ० साधु वे० कितनेक अ० समझते हैं अ० समझते के साथ अ० अ समझते हुवे क० कैसे ण० नहीं णि० खेदित होवे त० वह ही स० सत्य णि० निःशंकित जं० जो जि० जि नेन्द्रने प० कहा है ॥ ३ ॥ स० श्रद्धावन्त को, स० समझदार को, स प्रव्रजित को, स० सत्य ति० ऐसा म० मानते हुवे को ए० एकदा स० सत्य हो० होवे स० सत्य ति ऐसा म० मानते हुवे को ए० एकदा

असियावेगे अणुगच्छंति, अणुगच्छमाणेहिं अणणुगच्छमाणो कहं ण णिव्विज्जेज्जा, तमेव सच्चं णिसकं जं जिणेहिं पवेइयं ॥३॥ सड्ढिस्स णं समणुन्नस्स संपव्वयमाणस्स समियं ति मण्णमाणस्स एगया समिया होति समियंति मण्णमाणस्स एगया असमिया होति

"फल होगा या नहीं" ऐसा संशय रखनेवाले को समाधि प्राप्त नहीं होती है ॥ २ ॥ तीर्थंकर के वचन कितनेक गृहस्थ और कितनेक साधु को समझते हुवे के साथ रहकर भी समझ में न आवे तो वह क्यों खेदित नहीं होवे ? अपितु अवश्य ही होवे उस समय उसको गुरु उपदेश देवे कि जो जिन भगवानने कहा है, वह ही निशंकपने सत्य है ॥ ३ ॥ महात्मा मुनि या तीर्थंकर के फरमाये हुवे वचनों को १ कितनेक श्रद्धावन्त तत्व दीक्षा ग्रहण करते समय तत्रामेव सत्य मानते हैं और वैसे ही याव

उ॰ जान, अ अमान से भू॰ कोई उ॰ विचार करे स॰ सत्य से ६ ऐसे स तहां स कर्म सन्धि
झो॰ झोंकनेवाला म॰ होता है ॥ ६ ॥ से॰ वे उ॰ सावधान हुवे ठि॰ अस्थित ग॰ सुगति स॰ अच्छीतरह
पा॰ देखो, ए॰ यहां भी पा॰ अज्ञानी अ॰ अपनी आत्मा को णो॰ नहीं उ॰ उपदेश करे ॥ ७ ॥ तु॰ तू
है स॰ वह चे॰ निश्चय जं॰ जिस को ह॰ मारना ति॰ ऐसा म॰ मानता है, तु॰ तूही है स वह च॰ नि
श्चय, जं॰ जिसे अ॰ हुक्म करना ति॰ ऐसा म॰ मानता है, तु॰ तूही है स॰ वह चे॰ निश्चय जं॰ जिसे

माण भूया—उवेहाहि समियाए, इच्चेव तत्थ संधी झोसितो भवति ॥ ६ ॥ से उठिय
स्स ठियस्स गतिं समणुपासह । एत्थवि बालभावे अप्पाणं णो उवदसेज्जा॥७॥ तुमंसि
नाम स चेव ज हतव्वं ति मन्नसि, तुमंसि नाम स चेव ज अज्जावेयव्वंति मन्नासि, तुम

हैं उनको असत्य व सत्य दोनों बातों यथार्थ विचारना से सम्यक परगमती है और मिथ्यादृष्टीको सत्य व
असत्य दोनों बातों अयथार्थ विचारना से असम्यक परगमती है ॥ ८ ॥ सम्यक्ज्ञानी मिथ्यात्वी को
सम्यक्त्वी बनाने के लिये प्रेरित करते हैं, कि अहो बुद्धिमान् तुम सम्यक प्रकार से विचारकरो क्योंकि ऐसा
सम्यक् विचार करने में ही कर्म क्षय होता है ॥ ६ ॥ अहो मुनि ! श्रद्धावान तथा गुरुकुल निवासी मुनि
की पद्धि का और गति का अवलोकन करो, वैसेही पार्श्वस्थ तथा स्वच्छंदाचारी की पद्धि का तथा गति
का विचार करो; फिर तदवेसा मन असंयम से आत्मा को बचावो ॥ ७ ॥ अहो पुरुष ! निश्चय तू

प० परिताप देना म० मानता है तु० तूही है स० वह चे० निश्चय जं० जिसको प० घात करना म० मानता है ए० ऐसे ही तु० तूही है स० वह च० निश्चय जं० जिसे उ० उद्वेग करना म० मानता है अं० सरल चे० इस में प्रतिबुद्ध जीवी, त० इस लिये ण० न मारो वि० विचार करो अ० पीछा भोगवे अ० आत्मा से जे० जिसे ह० मारना णा० न वांछे ॥ ८ ॥ जे० जो, आ० आत्मा से० वे वि० ज्ञान वाला

सि नाम स चेव ज परितावेयव्वाति मन्नासि तुमसि नाम स चेव ज परिवेतव्वंति मन्नासि एवं तुमसि नाम स चेव ज उद्दवेयव्वातिमन्नासि, अजू चेयपडिबुद्धजीवी तम्हा णहंता, णविघाय ए अणुसंवेयण—मप्पाणेणं, जं हंतव्व णाभिपत्थए ॥ ८ ॥ जे आया से विन्नाया जे

मारने का, ताडे करने का दुःखी करने का, पकडने का, प्राण रहित करने का विचार करता है उन समय यह भी विचारना चाहिये कि वह ही मैं हूं ऐसी समझ सरल स्वभावीयों की होती है इसलिये साधु किसी को मारे नहीं क्योंकि अन्य को मारने से अपनी आत्मा को दुःख भोगना पडता है ऐसा जानकर किसी को दुःख देने का विचार कदापि नहीं करना ॥ ८ ॥ जो आत्मा है वह ही जानने वाला है, और जो जानने वाला है वह ही आत्मा है जिस ज्ञान से जाना जाय वह ज्ञानही आत्मागुण है और इस गुणकी अपेक्षा से ही आत्मा कहा जाता है इस तरह जो आत्मा तथा ज्ञान का अद्वैप भाव जानते हैं

ज॰ जो वि॰ जाननेवाला से॰ वे आ॰ आत्मा, जे॰ जिस से वि॰ जानाजाता है स॰ वह आत्मा तं॰ उस प॰ अपेक्षा प॰ आपना, ए॰ यह आ॰ आत्मवादी स॰ सम्यक् प्रकार प॰ संयम वि॰ करा त्ति॰ ऐसा बे॰ करता हूं ॥ १ ॥ इ॰ ऐसा लो॰ लोकसार अध्ययन पं॰ पंचम उ॰ उद्देश * *

अ॰ अनाज्ञा में ए॰ कितनेक सो॰ उद्यमी आ॰ आज्ञा में ए॰ कितनेक नि॰ निरुद्यमी ए॰ यह ते॰ तुमको मा॰ मत हो॰ होवो ए॰ यह कु॰ कुशल का दं॰ दर्शन है ॥ १ ॥ त॰ तद्दृष्टि में त॰ तन्मुक्ति में

विभाया से आया, जेणविजाणति से आया तं पडुच्च परिसखायए, एस आयवादी समियाए परियाए वियाहिते—त्तिबेमि ॥ ९ ॥ इति लोकसारज्झयणस्स पचम उद्देसो

अणाणाए एगे सोवट्ठाणे, आणाए एगे निरूवट्ठाणे, एतं ते मा होउ एय कुसलस्स दसण ॥ १ तद्दिट्ठीए, तम्मुत्तीए, तप्पुरक्कारे, तस्सण्णी तण्णिवेसणे, अभिभूय अदक्खू अण

यह ही सच्चे आत्मवादी हैं और उसकादी संयमअनुष्ठान यथार्थ कहा जाता है, ॥ ९ ॥ इति लोकसार नामक पंचम अध्ययनका पंचम उद्देशा पूर्ण हुआ आगे उन्मार्ग तथा रागद्वेष त्यागने का बोध करते हैं

इस जगत् में कितनेक जिनाज्ञा के विरुद्ध वर्तन करते हैं और कितनेक जिनाज्ञानुकूल प्रवृत्तिमें निरुद्यमी बन रहे हैं अहो मुनि ! तुम को ये दोनों बातों न होवो ऐसा श्री वीरप्रभुका दर्शन है ॥ १ ॥ जो सदैव गुरुकी आज्ञा में रहते हुवे गुरु का कथन स्वीकारते हैं, गुरुका बहुत सन्मान करते हैं, श्रद्धा रखते हैं,

म० तत्त्वकार में त० नवश्रद्धा में वसूकस्मनिवास में, अ० जीतकर भ० देखा भ० नहीं अभिगाथानुवा प०
मय। णि० निरालम्बी जे० जो म० महात्मा अ० भगवान की आज्ञा में मन ॥ २ ॥ प० गुरुपरम्परा से
प मरपन, जा माने स०स्वमति स, प०जिनोपदेशसे,अ दूसरेके वा पाअ०पास सो०सुनकर॥३॥णि० था
शा णो० नहीं उल्लंघे मे० पण्डित सु० अच्छी तरह विचारकर, म सर्वथा स०सम्यक्प्रकार से स०समजा
णकरके ॥ ४ ॥ इ० यहां (संयम) प० जाकर अ० अधीन गुप्त प० प्रवर्ते णि० मोक्षार्थी वी वीर आ०

मिभूते, पभू णिरालंबणयाए जे मह अग्रहिमणे ॥२॥ पवादेण पवाय जाणेज्जा सहस
म्मइयाए परवागरणेणं अन्नेसिं वा अतिए सोच्चा ॥ ३ ॥ णिद्देस णातिवत्तेज्जा मेहावी
सुपडिलेहिय सव्वतो सव्वयाए सम्ममेव समभिजाणिया ॥ ४ ॥ इहारामं परिण्णा

उन महात्मा का मन सर्वज्ञोपदेश से कदापि बाहिर नहीं जाता है और वे किसी से पराभूत नहीं होते हुवे
निरालम्बनतारूप भावना भावने को समर्थ होते हैं, ॥ २ ॥ गुरुकी परंपरासे जिनोपदेश को जानना अथवा
जिनोपदेश स परतीर्थियों के प्रवाद तपासना वे जिन प्रवाद तथा परतीर्थिक प्रवाद तिन प्रकार से जाने
जाते हैं १मातिस्मरणादि ज्ञानसे २तीर्थंकर के कहने से तथा ३आचार्यादिक की पाससे श्रवण करनेसे॥३॥
उक्त प्रकार से सर्वज्ञप्रवाद तथा परप्रवाद को तपास कर सर्वज्ञ प्रवाद को यथार्थ जानकर बुद्धिमान सर्व
ज्ञोपदेश को उल्लंघे नहीं ॥ ४ ॥ इस जगत में संयम को सच्चा सुखस्थान मानकर जितेन्द्रिय रहना

आज्ञासे म०सदा प०विचरे चि०एसा मे० कहता हूं ॥८॥ उ०ऊर्ध्व सो० श्रोत, अ० अधो सो० श्रोत ति० तिर्यग् सो० श्रोत वि० जानना ए० इतने सो० श्रोत वि० फरमाये, जे० जो इस की संग पा० देखो आ० आवर्त में ए० पर पे० देखकर ए० इस वि० निवर्ते वे०ज्ञानी ॥६॥ वि० निवर्तने के लिये सो० श्रोत नि० निकले ए० पर म० महंत अ० निष्कर्मी जा० जानता है पा० देखता है प० देखकर के णा०

य अल्लीणगुत्तो परिव्वए णिट्ठियाट्ठि वीरे आगमेणं सयापरिक्कमेज्जासित्तिबेमि ॥ ५ ॥

उड्ढ सोता अहे सोता तिरिय सोता वियाहिया, एते सोया वियक्खया, जेहिं सगति पास

ह आवट्ट मेयंतु पेहाए एत्थ विरमेज्ज वेदवी ॥६॥ विणेउं सोय णिक्खम एस महं अ-

कम्मा जाणाति पासाति पडिलेहाए णावकंखति इह आगतिं गतिं परिण्णाय अच्चेति जा

हतनाही नहीं परंतु मो०सार्थी वीरों को सदा जिनाज्ञा में ही रहना ऐसा मैं कहता हूं ॥ ८ ॥ ऊंची, नीची व तिर्यक् दिशा में सर्वस्थान में पापोपार्जन करने का प्रचार चल रहा है इससे जहां २ आसक्तता होती है, वहां २ कर्मबन्ध होते हैं ऐसे पापचक्र का परिवर्तन देख विषय भोगोंसे ज्ञानी को दूर रहना ॥ ६ ॥ जो पुरुष पाप आनेका प्रचार को बंध करने केलिये दीक्षा लेते है, वे घातिक कर्मों का क्षय करके सर्वज्ञ सर्वदर्शी बनते हैं उनकी इन्द्रादि महिमा पूजा करते हैं तथापि वे परमार्थी उसको नहीं चाहते हैं और प्राणियों को संसार में परिभ्रमण करते हुये देखकर आप उस परिभ्रमण से मुक्त होकर मुक्ति का सुख में विराजमान

रपछा नहीं है इ० यहां ग० गति आ० आगति, प० मान करके अ० पूछता है जा० जन्म म० मरण
।० सपाने का मार्ग वि० विराजे ॥ ७ ॥ स० सर्व स० स्वर णि० निवर्ते त० तर्क ज० ज.। ण० नप
रे० है म० बुद्धि त० तहां ण० अप्रग्रहित है, मो० एकही अ० लोकालोक के जान ॥ ८ ॥ से०वे ण० नहीं
।० दीर्घ, ण० नहीं ह० ह्रस्व ण०नहीं व० वर्तुल, ण० नहीं तं० त्रिकोन, ण०नहीं च० चतुष्कोन ण०
ी प० गोल ण० नहीं कि० कृष्ण, ण नील नहीं लो० रक्त, ण० नहीं ह० पीत, ण० नहीं सु०

तिमरणस्स वट्टमग्गं विक्खायरते ॥ ७ ॥ सव्वे सरा णियट्टाति,तक्का जत्थ ण विज्जति,
मति तत्थ णगाहिता ओर अप्पतिट्ठाणस्स खेयन्ने ॥८॥ सेणदीहे, णहस्स, णवट्टे, णतसे,
णचउरसे, णपरिमंडले, णकिण्हे, णणीले, णलोहिए, णहालिद्दे, णसुक्किल्ले, णसुरहि
गंधे, णदुराहिगंधे, णतित्ते, णकडुए, णकसाते, णआंबिले, णमहुरे, णकक्खडे, णमउए,

हात है, ॥ ७ ॥ मुक्ति के सुख में रहे हुवे जीवों की अवस्था बताने के लिये कोइ भी शब्द नहीं है कोइ
कल्पना नहीं पहोंच सकती है, और किसी की बुद्धि भी नहीं चलती है फक्त इतनाही कह सकते हैं, कि
व.। सर्व कर्म रहित एका की जीव संपूर्ण ज्ञानमय विराजमान है ॥ ८ ॥ वे मुक्ति स्थित जीव न लम्बे
ह्रस्व, न गोल, न त्रिकोण, न चोरस, नपरिमंडलाकार, नकाले, नहरे, नरक्त, नपिले, नश्वेत, नसुगंधि, नदुर्गंधि
नतीख, नकटुक, नकषायले नखट्टे, नमधुर, नकर्कश, नसुकुमाल, नगुरु, नलघु, नठंडे, नउष्ण, नचिकना, न

शुक्ल, ण० नहीं सु० सुरभि ण० नहीं दु० दुरभि ण० नहीं, ति० तिक्त ण० नहीं क० कटुक, ण नहीं क० कषायरस म० नहीं अं० अम्बट, ण० नहीं म० मधुर, ण० नहीं क० कर्कश, ण० नहीं म० कोमल ण० नहीं गु० गुरु ण० नहीं ल० लघु, ण० नहीं सी० शीत, ण० नहीं उ० उष्ण, ण० नहीं णि० स्निग्ध, ण० नहीं लु० रूक्ष, ण० नहीं क० शरीरी, ण० नहीं रु० जन्म ण० नहीं स० सगति, ण० नहीं इ० स्त्री, ण० नहीं पु० पुरुष, ण० नहीं अ० नपुंसक प० परज्ञात स० ज्ञाता उ० ओपमा ण० नहीं है अ० अरूपी तथा अ० अवस्था, प० पद ण० नहीं से० वे ण० नहीं स० शब्दमय, ण० नहीं रु० रूपमय, ण० नहीं गं० गन्धमय, ण० नहीं र० रसमय ण० नहीं फा० स्पर्शमय, इ० इस से निर्वाप्य है चि० ऐसा बे० कहता हूं

ए, णागरूए, णकुण्हुए णासीए, णउण्हे, णणिद्धे, णलुक्खे, णकाऊ, णरुहे, णसंगे णइत्थि, णपुरिसे, णअन्नहा, परिण्णे सण्णे, उवमाणविज्जति, अरूवीसत्ता अपयस्स पय णत्थि? सेणसद्दे णरूवे, णगंधे, णरसे, णफासे इच्चेतावात त्तिबेमि ॥ ९ ॥ इति लोकसारज्झयणस्स पञ्चो उद्देसो ॥ इति लोगविजय पंचमज्झयण सम्मत्त *

रूक्ष, नशरीरी, नजन्मनेवाले, नसंगपानेवाले, नस्त्रीरूप, पुरुषरूप ननपुंसकरूप, किन्तु ज्ञाता और परिज्ञाता होकर विराजते हैं मुक्त जीवों को बताने को कोइ उपमा नहीं है क्योंकि वे अरूपी है वैसेही उनको कोइ अवस्था विशेष भी नहीं है इसलिये उनको बताने को किसी शब्द की शक्ति नहीं है, सिद्ध शब्दरूप, वर्णरूप, गंधरूप, रसरूप, तथा स्पर्शरूप नहीं हैं, (बाह्य वस्तु में शब्दादि पांचरूप है वे सिद्ध में नहीं है,) इसलिये अवाच्य कहाये हैं, ॥८॥ यह लोकसार अध्ययनका छट्ठा उद्देश पूर्ण लोकसार नामक पंचम अध्ययन पूर्ण

# * धूताख्य षष्ठ मध्ययनम् *

ओ० जानते हुवे इ० यहां मा० मनुष्यों में अ० कहते हैं से० वे ण० मनुष्यों को ज० जिसको इ० यह जा० जाति स० सब प्रकार सु० अच्छी तरह देखकर प० होते हैं अ० कहते हैं से० वे णा० ज्ञानी म० अनुपम ॥ १ ॥ से० वे कि० कहते हैं ते० उन को स० सावधान हुवे को णि० निवर्ते दं० दंड से उन को स० समभावी को प० प्रज्ञावंत को, इ० यहां मु० मुक्तिमार्ग ए० ऐसे ये० कितनेक म० महावीर वि० परा

ओबुज्झमाणे इह माणवेसु अक्खाति से णरे, जस्सिमाओ जातिओ सव्वओ सुपडिले हियाओ भवंति अक्खाइ से णाण-मणेलिस ॥ १ ॥ से किट्टति तेसिं समुट्ठियाण णिक्खित्तदडाण समाहियाणं पण्णाणमंताण इह मुत्तिमग्ग एव पेगे महावीरा विपर

गत अध्ययन में संयमानुष्ठान की विधि बतलाइ शुद्ध तपस्या से कर्मक्षय होता है इसलिये आगे कर्मों को धोनेका धूताख्य छठा अध्ययन कहते हैं × +

श्री तीर्थंकर भगवान सर्व इस संसार का स्वरूप जानकर मनुष्यों का कल्याणकेलिये सदोप फरमाते हैं, या जिनको एकेन्द्रियादि जाति का बोध होता है ऐसे केवलज्ञानी और श्रुतकेवली भी सदोप करते हैं ॥ १ ॥ उक्त महान् पुरुष धर्माचरण करने को तत्पर बने हुवे, हिंसासे निवृत्त हुवे, सावधान तथा ... जो अच्छी तरह पराक्रम

से वे भ० जैसे कु० कूर्म ह द्रह नि० आसक्त चित्त प० प्रथम पत्र से उ० निकसने का से उसे णो० नहीं ल० मिलता है ॥ १ ॥ भं० वृक्ष इ० जैसे स० स्वस्थान णो० नहीं च० छोडे ए० ऐसे ही ए० कितनेक अ० अनेक प्रकारके कु० कुल में जन्मे रू० रूप में आसक्त क० विलाप करते हैं णि० प्रबलकर्म से

क्रमति पासह एगे विसीयमाणे अणत्तपण्णे ॥ २ ॥ सेबेमि–सेजहावि कुम्मे हरए विणिविट्ठचित्ते पच्छन्नपलासे उम्मग्गं से णो लभति ॥ ३ ॥ भंजगा इव सन्निवेसं णो चयंति एव एगे अणेगरूवेहिं कुलेहिं जाया, रूवेहिं सत्ता, कलुणं थणंति णिदा

छोडते हैं, और कितनेक उसको नहीं समझते संयम में लडखडाते भी रहते हैं उनको भी देखो ॥ २ ॥ जैसे पत्र से आच्छादित किसी पुराना कुण्ड में काछवा आसक्त रहता होवे तो उसको बाहिर आनेका रास्ता मिलना मुश्किल होता है, वैसे ही इस संसार रूप जलाशय में रहनेवाले जीवरूप काछवे को मुक्ति केलिये सम्यक्त्व रूप रास्ता मिलना मुश्किल है ॥ ३ ॥ जैसे वृक्ष अनेक दुःखों को अनुभवते हुवे भी निजस्थान छोडकर अन्यस्थान नहीं जासकते हैं, वैसे ही कितनेक अलग २ कुलमें उत्पन्न हुवे जीव शब्दादि विषयों में आसक्त बनकर दुःख से पीडित हो आक्रन्द विलाप करते हैं परन्तु घर को छोडते नहीं हैं और वे अपने

तं० ते ण० नहीं स मास करे मा० मोक्ष ॥ ४ ॥ अ० अब पा० देखो तें० वे ही कु० कुल में आ० कर्मानुभव करने को मा० उत्पन्न होते हैं ॥ ५ ॥ गं० गंडमाल, अ० अथवा कु कुष्ट, रा० राजक्षय अ० अपस्मार, ( सन्निपात ) का० काणत्व, झि० जडता, थे० निश्चय, कु० हिनांग, खु० कुब्जता, त० वैसे, उ० उदर विकार, प० और पा० देखो मू० मूकत्व मू० सोजा गि० भस्मक, वे० कम्पवायु, पी० पृष्टका, सी० श्लीपद, म० मधुमेह, सो० सोले ए० यह रो० रोग अ० कहा अ० अनुक्रम से अ० अब प० मुझे सं०

पतो ते ण लभति मोक्ख ॥ ४ ॥ अह पासइ तेहिं कुलेहिं आयत्ताए जाया ॥ ५ ॥

गंडीअदुवा कुढि, रायसी अवमारियं, काणियं झिम्मियं चेव, कुणियं खुज्जियं तहा

॥ १ ॥ उअरिं च पास मूयत्त, सूणियं च गिलासिणिं, वेवयं पीढसप्पिं च, सिलिवति

मरण कर्मों से मुक्त हो करके सिद्धि को प्राप्त नहीं कर सकते हैं ॥ ४ ॥ देखो कि अपने कर्म भोगने के लिये पृथक् २ कुलों में जीव जन्म धारणकरके अनेक अवस्था भोगते हैं ॥ ५ ॥ कर्म से जीवों को १ गण्डमाल, २ कोढ, ३ राजक्षय, ४ अपस्मार, ( सन्निपात ) ५ नेत्ररोग, ६ शरीर की जडता, ७ हिनांगपना, ८ कुबडापना, ९ पेट के रोग, १० गूंगापना, ११ सोजाचढना, १२ भस्मक ( बहुत क्षुधालगना ) १३ कम्पवायु, १४ पीठ वांकी १५ श्लीपद ( पांव का रोग ) और १६ मधुप्रमेह ये १६ रोग तो बडे कहे हैं सिवाय इत्यादि वेदना जलम सिवाय भयंकर दर्दो इत्यादि अनेक प्रकार के रोगों लगकर शरीर को दुर्बल

फा० स्पर्शे अ० रोग फा० स्पर्शो अ असमर्थ करे म० मरण ते० उसका स० देखो च उत्पन्न होना च० मरना प० जानकर प कर्म के फल सं० देखे, तं० उसे सु० सुन ज यथातथ्य ॥ १ ॥ सं० है पा० प्राणी अं० अन्ध त०अन्धारे में वि० कहे ता० उसीको स० एकवार अ० अनेकवार अ० अवी जाकर च इस प्रकार फा० स्पर्श स० भोगते हैं, बु० तीर्थंकरने ए० यह प० फरमाया ॥ ७ ॥ सं० है पा० प्राणी

महुमेहणिय ॥ २ ॥ सोलस एतेरोगा, अक्खाया अणुपुव्वसो, अह ण फुसंति आयंका फासाय असंमंजसा ॥ ३ ॥ मरण तेसिं संपेहाए, उववायं चवण णच्चा, परियागंच संपेहाए त सुणेह जहातहा ॥ ४ ॥ ॥ १ ॥ संतिपाणा अंधा तमसि वियाहिया तामेव सई असइं अतिअच्च उच्चावए फासे पडिसंवेदेंति बुद्धेहिं एयं पवेदितं ॥ ७ ॥

बनाते हुए अन्तावस्था को प्राप्त कराते हैं और जिनको कदापि रोग नहोवे ऐसे देवताभी जन्म मरण के दुःख भोगते हैं इसलिये कर्म के फल को जानकर कर्म को तोडो और संयम में सावधान बनो ! अहो मुनि! आगे और भी कर्म का स्वरूप कहता हूं सो सुनो ॥ १ ॥ कर्मों के वश होकर मीन अंधा होता हुआ घोर अन्धकारमय स्थल ( नरक ) में वारम्वार जन्म लेकर भयकर दुःख भोगते हैं यह बोध श्री तीर्थंकरने फरमाया है ॥ ७ ॥ और भी बेइन्द्रियादि जीव, जलचर जीव , पक्षी ये सब परस्पर दुःख देते हैं इस तरह

मा० मांसरू र० रसरू उ० प्राणी में उ उदकरूप आ० आकाशगामी, पा० प्राणी मा० प्राणीको कि० दु ख देते पा देख लो० लोक में म० महाभय प० बहुत दु० दुःखी हु० निश्चय ज० जीवों ॥ ८ ॥ म० आसक्त का० कामभोग में मा० मनुष्यों अ० निर्बलता से व० वध को ग० जाते हैं स० शरीर प० क्षणभंगुर ॥ ९ ॥ अ० आर्तवंत से० वे व० बहुत दु० दुःखी इ० ऐसे बा० अज्ञानी प० करते हैं प० पर रो० राग ब० बहोत प० मान अ० आतूर प० परीताप पावे ॥ १० ॥ ण० नहीं पूर्ण पा० देखे अ०

संतिपाणा मासगा रसगा उदर उदयचरा आगासगामिणो पाणापाणे किलेसाति । पा

स लाए महब्भय, बहुदुक्खा हु जतवो ॥८ ॥ सत्ता कामेहिं माणवा अबलेण वह ग

च्छंति सरीरेणं पभगुरेण ॥ ९ ॥ अट्टे से बहुदुक्खे इति बाले पकुव्वति पते रोगे बहु

णधा, आटतपरितावए ॥ १० ॥ णाल पास अल तवेतेहिं एय पास मुणी महब्भय

इस जगतमें महाभय हो रहा है तथा जीव बहुत दुःखी हो रहे हैं ॥८॥ मनुष्य काम भोगमें आसक्त होकर के क्षण भंगूर शरीरकेलिये पापकरके दुःखी होते हैं ॥९॥ आर्तवन्त तथा बहुत दुःख भुक्तनेवाले अज्ञानी शरीर में आये हुवे अनेक रोगो को देखकर उसकी चिकित्सा केलिये अनेक प्रकारके जन्तुओ का संहार करते है ॥ १० ॥ औषधि से कुच्छभी रोग दूर नहीं होता है परन्तु हिंसा युक्त औषधि सेवन करने से कर्म रोग की

पूर्ण त० तुझे ते० वे प० यह पा० देख मु० साधु म० महाभय णा० नहीं मारे कं० किसी को ॥ ११ ॥ आ० अवधार भो० अहो मु० सुणो भो० अहो धू० धूतवाद प० कहुंगा मैं इ० यहां स० निश्चय अ० अपने कर्म से ते० उन २ कु० कुल में अ० शुक्र शोणितकर, अ० उत्पन्न हुवा, अ० जन्मलिया, अ० अंगोपांगयुक्त बना अ० वृद्धिपाया अ० पाप पाया अ० निकले य अनु क्रम से म० महामुनि ॥ १२ ॥ तं० उस पंथमें प० माता हुवा प० विलाप करते या मत च० छोडो इ० यों ते० वे म० बोलते हैं, छं० आज्ञा में चलनेवाले अ० असन्त रक्त अ० आक्रंद करे,

णातिवाएज्ज कंचणं ॥ ११ ॥ आयाणं भो सुस्सूस भो धूयवादं पवेदइस्सामि, इह खलु अत्तत्ताए तेहिं तेहिं कुलेहिं अभिसेएण अभिसंभूता,अभिसंजाता अभिणिव्वट्टा अभिसंवुड्ढा, अभिसंबुद्धा, अभिणिक्खंता, अणुपुव्वेण महामुणी ॥ १२ ॥ तं परक्कमंतं

शुद्धि होती है यह महा भयंकर कार्य है इस लिये साधु को दुःख नहीं देना चाहिये ॥ ११ ॥ अहो साधुओं एक चित्तीभूत बन करके सुनो। मैं तुम को कर्मक्षय करने का उपाय बताता हूं इस संसार में बहुत से जीवों स्वकीय कर्मों की प्रणालिसे पृथक् २ कुलों में माता का रक्त तथा पिता का वीर्य के संयोग से उत्पन्न हुवे, जन्म पाया, अंगोपांग युक्त बने, वृद्धि पाये तथा दीक्षा ग्रहण कर अनुक्रमे साधु बने हैं ॥ १२ ॥ जब कोई पुरुष दीक्षा ग्रहण करने को तत्पर होता है तब उस के माता, पिता, स्वजन उसे कहते हैं कि हमसब

आ भातुर सा० साक आ मान्कर प० छोडकरके पु० पूव स० संजोग हि० मास्कर उ० उपसम व० रजकरके पं०ब्रम्हचर्य में असुनि भ अणुव्रती था० या आ०जानकरके ध० धर्म को भ० यथातथ्य अ० कि तनेक स० छोडे कु० दुराचारी प० वस्त्र प० प म क० कम्बल पा० रजोहरण वि० छोडकर भ अनुक्रमें, अ० सहनकरने में प० परिसह दु दुष्करसेसहे का० कामभोगमें म ममत्वधारी को इ० अभी था० या मु० मुहुर्तमात्र में भ० परिमाणगति भ भेद प० इसतरह से० में अ अन्तराय से का० कामभोग भ०

इति धुताख्यमज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो * *

आतुर लाय-मायाए चइत्ता पुव्व सजोग हिच्चा उवसमं वसित्ता बम्भचेरंसि, असु अणुवसु वा जाणीतु धम्म अहातहा अहगेतमत्ताइ कुसिला वत्थ, पडिग्गह, कम्बल, पायपुछण, विउसज्जा, अ णुपुव्वेण अणहियासमाणे परिसहे दुरहियासए, कामे ममायमाणस्स इयाणि वा मुहुत्तण वा अप

कितनेक साधु तथा अणुव्रतधारी श्रावक इस दुनिया को दुःखमय जान सर्व स्वजन का त्याग करके, उप शम धारन कर ब्रम्हचर्य का पालते हुवे तथा धर्म का स्वरूप समझते हुवे परीसह से घबराकर, तथाविध कर्म का उदय से मारमार्ग में फसकर सदाचार का त्याग करके, वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण, को छोडकर भ्रष्ट बन जाते हैं ऐसे जो साधु या श्रावक हैं वे भोगों की मूर्च्छा से अनेक रोगों से ग्रसित होतहुए थोडे समय में क्षणभंगुर शरीर को छोडकर दुर्गति के दुःखों के भोक्ता बनते हैं उनको भविष्य काल में

भपगे भ भगा ॥ १ ॥ भ० अथ कितनेक प० धर्मी आदर भ० धर्मोप करण सहित सु० परिपह सहते, थ पश्चा , भं० अभिभरते द० दृढ, स० सर्व से गि० गृद्धताको प० मान करके ए० ऐसो प० संयम में सतर मा० महामुनि, ॥ २ ॥ भ० मतिक्रमके भ० छोडे स० सर्वथा स० सम्बध ण० नहीं म० मेरा भ० है १० ऐसा ए० अकेला ह० मैं हूं, ज० यत्नाने ए० यहां, रि० निश्चा भ० साधु स० सर्वथा

रिभाणाए भेसो । एवंसे अतराइएहिं कामेहिं आकेवलिएहिं अवीतिन्नात्रेए ॥ १ ॥ अ

इंग धम्ममादाय आदाणप्पामीते सुपणिहिए चरे अप्पलीयमाणे दढे सव्व गिर्द्धि परि

ण्णाय एस पणते महामुणी ॥ २ ॥ अइअम्च सव्वतोसग णमहं आत्थिात्ति इति एगो

हमासि, जयमाणे एत्थ विरते अणगारे सव्वसोमुडे रियते, जे अचेले परिवुसिए संचि

एनी सामग्री मिलनी मुश्किल है ॥ १ ॥ और कितनेक भव्य धर्म का स्वरूप जानकर दीक्षा अंगीकार करके आरंभ में ही सावधान रहते हैं किसी प्रकारके प्रपंचमें पडते नहीं हैं और ग्रहण किये हुवे व्रतों को शुद्ध रीति से पालने सब मानकषाय से दूर रहते हैं वे ही धर्मी महामुनि कहाये जाते हैं ॥ २॥ इस लिये साधु को सर्व प्रपंचों का त्याग करके "मेरा कोई नहीं है मैं एकिला हूं" ऐसी एकान्त भावना भावता हुवा पापकर्म से निवर्तना चाहिये तथा द्रव्य भाव से मुण्डित होकर के अचेल (ममत्व रहित) बनना सदा उत्साह पूर्वक संयम

मु० मुनिहन री० विचरते अ० वस्त्र रहित प० शान्त सं० रहते ओ० ऊणोदरी करते॥३॥से० वे अपशब्द बोल्ते इ० मारते लु० खेंचते प० निन्दा परनिन्दाकरे अ अथवा प० विक्षेप निन्दे अ० सराव स० शब्द फा० स्पर्श इ० ऐसे स० जाणकर ए० अनुकूल अ० प्रतिकूल अ० जानकर ति० सहन करता प० सहवें जे० जो हि० मनोहर अ० अमनोहर चि० छोडे स० सर्व वि० शंका फा० स्पर्श स० सम्यग् दर्शनी ॥ ४ ॥ ए० यह भो० अहो ण० निग्रन्थ बु० कहे, जे० जो लो० लोकमें अ० प्रतिज्ञा पालक

क्खाति ओमायरियाए ॥३॥ से आकुट्टे वा, हए वा, लुंचिए वा, पलिय पकथे अदुवा पकथे अतहेहिं सद्दफासेहिं इति सखाए एगतरे अन्नयरे अभिन्नाय तितिक्खमाणे परिव्वए जेय हिरीमणे जे य अहिरी माणे चिच्चा सव्वं विसोत्तियं फासे समियदंसणे॥४॥एते भो णगि

पालन्य और परिमित आहार लेकर ऊणोदरी तप करना ॥ ३ ॥ जिस समय कोई द्वेष से पूर्व किये हुवे निन्दित कर्मों को याद कर साधु की बेअदबी करे, असत्य कलंक चढाकर, चपेटादि मारकर, बालादि खेंच कर, दुःख देवे तब मुनि को विचारना कि ये मेरे पूर्वकृत कर्म के फल उदय हुवे हैं इनको भोगवने से ही मुक्त होऊंगा इस विचार से अनुकूल स्तुति वगेरा और प्रतिकूल परिसहादि को समभाव से सहन करना ॥ ४ ॥ इस तरह जो परिसह सहनकर निष्परिग्रही रहते हैं, और गृहस्थाश्रम में पीछे नहीं पडते हैं वे ही

गा० माणी पा० माणीको कि० क्लेशउपजाते हैं ते० वे फा० स्पर्श पु० स्पर्शे धी० धीर अ० सहन करे ध० ऐसा मे० कहता हू ॥ ८ ॥

* * *

प० यह खु० निश्चय मु० साधु आ० आश्रव(१) स० सदा सु० अच्छा करा ध० धर्म वि० सम्यक् प्रकारे सर्व आचार पि० त्याग करके ॥ १ ॥ जे० जो अ० वस्त्र रहित प० सयममें रहते हैं त० उन भि० साधु

पाणा पाणे किलेसंति ते फासे पुट्ठो धीरो अहियासेज्जासि त्तिबेमि ॥ ८ ॥ इति धूता स्य मज्झयणस्स बीआद्देसो सम्मत्तो

* * *

एय खु मुणी आयाण सया सुअक्खायधम्मे विधूतकप्पे णिज्झोसइत्ता ॥ १ ॥ जे

परिसह उत्पन्न होवे तो उसे भी समभाव से सहना इति धूतास्य छट्ठा अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुआ इस उद्देशा में कर्मक्षय करने का उपाय कहा कर्म क्षय ममत्वत्यागन से होता है इस लिये उपकरण और शरीर का ममत्वत्याग आगे बताते हैं,

* * *

सदा श्रद्धाचारी, धर्म पालनेवाले, सदाभिरू मुनि धर्मोपकरण सिवाय सर्व वस्तु का परिहार करते हैं ॥ १ ॥ जो साधु × वस्त्ररहित रहते हैं उन का कभी ऐसा विचार नहीं होता है कि, यह मेरा वस्त्र जीर्ण

(१) धर्मोपकरण से अधिक वस्त्रादि × यह वचन जिनकल्पी साधु के लिये है

पृ० धर्मी ॥ ८ "आ० आज्ञामें मा० मेरा ध० धर्म " ए० यह उ० प्रधान मा० बाद इ० यहां
मा० मनुष्यों को वि० कहा है ॥ ६ ॥ ए० संयम में रक्त सं० वर्ते झो० क्षय करते हुए आ० आश्रव को
प० जानकर प० संयम से वि० दूर करे ॥ ७ ॥ इ० यहां ए० कितनेक ए० एकल विहारी, हो० होते
॥० वहां इ० अन्य इ० दूसरे कु० कुलसे सु० शुद्ध एषणा युक्त स० सर्व एषणा युक्त से०
॥० मे० पण्डित प० भरते सु० सुरभिगंध अ० अथवा दु० दुरभिगंध अ० अथवा त० वहां भे० भयङ्कर

गा बुच्चा जे लोगंसि अणाणाए मामगं धम्मं ॥५॥ "आणाए मामगं धम्मं,, एस उत्तरवा
दे इह माणवाण वियाहिते ॥ ६ ॥ एत्थोवरए न झोसमाणे आयाणिज्जं परिण्णाय प
रियाएण विगिंचइ ॥ ७ ॥ इह मेगेसिं एगचरिया होति तत्थियरा इयरेहिं कुलेहिं
सुद्धेसणाए सव्वेसणाए से मेहावी परिव्वए सुब्भि अदुवा दुब्भि अदुवा तत्थ भेरवा

निग्रन्थ कहे जाते हैं ॥५॥ श्री तीर्थंकर भगवान का फरमान है कि, "आज्ञा में ही मेरा धर्म है" यह फरमान
मनुष्यों के लिये उत्कृष्ट है ॥ ६ ॥ इस लिये मुनि को संयम में तल्लीन रहकर कर्मोंका क्षय करते हुवे धर्म
कार्य करना क्योंकि, धर्म का स्वरूप जाने बाद ही संयम से कर्म क्षय होते हैं ॥ ७ ॥ कितनेक उत्तम
मुनि एकले फिरते हैं, उन को अन्य अन्य कुल में से निर्दोष आहार लेकर शुद्ध संयम पालते हुवे विचरना
सुगंधि या दुर्गंधि आहार होवे तो भी उस पर रागद्वेष नहीं करना एकले फिरते हुवे श्वापदादिकका

पा० प्राणी पा० प्राणीको कि० क्लेशउपजावे हैं ते० ये फा० स्पर्श पु० स्पर्शे धी० धीर अ० सहन करे
थे० ऐसा बे० कहता हूं ॥ ८ ॥

पाणा पाणे किलेसति ते फासे पुट्ठो धीरो अहियासेज्जासि त्तिबेमि ॥ ८ ॥ इति धूता

स्य मज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो

जरिसह उत्पन्न होवे तो उसे भी समभाव से सहना इति धूताख्य छठा अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण
हुवा इस उद्देशा में कर्मक्षय करने का उपाय कहा कर्म क्षय ममत्वत्यागन से होता है इस लिये उपकरण
और शरीर का ममत्वत्याग आगे बताते हैं,

* * *

ए० यह खु० निश्चय मु० साधु आ० आश्रय(१) स० सदा सु० अच्छा कहा ध० धर्म वि० सम्यक् प्रकारे
सर्व आचारे णि० त्याग करके ॥ १ ॥ जे० जो अ० वस्त्र रहित प० संयममें रहते हैं त० उन भि० साधु

एय खु मुणी आयाण सया सुअक्खायधम्मे विधूतकप्पे णिज्झोसइत्ता ॥ १ ॥ जे

सदा सुद्धाचारी, धर्म पालनेवाले, सबोधक मुनि धर्मोपकरण सिवाय सर्व वस्तु का परिहार करते हैं
॥ १ ॥ जो साधु × वस्त्ररहित रहते हैं उन का कभी ऐसा विचार नहीं होता है कि, यह मेरा वस्त्र जीर्ण

* * *

(१) धर्मोपकरण से अधिक वस्त्रादि × यह वचन जिनकल्पी साधु के लिये है

को णो नहीं ए० ऐसा भ० होवे प० जीण हुवे मे० मेरे व० वस्त्र; व० वस्त्र मा० याचूंगा सु० सूत मा० मागूंगा, सू० सूइ जा० मांगूंगा, स० जोडूंगा सी० सीवूंगा उ० बड़ा करूंगा वो० छोटा करूंगा प० पहरूंगा प० ओढूंगा ॥ २ ॥ अ० अथवा त० तहां प० पराक्रम करते तं० उने मु० फिर अ० वस्त्र रहित को त० तृण फा० स्पर्श फु० स्पर्शे सी० शीत फा० स्पर्श फु० स्पर्शे, ते० उष्ण फा० स्पर्श फु० स्पर्शे, द० दंसमच्छर फा० स्पर्श फु० स्पर्शे ए० अनुकूल प० प्रतिकूल वि० विविध प्रकारके फा० स्पर्श अ० सहनकरे अ० वस्त्र रहित ला० हलकापना अ० जानता हुवा त० तपका से० उने अ० लाभ उपार्जन भ० होवे

अचेले परिवुसिए तस्सणं भिक्खुस्स णो एवं भवइ —परिजिण्णे मे वत्थे, वत्थे जाइस्सामि, सुत्तं जाइस्सामि, सूई जाइस्सामि, संधिस्सामि, सीविस्सामि, उक्कसिस्सामि, वोक्कसिस्सामि, परिहिस्सामि, पाउणिस्सामि ॥ २ ॥ अदुवा तत्थ परक्कमंत भुज्जो अचेलं तणफासा फुसंति, सीयफासा फुसंति, तेउफासा फुसंति, दंसमसगफासा फुसंति, एगयरे

होगया है अब मैं नया पाऊं, उसे सीने के लिये सूइ दोरा लाऊं, उस कमीज्यादा छोटा बड़ा करके पहरूं, ओढूं ॥ २ ॥ वस्त्र रहित मुनि के शरीर में घास, कंकर, कांटे आदि तीक्ष्ण वस्तु लगजाते हैं शीत ताप, डांस, मत्सरादि पीड़ा देते हैं और भी सरल २ के अनुकूल प्रतिकूल परिसह उन को सहन करने पड़ते हैं इतने परिसह पड़ने पर भी मानवपना का धर्म नहीं छोड़ते हुवे जो समभावसे रहते हैं उन को महा तपका लाभ

म० होवे ॥ ३ ॥ ज० जैसा इ० यह भ० भगवन्तने प० कहा है त० तैसा अ० मानकरके स० सब तरह स० सर्वात्मपने स० समत्वसहित स० अच्छा माने ए० ऐसे वे० बन म महावीर पुरुषको च० बहुत काल, पु० पूर्वोत्सग वा० वर्षोत्सग री० रहते हुवे द० मोक्षार्थी पा० देखो अ० सहन किये ॥ ४ ॥ भा भागव प० महार्णव कि० कृश बा० हाथ म० होवे प० थोडे मं० मांस सो० रक्त वि० विमुख क० करे प० परिज्ञा से ए० यह ति० स्थिरे मु० मुक्त वि० व्रतमंस वि० कहा है त्ति० ऐसा बे० कहता हूं ॥ ५ ॥ वि०

अक्सयरे विरूवरूवे फासे अहियासेति, अचेले लाघवं आगममाणे, तवेसे अभिसमण्णा गए भवाति ,। ३ ॥ जहेयं भगवता पवेदित तमेव अभिसमेच्चा सव्वतो सव्वत्ताए स मत्त मेव समभिजाणिया, एवं तेसिं महावीराण चिरराइं पुव्वाइ वासाणि रीयमाणाण दवियाण पास, अहियासियं॥ ४ ॥ आगयपण्णाणाण किसा बाहा भवंति, पयणुए मंस सोणिए विस्सेणिं कट्टु परिण्णाए एस तिण्णे मुत्ते विरए वियाहिए—त्तिबेमि ॥ ५ ॥ वि

मास होता है ॥ ३ ॥ जैसा भगवन्त ने फरमाया है, वैसा पात्र आश्रय सहित समभाव से चलना और पूर्व काल में महर्षियों ने बहुत पूर्वों के वर्षों पर्यंत जो कष्ट सहन किया है उस को दृष्टी बिन्दु बना रखना ॥ ४ ॥ ज्ञानी मुनियों की भूजा कृश होती है, और उन के शरीर में मांस रक्त कम रहता है ऐसे साधु स म्यक् भाव से राग द्वेष कषायरूप संसारश्रेणी का नाश कर रत्नादि गुणों के धारक होते हैं वे मवोप वीरहुवे, भवबन्धन से मुक्त तथा पापवृत्ति से दूर कहलाये हैं, ऐसा मैं कहता हूं ॥ ५ ॥ बहुत काल से

स्थित भि० साधु गी० ।ग्लान वि० बहुत काल म ।भि० कदाचित भ० अरति त० तहां कि क्या वि० ग्लानि ।।६।। सं० ओडता म० सावधान जैसे से० वे दी० द्वीप अ० ढके नहीं ए० ऐसे से० उनका ध० धर्म आ० आर्य प० प्रवेदित ॥ ७ ॥ ते० वे अ० अभिलाषक पा० प्राणी का घात नहीं करते द० भिषकारी मे० मेधावी, प० पण्डित ॥ ८ ॥ ए० ऐसे ते० उनके भ० भगवन्त को अ० अनुसारपान ज०

रय भिक्खु रीयंत चिरराते सिय अरती तत्थ किं विहारए? ॥ ६ ॥सवेमाणे समुट्ठिए जहा से दीवे असंदीणे—एवं से धम्मे आरियपदेसिए ॥ ७ ॥ ते अणवकंखमाणा, पाणे अणतिवातेमाणा दइता मेहाविणो पण्डिया ॥ ८ ॥ एवं तेसिं भगवओ अणुट्ठा

संयम पालनेवाले, भैतप्य मे विचरनेवाले, अनुत्तर प्रधानधर्म की वृद्धि करनेवाले साधु को भी कदाचित् अरति पैदा हो जाय तो वे चलित हो जाते हैं ॥ ६ ॥ कदाचित् उक्त गुणविशिष्ट साधु को अरति कुछ भी नहीं कर सकती है क्यों की उनके अच्छे भावों की श्रेणी चढती जाती है ऐसे वर्धमान परिणामी साधु पानी से ढके नहीं ऐसा द्वीप तुल्य है वैसे ही तीर्थंकर भाषित धर्म भी द्वीप तुल्य है ॥ ७ ॥ साधु सर्व भोगों की इच्छाओं का त्याग करके सर्व प्राणियों के पालक बने हैं इन से सब को सहकारी हैं और मर्यादा मे रहने से पण्डित पद को प्राप्त हुवे हैं ॥ ८ ॥ जिन को ऐसा ज्ञान नहीं होता है, वे भगवान के धर्म मे

जेसे से० वे दि० पक्षीके बच्चे, ए० ऐसे से वे सि० शिष्य का दि० दिनको रा० रातको अ० अनुक्रमे वा० पढाते हैं सि० ऐसा पे० कहता हूं ॥ २ ॥ + +

ए० ऐसे त० व सि० शिष्य दि० दिनको रा० रात को अ० अनुक्रम से वा० पढके अभ्यास कराते तें० वे म० महावीर पुरुषों प० महाज्ञान्य ते० उत समीप प० प्रज्ञा मु० प्राप्त किया हुआ ते० जानक

जे जहा से दियपोए, एवं ते सिस्सा दिया य राओ य अणुपुव्वेण वाइय—त्तिबेमि॥ ९॥

इति धूताख्य मज्झयणस्स तइओ उसो * *

एवं ते सिस्सा दिया य राओ य अणुपुव्वेण वाइया तेहिं महावीरेहिं पण्णाणमंतेहिं ते

पूर्णतया वस्तास्वान नहीं होते हैं ऐसे शिष्यों को पण्डित मुनि जैसे पक्षी अपने बच्चों को पालते हैं वैसे ही पालें—धर्म में प्रवीण बनावें इस प्रकार अभ्यास होने से वे संसार को उत्तीर्ण होने में समर्थ बनजाते हैं ऐसा मैं कहता हूं इति धूताख्य छठा अध्ययन का तीसरा उद्देशा पूर्ण हुआ इस उद्देशा में शरीर उपकरण के ममत्व का त्याग कहा आगे साधु को सुखलम्पट नहीं होना सो बताते हैं +

महा पराक्रमी, विद्वान गुरुने रात्रिदिन परिश्रम लेकर अपने शिष्योंको पढाये उन में से कितनेक शिष्यों ऐसे हैं कि गुरु की पास से विद्या प्राप्त हुवे बाद ज्ञानमान को छोड अभिमानी, स्वेच्छाचारी, तथा उद्धत

रिसें भि साधु गी० ।स्वस वि० पहुत ना म भि० कदाचित् अ० भगते त० तहां किं क्या वि० स्थापित जो॥५॥ ओ० ओरता म० सावधान जैसे से० वे दी० दीप अ० रुके नहीं ए० ऐसे से० उनका घ० धर्म आ० आर्य प० प्रणित ॥ ७ ॥ ते० वे अ० निरीच्छक पा० प्राणी का घात नहीं करते द० निपकारी मे० मेधावी, प० पण्डित ॥ ८ ॥ ए० ऐसे वे० उनके भ० भगवन्त को अ० असारपान ज०

रय भिक्खु रीयंत चिरराते सिय अरती तत्थ किं निहारए? ॥ ६ ॥सवेमाणे समुट्ठिए

जहा से दीवे असंदीणे—एवं से धम्मे आरियपदेसिए ॥ ७ ॥ ते अणवकंखमाणा, पा

णे अणतिवातेमाणा दइता मेहाविणो पण्डिया ॥ ८ ॥ एवं तेसिं भगवओ अणुट्ठा

संयम पालनेवाले, भैतयम से निवर्तनेवाले, अनुसार प्रधानधर्म की वृद्धि करनेवाले साधु को भी कदाचित् अरति पैदा हो जाय तो वे चलित हो जाते हैं ॥ ६ ॥ कदाचित् उक्त गुणविशिष्ट साधु को अरति कुछ भी नहीं कर सकती है क्यों की उनके अच्छे भावों की श्रेणी बढती जाती है ऐसे वर्धमान परिणामी साधु पानीसे रुके नहीं ऐसा द्वीप तुल्य है वैसे ही तीर्थंकर भाषित धर्म भी द्वीप तुल्य है ॥ ७ ॥ साधु सर्व भोगों की इच्छाओं का त्याग करके सर्व प्राणियों के पालक बने हैं इन से सब को सरकारी हैं और मर्यादा में रहते हुवे पंडित पद को प्राप्त हुवे हैं ॥ ८ ॥ जिन को ऐसा ज्ञान नहीं होता है, वे भगवान के धर्म में

जेते से० वे दि० पक्षीके बच्चे, ए० ऐसे ते वे सि० शिष्य का दि दिनको रा० रातको अ० अनुक्रमे वा० पढाते हैं त्ति० ऐसा मैं० कहता हूं ॥ २ ॥ + +

ए० ऐसे त० व सि० शिष्य दि० दिनको रा० रात को अ अनुक्रम से वा पढाते अभ्यास कराते ते० वे म० महावीर पुरुषों प० महात्मा वे० वत समीप प० महा मु मात किया हुआ है० छाइक

णे जहा से दियपोए, एव ते सिस्सा दिया य राओ य अणुपुव्वेण वाइय—त्तिबेमि॥३॥

इति धूताख्य मज्झयणस्स तइओ इसो • •

एवं ते सिस्सा दिया य राओ य अणुपुव्वेण वाइया तेहिं महावीरेहिं पण्णाणमन्तेहिं ते

पूर्णतया उत्साहवान होते हैं ऐसे शिष्यों को पण्डित मुनि जैसे पक्षी अपने पच्चों को पालते हैं वैसे ही पालें—क्रम में प्रवीण बनावें इस तरह अभ्यास होने से वे संसार को उल्लंघन होने में समर्थ बनजाते हैं ऐसा मैं कहता हूं इति धूताख्य छठा अध्ययन का तीसरा उद्देशा पूर्ण हुआ इस उद्देशा में शरीर उपकरण के ममत्व का त्याग कहा आगे साधु को सुखलम्पट नहीं होना सो बताते हैं +

महा पराक्रमी, विद्वान गुरुने रातदिन परिश्रम लेकर अपने शिष्याको पढाये उन में से कितनेक शिष्यों ऐसे हैं कि गुरु की पास से विद्या प्राप्त हुवे बाद ज्ञानसागर को छोड अभिमानी,, स्वेच्छाचारी, तथा उद्धत

उ० उपशम फ० कठिण म० आदरे ॥१॥ व० रहकर बं० ब्रह्मचर्य में आ० आज्ञा० तं० उसको णो० नहीं म० मानते हुवे आ० कहाते मो० सुन कर णि० धारकर स० अच्छी तरह जानकर जी० जीवेंगे ए० कितनेक नि० निकले अ० असंयम रात वि० काम से जलते हुए का० काम में गि० गृद्ध अ० प्राप्त हुवे स० समाधि भा० करके म० नहीं सेवन करते स० हितशिक्षा को, फ० कठिन शब्द व० कहते हैं ॥२॥ शी० शीलवंत, उ० उपशांत, स० प्रज्ञा से री० रहते हुवे अ० कुशीलीया अ० निंदते हुवे की कि० कुगुनी म० मूर्खता

सिनिए पण्णाण मुनलभ हेच्चा उवसम फारुसियं समादियाति ॥ १ ॥ वसित्ता बम्भचेर मि आण त णो ति मण्णमाणा, अग्घाय तु सोच्चा णिसम्म समणुन्ना जीविस्सामो, एगे निक्खम्म ते असंभवेता विडज्झमाणा कामेहिं गिद्धा अज्झोववण्णा समाहि माघाय म ज्झोसयता सत्थारमेवं फरूसं वदंति ॥ २ ॥ सीलमता, उवसता सखाए रीयमाणा अ

बन जाते हैं ॥ १ ॥ और कितनेक शिष्य संयम अंगीकार किये बाद तीर्थंकर की आज्ञा का अनादर करके सुख के लालसु हो शरीर की शोभा करने लग जाते हैं कितनेक अभिमान में उन्मत्त बनकर ऐसे विचार ते हैं कि, " यदि भगर दीक्षा लेवेंगे तो सब को माननीय बनेंगे " ऐसे साधु मोक्षमार्ग का त्याग कर कामवासना में मग्न हो विषयासक्त बनकर तीर्थंकर भाषित समाधि से विमुख रहते हैं ऐसे को कोई हित शिक्षा देवे तो उलटा उस का अपमान और निन्दा करने लगजाते हैं ॥ २ ॥ कितनेक स्वयं भ्रष्ट होकर

करे उ० मध्यस्थ का प० कठोर शब्द ये०कहे प०निंदा करे, भ० अथवा प०निन्दा पाय, भ०मतव्य वचन से तं० उनको मे० मेधावी जा० जाने प०धर्म को ॥ ७ ॥ अ० अधर्मार्थी तु० तूहै णा नाम बा० मूर्ख मा० आरंभार्थी अ० कहता हुआ ह० मारो प्राणीको घा० घात करते को ह० मारते को स० अच्छा

वति ॥ ६ ॥ पाउव्वयणिज्जा हु ते नरा पुणो पुणो जातिं पकप्पाति अहे संभवता त्रि हायमाणा "अठमासि" विठक्कसे उदासीणे फस्सं वयति पलियं पगंथे अदुवा पगंथे अ तहेहिं त मेहावी जाणिज्जा धम्म ॥ ७ ॥ अहम्मट्ठी तुमसि णाम बाले, आरंभट्ठी अणुवयमाणे 'हण पाणे' 'घायमाणे, हणओयावि समणुजाणमाण "घोर धम्मे उदीरिए"

विस्तार पाप्त होता है ॥ ६ ॥ जे संयम से भ्रष्ट होकर त्रिदण्डका गर्व धारण करते हैं, वे कहते हैं कि, "हमी विद्वान शास्त्रपारंगत हैं" यदि कोई मध्यस्थ भाव से उन को हित शिक्षा देवे तो उन की निन्दा करने लगजाते हैं और पाप परिपूर्ण आयु बहुत काल पर्यंत संसार में परिभ्रमण करते हैं ऐसा जान विद्वान मुनियों को मध्यस्थ रहकर धर्म को जानना ॥ ७ ॥ संयम से भ्रष्ट होजाने को सत्य व इस तरह उपदेश करते हैं कि अरे! तू प्राणियों की घात करता है और जीवों को मारो ऐसा कुबोध करता है, इस से तू हिंसा का भागीदारी है क्यों कि अज्ञान है अधर्म का अर्थी है तीर्थंकरोंने दुष्कराराधन होनेके ऐसा धर्म फरमाया है उन का मर्म भी सागर निर्वाह नहीं कर सकता है इस से तू हिंसाका का भेगकर धर्म

जानना है "धो गेह्र प० धर्म उ० मनाभित" उ० उपेक्षा करे आ० आज्ञा बाहिर ए० यह वि० हिंसक ि कहागया है त्ति० ऐसा बे० कहता हूं ॥८॥ कि० क्या इनने भो० महो म० स्वजनने क० करेंगा त्ति० ऐसा म० मानता हुआ ए० इनतरह ऐ० कितनेक वि० जाकर मा० मातको पि० पिताको हि० छोडकर णा० ज्ञातीयों को ध० और प० परिग्रहको वी० पराक्रम बतावे स० सावधान अ० अहिंसा सु० सुव्रती द० दान्ति प० देखकर दी० दीनहो, उ० पतकर प० पतित व० वशवर्ती का० कायर प० पर

उवेहइ ण अणाणाए एस विसण्णे वितट्ठे वियाहिते त्तिबेमि ॥ ८ ॥ किमणेणं भो जणण करिस्सामि त्ति मण्णमाणा एवं एग विदित्ता मातरं पितरं हिच्चा णातओ य परिग्गहं वीरायमाणे समुट्ठाए अविहिंसा सुव्वया दंता, पस्स दीणे उप्पइए पडिवयमा

की उपेक्षा करता रहता है, और विषयासक्त पनकर हिंसा में तत्पर रहता है ऐसा मैं कहता हूं ॥ ८ ॥ कितनेक वैराग्य प्राप्त होने समय मातापिता स्वजन आदि का जानते हैं कि ये मुझको क्या काममें आवेंगे ऐसा जान धन स्वजन का सर्वथा त्याग करके शूरपना से दीक्षा ग्रहण करते हैं, अहिंसा सत्य आदि पवित्र नियमों का आचरण करते हैं और जीतेन्द्रिय बनते हैं फीर दीन पनक संयमधर्म से भ्रष्ट होते हैं विषय कषाय के वश कायर पुरुष व्रत का भंग करते हैं वे सत्त्वहीन भ्रष्ट मनों जगत में बहुत अपकीर्ति के पात्र बनते हैं, और लोको भी बोलते हैं कि देखो! यह साधुता से भ्रष्ट हो भटकता फीरता है ॥ ९ ॥

ज० जन मू० प्राविग्नसक म० होवे, अ० अथ पे० कितनेकको सि० श्लाप पा० सराब म० होवे, ने० व म० साधु म रहकर स० भ्रष्टहोवे ॥ ९ ॥ पा० देखो ए० कितनेक स० उग्रविहारीकेसाथ भ० शिथिलाचारी, ण० नि तके साथ, अ० अविनीत, प० प्रतिके साथ अ० अव्रति द० मोक्षार्थी के नाथ अ० अमोक्षार्थी ॥ १० ॥ अ० आचारके प० पण्डित मे० मेधावी णि० निवर्ती अर्थ वी० वीर आ० आगमसे स० सदा प विचरे त्ति० ऐसा कहता हूं ॥ ११ ॥ *

ण । वसट्टा कायरा य जणा लूसगा भवंति' अहमेगेसिं सिलोए पावए भवति, से समणा भविता समणविब्भते ॥ ९ ॥ पासहेगे समन्नागएहिं असमन्नागए णममाणे हिं अणममाणे, विरतेहिं, अविरते, दविएहिं अदविए ॥ १० ॥ अभिसमेच्चा पण्डि ए मेहावी णिट्ठियट्ठे वीरे आगमेण सया परक्कमेज्जासि त्तिबेमि ॥ ११ ॥ इति धूता स्यमज्झयणस्स—चउत्थो उद्देसो सम्मत्तो * *

कितनेक पुण्यहीन उग्रविहारी के साथ रहकर भी प्रमादी बनजाते हैं व्रती की साथ रहकर भी अव्रती रहते हैं तथा पवित्र पुरुषों की साथ रहकर अपवित्र रहते हैं ॥ १० ॥ ऐसा समझके पण्डितों को विषय ... मुक्त हो जिनराज वच के उपदेशानुसार सदैव प्रवर्तना ऐसा मैं कहता हूं इति धूताख्य अध्य यन का चतुर्थ उद्देशा समाप्त हुवा इस उद्देशा में तीन गर्व का त्याग करने का कहा जो गर्व रहित होगा वह उपसर्ग सहन करेगा इस लिये आगे उपसर्ग सहन करना और महिमा को नहीं वांछना सो बताते हैं

से० वे गि० गृहों में गि० गृहान्तर में, गा० ग्राम में गा० ग्रामान्तर में न० नगर में न० नगरान्तर में ज० देशमें ज० देशान्तरमें स०है ए० कितनेक ज० मनुष्य लू० उपसर्ग कर्ता भ० होते हैं अ० अथवा फा० स्पर्श फु० स्पर्शते हैं ते० उन फा० स्पर्श से पु० स्पर्श हुवा धी० धैर्यवन्त अ० सहन करे ओ० अकेला स० समदृष्टि ॥ १ ॥ द० दया लो० लोककी जा० जान करके पा० पूर्वके, प० पश्चिम के, द० दक्षिण के, उ० उत्तर आ० कहे वि० विभाग कि० करे वे० ज्ञानी ॥ २ ॥ से० वे उ० सावधान हुवे

से गिहेसु वा गिहतरेसु वा, गामेसु वा गामतरेसु वा, नगरेसु वा नगरंतरेसु वा, जणवएसु वा, जणवयंतरेसु वा, सतेगतिया जणा लूसगा भवंति, अदुवा फासा फुसंति ते फासे पुट्ठो धीरो अहियासए ओए समियदंसणे ॥ १ ॥ दयं लोगस्स जाणित्ता पाईणं पडीणं, दाहीणं, उदीणं, आइक्खे विभये किट्टे वेयवी ॥२॥ से उट्ठिएसु वा अणुट्ठिएसु वा

साधु को गृहस्थ के घरों में तथा घर की आसपास, ग्राम में तथा ग्राम की आसपास, नगर में तथा नगर की आसपास, देश में तथा देश की आसपास कोई उपसर्ग देवे या अन्य कोई उपसर्ग आवे तो धैर्य धारण करके सम्यक् दृष्टी बन करके सब सहन करना ॥ १ ॥ पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, व उत्तर दिशा के स्थलों में रहे हुवे प्राणियों पर दया करके ज्ञानी मुनिको गृहस्थ धर्म तथा साधु धर्म के विभाग करके अलग२ समझाना॥२॥

णो० नहीं प० परकी अ० अशातना करे णो० नहीं अ० अन्य पा० प्राणी भू० भूत जी० जीव स० सत्व की आ० अशातना करे से० वे अ० अशातना नहीं करता हुआ अ० अन्य पास अशातना नहीं कराता व० मरते हुवे पा० प्राणी भू० भूत जी० जीव स० सत्वको ज० जैसे दी० द्वीप अ० आश्रय भूत ए० ऐसा से० वे म० होवे स० शरणभूत म० महामुनि ॥ ८ ॥ ए० ऐसे से० वे उ० सावधान हुवे ठि० स्थितात्मा अ० अक्रोधी अ० अचल च० चलित अ० संयममें स्थिर प० सर्वे मैं० भाव पे०

अत्ताणं आसाइज्जा, णो परं आसाइज्जा, णो अन्नाइं पाणाइं, भूयाइं, जीवाइं, सत्ताइं आसाएज्जा से अणासादए अणासादमाणे वज्झमाणाणं पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ता णं जहासे दीवे असंदीणं एवं से भवति सरणं महामुणी ॥ ५ ॥ एवं से उट्ठिए ठि यप्पा अणिहे अचले चले अबहिल्लेस्से परिव्वए, संखाय पेसलं धम्मं दिट्ठिमं परिणि व्वुडे ॥ ६ ॥ तम्हा सगं—ति पासह गंथेहिं गढिया णरा विसण्णा कामक्कता तम्हा

आत्मा का नुकसान करे, न किसी प्राण, भूत, जीव, सत्व को नुकसान करे वे सब दुःखी प्राण, भूत, जीव, सत्व को समुद्र में द्वीपवत् आधारभूत बनजाते हैं ॥ ९ ॥ इस लिये साधु आत्मा को स्थिर कर, अक्रोधी बन परिषहों से अचल रहकर, एक स्थानपर स्थिरवास नहीं करते हुवे संयम में ध्यान रखकर प्रवृत्ति करे क्यों कि जो पवित्र धर्म को ज्ञान क्रिया करनेवाले वे वे ही मोक्ष को प्राप्त होते हैं ॥ १ ॥ इसलिये अहो मुनि ! तुम प्रपंच में फसना नहीं क्यों कि धन एदि अनेकों

अच्छा प० धर्म दि० देखकर प० शीतल हुवे ॥ ६ ॥ त० इसलिये सं०संगम ति० एसा पा०देखो गं०ग्रन्थ में ग० गृद्धि ण० मनुष्य वि० खुता हुवा का० काममें गृद्धि, त० इसलिये लू० रुक्ष णो नहीं प० डरे नहीं ॥ ७ ॥ ज० जिसको यह आ० आरंभ स० सर्वता स० सर्व प्रकार सु० अच्छी तरह जान होकर छोड़ा भ० होते हैं जि० जिसमें यह लू० हिंसक णा० नहीं प० भासपाते हैं से० वे वं० वमन किये को० क्रोध मा० मान मा० माया लो० लोभ, ए० निश्चय ए० इन से तु० तोड़नेवाले सि० कहे हैं त्ति० ऐसा बे० मैं कहता हूं ॥ ८ ॥ का० शरीर का वि० घातकरना सं० संग्राम का अग्र वि० कहा है से० वे मु

लूहओ णो परिविचसेज्जा ॥ ७ ॥ जस्सिमे आरम्भा सव्वतो सव्वत्ताए सुपरिण्णाया भवंति, जेसि मे लूसीणो णो परिवितसंति, से वंता कोहं च माणं च मायं च लोभं च एस तुट्टे वियाहिते-त्तिबेमि ॥ ८ ॥ कायस्स वियाघाए संगामसीसे वियाहिए से

अनेक कामना से पीड़ित हो दुःखी होते हैं इस लिये साधु को संयम से चलित नहीं होना ॥ ७ ॥ जिन पापकर्मों से अज्ञानी जन निरत रहते हैं, उन पापकर्मों को दुःख के हेतु जानकर ज्ञानी मन दूर करते हैं वे पुरुष क्रोध, मान, माया तथा लोभ आदि का वमन करते हैं और वे ही कर्म बन्ध से मुक्त होते हैं ऐसा मैं कहता हूं ॥ ८ ॥ शरीर का नाश करना यही संग्राम का अग्रभाग-विजय स्थान है और वे ही मुनि

निश्चय पा० पारगामी मु० साधु परिसह ...
वांच्छे का० काल व० जहांतक स० शरीरका भ० भेदहोवे त्ति० ऐसा कहता हू ॥ १ ॥

हु पारंगमे मुणी अविहम्ममाणे फलगावयट्ठि कालोवणीते कंखेज्ज कालं जाव सरीर भेआ त्तिबेमि ॥ १ इति धूताख्यमज्झयणस्स पञ्चम उद्देसो इति धूताख्यं छट्ठ मज्झयण सम्मत्त

पारगामी हैं इस लिये मुनि परिसह उपसर्ग से निडर बन फलकेके पटिये की माफक तिष्ठते हैं जहांतक शरीर का नाश हो वहांतक काल को वांच्छते हुवे रहते हैं ऐसा मैं कहता हूं ॥ १ ॥ इति धूताख्य षष्ठ अध्ययन संपूर्ण हुआ

## ॥ महापरिज्ञानामक सप्तम मध्ययनम् ॥

(इद सप्तोद्देश मध्ययन व्यवच्छिन्नम्)

सात उद्देशावाला यह सातवां मध्ययन विच्छिन्न हुआ ऐसा कहा जाता है कि, श्री देवर्द्धिगणिने जब यह सूत्र पुस्तकारूढ किया तब इस मध्ययन में कितनीक चमत्कारी विद्या जैसे वैसे की पासजाने से लाभ के बदले गेरलाभ होवे ऐसा विचारकर लिखना बंध रखा चाहे सो हो परंतु अपना पंच मागये यह उत्तम मध्ययन विच्छिन्न हुआ × + × × + +

# विमोक्ष नामक मष्टमध्ययनम्

मे० अब रे० मैं कहता हूं ग० जब साधु को अ० शाक्यादि को अ० अन्न पा० पानी, खा० खादिम, सा० स्वादिम, व० वस्त्र प० पात्र, क० कम्बल, पा० रजोहरण, णो० नहीं, पा० देवे णो० नहीं, निमंत्रण करे णा० नहीं, कुज्जे वे० वैयावच प० परम आ० आदर पूर्वक त्ति० ऐसा बे० कहता हूं ॥१॥ धु० करे प० निश्चय में ए० यह जा० जाणो अ० अन्न जा० यावत् पा० रजोहरण, ल० मिले णा० या णा० नहीं ल०मिले भु० भोगा णा० नहीं भोगा पं० रस्ता वि० आना उ० उल्लंघ कर वि० अनगार ध० धर्म

से बेमि—समणुन्नस्स वा असमणुन्नस्स वा असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा वत्थं वा, पडिग्गहं वा कम्बलं वा, पायपुंछणं वा, णो पाएज्जा, णो णिमंतेज्जा णो कुज्जा वेयावडियं, परं आढायमाणे त्ति—बेमि ॥ १ ॥ “धुव चेतं जाणेज्जा असणं वा, जाव पायपुंछणं वा, लभिया, णो लभिया, भुंजिया, णो भुंजिया, पंथं वियत्तुणवि उक्कम्म”

अब मैं कहता हूं कि अहो मुनि! स्वमति पार्श्वस्थ साधु तथा मतांतरी को मेरी आदरपूर्वक- आहार, पानी मीठाई, मेवा, मुखवास, कपडे, पात्र कम्बल, रजोहरण, इत्यादि कुच्छ भी वस्तु कदापि देना नहीं आमंत्रण करना नहीं और उन की वैयावृत्य भी करनी नहीं ऐसा मैं कहता हूं ॥ १ ॥ काई श्रमणादि या

श्रो भाषरता स० आते प० माते पा० देते धि० आरंभगकरे कु० करे वे० वैयावृत्य प० उत्कृष्ट अ० निरा दार रहना चि० ऐसा बे० कहता हू ॥ २ ॥ इ० यहां ए० कितनक को आ० आचार गो० गोचर नहीं सु० सुणे होवे म० होते हैं ते० वे इ० यहां मा० आरंभार्थी, अ० कहते हैं इ० मारो प्राणी को पा० घात करने इ० मारतेको भी स० अच्छा जाने ते अ० अयथा अ० विना दिया मा० लेवे अ० अयथा वा० वचन से वे० विविध प्रकार बोले ते० वे म० यथा अ० है लो० लोक ण० नहीं लो० लोक धु०

विभत्तं धम्म झोसेमाणे समेमाणो, पलेमाणे पाएज्जात्रा, णिमंतेज्जात्रा कुज्जा वेयावडिय परं अणाढायमाणे त्ति—बेमि ॥ २ ॥ इह मेगासिं आयारगोयर णो सुणिसते भवति । ते इह आरम्भट्ठी अणुवयमाण "हणपाण" घायमाणे, हणतो यावि समणुजाणमाणे अदुवा अदिन्न मायति अदुवा वायाओ विप्पउजंति, त जहा—अत्थिलोए, णत्थिलोए, धुवलोए, अधुवलोए, सादिएलोए, अणादिएलोए, सपज्जवसितेलोए, अपज्जवसितेलो

पराक्रिक को कि भद्रो साधु तुम प्रिय कर मानो कि तन को आहार मिला होवे या नहीं तुमने खाया होवे या न होवे तो पि तन इनार यहां आना रस्ता भये ग्य होवे तो भी आना इस तरह बोलकर भिन्न २ धर्म का आचरनेवाले मान्यादिक साधु कभी आते जाते कुच्छ भी देवे, आमंत्रण करे, चाकरी करे, या सत्कार करे तो भी मुनि को कबुल नहीं करना उन से सदैव अलग रहना ऐसा मैं कहता हू ॥ २ ॥ कित नेक पुरुषों को आचार ( अंगीकार करने योग्य ) गोचर ( प्रवर्तन करने योग्य ) की मालूम नहीं होने से

घर लो० लोक अ० अनुर लो० लोक सा० आदिसहित लो० लोक अ० आदि रहित लो० लोक स० अन्तसहित लोक अ० अनन्त लोक, सु० अच्छीक्रिया दु० बुराक्रिया, क० धर्म काम, पा० पापकाम सा० साधु है अ० असाधु है सि० मुक्ति है अ० मुक्ति नहीं है, णि० नरक है अ० नरक नहीं, ज० जो यह वि विविध प्रकार बोलते धा० प्यारा धर्म, प० प्ररूपणा करते हुवे प० यहां भी जा० जाणो अ० अकस्मात ए० ऐसे ते० उनका णो० नहीं सु० अच्छा अ० कहा सु० अच्छा परूपा ध० धर्म भ० होवे, से० व ज० जिनतरह

ए, सुकडेत्ति वा, दुक्कडेत्ति वा, कल्लाणेत्ति वा, पावेत्ति वा, साधूत्ति वा, असाधूत्ति वा, सिद्धीत्ति वा, असिद्धीत्ति वा, णिरएत्ति वा अणिरएत्ति वा,जमिणं विप्पडिवन्ना, "मामगंधम्मं" पन्नवेमाणा, एत्थवि जाणह अकस्मा । एवं तेसिं णो सुअक्खाए सुपन्नत्तेधम्मे भवति ।

से जहेतं भगवया पवेदितं आसुपन्नेण जाणया पासया अदुवा गुत्तीवइगोयरस्स

वे आरंभ के अर्थी होकरके अन्यधर्मीयों के वचन की नकल करके जीवों को मारते हैं, दूसरे से मराते हैं, और जीवों को मारनेवाले का अच्छा जानते हैं प्रशंसा करते हैं, अदत्तादान ग्रहण करते हैं, और अनेक प्रकारके अयोग्य वचन बोलते हैं, सो कहते हैं— एक कहे लोक है, दूसरा कहे लोक नहीं है, एक कहे लोक स्थिर है दूसरा कहे लोक अस्थिर है, एक कहे लोककी आदि है, अन्य कहे लोक अनादि है, एक कहे लोक का अंत है, दूसरा कहे अंत नहीं है, एक कहे अच्छा किया, दूसरा कहे बुरा किया, एक कहे इसमें धर्म है, दूसरा कहे इसमें पाप है,

म० भगवन्तने प० फरमाया आ० दीर्घ महावंतने आ० गान्ध पा० ऐसा अ० अथवा गु गुसरूँ गो वि
चारके वि० ऐसा भे० करता हूं ॥ ३ ॥ स० सर्वम स० धर्म पा पाप त० उ० को उ० भिर्ने ए
यह म० मेरा वि० विवेक ( भिन्नता ) वि० कहा ॥ ४ ॥ गा० ग्रा में अ० अथवा र० वनमें, ण नहीं

—चिंधामि ॥ ३ ॥ सव्वस्थ समयं पावं । तमेव उवतिकम्म , एस मह विवेगे वियाहिते
॥ ४ ॥ गामे अदुवा रण्णे, णेव गामे णेव रण्णे, धम्म मायाणह पवादित माहणेण

एक कहे यह साधु है, दूसरा कहे यह गृहस्थ है एकको मुक्ति है दूसरा को मुक्ति नहीं है एक को नरक है, दूसरा को नरक नहीं है ऐसे जगत् के मतान्तरों की कहांतक कथनी की जावे सब भिन्न २ श्रद्धा के धारक होते हुवे अपना २ धर्म स्थापते हैं उन को उत्तर देने के लिये इतना ही जानना आवश्यक है कि, तुम्हारा मत केवल युक्ति सिद्ध नहीं है इस तरह उन एकान्त वादियों के मत श्री वीतरागभगवान के मत जैसा निश्चयात्मक नहीं है क्यों कि वे किसी भी युक्ति करके सिद्ध नहीं होते हैं इस लिये पंडित मुनि वरों को चाहिये कि उन को यथार्थ उत्तर देवे, स्वधर्मोन्नति करे, यदि उत्तर देने में समर्थ न होय साधु ने दोनों को मौन रहना अच्छा है ॥ ३ ॥ उन मिथ्यादृष्टियों को साधु शान्ति से समझावे कि, सर्व धर्म में आ २ पापकर्म बताये हैं उन सब को मैंने छोड़दिये हैं यही मेरा तुम्हारे से विवेक [ भिन्नता ] कहता हूं ॥ ४ ॥ केवल ज्ञानी महा पुरुषों का फरमान है कि यदि विवेक होवे तो गाम में रहकर भी धर्म हो सकता है

र० वनमें प० धर्म भा० जानो प० फरमाया मा० महानने म० मुद्दिमानने ॥ ५ ॥ जा० यशामत ति० तीन उ० कहे मे० जिनसे इ० ये आ० आर्य सं० समझकर स० सावधान हुवे ॥ ६ ॥ जे० जो नि० निवर्ते पा० पाप क० कर्म से अ० अनिदान वे० वे वि० कहे ॥ ७ ॥ उ० ऊंची अ० नीची ति० तिरछी दि० दिशामें स० सर्वथा स० सर्वप्रकार प० निश्चय प० प्रत्येक जी० जीवोंसे क० कर्म स० आरंभ ॥ ८ ॥

महमया ॥ ५ ॥ जामा तिण्णि उदाहया, जेसु इमे आरिया संबुज्झमाणा समुट्ठिया ॥ ६ ॥ जे णिव्वुता पावेहिं कम्मेहिं, अणियाणा ते वियाहिया ॥ ७ ॥ उड्ढं अहे तिरिय दिसासु सव्वतो सव्वावति च णं पडियक्कं जीवेहिं कम्मसमारंभेणं ॥ ८ ॥ तं प

और वन में रहकर भी धर्म हो सकता है यदि विवेक न होवे तो गाम में भी धर्म नहीं होता है और जगल में भी धर्म नहीं होता है ॥ ५ ॥ भगवन्तने महाव्रत के मुख्य तीन भेद कहे हैं अहिंसा, सत्य और निर्ममत्व × इस में आर्य पुरुष समझके सावधान होते हैं ॥ ६ ॥ जो क्रोधादि पापकर्म से निवर्ते हैं, वे ही नियाणा रहित कहा ये गये हैं ॥ ७ ॥ ऊंची, नीची, व तिर्यक् दिशा में वा विदिशा में सर्व प्रकारसे प्रत्येक जीवों को कर्म समारंभ रहा हुवा है ॥ ८ ॥ ऐसा जान विद्वान पुरुषों किसी की भी पाप नहीं

× चोरी, मैथुन व परिग्रह ये तीनों निर्ममत्व में आमात हैं क्यों कि ये तीनों ममत्वभाव से होते हैं

ते उसे प० जानके मे० मेधावी णे० नहीं स० स्वयं ए० इतनी का० कायासे दं० घात स० करे, णे० नहीं दूसरे से ए० इतनी का० कायासे दं० घात स०करावे, णे०नहीं दूसरा का०कायासे ए०इतनी दं० घात स० करते को स० अच्छा जा० जाने. ॥ ९ ॥ जे० जो दूसरे ए० इतनी का कायासे दं० घात स० करते है तं० उनसे भी व० हम ल०शरमाते हैं॥१०॥ तं०उसे प०जानकर मे० मेधावी तं० उस वा०या दं० घात अ० दूसरा वा० या दं० घात णो० नहीं दे० इनसे दं० दंडाये सं० करे त्ति० ऐसा कहता हूं

रिण्णाय मेहावी, णेव सय एतेहिं काएहिं दंडं समारंभेज्जा, णेवण्णे एतेहिं काएहिं दंडं समारंभावेज्जा, णेवण्णे काएहिं एतेहिं दंड समारभंतेवि समणुजाणेज्जा ॥ ९ ॥ जेयण्णे एतेहिं काएहिं दंड, समारंभति तेसिंपि वयं लज्जामो ॥ १० ॥ तं परिण्णाय मेहावी तं वा दंडं अण्णं वा दंडं णो दंडेभि दंडं समारंभेज्जासि—त्तिबेमि ॥ ११ ॥

इति विमोक्खमज्झयणस्स पढमोद्देसो

करते हैं और करने को अच्छा भी नहीं जानते हैं. ॥ ९ ॥ साधु ऐसी घात करनेवाले से शरमिन्दे होते हैं ॥ १० ॥ उन घातकों को जानकर मर्यादावन्त तथा पापारंभ से डरनेवाले साधु पर आरंभ तथा अन्य किसी भी आरंभ को कदापि करते नहीं हैं ऐसा मैं कहता हूं ॥ ११ ॥ यह आठवा अध्ययन का प्रथम उद्देशा पूर्ण हुवा इस में अनाचार को छोडने का कहा जो अनाचार से बचते हैं वे अकल्पनीय वस्तु का त्याग करते हैं यह आगे बताते हैं

अभ्यादि चार प्रकारें का आहार पा प० वस्त्रादि चार प्रकारकी उपाधि णो० नहीं पा० देवे णो० नहीं पिं० आमंत्रण करि णो० नहीं कु करें वे० वैयावच णो० नहीं अ०मत्कार कर ऐसा दे० मैं करता हूं ॥ ४ ॥ पर्व धर्म आ० जाणो प० फरमाया मा० महात्मा प० बुद्धिवन्त सं० अच्छे साधु स० अच्छे साधु को अ० आहार आदि व० वस्त्रादि चारों पा देवे, पि० आमंत्रे कु० करे वे० वैयावृत्त प० परम आ० आदर पूरक त्ति० एसा वे० मैं करता हूं ॥ ५ ॥ * * *

म० मध्यम व० वयमें ए० ऐकेक सं० प्रति बोधना स सावधान हुवा ॥ १ ॥ सो० सुनके मे० मे

समणुन्ने समणुन्नस्स असणं वा (४) वत्थं वा (४) जाएज्जा णिमंतेज्जा कुज्जा वेयावडियं पर

आढायमाणे त्तिबेमि ॥ ५ ॥ इति—विमोक्खमज्झयणस्स—बीओ देसो *

मज्झिमेण वयसा, एगे संबुज्झमाणा समुट्ठिता ॥ १ ॥ सोच्चा मेधावी वयणं, पं

महावन्त महावीर प्रभुने फरमाये हुवे धर्म को समझो शुद्धाचारी साधु शुद्धाचारी साधु को आहार वस्त्रादिक देवे आमंत्रण देवे तथा आदर पूर्वक उन की वैयावृत्य भी करे ऐसा मैं कहता हूं ॥ ५ ॥ यह विमोक्ष नामक आठवां अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा इस उद्देशा में अकल्पनीय आहार ग्रहण करने की म नाई की आगे छोटी शंका मिटाने को कहते हैं + × +

—कितनेक पुरुष मध्यम वय में प्रतिबोध पाकर दीक्षा ग्रहण करते हैं ॥ १ ॥ चतुर पुरुषों को चाहिये कि,

पानी के व॰ वचन प॰ पण्डितों नि॰ धारे. ॥ २ ॥ स॰ समता में ध॰ धर्म अ॰ अरिहतने प॰ कहा ॥ ३ ॥ से॰ वे अ॰ नहीं मारनेवाले अ॰ नहीं हिंसा करने वाले अ॰ नहीं परिग्रह रखनेवाले णो॰ नहीं प॰परिग्रही है स॰ सर्व प॰ निश्चय लो॰ लोकमें णि॰छोडकर द॰हिंसा पा॰माणी पा॰ पापकर्म अ॰ नकरते ए॰ यह म॰ मोटे अ॰निग्रंथी, वि॰ कहाये है ओ॰ एकस्वरूप जु॰ संयम का से॰ सेवक च॰ उत्पात च॰ मरण ण॰ ज्ञाण करके ॥ ४ ॥ आ॰ आहार से च॰ वृद्धि हुवा दे॰ शरीर प॰

डियाणं निसामिया ॥ २ ॥ समयाए धम्मे आरिएहिं पवेदिते ॥ ३ ॥ से अणवकं समाणा अणतिवाएमाणा अपरिग्गहमाणा णो परिग्गहावेंति, सव्वावंति च णं लोगसिं णिहाय दंडं पाणेहिं पाव कम्म अकुव्वेमाणे एस महं अगंथे वियाहिए ओए जु तिमस्स खेयन्ने उववाय चवण च णच्चा ॥ ४ ॥ आहारोवचया देहा, परीसह पभं-

पंडितों का वचन श्रवण कर समता धारन करना ॥ २ ॥ आर्य श्री तीर्थंकर भगवान ने समता में धर्म कहा है ॥ ३ ॥ संयमी काम भोगों की इच्छा से निवृत्त हो करके न तो वे किसी जीवों की हिंसा करते हैं और न किसी प्रकार का परिग्रह रखते हैं इस लिये वे निष्परिग्रही कहलाते हैं, तथा किसी प्राणी को दुःख न देने से और पापकर्म नहीं करने से महा निर्ग्रन्थ कहलाते है ऐसे मुनि रागद्वेष का परित्याग करके आ- त्मरूप बनते हैं और संयम में निपुण हो करके जन्ममरण के ज्ञाता बन के पाप का परिहार करते हैं ॥ ४ ॥ इस शरीर की स्थिरता व वृद्धि आहार से ही है, तथापि अनेक प्रकार का परिषह व कष्ट आने

परिषह से भ० क्षीण पा० देखो ए० कितनेक स० सर्वेन्द्रियो व० असकारी ओ० आध्वास द० दयाको द० पाले ॥४॥ जे० जो सं० सन्निधान ( कर्म )के स० शस्त्र का खे० खेदज्ञ ( ज्ञान ) से०वे भि० साधु का० काला ब० बलज्ञ मा० मात्रज्ञ खे० क्षणज्ञ वि० विनयज्ञ स० समयज्ञ प० परिग्रहको अ० ममत्व नहीं करता का० कालोकाल क्रिया करते अ० अप्रतिबन्ध, दु० दोनोंको छि० छेदन करके णि० संयम पाले ते हैं, ॥ ६ ॥ तं० उन भि० साधु का सी० शीतकी फा० स्पर्श की प० वेदनासे गा० शरीर उ० कंपायमान

गुरा पासहेगे सव्विंदिएहिं परिगिलायमाणेहिं ओए दय दयाति ॥ ५ ॥ जे सन्निहाण सत्थस्स खेयन्ने से भिक्खू कालण्णे बलण्णे मायण्णे खणयण्णे विणयण्णे; समयण्णे प रिग्गहं अममायमाणे कालेणुट्ठाइ अपडिन्ने दुहओ छेत्ता णियाति ॥ ६ ॥ त भिक्खु

से इस का बल क्षीण होता है देखो कितनेक कातर मनुष्य परिषहों से सर्व इन्द्रियों क्षीण होते ही असमर्थ बन जाते हैं इसलिये पराक्रमी पुरुषों को आपात्त में भी दया को छोडना नहीं, ॥ ५ ॥ जो मुनि अपने संयम में कुशल होते हैं वे कालके, पराक्रम के, प्रमाण के, अवसरके, विनय के और धर्म के जाननेवाले होते हैं ऐसे मुनि परिग्रह की ममत्व का त्याग करके समय २ पर संयम की क्रिया करते हुवे रागद्वेष का छेदन करके निदान रहित संयम पालते हैं ॥ ६ ॥ कदाचित् शीत की अवस्थासे साधु का

प० अन्य गृहस्थ अ० अग्निको उ उज्वाले प० मज्वाले का० शरीर का आ तपावे प० विशेष तपावे । तं० उसे च० निश्चय भि० साधु प० देखके आ० जानकर आ० मनाकरे भ० मैं इसका सेवन नहीं करूंगा । वि० ऐसा बे० कहता हूं ॥ ८ ॥

जे० जो भि० साधु ति० तीनवस्त्र प० रखते हैं पा० पात्र च० चौथा त० उनका णो० नहीं ए० ऐसा भ० होवे च० चौथा व० वस्त्र जा० याचूंगा से० वे अ० एषणीक व० वस्त्र जा० याचे अ० जैसा प०

यात्रेज्जा वा पधारेज्जा वा त च भिक्खू पडिलेहाए आगमत्ता आणवेज्जा अणासेवणा ए त्तियामि ॥ ८ ॥ इति विमोक्खमज्झयणस्स—तइओदेसो सम्मत्तो

जे भिक्खू तिवत्थेहिं परिवुसिते पाय चउत्थेहिं तस्सण णो एव भवति चउत्थं व त्थ जाइस्सामि से अहेसणिज्जाइं वत्थाइं जाएज्जा, अहापरिग्गहियाइं वत्थाइं धारेज्जा

सुनकर कोई अन्य गृहस्थ अग्नि मज्वलित कर साधु का शरीर तपावे तो साधु उसे देखकर जानकर मनाकर देवे, और कहे कि मुझे अग्नि सेवन करना योग्य नहीं है ॥ ८ ॥ यह विमोक्ष नामक आठवा अध्ययन का तृतीय उद्देशा पूर्ण हुवा इस उद्देशा में गृहस्थ का भ्रमका संशय की निवृत्ति बतलाई आगे जो परिसह सहन न होवे तो साधु को वेहानसादि बालमरण करना यह आगे बताते हैं

जिस साधु को [1]एक पात्र और तिन वस्त्र रखना होवे उन को ऐसा विचार न होवे कि मुझे चौथा वस्त्र

[1] जिन कल्पी या अभिग्रहधारी मुनि के लिये

प्रश्नणियां न० वस्त्र धा० एसे धो० नहीं धो० धावे धो० नहीं र० रग पा० नहीं धो० धोया र० रंगा व० वस्त्र धा रखे अ० न छिपावे गा० ग्रामानुग्रामजावे ओ० इनके वस्त्र को, ए० ऐसे खु० निश्चय व० वस्त्र धा० धारीका सा० आचार है ॥ १ ॥ अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने उ० व्यतिक्रम र० निकल हे० शीतकाल गि० ग्रीष्म प० प्रतिपन्न हुवा अ० आशापूरना व० वस्त्र प० त्यागकर अ० अ धवा स० अच्छेरगुं अ० अथवा ओ० इसकारस रसुं अ० अथवा ए० एकरसु अ० अथवा अ० नहीं रखु

णो धोविज्जा, णा रएज्जा, णो धोत्तरत्ताइं वत्थाइं धारेज्जा, अपलिउंचमाणे गामंतरसु, ओ मचेलए । एयं खु वत्थधारिस्स सामग्गियं ॥ १ ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा उ वतिक्कंते खलु हेमंत गिम्ह पडिवन्ने अथापरिजुण्णाइं वत्थाइं परिट्ठविज्जा, अदुवा संतरुत्त रे, अदुवा आमचेल, अदुवा एगसाडे, अदुवा अचल, लाघवीय आगममाण । तव से

[illegible] यदि तीन वस्त्र पूरे न होवे तो [illegible] वस्त्र की याचना जहां मिले वहां करना जैसे निर्दोष वस्त्र मिले वैसा ही [illegible] परंतु उन वस्त्र को धोना नहीं, रंगना नहीं, धोये हुवे रंगे हुवे वस्त्र को धारन करना नहीं, ग्रामानुग्राम विचरत वस्त्र को छिपाना नहीं (ऐसा हलका वस्त्र रखना कि चोरका डरसे छि पाना न पडे) यह वस्त्र धारी का आचार है ॥ १ ॥ अब साधु को विचार होवे कि शीतकाल तो गया और ग्रीष्म ऋतु आन पहुंचा इस लिये पुराने वस्त्र परिठावे या शक्त्यानुसार उष्णकाल में भी शीतका [illegible]

ला० हल्कापना आ० मास होता है, त तप से० व भ० मास भ० होता है अ जो प० एसा भ० भगवन्तने प कहा त० उनकोही भ० जानकर स० सर्व स० सर्वप्रकारे स० तुल्य स० जाने ॥ २ ॥ ज० जिस भि० साधु को ए० एसे भ० होवे पु स्पर्शाया ख० निश्चय भ० मैं हूं ना० नहीं समर्थ सी० शीतस्पर्शादि अ० सहने को से० वे व० बुद्धिवन्त स० सर्वथा स० साधु का प० प्रज्ञाने अ०

अभिसमन्नागए भवति । जमेयं भगवया पवेदितं तमेव अभिसमेच्चा सव्वतो सव्वत्ताए सम्मत्तमेव समभिजाणिया ॥ २ ॥ जस्सणं भिक्खुस्स एवं भवति—पुट्ठो खलु अहमंसि नालमहमंसि सीयफासं अहियासित्तए से वसुमं सव्व समण्णागयपण्णाणेणं अप्पाणेणं केइ अकरणाए आउट्टे तवस्सिणो हु तं सेयं जं सेगे विहमादिए, तत्थावि त

होव तो तीनों रखे या तीन में से एक परिठावे दो रखे, या दो परिठावे एक रखे, या बिलकुल नहीं रखे ऐसा करने से निर्ममत्व धर्म की प्राप्ति होती है इस से लाघवपना आता है इसको भी भगवन्तने तप कहा है यह सब भगवान् का फरमान जानकर वस्त्र रखने में और वस्त्र न रखने में समभाव रखना ॥२॥ जिन साधु को ऐसा विचार होवे कि मुझ को शीत आदि[1] परिसह प्राप्त हुवे हैं इन को मैं सहन करने में असमर्थ हूं तब उस स्थान पर साधु को वैहानसादिक मरण करना उचित है यहाही उस की काल पर्याय है । जैसे भक्त परिज्ञादिक काल पर्याय वाला मरण हितकर्ता है वैसे ही यह वैहानसादि मरण हित

१ आदि शब्द से स्त्री विगेरे परिसह लेना

अरनो क० काश्यपी भ० भक्ताप आ० आदर त० तपस्वी का हु० निश्चय त० यह से० श्रय ज० मा म० एक वि० वहानमादि म० गाढी स० उन की का०काल पयाय से०वेभी त० वहां वि० अन्त कर्ता इ० इस नर वि विमारमरीत स्थान हि०हितकर सु० सुखकर स०योग्य णि०कर्म क्षयकर अ० साथ आनेवाला ति० एमा पे० कहताहूं ॥ १ ॥ * * *

से० वे भि० साधु दो० दा व० वस्त्र प० धारनकिये पा० पात्र तीसरा हो त० उसको णो० नहीं प०

रस कालपरियाए, सेवि तत्थ विअंतिकारए, इच्चेतं विमोहायतण, हिय, सुह, खम, णिस्सेयस, आणुगामिय-तियेमि ॥ ३ ॥ इति-विमोक्खणाममज्झयणस्स चउत्थो उद्देसो समत्तो * *

से भिक्खू दोहिं वत्थेहिं परिवुसिते पाय तइएहिं तस्सणं णो एवं भवति बातिय

कर्ता है। इस तरह मरण करने वाला मुक्ति को जाता है इस तरह यह वेहानमादि मरण मोह रहित पुरुषों का हित है, हित कर्ता है, सुख कर्ता है, योग्य है, कर्मक्षय करनेवाला है और उस का फल भी भवा न्तर में साथ रहता है ऐसा मैं कहता हूं ॥ ३ ॥ यह विमोक्ष नामक आठवा अध्ययन का चतुर्थ उद्देशा पूरा हुवा आगे मुनि को व्याधि उत्पन्न होनेपर भक्त प्रत्याख्यान कहते हैं

किसी साधु का एक पात्र और दो वस्त्र रखने का नियम होवे तो उन को ऐसा विचार नहीं होता है

एता भ० होवे, त० तीसरा ष० वस्त्र जा० याचूंगा से० वे अ० एषणिक ष० वस्त्र जा० यावत् ए० ऐसे स० निश्चय त० उन भि० साधुका सा० आचार है ॥ १ ॥ देखो इसही अध्ययनका चतुर्थ उद्देशामें॥ २ ॥ अ० जित भि० साधुका ए० ऐसा भ० होवेपु० स्पर्श अ० निर्बल भ० मैं हुं न० नहीं समर्थ अ मेट् गि०

वत्थ जाइस्सामि। से अहेसणिज्जाइ वत्थाइं जाएज्जा जाव एव खलु तस्स भिक्खुस्स साम गिय ॥ १ ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा उवकंते खलु हेमंते गिम्हे पडिवन्ने अहा प रिजुन्नाइं वत्थाइ परिट्ठवेज्जा, अदुवा संतरूत्तरे, अदुवा ओमचेलए, अदुवा एगसाडे अदुवा अचेले, लाघवियं आगममाणे तवे से अभिसमण्णागए भवति। जहेय भग वता पवेदितं तमेव अभिसमेच्चा सव्वतो सव्वत्ताए सम्मत्तमेव अभिजाणिया ॥ २ ॥

कि मैं तीसरा वस्त्र याचूं यदि इतने वस्त्र न होवे तो जैसा मिले वैसा शुद्ध निर्दोष वस्त्र याच कर धारन करना यही साधु का आचार है ॥ १ ॥ जब साधु को ऐसा जानने में आवे कि, शीतकाल व्यतीत हुआ है और ग्रीष्म ऋतु आगइ है इस लिये मेरी पास के दो वस्त्र में से खराब वस्त्र डाल देउं, और अच्छा वस्त्र रखुं, या लम्बे को कमी करूं या तो एक ही वस्त्र रखुं या वस्त्र रहित रहूं ऐसा करने से लाघव धर्म होता है यह तप कहाया गया है इस लिये जैसा भगवानने फरमाया हैं वैसा जानकर वस्त्र रहितपने में और वस्त्र सहितपने में समभाव रखना ॥ २ ॥ जिस किसी साधु को ऐसा होवे कि मैं रोगादि कारण

पता प्रा मं० माना भि० भिक्षाचरी प्र० ग० गमनकरनेको से० वे ष० निश्चय प० शोभेपालेको प० अन्य प्र० सन्मुखकर अ० अशनादि चारों आहार, आ० ऐसाकर द० देवे से० वे पु० पहिले आ० देखे आ० आयुष्यमान गा० गृहपाते णो० नहीं ख० निश्चय मे० मुझे क० करे अ० सन्मुखलाया अ० अशनादि चारों, भो० भोगवना पा० लेना, अ० अन्य ए० ऐसा प्रकार का ॥१॥ ज० जिस भि० साधु का अ० यह प० आचार अ० मैं प० प्रतिज्ञायुक्त अ० अप्रतिज्ञासे गि० रोगी अ० निरोगीसे अ० वांछे सा साधर्मी की० करने

जस्सण भिक्खुस्स एवं भवइ, पुट्ठो अयलो अहमासि नालमहमासि गिहतरसंकमण भिक्खायरिय गमणाए, से षेवं वदतस्स परो अभिहड असण वा (४) आहट्टु दलएज्जा से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसतो गाहावती णो खलु मे कप्पइ अभिहड असण वा (४) भोत्तए वा पायए वा अन्नेवा एय-प्पगारे ॥ ३ ॥ जस्सणं भिक्खुस्स अय पगप्पे अह च खलु पडिण्णत्तो अपडिण्णत्तेहिं, गिलाणो अगिलाणेहिं अभिकंख साहम्मिएहिं

से अशक्त हुवा हूं परोपर गोचरी के लिये जाने को समर्थ नहीं हूं ऐसे वचन सुनकर कोइ गृहस्थ चारों प्रकार के आहार सन्मुख लाकर देवे तब वह साधु उसे पहिले से ही कहे कि अहो आयुष्य मान गृहस्थ सन्मुख लाया हुवा आहार वस्त्र पात्रादि मुझे ग्रहण करना तथा भोगवना कल्पता नहीं है ॥३॥ जिस साधु को ऐसी प्रतिज्ञा होवे कि मैं बीमार होजाऊं तोभी मेरी सेवा करने को दूसरे को कहूं नहीं किन्तु मेरे सरीखे आचार पालनेवाले निरोगी साधु का कम निर्जरार्थ मेरी सेवा करने की इच्छा होवे तो मैं

के० वैयावच सा० इच्छूगा में अ० मैं या० या अ० अमातिशावंस प० मातिशावत की अ० अरोगी ग रोगीकी अ० भीष्माकर सा० स्वधर्मी की कु० करूंगा वे० वैयावच क० करूंगा ॥ ४ ॥ आ० करके प० परिज्ञा आ० लादेवूंगा अ० लायाहुवा मा० भोगवुगा म० करके प० परिज्ञा आ० लादवूंगा अ० लायाहुवा णो० नहीं सा० भोगवूंगा आ० कर० प परिज्ञा णो० नहीं आ० लादेवुगा अ० लयाहुवा सा० भोगवूंगा आ० करके प० परिज्ञा णो० नहीं अ० लादवूगा आ० लयाहुवा णो० नहीं सा भोगवूंगा ए ऐसी तरह आ०

कीरमाण वेयावडिय साइज्जिस्सामि, अहं वा वि खलु अप्पडिण्णत्तो पडिण्णत्तस्स अगिलाणो गिलाणस्स, अभिकंख साहम्मिअस्सकुज्जा वेयावडियं करणाए ॥ ४ ॥ आहट्टु परिण्ण आणक्खेस्सामि आहडं च सातिज्जिस्सामि—( १ )आहट्टु परिन्न आणक्खेस्सामि आहडं च णो सातिज्जिस्सामि ( २ ) आहट्टु परिन्न णो आणक्खेस्सामि, आहडं च

कबुल करूंगा यदि मैं निरोगी हुवा तो मैं स्वयं मेरे कर्म की निर्जरा के लिये मेरे सदृश आचार पालनेवाले साधु की उन का उपकार के लिये सेवा करूंगा ॥ ४ ॥ साधु चार प्रकार से नियम धारण करते हैं; जिसकी चौभंगी ( १ ) अशनादि वस्तु मैं दूसरे के लिये लाऊंगा और दूसरा मुझे ला देवे तो मैं भोगवूंगा ( २ ) मैं दूसरे के लिये ला देवूंगा, दूसरे का लाया हुवा मैं भोगवूंगा नहीं ( ३ ) मैं दूसरे को ला देवूंगा नहीं दूसरे का लाया हुवा भोगवूंगा ( ४ ) दूसरे को मैं न ला देऊंगा और न लाया हुवा भोगवूंगा

पयारुपिय प० धम्म सु० पालताहुवा स० क्षान्त वि० विरति सु० अच्छी स० समाधि ले० लेश्या त० तहां भी त० उसकी का० कालपर्याय से० वे त० तहां वि० अन्तकरे इ० ऐसी तरह इ० यह वि० विगतमोही पुरुषों का स्थान हि० हितकर सु० सुखकर ख० योग्य णि० कर्मक्षय करने वाला अ० भवान्तर में साथ आनेवाला त्ति० ऐसा बे० कहता हूं ॥ ५ ॥ + +

सातिज्जिस्सामि (३) आहट्टु परिण्णं णो आणक्खेस्सामि, आहडं च णो सातिज्जिस्सामि (४) एवं से अहाकिट्टियमेव धम्मं समहिजाणमाणे संते विरते सुसमाहितलेसे, तत्थवि तस्स कालपरियाए, से तत्थ विअंतिकारए, इच्चेतं विमोहायतणं, हितं, सुहं, खमं, णिस्सेसं, अणुगामियं तिबेमि॥२॥ इति विमोक्ख मज्झयणस्स—पंचम उद्देसो सम्मत्तो

इन चारों में से किसी एक प्रकार की प्रतिज्ञा नियम धारण करे उसे पूर्णतया पालन करे. संकट प्राप्त होने पर भी शांतता और वीरता धारण करे. असह्य दुःख प्राप्त होने पर अनशन कर देह का परित्याग करे परन्तु प्रतिज्ञा का भंग नहीं करे इस तरह करनेवाले को काल पर्याय है यह ही मुनि कर्मक्षय करनेवाला है यह धर्म निर्मोही पुरुषों का स्थान है, हित कर्ता है, सुख कर्ता है, योग्य है, कर्मक्षय करनेवाला है, और उस का धर्म भवान्तर में भी साथ आनेवाला है ॥ ५ ॥ यह विमोह नामक अष्टम अध्ययन का पंचम उद्देशा पूर्ण हुवा

जे० जो भि०साधु प० एक व० वस्त्र प० धारन करे, पा० पात्र दूसरा त० उसको नो०नहीं ए० ऐसा भ होवे वि० दूसरा व० वस्त्र जा० याचूंगा से० वे अ० शुद्ध वस्त्र मा० पावे अ० जैसा ग्रहण किया व० वस्त्र धा०रखले जा० जावत गि०ग्रीष्म प० आये अ०यथापरिजीर्ण वस्त्र, प० न्हाखे अ० अथवा ए० एक सा०वस्त्र, अ० अथवा अ० वस्त्र रहित ला० हलकापणा आ०मानता मा० यहांतक स सम्यक् प्रकारे स० समजावे ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसे भ० होवे ए० एक अ० मैं हूं नो० नहीं मे०मेरा अ० है को०

जे भिक्खू एगेण वत्थेण परिवुसिते पायबितिएण, तस्स णो एवं भवइ बितिय वत्थं जाइस्सामि से अहेसणिज्जं वत्थं जाएज्जा, अहापरिग्गहियं वा वत्थं धारेज्जा, जाव गिम्हे पडिवन्ने अहापरिजुन्नं वत्थं परिठवेज्जा, अदुवा एग साडे अदुवा अचेले लाघविय आगममाणे, जाव सम्मत्तमेव समभिजाणिया, जस्सणं भिक्खुस्स एवं भवति एगो अहमंसि नो मे अत्थि कोइ नया अहम वि कस्स एवं से एगागिणमेव अप्पा

जिस साधु को एक पात्र के साथ एक ही वस्त्र रखने की प्रतिज्ञा होवे उन को ऐसी चिन्ता नहीं होवे कि मैं दूसरा वस्त्र रखूं यदि वह वस्त्र न होवे तो शुद्ध वस्त्र की याचना करे. जैसा मिले वैसा पहिने उष्ण ऋतु आने पर उस को परिठवे या तो एक वस्त्र से ही रहे या वस्त्ररहित रहे तथा विचार करे कि, मैं एकिला हूं मेरा कोइ नहीं है ऐसी एकत्व भावना भावता हुवा अपना सदृश सब को जाने तप से साधन

कोइ भ० नहीं भ० में भी क० किसका प० ऐसीतरह प० एकाकी मे० मैं अ० आत्माको जा० जाने ला० इस्कापना भा० करनाहुवा त० तप से० वे भ० भास भ० होवे ज० जैसा भ० भगवन्तने प० फरमाया स० तैसाही अ० जानकर स० सर्वत स० सरीखे स० सब जा० जान ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु भि साध्वी अ० असनादि चारों महार अ० भोगवते हुवे णो० नहीं वा० बायेगालमे द० दाहिण गालमें स० चलावे, आ० स्वादलेन को द० दाहीण गालमे आ० बायेगाल में स० घसावे आस्वादने केलिये ला० इस्कापना आ०

ण समभिजाणिज्जा लाघविय आगममाणे तवे से अभिसमन्नागए भवइ जहेय भगवया पवेइय तमेव अभिसमेच्चा सव्वओ सव्वत्ताए समत्तमेव समभिजाणिया ॥ १ ॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा असण वा ( ४ ) आहारेमाणे णो वामाओ हणुयाओ दाहिण हणुय संचारेज्जा आसाएमाणे दाहिणाओ वा हणुयाओ वामं हणुय णो स चारेज्जा आसाएमाणे, से अणासायमाणे लाघविय आगममाणे तवे से अभिसमन्नागए भवइ, जहेय भगवता पवेइयं तमेव अभिसमेच्चा सव्वतो सव्वत्ताए समत्त मेव

पय की माप्ति होती है और इसी मे तप होता है इस लिये जैसा भगवानने कहा वैसा ही जानकर समभाव रखना ॥ १ ॥ साधु और साध्वी आहारादि करते समय स्वाद लेने के लिये ग्रास ( कवल ) एक गाल से दूसरे गाल में फिरावे नहीं ऐसा करने से कर्म हल्के होते हैं तप निपजता है ऐसा किये बाद इस का भावे

मास त० तप स०ने अ० मास म०होने न० मैं, भ०भगवंत प० फरमाया त उसको अ० आनरक स० सर्व था म सबवः स० समभावसे स समजाने ॥ २ ॥ ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसे भ० होवे से० मत्र गि० अशक्त हूं ख० निश्चय अ० मैं इ० इस स० मक्त णा नहीं स० समर्थ हू इ० इस स० शरीर को अ० अनुक्रम से प० छोडे स० वे अ० अनुक्रम से आ० आहार स० घग करके क० कषाय प० पतली करके स० समाधिवंत होवे फ० काए पन्यिनत् उ० सावधान हुवे भि० साधु अ० संताप रहित अ० प्रवेशकरे गा०

समाभिजाणिया॥ २॥जस्सण भिक्खुस्स एवं भवतिसे गिलाणामि चखलु अहं इमामि समए णा संचाएमि इमसरीरग अणुपुव्वेण परिवहित्तए से अणुपुव्वेण आहारंसवट्टेज्जा, आहारं अ णुपुव्वेणे संवट्टित्ता कसाए पयणुकिच समाहियच्चे फलगावयट्ठी उट्ठाय भिक्खू अभिनिव्वु

मान नहीं करना समभाव में रहना ॥ २ ॥ जिन मुनि को ऐसा मालूम होवे कि मेरा शरीर अतीव थक गया है मैं संयम की क्रिया बराबर नहीं कर सकता हूं उन मुनि को अंतिम सुधारणा के लिये द्रव्य आहार और भाव से कषाय को प्रतिदिन घटाना काष्ट के पाटिये की मुवाफीक शरीर का ममत्व त्यागना विधि। रोग से घबरायाहुवा जा कर उसी समय सावधान हो सर्व चिन्ता का त्याग करना धैर्य धारण कर इंगित (सागारी) संथारा करना जिस की विधि यह है ? जो मुनिश्री मोक्ष गये ऐसा गाम में २ यहां कर

ग्राममें न० नगर में खे० खेरे में, क० कबड में, म० मंडप में प० पाट्न में, दो० द्रोणमुखमें, आ० आगर में, आ० आश्रम में, स० सन्निवेश में, णि० निगम में, रा० राजधानीमें त० तृण जा० पाके त० तृण जा० पाकर म० वे स० उसे मा० मात्रा से ए० एकान्त म० जाव ए० एकान्त म० जाकर अ० अल्प अण्डे अ० अल्प प्राणी, अ० अल्प बीज अ० अल्पहरी, अ० अल्प ओस अ० अल्प पानी, अ० अल्प कीडी नगरे प० फूलन द० पानी म० मट्टी म० मकडे स० इनके समे पे० देखकर प० पूजकर त०

उच्चे अणुपविसित्ता, गाम वा, नगर वा, खेड वा, कव्वड वा, मडंब वा, पट्टण वा, दोणमुह वा आगरं वा, आसमं वा, सण्णिवेसं वा, णिगम वा रायहाणि वा, तणाइं जाएज्जा तणाइं जाइत्ता से तमायाए एगंत मवक्कमिज्जा, एगंत मवक्कमित्ता अप्पंडे अप्पपाणे, अप्प बीए, अप्पहरए अप्पोसे, अप्पोदए, अप्पुत्तिंग पणग—दग—मट्टिय मक्कडा संताणए

(होगम) न लग एसे नगर में ३ मिट्टी का कोट होवे ऐसे खेडे में ४ छोटी वसति होवे ऐसे कसबे में ५ बहुत ग्राम जिस में लगते होवे ऐसे मंडप में ६ जहां सर्व वस्तु मिले एसे पाटण में ७ जहां जलस्थलके दोनों रास्ते हो ऐसे द्रोण मुख में ८ जहां धातु की खाणों होवे ऐसा आगर में ९ जहां तापस रहते होवे ऐसा आश्रम में १० जहां सार्थवाह की वसति होवे ऐसा सन्निवेश में ११ जहां वैश्य की विशेष वसति होवे एसा निगम में १२ जहां राजा रहता होवे ऐसी राजधानी में इत्यादि स्थानों में तृण, घास (पराल)

तृणका स० बीछोना बिछावे, त० तृणको सं० धारा बिछाकर ए० यहां स० वस समय नान इ० ईगित मरण कु० करे ॥ १ ॥ त० उसे स० सत्य स० सत्यवादि ओ० एक ति० तिरे छि० छेदक क० कथाको आ० जाणे अर्थ अ० अनातीत चि० छेदकर मि० भगूर का० शरीर मं० छोडकर सि० विविध प्रकार प० परिषह उ० उपसर्ग, अ० इस में वि० विश्वासरस भे० भयंकर म० आवरा त० वहां व० उसकी

पडिलेहाए २ पमज्जिय २ तणाइ संथरेज्जा तणाइ संथरेत्ता एत्थवि समए इत्तिरियं कुज्जा ॥ १ ॥ त सच्चं सच्चवादी ओए तिण्णे छिण्णकहं कहे, आतीतट्ठे, अणातीते चेच्चाण भिउर काय, संविहूणिय विरूवरूवे परिसहोवसग्गे अस्सिं विसंभणयाए भे

पास्कर सवे और फिर वहां अण्डे, कीडे, बीज, हरी, ओस का पानी, कच्चा पानी, कीडी, नागरे, मापी, पानी, मिट्टी, और करोलिये के जाले इत्यादि देखकर वहां पूंजे फिर वहां बिछोना बिछावे बिछोना बिछाये बाद उसपर बैठे बैठकर ईगित मरण पाने सागारी संथारा करे॥ १॥ सत्यवादी, महापराक्रमी, संसार के पारगामी, "क्या करूंगा" ऐसी चिन्ता से रहित, अच्छी तरह वस्तु स्वरूप को जाननेवाले, तथा संसार में नहीं फसे हुवे मुनि जिन प्रवचन के विश्वास से भयंकर परिसह तथा उपसर्ग से बेदरकार रहकर के इस विनश्वर शरीर को त्यागते हुवे सत्य और दुष्कर कार्य करते हैं ऐसे करते हुवे भी उन का कालपर्याय (॥लेखना) गिनाजाता है यह ही मुनि इस स्थल में अंतक्रिया करता है इस तरह ईगित मरण विमोही पुरुषों का

का०काल पर्याय मे०अभी त०सदा । वि०अंतक्रिया करे इ० इसप्रकार प० यह मृत्यु वि० मोह रहित स्थान हि० हितकर्ता सु०सुखकर्ता ख०योग्य नि०कर्मक्षय कर्ता अ०भवान्तरमें अनुक्रम से होवे त्ति०ऐसा बे०मैं कहताहूं ।४।

जे० जो भि० साधु प० वस्त्र रहित रहा होवे त० उनको ए० ऐसा भ० होवे चा० समर्थ हूं मैं त० तृण स्पर्श अ० सहन करनेको सी० शीतस्पर्श अ० सहन करने को ते० अग्नि स्पर्श, अ० सहन करने को दं०

स्थ मणुचिन्ने, तत्थवि तस्स कालपरियाए, सेवि तत्थ वियतिकारए इच्चेतं, विमो हायणं, हितं, सुहं, खमं, णिस्सेयसं अणुगामियं–त्तिबेमि॥४॥ इति विमोक्खमज्झयण स्स छट्ठोदेसो सम्मत्तो * *

जे भिक्खू अचले परिवुसिते तस्सणं एवं भवति चाएमि अहं तणफासं अहियासित्त ए सीयफासं अहियासित्तए, तेउफासं अहियासित्तए दंसमसगफासं अहियासि

स्थान है, हित कर्ता है सुख कर्ता है, योग्य है, कर्मक्षय करनेवाला है और भवान्तर में उस का फल साथ आता है ॥ ४ ॥ यह विमोक्ष अष्टम अध्ययन का छट्ठा उद्देशा पूर्ण हुआ आगे पादोपगमन मरण की विधि कहते हैं × × ×

जो साधु वस्त्र रहित है उस को ऐसा विचार होवे कि, मैं घास का, शीत का, ताप का मच्छरों का स्पर्श अनुकूल प्रतिकूल परिषह सहन कर सकता हूं परंतु लज्जा रहित रहने से लज्जा जाती है ऐसा विचार

दांश मच्छर, स० सहन करने को ए० अनुकूल प्र०प्रतिकूल वि० विविध प्रकार के फा० स्पर्श अ० सहन करने का हि० लज्जाके प० ढकन से च० निश्चय णो० नहीं स० समर्थ हूं अ० सहन करने को ए० इसलिये उनको क० कल्पता है क० कटिबन्धन, धा० धारन करने को अ० अथवा त० यहां प० प्रवर्तते मु० फिर अ० वस्त्र रहित त० तृणस्पर्श, फु० स्पर्शे सि० शीत स्पर्श, फु० स्पर्शे, ते० अग्नि स्पर्श, फु० स्पर्शे दं० दांश मच्छर फु० स्पर्शे, ए० अनुकूल अ० प्रतिकूल वि० विविध प्रकारके फा० स्पर्श अ० सहनकरे अ० वस्त्र रहित ला० हलका आ० बताता हुआ त० तप रूप अ० लाभ प्राप्त भ० होवे है ज० जैसा यह भ० भगवंतने प०

त्तए एगतरे अन्नतरे विरूवरूवे फासे अहियासित्तए, हिरिपडिच्छादण च णो संचाए

मि अहियासित्तए एवं से कप्पति कडिबंधणं धारित्तए अदुवा तत्थ परक्कमंतं भुज्जो

अचेलं तणफासा फुसंति, सियफासा फुसंति, तेउफासा फुसंति, दंसमसगफासा फुसंति

एगयरे अण्णयरे विरूवरूवे फासे अहियासेति, अचेले लाघवियं आगममाणे, तवे

से अभिसमन्नागए भवति, जहेतं भगवया पवेदितं तमेव अभिसमेच्चा सव्वओ स

जिन को होवे उस को एक कटिबन्ध ( चोलपट्ट ) रखना कल्पता है अथवा जो लज्जा परिषह जीतने को समर्थ है वह वस्त्र को भी त्याग देवे और शीत ताप, दंश मच्छर वगैरे सर्व प्रकार के अनुकूल प्रतिकूल परिषह सहन करे. ऐसा करने से साधन धर्म की प्राप्ति होती है तप होता है इस लिये भगवंत का

मा ०पणे म न करके स० सर्व से स० सर्व प्रकारे स० समता में स० जानना ॥ १॥ ज० जिस मि० साधु को ए० ऐसा भ० होवे अ० मैं अ० दूसरे मि० साधुको अ० चारों आहार आ० लाकर द० दे ऊंगा आ० दूसरे का लाया आ० भोगवूंगा ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसा भ० होवे अ० मैं अ० दूसरे मि० साधु का अ० चारों आहार आ० लाकर द० देवूंगा, आ० लायाहुवा णो० नहीं सा० भोगवूंगा ज० जिस मि०साधुको ए०ऐसा भ०होवे अ०मैं अ०चारों आहार आ०लाकर णो०नहीं द०देवूंगा आ०लायाहुवा

व्याण समत्तमेव समभिजाणिया ॥ १ ॥ जस्सणं भिक्खुस्स एवं भवति—अहं च खलु इमामं भिक्खूण असणं वा ( ४ ) आहट्टु दल्इस्सामि आहडं च सातिज्जिस्सामि ( १ ) जस्सणं भिक्खुस्स एवं भवति अहं च खलु अन्नेसिं भिक्खूणं असणं वा ( ४ ) आहट्टु दल्इस्सामि आहडं च णो सातिज्जिस्सामि ( २ ) जस्स णं भिक्खुस्स एवं भवति—अहं च खलु असणं वा ( ४ ) आहट्टु णो दल्इस्सामि

जाना करके भगवन्त की आज्ञानुकूल समभाव से वर्तना ॥ १ ॥ अभिग्रही के लिये चौभंगी १ कितनेक साधु ऐसा विचार करते हैं कि मैं आहार आदि ला देवूंगा और दूसरे का लाया हुवा ग्रहण करूंगा २ दूसरे को लाकर दूंगा परंतु दूसरे का लाया हुवा ग्रहण नहीं करूंगा ३ दूसरे को ला नहीं देवूंगा परंतु दूसरे का लाया हुवा ग्रहण करूंगा ४ न तो दूसरे को ला देवूंगा और न दूसरे का लाया हुवा ग्रहण करूंगा ऐसे

अ॰ मैं सा॰ भोगवूंगा ज॰ जिस भि॰ साधुको ए॰ ऐसा भ॰ होवे अ॰ मैं अ॰ दूसरे भि॰ साधुको अ॰ चारों आहार आ॰ लाकर णो॰ नहीं द॰ देवूंगा आ॰ लायाहुवा णो॰ नहीं सा॰ भोगवूंगा अ॰ मैं ते उस आ॰ बचाहुवा अ॰ एषणिक अ॰ ग्रहणकियाहुवा अ॰ अशनादि चारों आहार अ॰ इच्छे उन सा॰ स्वधर्मी की कु॰ करके वे॰ वैयावच्च क॰ उपकारार्थ अ॰ मैंभी ते वे॰ उसमें अ॰ बचाहुवा अ॰ एषणिक अ॰ ग्रहण कियाहुवा अ॰ अशनादि चारों आहार से अ॰ कराए हुए वे॰ वैयावच्च को सा॰ भोगवूंगा ला॰ इसका फल

आहट्ठ च सातिज्जिस्सामि (३) अस्सणं भिक्खुस्स एवं भवति—अहं च खलु अ
ण्णेसिं भिक्खूण असणं वा (४) आहट्टु णो पडिग्गहस्सामि आहडं च णो सातिज्जि
स्सामि (४) अहं च खलु तेण अधातिरिचेण, अहेसणिज्जेणं अहापरिग्गहिएण अ
सणेण वा (४) अभिकंख साहम्मियस्स कुज्जा वेयावडिय करणाए, अहं चावि ते
ण आधातिरिचेण अहेसणिज्जेण अहापरिग्गाहिएण असणेणं (४) अभिकंख साह

चार प्रकारसे प्रतिज्ञा करते हैं और कितनेक ऐसा अभिग्रह करते हैं कि मैं अशनादि लावूंगा और भोगवे बाद अधिक बचजाय तो वैयावच्च के लिये दूसरे को देवूंगा दूसरे कोइ साधु अशनादि लाये होवे उन के भोगवने बाद अधिक बचगया होवे और मुझे वैयावच्च के अर्थे देवेगें तो मैं भी ग्रहण करूंगा ऐसे तरह २ की प्रतिज्ञा धारन करने से लाघव धर्म की प्राप्ति होती है इसी से तप निपजता है इस लिये

आ० होवे स०रूपका भ० लाभहोवे जा० यावत् स० समभावपलावे ॥२॥ देखो इसी अध्ययनका छट्ठा उद्दे

मिएहिं कीरमाणं वेयावडियं सातिज्जिस्सामि लाघविय आगममाणे तवे से अभिस मण्णागए भवइ, जाव समत्तमेव समभिजाणिया ॥ २ ॥ जस्सणं भिक्खुस्स एवं भवति-से गिलामि च खलु अह इममि समए इम सरीर अणुपुव्वेण परिवाहित्तए से अणुपुव्वेण आहारं सवट्टेज्जा संवट्टइत्ता कसाए पयणुए किच्चा, समाहिअच्चे फलगा वयट्ठी उट्ठाय भिक्खू अभिनिव्वुडच्चे अणुपविसित्ता गाम वा जाव रायहाणिं वा त णाइं जाएज्जा, तणाइं जाइत्ता से त-मायाए एगंत मवक्कमेज्जा अप्पडे जाव तणाइं

संस्कार रहित भगवान की आज्ञा सहित समभाव से सदा रहना ॥ २ ॥ भात्मार्थी साधु रोगादि से शरीर को अशक्त देखकर विचार करे कि अब इस से मैं धर्मक्रिया नहीं कर सकता हूं इस लिये अब मैं इस का त्याग करूं ऐसा विचार करता हुवा प्रतिदिन द्रव्ये आहार और भाव से कषाय को कमी करता हुवा आयुष्य के अंत में ग्रामादि में जा घास, पराल, याचकर लावे और जहां किसी जीव की घात न होवे वहां बिछाना बिछा कर उस पर बैठ कर हलन चलन का त्याग करे (पादोपगमन * संथारा करे ॥ ३ ॥

* पादप वृक्ष उपगमन मरण होना अर्थात् जैसे वृक्ष स्थिर रहता है वैसे ही यावज्जीव स्थिर रहे वह पादोपगमन संथारा है

वामें ॥ १ ॥ देखो इसी अध्ययनका छठा उद्देशामें ॥ ४ ॥

सयेज्जा । एत्यवि समए काय च जोगं च इरियं च पच्चक्खाएज्जा ॥ ३ ॥ तं स
च्च सच्चवादी ओए तिन्ने छिन्नकहंकहे आतीतट्ठे अणातीते चेच्चाण भिउर का
यं संविहूणिय विरूवरूवे परिसहोवसग्गे अस्सिं विस्संभणयाए भेरव मणुचिन्ने
तत्थवि तस्सकालपरियाए, से तत्थ विअंतिकारए इच्चेयं, विमोहायतणं हियं, सुहं,
खमं निस्सेसं, आणुगामियं—त्तिबेमि ॥ ४ ॥ इति विमोक्खमज्झयणस्स—सत्तमोद्देसो

मसार के पारगामी, महा पराक्रमी, सत्यवादी, " क्या करूंगा " ऐसी चिन्ता से रहित, अच्छी तरह वस्तु
स्वरूप को जान ने वाले, तथा संसार में नहीं फसे हुवे मुनि जिन प्रवचन के विश्वाससे भयंकर परिषहों तथा
उपसर्गों से बेदरकार रहकर के इस विनश्वर शरीर को त्यागते हुवे सख्त और दुष्कर कार्य करते हैं ऐसे
करते हुवे भी उन का काल पर्याय ( संक्षिप्त ) गिनाजाता है वह ही मुनि इस स्थलमें अंत क्रिया करते हैं
इस तरह पादोपगमन मरण विमोही पुरुषों का स्थान है, हित कर्ता है, सुख कर्ता है, योग्य है, कर्मक्षय
करनेवाला है, और भवान्तर में उस का फल साथ आता है॥ ४ ॥ यह विमोक्ष नामक अष्टम अध्ययन का सप्तम
उद्देशा पूर्ण हुवा आगे काल पर्याय के तीनों मरण की विधि बताते हैं × ×

म० अनुक्रम से वि० निर्मोही जा० जातिको धी० धैर्यवंत स० प्राप्तकर म० संयमवंत, म० बुद्धिमान स० सर्व ण० माण म० मर्वोत्तम ( २ ) दु० दोनों को वि० जानकर बु० बुद्धिमान ध० धर्मका पा० पारगामी अ० अनुक्रमे म० जानकर क० कर्मों से ति० मुक्तहोता है ॥ १ ॥ क० कषाय प० पतली कि० करके अ० अल्प आहारी ति० सहनकरे अ० अथवा भि० साधु गि० ग्लानपाय आ० आहार करे अ० अन्तकरे ॥ २ ॥

अणुपुव्वेण विमोहाइं, जाइं धीरो समासज्ज, वसुमतो मतिम्मतो, सव्वं णच्चा अणेलिसं ॥ १ ॥ दुविहंपि विदित्ताणं, बुद्धा धम्मस्स पारगा अणुपुव्वीइं सखाए कम्मुणा उ तिउट्टति ॥ २ ॥ १ ॥ कसाए पयणुए किच्चा, अप्पाहारो तितिक्खए, अह भिक्खू गिलाएज्जा, आहारस्सेव अंतियं ॥ ३ ॥ २ ॥ जीवियं णाभिकंखेज्जा, म

मेधवी, बुद्धिशाली व धीर मुनि सत्य धन अनुक्रम से सर्वथा मोह को दूर करने वाले तीनों प्रकारके (इंगित, भक्तप्रत्याख्यान, पादोपगमन) मरण में से किसी भी एक मरण करते हैं वे बाह्य शरीर व आभ्यंतर रागादि इन दोनों वस्तु को जानकर अनुक्रम से धर्मको पालकर ही अनुक्रम से कर्म बंध से छूटते हैं ॥ १ ॥ कदाचित् एकदम आहार का त्याग करने में भय रहे तो प्रारंभ में थोडा २ आहार व कषाय को घटावे और अंतमें सर्वथा त्यागे ॥ २ ॥ अनशन किये बाद जीना मरना वांच्छे नहीं और

जी॰ जीवितव्य णा॰ नहीं अ॰ वांछे म॰ मृत्यु णा॰ नहीं प॰ मांगे, दु॰ दोनों भी न॰ नहीं स॰ आसक्त जी॰ जीनेमें म॰ मरनेमें त॰ वैसे म॰ मध्यस्थ णि॰ निर्जरा पे॰ मेक्षी स॰ समाधि को अ॰ पाले अ॰ अन्दर ब॰ बाहिर वि॰ छोड करके अ॰ अन्तः करण सु॰ शुद्ध मे॰ गवे षे ॥ ५ ॥ जं॰ जो किं॰ किंचित् उ॰ उपक्रम जा॰ जान आ॰ आयुष्य खे॰ क्षेमका अ॰ अपना त॰ उसके अं॰ बीच में खि॰ क्षिप्र सी॰ शीखे प॰ पंडित ॥ ६ ॥ गा॰ ग्राम में अ॰ अथवा र॰ वनमें थं॰ जमीन प॰ देखके अ॰ अल्प पा॰ प्राणी वि॰

रणे णावि पत्थए, दुहतोवि ण सज्जेज्जा, जीविते मरणे तहा॥४॥मज्झत्थो णिज्जरापेही, समाहि मणुपालए, अतोबहिं विउस्सज्ज, अज्झत्थ सुद्ध—मेसए ॥ ५ ॥ ॥ २ ॥ जं किंचि मवक्कम जाणे, आउक्खेमस्स अप्पणो, तस्सेव अतरद्धाए, खिप्पं सिक्खेज्ज पंडिए ॥ ६ ॥ ॥ ४ ॥ गामेवा अदुवा रण्णे, थंडिल पडिलेहिया, अप्पपाणं तु विन्नाय

इन में आसक्त भी न रहे, किन्तु मध्यस्थ रहकर कर्म निर्जरा की इच्छा करता हुवा समाधि का पालन करे आभ्यन्तर कषाय और बाह्य शरीर का त्याग करे अन्तःकरण को सदैव पवित्र रखे ॥ ३ ॥ क्वचित् आयु के उपक्रम का कारण आ जाय तो चित्त समाधि के लिये उस का उपाय करे फिर संलेखना युक्त संथारा करे ॥ ४ ॥ ग्राम में या जंगल में स्थंडिल (स्थान) जीवरहित देखकर पराल का बिछोना बिछावे फिर

नाग न० गुणों म० विछान मु० माधु॥७॥अ० अनाहारी तु०शय्या करे पु०स्पर्शोयाहुआ त० तहां हि० सहन करे णा मर्यादा उल्लंघे नहीं मा० मनुष्यों मे भी पु० कराये हुने ॥८॥ ९ ॥ स० फिरतेहुवे जे० जो पा० प्राणी म० मा उ० ऊंचे म० तिन च० चरने वाले मु० त्यारे म मांस सो० लोही ण० नहीं छ० क्षणमे प० नहीं प० प्रमादकर पा० प्राणी दे०शरीर का हिं० मारते ठा० स्थानसे म० नहीं वि० जावे आ० आश्रव

तणाइ सयरे मुणी ॥ ७ ॥ अणाहारो तुअट्टेज्जा, पुट्ठो तत्थ हियासए णातिवेलं उ

यचरे, माणुस्सेहिं विपुट्ठए ॥ ८ ॥ ५ ॥ संसप्पगा य जे पाणा जे उ उड्ढ महे-चरा

भुंजते मंससोणीत ण छणेण पमज्जए ॥ ९ ॥ पाणा देह विहिंसति, ठाणाओ ण विउ

चारो आहार का त्याग कर उस पर शयन करे फिर मनुष्यादि किसी तर्फ से कुच्छ उपसर्ग होवे तो मर्यादा का उल्लंघन करे नहीं ॥ ५ ॥ चिंटियों आदि कीडे, पक्षियों, सिंह सर्प आदि मांस भक्षी और रक्त पीनेवाले जीवों उपरोक्त आस्थित साधु को दुःखी करे तो उन को हस्तादि से मारे नहीं या रजोहरणादि से प्रमार्जन कर उसे दूर करे नहीं उस समय आप्यात्मी मुनि ऐसा विचार करे कि ये क्षुद्र प्राणियों विनाशिक शरीर का भक्षण करते हैं, परंतु मेरे गुणों का भक्षण नहीं करते हैं इस विचार से ममत्व त्याग, आश्रव द्वार, रोध कर, शास्त्रों का पठन, श्रवण, मनन करके उन परिषहों को कर्म निर्जरा का कारण मान करके

थि निर्वद्य को ति० मास परिसह रि० सहन करे ॥ ६ ॥ गं० आगम वि० विविध प्रकार आ० आयुःकाल के पा० पारगामी प अभ्रहित प० तर्क च निश्चय द० मोक्षार्थी वि० जानने वाला ॥१२ अ० यह से०वे अ अपर ध० धर्म णा० ज्ञातपुत्रने सा० फरमाया आ० आश्रवका प० प्रतिकार वि० छोरे वि० विविध ॥ ७ ॥ ह० हरीकायपर ण० नहीं थि शयनकर थं० स्थान मु० साधु आ० देख

म्ममे, आसवेहिं विविचेहिं तिप्पमाणो हियासए ॥ १० ॥ ॥ ६ ॥ गंथेहिं विवित्ते हिं, आउकालस्स पारए, पग्गहिअतरग चर्य दवियस्स वियाणतो ॥ ११ ॥ अयं स अवरे धम्मे णायपुत्तेण साहिए । आयवज्ज पडीयार विजहेज्जा तिहातिहा ॥ १२॥ ॥ ७ ॥ हरिएसु ण णिवज्जेज्जा थडिलं मुणिआ सए, विउसज्ज अणाहारो, पुट्ठोत

आनन्द पूर्वक सहन करते हुवे उसी स्थान में स्थिर रहे ॥ ६ ॥ अनेक ग्रंथ के ज्ञान गीतार्थ × साधु आयु काल को नजीक जानकर इंगित मरण करते हैं वह भी बहुत कठिन है इस लिये ज्ञातपुत्र (महावीर) ने ऐसा फरमाया है कि ऐसा संथारा धारन करनेवाले मुनि उद्वर्तनादि (उठना फिरना) क्रिया आप स्वयं करे परंतु अपना कार्य दूसरे के पास करावे नहीं ॥ ७ ॥ वनस्पतिवाली जमीन में शयन नहीं करते सदा निर्जीव

× जघन्य से नवपूर्व के ज्ञानी गीतार्थ कहेजाते हैं

जाग म० गुणों म० विछाव मु० साधु॥७॥ अ० अनाहारी तु० त्याग करे पु० स्पर्शाया हुवा त० तहां हि० सहन करे णा० मर्यादा उल्लंघे नहीं मा० मनुष्यों से भी पु० कराये हुवे ॥८॥ ९ ॥ स० फिरतहुये जे० जो पा० प्राणी उ० ऊंचा उ० ऊंचे म० ति च० चलने वाले मु० खावे मं० मांस सो० लोही ण० नहीं छ० क्षणसे प० प्रमार्जे ॥ पा० प्राणी दे० शरीर का वि० मारते ठा० स्थानसे ण० नहीं वि० जाय आ० आश्रव

तणाइ संथरे मुणी ॥ ७ ॥ अणाहारो तुअट्टेज्जा, पुट्ठो तत्थ हियासए णातिवेलं उ

यचरे, माणुस्सेहिं विपुट्ठए ॥ ८ ॥ ५ ॥ सपप्पगा य जे पाणा जे उ उड्ड महे-चरा

भुंजते मससोणीत ण छणेण पमज्जए ॥ ९ ॥ पाणा देह विहिंसति, ठाणाओ ण विउ

चारो आहार का त्याग कर उस पर शयन करे फिर मनुष्यादि किसी तर्फ से कुच्छ उपसर्ग होवे तो मर्यादा का उल्लंघन करे नहीं ॥ ८ ॥ चिंटियों आदि कीडे, पक्षियों, सिंह सर्प आदि मांस भक्षी और रक्त पीनेवाले जीवों उपरात भस्थिन साधु को दुःखी करे तो उन को हस्तादि से मारे नहीं या रजोहरणादि से प्रमार्जन कर उसे दूर करे नहीं उस समय आत्मार्थी मुनि ऐसा विचार करे कि ये क्षुद्र प्राणियों विनाशिक शरीर का भक्षण करते हैं, परंतु मेरे गुणों का भक्षण नहीं करते हैं इस विचार से ममत्व त्याग, आश्रव द्वार, ऐसे रूप, शास्त्रों का पठन, श्रवण, मनन करके उन परिषहों को कर्म निर्जरा का कारण मान करके

अ० यथाभाषित ठा० स्थानसे प० स्थिरमना होवे पि० शयनकरे अ० अन्त में समाधि पावे ॥ १६ ॥ ९ ॥ भ० धीग्रमती अ०सर्वोत्तम म०मरण, इ०इन्द्रियों को स०समतामें प्रवर्तावे को०कीड़े युक्त स्थान स० भागकर नि० निर्जीव पा० अवष्टंभ ए०गवेषे अ० जिससे व० पाप स० होवे प० नहीं त० तहां अ० अवलम्बे त० तससे व० निवर्तावे आ० आत्मा स० सर्व फा० स्पर्श अ० सहे ॥ २० ॥ अ० यह चा० इससे अधिकतर सि० है जो० जो ए० ऐसे अ० पाले, स० सर्व गा० गात्र णि० निरोध में ठा० स्थानसे प० नहीं वि०

आसीणे णेलिस मरण, इंदियाणि समीरए । कोलावासं समासज्ज, वितह पादुरेसए ॥ १७ ॥ जओ वज्जं समुप्पज्जे ण तत्थ अवलम्बए, तत्तो उक्कसे अप्पाणं सव्वे फासे अहियासए ॥ १८ ॥ १० ॥ अय चायततरेसिया, जो एवं अणुपालए, सव्वगायणिरोधेवि, ठाणातो ण विउब्भमे ॥ १९ ॥ अय से उत्तमे धम्मे पुव्वठा

फिर स्थिर हो एक स्थान ग्रहण करे जो ऐसा न कर सके तो, और बैठे २ थकेला मालूम पड़े तो समाधि के लिये हलन चलन करे, फिर शयन करे ॥ ९ ॥ ऐसे अनशन में प्रवृत्ति करनेवाले साधु अपनी इन्द्रियों को विषय से संयम में रखे और अवष्टंभ ( टेका ) के लिये पृष्ठपीछे काष्ट का पटिया रखे उस पटिया में जीव जंतु होवे तो उस का पलटा कर लेवे क्योंकि जीस से जीव की घात होवे ऐसी वस्तु का अवलम्बन न करे ऐसे सदोष वस्तु से दूर रहे परिषह उपसर्ग सहन करे ॥ १० ॥ अब पादोपगमन संथारा की विधि कहते हैं जिस स्थानपर संथारा किया होवे वहां से सब शरीर अकड़ा जावे तो भी हलन चलन करना

नारे, ॥ १२ ॥ अ० यह उ०उत्तम ध०धर्म पु०पूर्वस्थान से प०ग्रहणकरना अ०निर्जीव प० देख कर वि० पाने चि० रहे मा० महात्मा ॥ २० ॥ ११ ॥ अ० निर्जीव स० प्राप्तकर ठा० स्थापे त० तहां अ० आत्मा का वो० छोरे स० सर्वथा का० शरीर ण० नहीं मे० मेरा दे० शरीर में प० परिषह ॥ २१ ॥ जा०जावजीव प० परिषह उ० उपसर्ग इ० ऐसे सं० जानकर स० समभकर दे० शरीर भे० भेद के लिये इ० ऐसे प० पन्ना हि० मान करे ॥ २२ ॥ १२ ॥ भि० भंगुर न० नहीं र० मोरे, का० काममें व० बहुत प्रकारके

पास्स पगहे, अचिर पडिलेहित्ता, विहरे चिट्ठ माहणे ॥ २० ॥ ११ ॥ अचित्त तु समासज्ज, ठावए तत्थ अप्पय, वोसिरे सव्वसो कायं, ण मे देहे परीसहा ॥ २१ ॥ जावज्जीवं परीसहा, उवसग्गा इति संखया, संवुडे देहभेयाए, इति पण्णे हियासए ॥ २२ ॥ १२ ॥ भिउरेसु न रज्जेज्जा कामेसु बहुतरेसु वि, इच्छालाभ ण से

नहीं इस तरह पादोपगमन अनशन सर्व अनशनों में उत्तम गिनाजाता है क्यों कि पूर्वोक्त दोनों प्रकार के अनशन से यह कठिन है इस लिये प्रथम निर्जीव भूमि देखकर यहां इस संथारा को करना ॥ ११ ॥ अचित्त स्थान या पाटियादि प्राप्त कर शरीर को स्थिर रखकर वोसिरावे परिषह आवे सो ऐसा विचारे कि मेरा आत्मा को कुछ भी परिषह नहीं है यह शरीर मेरा नहीं है जबतक शरीर रहेगा वहांतक परिषह भी आता रहेगा इस लिए इस शरीर को ऐसा खराब जान इससे दूर होने के लिये मैंने इस को छोडा है ऐसा विचार से सब उपसर्ग परिषह सहन करे ॥ १२ ॥ ऐसे प्रथमे कोइ राजादि संथारा किया हुवा साधु

इ० पाप्पम लो० लोभ न नहीं से० सेवे, धु० धुव व० यशः कीर्तीको स० देखकर ॥ २३ ॥ सा० शा
श्वत णि० आमंत्रे दि० देवमाया ण० नहीं स० श्रद्धे, त० उसे प० समझ कर मा० महान स० सर्व नू०
माया को धू० दूरकरे ॥ ११ ॥ २४ ॥ स० सर्व मर्थमें अ० अमूर्छित आ० आयुष्य कालके पा० पारगामी
ति० सहन शीलता प० उत्कृष्ट प० मान वि० निर्मोह अ० तीनों में से कोइ भी हि० हितकर्ता मरण करे

वेज, धुवं वन्न सपेहिया ॥ २३ ॥ सासएहिं णिमंतेज्जा, दिव्वमायं ण सद्दहे, त पडि-
बुज्झ माहणे, सव्व नूम विधूणिया ॥ २४ ॥ ॥ १२ ॥ सव्वट्ठेहिं अमुच्छिए, आउ

की पास आकर अनेक प्रकार की लालचों से उस का मन डिगावे तो उस को ऐसे क्षणभंगुर शब्दादि में
ललचाना नहीं वैसे ही मैं चक्रवर्ती होऊं ऐसा किसी प्रकार का नियाणा भी नहीं करना कोइ शाश्वत
वस्तु धन की निमंत्रणा करे तो विचारना कि मेरा शरीर ही शाश्वत नहीं है तो द्रव्य कैसे शा
श्वत रह सकता है वैसे ही कोइ देवता आकर माया से मोहित करे तो भी चित्त चलाना नहीं इस तरह
सर्व जंजाल से सदैव दूर रहे और जो ध्रुव मोक्ष सुख प्राप्त करने का निश्चय किया है उस में लीन रहे
॥ १२ ॥ इस तरह सर्व विषयों से अमूर्छित रहके आयुष्य कालका पारगामी होना (उपसंहार) उक्त
तीनों प्रकार के मरण में विविधता रही है इस लिये उस में से स्वयोग्यतानुसार मोह रहित मन इच्छा होवे

# ॥ उपधानश्रुत नामक नवम मध्ययनम् ॥

अहासुयं वयिस्सामि जहा से समणे भगवं उट्ठाय, संखाय तंसि हेमंते, अहुणा पव्वइए रीयत्था ॥ १ ॥ णो चेविमेण वत्थेण, पिहिस्सामि तंसि हेमंते, से पारए आवकहाए, एयं खु अणुधम्मियं तस्स ॥ २ ॥ चत्तारि साहिए मासे, बहवे पाण

अ० यथा सु० सुना व० कहता हूं ज० जैसे स० श्रमण भ० भगवन्त उ० सावधान हुवा सं० जानकर त० उस हे० शीतकाल, अ० तत्काल प० दीक्षासे री० विचरे ॥ १ ॥ णो० नहीं चे० निश्चय इ० इस व० वस्त्र को पि० परिहुंगा तं० उस हे शीतकाल में से० वे पा० पारग आ० यावज्जीव ए० यह खु० निश्चय अ० अनुधर्म त० उनको ॥ २ ॥ च० चारसे सा० अधिक मा० महिने, ब० बहुत पा० प्राणी प्रावि

अहो जम्बु ! अब मैं श्रमण भगवन्त श्री महावीर स्वामी के विहार का वृत्तान्त कहता हूं. भगवन्तने हेमन्त ऋतु में दीक्षा धारन कर तुर्त विहार किया ॥ १ ॥ उस समय पूर्वाचार भमाणे शक्रेन्द्रने भगवान्के स्कन्ध पर एक वस्त्र डाला था, उस को भी वीर प्रभु ने सर्व तीर्थकरों के रिवाज अनुसार धारन किया परंतु ऐसा विचार कर नहीं रखा था, कि मैं इस को शीतकाल में पहिनकर इससे शीत निवारुंगा क्यों कि, भगवन्त तो जीवनपर्यंत परिषहों को सहनेवाले थे ॥ २ ॥ दीक्षा समये वीर प्रभु के शरीर में सुगंधि

आ० भाकर, म० छेद्कर का० शरीर नि० विदारकर आ० आक्रशे ण० नहीं त० तहां हिं० हिंसाको ॥ ३ ॥ सं० वर्षसे सा० अधिक मा० महीना, जं० जो ण० नहीं रि० छोड़ा व० वस्त्र भ० भगवन्त, अ० वस्त्र रहित, त० तब चा० त्यागी वो० उसे मा० पोनिराया व० वस्त्र अ० अणगार ॥ ४ ॥ अ० अथवा पो० पुरुष प्रमाण नि० ईर्या च० दृष्टिसे आ देख कर अं० चित्तमें झा० ध्यान करते भ० भय च० देखतेमे भि० डरे स० मिलेहुवे से० वे हं० मार करके ब० बहुत कं० रोनेलगे ॥ ५ ॥ स० शय्या में वि०

जाइया आगम्म, अभिरुज्झ काय विहरिंसु, आरुहिया ण तत्थ हिंसिसु ॥ ३ ॥ स वच्छर साहियं मासं ज ण रिक्कासि वत्थग भगवं, अचेलए ततो चाई, त वोसज्ज व त्थ मणगोर ॥ ४ ॥ अदु पोरिसिं तिरियाभित्तिं, चक्खु मासज्ज अतसो झाति, अह चक्खुभिया सहिया, ते हता मह्वे कंदिसु ॥ ५ ॥ सयणेहिं वितिमिसेहिं इत्थीओ

पदार्थों का लेप किया था, जिसकी सुगंध से भ्रमरादि जंतुओं आकर उन के शरीर को लगजाते, और शरीर तथा मांस चूसते ऐसा परिषह भगवान को चार मास तक सहना पड़ा ॥ ३ ॥ इन्द्रका दिया हुवा वस्त्र अधोरेक मास तक प्रभु के शरीरपे रहा फिर उसे छोड़ वस्त्र रहित अणगार हुवे ॥ ४ ॥ प्रभु साढेतीन हो पुरुष ( ३॥ हाथ ) प्रमाण मार्ग में ईर्या समिति से देखते हुवे विहार करते थे उस समय छोटे बच्चे उन को देखने से भयभीत होते थे. और बहुतसी मुष्टिआदि प्रहारों से मारते २ रुदन करते थे ॥ ५ ॥

गृहस्थमिश्रित इ० स्त्रियों व० वहां से० वे प० जानकर सा० स्त्रीको न० नहीं से०सेवते इ० ऐसे से० वे स० मनेमें प० प्रवेशकर झा० ध्यान ध्यावेथे ॥६॥ जे० जो के० कितने इ० ये आ० गृहस्थ मी० मिश्रभाव प० छोडकर से० वे झा० ध्यान ध्याते पु० पूछे भी णा० नहीं भा० बोलते ग० जाते णा० नहीं चलते अ० सरल ॥७॥ णा० नहीं सु० करने में सुलभ मे० एकेक को णा० नहीं भा० बोलते अ० बोलाते

तत्थ से परिण्णाय, सागारिय ण सेवइ, इति से सय पवेसिया झाति॥ ६ ॥ जे के इ इमे अगारत्था मीसीभाव पहाय ते झाति, पुट्ठोवि णाभिभासिंसु, गच्छति णाइ वत्तती अजू ॥ ७ ॥ णो सुगर मेत मेगेसिं णाभिभासे अभिवायमाणे, हयपुव्वो

जब भगवन्त गृहस्थ युक्त वसाति में रहते थे तब उन के रूपसे स्त्रियों मोहित होकर भोग की प्रार्थना करती थी परंतु भगवान उन को शुभ पंथमें विघ्न करनेवाली जान उन से अलग ही रहते थे इस तरह प्रभु अपनी आत्मा को वैराग्य में लीन करते धर्म ध्यान ध्याते थे ॥ ६ ॥ भगवान गृहस्थों से आलाप छोड कर ध्यानस्थ रहते थे कदापि कोई गृहस्थ उन को पूछे तो आप उत्तर नहीं देते थे, किन्तु अपना हित संपादन करते विचरते थे सरल स्वभावी प्रभु इस तरह मोक्ष पंथ को उल्लंघते नहीं थे ॥ ७ ॥ कोई भगवान की प्रशंसा करते तो आप बोलते नहीं या कोई पुण्य हीन दण्डादि से मारते, बाल खेंचते, दुःख

हुवे ह० मारे पु० पूर्व म० मरा दं० दण्डे से, लू० लेने पु० पूर्व अ० अपुण्य जीवों ॥ ८ ॥ फ० कठीन दु० दुष्कर परिसह अ० उलघकर मु० साधु प० जाते हुवे आ० कथा न० नृत्य गी० गीत द० दंड युद्ध मु० मुष्टियुद्ध ॥ ९ ॥ ग० गृद्ध मि० कामकथामें स० उसवक्त णा० ज्ञातपुत्र वि० विषयात् रहित म० रमकर प० इतने उ० प्रधान ग० जावेहै णा० ज्ञातपुत्र अ० असरण ॥ १० ॥ सा० आधिक दु०

तत्थ दंडेहि लूसियपुव्वो अपुन्नेहिं ॥ ८ ॥ फरुसाइ दुतितिक्खाइ, अतिअच्च मुणी परक्कममाणे, आघयणट्टगीताइ, दंडजुज्झाइ मुट्ठिजुज्झाइ ॥ ९ ॥ गढीए मिहो कहासु समयंमि णायपुत्ते विसोगे अदक्खू एताइ सो उरालाई, गच्छति णायपुत्ते असरणाए ॥ १० ॥ अवि साहिए दुवासे सितोद अभोच्चा णिक्खंते, एगत्तगए पिहि

ऐसे भी उन पर क्रोध करते नहीं सर्व परिषह समभाव से सहते थे ऐसा वर्तन महा पुरुषों से ही होता है ॥ ८ ॥ भगवन्त अती कठीन और दुःसह परिषहों की बिलकूल ही दरकार नहीं करते थे, लोकों में रहने पर भी नृत्य गीत आदि में मोहित नहीं होते थे, या दंड युद्ध, मुष्टि युद्ध इत्यादि युद्ध की कथा सुनकर उत्सुक नहीं होते थे ॥ ९ ॥ किसी समय ज्ञातनन्दन भगवान स्त्रियों को कामकथा में लीन देखते तो मध्यस्थ भाव से रहते थे. ऐसे अनेक अनुकूल प्रतिकूल परिषहों की तरफ बेदरकार होते हुए संयमाश्रम में मग्न रहते थे. अन्य किसी का आश्रय नहीं चाहते थे. ॥ १० ॥ दीक्षा के दो वर्ष पहिले से ही सच

दोर्घ्य से सी॰ कषायाग्नी अ॰ सिमाभोगे णि॰ निकले ए॰ एकान्तभावी पि॰ हकेहुवे से॰ वे भ॰ त्यागी द॰ सम्यक्त्व दर्शी सं॰ शान्त ॥ ११ ॥ पु॰ पृथ्वीकाय भा॰ अप्काय ते॰ तेउकाय वा॰ वायुकाय, प॰ फुल्न बी॰ बीज ह॰ हरिकाय, त॰ त्रसकाय स॰ सर्वथा प॰ मान ॥ १२ ॥ ए॰ यह स॰ है प॰ देखकर चि॰ सचित्त अ॰ जानकर प॰ वर्जते हुवे वि॰ विचरे इ॰ ऐसा स॰ जानकर स॰ वे म॰ महावीर, ॥ १३ ॥ अ॰ अथवा था॰ स्थावर त॰ त्रसपणे त॰ त्रसजीव था॰ स्थावरपने अ॰ अथवा स॰ सर्वयोनी

यत्ते से अहिगायवसणे रत्ते ॥ ११ ॥ पुढविंच आउकाय, तेउकायं च वाउका य च, पणगाय बीय हरियाइ, तसकायं च सव्वसो णच्चा ॥ १२ ॥ एयाइ सति पडिलेह चित्तमंताइ से अभिन्नाय, परिवज्जियाण विहरित्था, इति संखाए से महावी रे ॥ १३ ॥ अदु थावरा तसत्ताए, तस जीवा य थावरत्ताए, अदुवा सव्व जोणी

गवनने सचित्त पानी पीना छोड दिया था, यों दो वर्ष एकत्व भावी हो कषायरूप अग्नि को शांत करके सम्यक्त्व भाव से आत्मा को भाव से दिक्षित हुवे थे. ॥ ११ ॥ पृथ्वी, अप्, तेउ, वायु, वनस्पति और त्रस ये षट्काय के जीवों का अस्तित्व और सजीवपना जानकर उन के आरंभ से त्यागी हो कर वीरप्रभु विचरते थे ॥ १२ ॥ रागद्वेष द्वारा कर्मोत्पत्ति कर त्रसके स्थावर और स्थावर के त्रस यों सर्व योनी में उत्पन्न होते रहते हैं ॥१३ १४॥ भगवन्तने विचार पूर्वक माना था कि द्रव्य उपाधि और भाव उपाधिवाला

वें मीर म० कर्ममत्त क० उपमते है पु० अग्ग २ बा० अज्ञानी ॥ १४ ॥ भ० भगवंतने ए० ऐसा म० विचार म० मोपाधि दु० निश्चय सु० मोपाने बा अज्ञानी, क० कर्मको म० सत्रया ण० जानकर त० उने प० करे पा० पाप भ० भगवंत ॥ १५ ॥ दु० दोमकार म० जानकर मे० पाडित कि० क्रिया प० करी प० भनोप णा० ज्ञानी आ० आश्रव सो० मवाद स० आतिपात सो० शुद्धभोग स० सर्वथा प० जाणकर ॥ १६ ॥ म० निर्दोष अ० अहिंसा स० स्वयं म० अन्य को अ० भवर्तानेकोनिये न० जिसको

या, सच्चा कम्मुणा कन्निया पुढोनाला ॥ १४ ॥ भगव घ एवं—मन्नेसिं सोवहिए हु लुप्पती याले, कम्मं च सव्वसो णच्चा तं पडियाइक्खे पावगं भगव ॥ १५ ॥ दु विह समच्च मेहावी, किरिय मक्खाय मणेलिस णाणी, आयाणसोय मतिवास सोप जोगं च सव्वसो णच्चा ॥ १६ ॥ अतिवातिय अणाउहिं, सय मन्नेसिं अकरण

भवा है ही कर्मबंध के कर्त्ता है इस लिये कर्म का हेतु पाप (उपाधि) को छोडकर ही विचरते थे ॥ १५ ॥ बुद्धिमान भगवन्तने २ ईर्यापथिक क्रिया और सांपरायिक क्रियाओं दो तरहकी क्रियामें कर्म आने का मार्ग हिंसा का मार्ग, तथा योग सबको जानकर अपप की अनुत्तम क्रिया बतलाई है ॥ १६ ॥ भगवान स्वयं निर्दोष अहिंसा में अन्य को भी लगाये पापका मूल स्त्री को जानकर सर्वथा त्याग कर के स्वयं

इ० सीको प० जानकर त्यागी स० सर्व क० कर्म के प० कारण अ० परमावदर्शी ॥१७॥ म० आधाकर्मी न० नहीं से० सेवे क० कर्मबन्ध अ० देखा स० जो कि० कोइ पा० पाप भ० भगवानने तं० उसे अ० करना नि० अचित भ० भोगते ॥१८॥ णो० नहीं से० सेवनकरे प० दूसरे व० वस्त्र, प० दूसरे पा० पात्रमें प० नहीं मु० जीमें प० दूरकरे भ० भगवान ग० जावेथे स० रसोइघरमें अ० शरण विना ॥१९॥

पाए जस्सि रियओ पारिण्णाया, सव्वकम्मवहा उ से अदक्खू ॥ १७ ॥ अहाकडं न से सेवे, सव्वसो कम्मुणा य अदक्खू । जं किंचि पावगं भगवं तं अकुव्वं वियडं भुंजित्था ॥ १८ ॥ णो सेवति य परवत्थं, परपाए वि से ण भुंजित्था परिवज्जियाण ओमाणं, गच्छति संखडिं असरणाए ॥ १९ ॥ मायण्णे असण पाणस्स, णाणुगिद्धे

दर्शी हुवे ॥ १७ ॥ आधाकर्मादि दोषयुक्त आहार को कर्मबन्ध का हेतु जानकर सर्व पाप की निवृत्ति के लिये अचित आहार के भोगी बने थे ॥ १८ ॥ भगवान अन्य के वस्त्र[1] नहीं पहिनते थे और अन्य के पात्र में भी नहीं जीमते थे अपमान से बेदरकार बनके भोजनशाला में किसी का आश्रय ग्रहण किये बिना भोजन याचनेको जाते थे. किसी भी रस में गृद्ध नहीं होते थे जैसा मिले वैसा प्रमाणयुक्त आ

[1] यहां पर वस्त्र का मतलब अन्य पुद्गलिक पदार्थ समझना चाहिये भगवानने तो एक देव दूष्य सिवाय अन्य वस्त्र पात्र का सेवन नहीं किया था

म० भगवन्त भ० अन्न पा० पानी ण० नहीं गृद्धिपने र० रसमें अ० अप्रतिज्ञ अ० आंखको णो नहीं प० पुंछे, णो० नहीं कं० कुचरे मु० साधु गा० गात्र ॥ २० ॥ अ० थोडे ति० तिरछे पे० देखते अ० अल्प पी० पीछे पे० देखते अ० थोडे बु० बोलते प० बोलते हुवे को पं० रस्ता देखते च० चलते ज० यत्नासे ॥ २१ ॥ सि० शीतऋतु भ० आधी हुइ त० तब वो० छोडा व० वस्त्र म० साधु प० पसार के बा० बाहु प० पने णो० नहीं अ० पकडे ण० नहीं कं० स्कंधको ॥ २२ ॥ ए० यह वि० विधी अ० आ

रसेसु अगडिद्धे, अच्छिंपि णो पमज्जिय, णो निय कंडूय ये मुणी गाय ॥ २० ॥ अप्पं तिरियं पेहाए अप्प पिट्ठओ य पेहाए, अप्प बुइए पडिभाणी, पंथपेही चरे जयमाणे ॥ २१ ॥ सिसिरंसि अद्ध पडिवन्ने, तं वोसज्ज वत्थ मणगारे, पसारित्तु बाहूं परक्कम, णो अवलंबिया ण कंधसि ॥ २२ ॥ एस विही अणुक्कंतो, माहणेण

हार भोगते थे इतना ही नहीं परंतु आंख में पडे हुवे कचरे को भी नहीं निकालते थे उसको घुमाते भी नहीं थे. ॥ २० ॥ भगवन्त तिरछी दृष्टि से देखते नहीं थे पीछे को भी नहीं देखते थे. बोलते हुवे भी चलते भी नहीं थे रास्ते में ईर्या समिति से देखते हुवे यत्नासे चले जाते थे ॥ २१ ॥ भगवान दूसरे वर्ष के [illegible] का दिया वस्त्र त्याग कर दोनों हस्त भुजे रखकर विहार करते थे [illegible]

करते मा० महात्मा म० बुद्धिवन्त ब० बहुत अ० प्रतिज्ञा रहित भ० भगवन्त ए० ऐसे रि० विचरे थि० ऐसा मैं० कहता हूं ॥ २१ ॥ + + +

च० विहार में अ० आसन से० स्थानक ए० एकदा आ० जो च० करा आ० कहताहुआ स० शैय्या स० आसन भा० आ से० सेवन किये म० महावीरने ॥ १ ॥ आ० शून्यगृह में स० सभा में प० परप में प० व्यापारकी शाला ( दुकान ) में ए० एकदाससे अ० अथवा प० लोहकारकी शालमें प०घासकी मंचीमें, प०

मइमया, बहु सो अप्पडिन्नेण, भगवया एवं रियंति—त्तियामि ॥ २१ ॥ इति उवहाण सुयमज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो * *

चरियासणाइ सेज्जाओ, एगतियाओ जाओ बुइयाओ, आइक्ख ताइ सयणा सणाई जाइं से विरथा से महावीरो॥ १॥आवेसण सभा पवासु पणियसालासु एगदावासो,अदुवा पलियट्ठाणसु

मपत्न किया ऐसा मैं कहता हूं ॥ २१ ॥ उपधान श्रुत नामक नवम अध्ययन का प्रथम उद्देशा पूर्ण हुआ आगे श्री महावीर स्वामी का निवास कहते हैं * *

श्री वीर प्रभु जिस २ स्थान में रहे और जो २ शयनासन भोगवे वह आगे बताता हूं ॥ १ ॥ शून्य राजपोल में, राज्यसभा में, पानी की परब में, व्यापारी की दुकान में, लोहारादिक की शाला में, घास की

पक्कदायसे, ॥ २ ॥ भा० पर्णशाला में आ० आगमें, आ० परों में, ण० शहर में प० एकदायसे सु० स्मशानमें सु० शून्य घरमें रु० वृक्ष के नीचे ए० एकदायसे ॥ ३ ॥ ए० इत्यादि मु० साधु म० स्थानमें स० श्रमण आ० इस प० वर्षमें रा० रात्रि दि० दिन ज० यत्नायुक्त अ० अप्रमत्त से० समाधि सहित झा० ध्यान ध्याते ॥ ४ ॥ २ ॥ णि० निद्रा णो० नहीं प० प्रमादरूप भ० भगवंत उ० सावधान होते, ज०

पलालपुंजेसु एगदा वासो ॥२॥ आगतारे आरामागारे, णगरे वि एगदा वासो, सुसाणे सुण्णगारे वा, रुक्खमूलेवि एगदा वासो ॥ ३ ॥ एतेहिं मुणी सयणेहिं समणे आसी पतेरस वासे, राइं दिवंपि जयमाणे अप्पमत्ते समाहिए झाति ॥ ४ ॥ ॥ २ ॥ णिद्दंपि णो पगामाए, सेवइ य भगवं उट्ठाए, जग्गावती य अप्पाणं, इसिंसाति य

गंजी में, पर्णशाला में, बगीचा में बंगले में, बड़े शहर में, स्मशान में, शून्य घर में, और वृक्षतले, इत्यादि स्थानों में महावीर स्वामी ने तेरह वर्ष तक निवास किया भगवान्ने किंचिन्मात्र प्रमाद नहीं किया; अहो रात्रि सदैव यत्नायुक्त समाधि से ध्यान ध्याया ॥ २ ॥ भगवानने दीक्षा लिये बाद कभी निद्रा नहीं ली जब सोते तो भी निद्रा करने की इच्छा नहीं करते निद्रा को कर्म बंध का कारण मान बैठे २

(१) दशम वर्ष में परम्परा की अंतिम रात्रि में मुहूर्त मात्र निद्रा आई भी जग में स्वप्न देखे…

जाग्रत करते अ० स्वतः को इ० थोडे सा० सोते अ० अधिक्षा रहित ॥ ५ ॥ सं० जागत हुवे पु० पुनरपि भा० भगवत्स्वरो भ० भगवत उ० उठते णि० निकसके ए० एकदा रा० रातको ब० बाहिर च आकरके मु० मुहूर्त मात्र ध्यान धरते ॥ ६ ॥ स० वसति में त० उनको उ० उपसर्ग भी० भयंकर आ० हुवा अ० अनेक प्रकार के स० अहि नकुलादि जे० जो पा० प्राणी अ० अथवा प० पक्षी उ० उपद्रव करते ॥७॥ अ० अ

अपडिन्ने ॥ ५ ॥ सबुज्झमाणे पुणरवि, आससु भगवं उट्ठाए, णिक्खम्म एगया राउ

वाहिँ चंकमित्ता मुहुत्तागं ॥ ६ ॥ ॥ २ ॥ सयणेहिं तस्सुवसग्गा, भीमा आसी अ

णेगरूवा य; संसप्पगाय जे पाणा, अदुवा पक्खिणो उवचरंति ॥ ७ ॥ अदुवा कुच

रा उवचरंति, गामरक्खाय सत्तिहत्था य; अदु गामिया उवसग्गा, इत्थी एगति या

कभी निद्रा की आधिक्यता देखते तो उठे खडे होते, या घरके बाहिर ठंड में मुहूर्तमात्र ध्यान कर खडे रहते और निद्रा का परिहार करते ॥ ३ ॥ पूर्वोक्त स्थानों में रहते भगवन्त को सर्प, सिंह, पक्षी, गीध, आदि अनेक प्रकार के जंतुओं आकरके डंस कर, छेदन भेदन कर, भयंकर दुःख उपजाते थे अथवा जार स्त्री पुरुष एकान्त स्थान में कुकर्म करने को आते वहां भगवान को देखकर अनेक उपसर्ग करते चोर्यादि का कलंक लगाते, तथ ग्राम रक्षक (कोतवाल) आकर भगवान को शस्त्र से प्रहार कर दुःख देते थे. विषय लंपट लोको भगवन्त को उपसर्ग करते थे. महा दिव्यरूप धारक भगवान को एकान्त स्थान में देखकर

घा कु. कुरूवीं उ० उपद्रव करते गा० कोटवाल म० घात सहित भ० भयवा गा० ग्रामधर्मआश्रित उ० उपसर्ग इ० स्त्री प० परुषा पु० पुरुष पा० पा॥८॥४॥ इ० इसलोक का प० परलोकका भी० रौद्र भ० अनेक रू० प्रकारके भ० भाये सु० सुगन्ध दु० दुर्गंध स० शब्द भ० अनेक प्रकारके ॥ ७ ॥ भ० सहन करते भ० भद्र म० समितियुक्त फा० स्पर्श वि० विविध प्रकार क, भ० शोक र० हर्ष अ० मनुष्यादि री० वि चरते घा० भगवन भ० घोरे शास्ते ॥ १० ॥ ५ ॥ स० यह भ० मनुष्य से त० तहां पु० पुछाते हुवे ए०

पुरिसो घा ॥ ८ ॥ ४ ॥ इहलोइयाइ परलोइयाइ, भीमाई अणेगरूवाइ, अ-

वि सुब्भि दुब्भि गंधाइ सद्दाई अणेगरूवाई ॥ ९ ॥ अहियासए सया समिते, फा-

साइ विरूवरूवाई अरतिं रतिं अभिभूय, रीयति माहणे अबहुवाई ॥ १० ॥॥५॥

निपातक स्त्रियों व्याकुल मन विषय भोगों की प्रार्थना करती, ऐसे पुरुषों भी दुःख देते उन सब परि षहों का भगवान समभाव से सहते थे. ॥ ८ ॥ उक्त प्रकार से मनुष्य, तिर्यंच व देवता की तरफसे सात दाने अनेक प्रकार के भयंकर उपसर्ग व सुगन्ध, दुर्गन्ध, सुशब्द, दुःशब्द सर्व समताभे सहन करते किसी का भी इन शोक नहीं करने थे और किसी को कुच्छ कहते भी नहीं थे ॥ ५ ॥ एकान्त स्थान में भगवान का पड़ा देखकर लोको पूछते या तो रात्रि में जार पुरुष पूछते कि तू कौन है ? भगवान उन को उत्तर

अकेले ए० एकदा रा० रात्रिका अ० उत्तर न देवे क० कषाय करते पे० देखते हुवे स० समाधि अ० अभाविकी ॥६॥ अं० अरे अं० अंदर को० कौन ए० यहां अ० मैंहूं चि० ऐसा भि० भिक्षु भ० कहते, भ० भगवंत घ० उत्तम ध० धर्म तु० चुपचाप स० सकषाय हो, झा० ध्यावे ॥ ११ ॥ ७ ॥ जं० जिसमें ए० कि तनेक प० पूजते सि० शीत ऋतुमें मा० पवन प० पकडा तं० उसमें ए० कितनेक अ० साधु हि० हठीला

स जणेहिं तत्थ पुच्छिंसु, एगचरा वि एगायराओ, अव्वाहते कसाइत्था पेहमाणे स

माहिं अपडिन्ने ॥ ११ ॥ ॥ ६ ॥ अय मतरासि को एत्थ, अहमासि त्ति भिक्खू आ

हट्टु अय मुत्तमे से धम्मे, तुसिणीए सकसाइए झानि ॥ १२ ॥ ॥ ७ ॥ जंसि

प्पेगे पवेयति, सिसिरे मारुए पवायंते, तासि प्पेगे अणगारा, हिमवाए णिवाय मेसंति

नहीं देते तब वे कोपित होकर भगवान को मारते परंतु भगवान बेदरकार रहकर समभाव में तल्लीन रहतेथे ॥ ६ ॥ यह कौन खड़ा है? ऐसा कोई पूछते तो भगवान कहते कि "मैं भिक्षु खड़ा हूं" यदि वे भगवान को जाने का बोलते तो वहां से प्रभु उसी समय चलेजाते क्यों कि, यह उत्तम पुरुष की रीति है यदि वे जाने का न बोलें तो भगवान वहीं मौन खड़ा रहे इस से कोपित हो परिषह देवे तो उन सब को समभाव से सहन करते ॥७॥ जब शिशिर ऋतु में शीत पवन चारों ओर से चलता था, जो लोगों को थर थर कंपते थे, तब अन्य साधु ऐसी ठंडी में निर्वात स्थान ढूंडते थे, तथा वस्त्रो पहिनने को चाहते थे, "मैं

ऐसा करताहूं ॥ ९ ॥ इ० ऐसा उ० उपधानश्रुत नवमा अ० अध्ययनका बी द्वितीय उद्देशा

त० तृण स्पर्श सी० शीत स्पर्श ते० अग्नि स्पर्श द० दंसमसक अ० सहे स० सदा स समतासे फा० स्पर्श वि० विविध प्रकार के ॥ १ ॥ अ० अब दु० दुश्चर ला० लाढदेश अ० विचरे व० वज्रभूमि में च० और सु० शुभ्रभूमी में पं० इसकी से० स्थानके सेवन किया आ० आसन पं० हलके ॥ २ ॥ ला० लाढदे

॥ १६ ॥ ९ ॥ इति उवहाणसुअ नवमं मज्झयणस्स—बीओद्देसो सम्मत्तो •

तणफासे, सीयफासे, तेउफासे य दंसमसगेय, अहियासए सया समिए, फासाइ वि रूवरूवाइ ॥ १ ॥ अह दुचर लाढमचारी, वज्जभूमिं च सुब्भभूमिं च, पंतं से जं सेविंसु आसणाईं चेव पंताइ ॥ २ ॥ लाढेसु तस्सु वसम्मा, बहवे जाणवया

मुनि को वर्तना ॥ ९ ॥ यह उपधान श्रुत नामक नवम अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा आगे श्री महावीर भगवान के परिषह कहते हैं + + +

भगवानन सदैव समितिवंत मन के कर्कश स्पर्श-शीत, ताप, दंश, मच्छर के भयंकर परिषह सहन किय ॥ १ ॥ भगवानने लाढ देश की वज्रभूमि तथा शुभ्र भूमि दोनों भूमि में विहार किया वहां उन को रहने को खराब मकान मिलते वैसे ही पाट पाटिये भी खराब मिलते थे. ॥ २ ॥ लाढ देश में भगवान

ह० मारे पु० पहिले म० बाद द० लकडी से अ० अथवा मु० मुष्टि से अ० अथवा कु० भालेके अग्रसे अ० अथवा ले० पत्थरसे क० ठीकरे खप्परसे ह० मारो २ प० बहुतजन क० पुकारतेथे ॥ ७ ॥ मं० मांस छि० छेद पु० पहिले उ० जाकर प० पकडा का शरीर पर प० परिषह मु० मारते अ० अथवा पं० धूल उ० डालते ॥ ११ ॥ उ० ऊंचा स्थान में णि नीचे अ० अथवा आ० आसन से ख० धकमते वो० वोसिराकर का० काया प० नमेहुवे रहते दु० दुःख स० सहे भ० भगवंत अ० अमातेश्री ॥ १२ ॥ ८ ॥ सू० सूर स०

मुट्ठिणा अदु कुताइ फलेण अदु लेलुणा कवालेणं, हंता हात बहवे कंदिंसु ॥७॥ मंसूणि छिन्नपुव्वाइं, उट्ठुभिया एगया कार्यं, परीसहाइं लुंचिंसु अहवा पंसुणा उवकरिंसु ॥१॥ उच्चालइय णिहणिंसु अदुवा आसणाओ खलइंसु, वो सट्टकाये पणयासी दुक्ख सहे भगवं अपडिन्ने ॥ ८ ॥ सूरो संगामसीसे वा संवुडे तत्थ से महा

भाकर मारने और बोलने कि चलाना ॥ ६ ॥ बहुत समय भगवान को काष्ठ से, पत्थर से, अस्थि से, ठेकरे या खप्पर से मारते थे, और मारो मारो का पोकार करते थे ॥ ७ ॥ कभी भगवान के शरीर का मांस काटते, धूल की वृष्टि करते, ऊंचे उठाकर नीचे पटकते, या आसन से धकेलते. परंतु वह प्रभु शरीर को वोसिराकर सब परिषह सहन करते थे ॥८॥ जैसे शूरवीर पुरुष संग्राम के अग्रभाग में रहाहुवा शीघ्र पार

संग्राम के सी० अग्रभाग स संपूर्ण त० वहां भ० वे म० महावीर प्र० सभेज...
गवेव री० निसरतेये ॥१२॥ ए० इस वि०विधि अ०आचरने की म०श्रमण म०शुद्धियन्त, व० बहुत से भ० भमतिवप भ० भगवंत ए० ऐसे रि० विचरेथे त्ति० ऐसा कहता हूं ॥ २ ॥ ❁

ओ० उणोदरी को च० चलकिनात भ० अस्पर्श भ० भगवन्त रो० रोगसे पु० स्पर्श से० वे भ०

वीरे, पडिसेवमाणे फरुसाई, अचले भगत्र रियत्था १३ ॥ एस विही अणुक्कतो, माह णेण मतीमता, बहुसो अपडिन्नेणं, भगवया एव रियति—त्तियेमि ॥ १४ ॥ ३॥

इति उवहाण सुत अज्झयणस्स—तइओद्देसा सम्मत्तो ●

ओमोदरिय चाएति, अपुट्ठोवि भगवं रोगेहिं, पुट्ठोव से अपुट्ठो वा, णो से सातिज्जति

नहीं रखता है वैसे ही महावीर प्रभु अनेक कठिन उपसर्ग आनेपर पीछे नहीं हटे सब को समभाव से सहे यह रीति बुद्धिमान भगवानने पालन की वैसे ही सब को पालना ऐसा मैं कहता हूं ॥ २ ॥ यह उपधान श्रुत नामक नवम अध्ययन का तृतीय उद्देशा पूर्ण हुआ + +

भगवान निरोगी रहने पर भी मिताहारी थे, भगवान को कदापि रोग नहीं स्पर्शता कभी महारजन्य पीडा होती तो उसे निवारने का उपाय नहीं करते भगवान रेचन, वमन, तेलादि का मर्दन, स्नान. शरीर

-स भ० भगवान, अ० दयायुक्त घा० आहार ग० गवषते ॥ ४ ॥ अ० अपि सू० ...आ वा० या सु० दूका सी० ठंडा आहार पु० पुराना कु० निरस भ० मयथा पु० फोतरे पु० बेकरटी ल० मिला पिं० आहार अ० नमिला द० मोक्षार्थी ॥ ५ ॥ अ० अपि झा० ध्यान करते से ये म० महावीर, आ० आसनस्थ अ० स्थिर झा० ध्यानसे उ० ऊर्ध्व अ० अधो ति० तिर्यक् लो० लोक को झा० ध्याते स० समाधि प० निदान रहित. ॥ ६ ॥ अ० अकषायी वि० निवर्ते गृद्धिपना से स० शब्द रू० रूपमें अ० अमूर्छित झा०

॥४॥ अवि सूइय वा सुक्क वा, सीयपिंडं पुराणकुम्मास, अदु बुक्कस पुलागं लद्धे पिंडे अलद्धए दविए ॥ १३ ॥ ५ ॥ अवि झाति से महावीरे, आसणत्थे अकुक्कुए झाणं, उड्ढ महेय तिरियं च, लोए झाअति समाहि मपडिन्ने ॥ १४ ॥ ६ ॥ अक

तरह शनैः आमे चले जाते इसतरह भगवान सब जीवों की दया पालते हुये आहार गवेषते थे॥ ४॥भगवान् को भींजा, शुष्क, ठंडा, पुराना, रूक्ष, फीका जैसा आहार मिलता वैसा शांतभाव से भोगवते यदि नहीं मिलता तो तप निपजा मान कर शांत भाव से मोक्ष मार्ग में प्रवर्तते थे ॥ ५ ॥ भगवान् उत्कट, गोदुह, विरासनादि आसनों पे स्थिरी भूत हो ध्यान करते थे उस अवस्था में ऊर्ध्व, अधो व तिर्यक्, तीनों लोकका स्वरूप को विचारते थे ॥ ६ ॥ भगवान् कषाय रहित थे. शब्द रूपादि किसी में गृद्ध नहीं बनते थे

ध्यान करते छ० छद्मस्थपन में भी प० पराक्रमी न० नहीं प० प्रमाद स० स्वयं कु० करते ॥७॥ स० स्वयमेव अ० मानकर आ० आत्मत्यागी मा० आत्मवादी अ० शान्त अ० निष्कपटी, आ० आयुपर्यंत भ० भगवन्त भ० समाधिमें ही रहे ॥१६॥ ए० यह वि० विधि अ० आचरते मा० श्रमण भ० महावीर, ब० बहुत अ० निदान रहित भ० भगवन्त रि० विचरे ति० ऐसा मे० मैं कहता हूं ॥८॥ ❁ ❁

सानी विगयगेही य, सद्द रूवेसु अमुच्छिए झाति, छउमत्थेवि विपरक्कममाणो ण पमायं सइंपि कुव्वित्था ॥ ७ ॥ सयमेव अभिसमागम्म, आयतजोग मायसोहीए, अभिनिव्वुडे अमाइल्ले, आवकहं भगवं समिआसी ॥ १६ ॥ एस विही,अणुक्कंतो माहणेण मईमया, बहुसो अपडिन्नेण, भगवया एवं रियंति—त्तिबेमि ॥१७॥८॥ इति उवहाणसुअ णाम नवम मज्झयणस्स चउत्थोद्देसो इति उवहाणसुय णाम नवम मझयण

महीत ध्यानस्थ रहते थे. इस तरह छद्मावस्था में भगवानने कर्मनिवारने केलिये प्रबल पराक्रम किया किंचित्मात्र प्रमाद नहीं किया था ॥ ७ ॥ भगवानने स्वयमेव संसार को असार मान, आत्मा की पवित्रता पूर्वक मन, वचन और काया के योगों का निरोध कर, संयमी बन, निष्कपट भाव से जीवन व्यतीत किया था यह विधि भगवानने नियाणा रहित समाचरी है इस तरह सर्व मुनियों को विचरना चाहिये, श्री सुधर्मास्वामी जम्बु स्वामी को कहते हैं कि, अहो जम्बु जैसा मैंने भगवान के मुख से सुना है, वैसा तुझे कहता हूं यह उपधान सूत्र नामक नवम अध्ययन संपूर्ण हुवा यह ब्रह्मचर्य नामक प्रथम श्रुतस्कंध संपूर्ण हुवा

इति ब्रह्मचर्याख्य प्रथम श्रुतस्कन्ध समाप्त

# आचाराङ्ग सूत्रम्.

## द्वितीय श्रुतस्कन्ध.

### पिण्डैषणा नामक दशम मध्ययनम्

से भिक्खू वा भिक्खुणी वा, गाहावइकुले पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठेस—माणे, से ज्ज पुण जाणेज्जा—असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा, पाणेहिं वा,

से० वे भि० साधु वा० वा भि० साध्वी वा० या गा० गृहपति के कु० घरमें पि० आहार लेने को अ० प्रवेश कर प० भास करता हुआ से० उनको ज० जो पु० फिर जा० जाने अ० अन्नकी जात, पा० पानी की जात,

जो कोइ साधु साध्वी आहार की याचना करने के लिये गृहस्थ के घर आय और वहां ऐसा जानने में
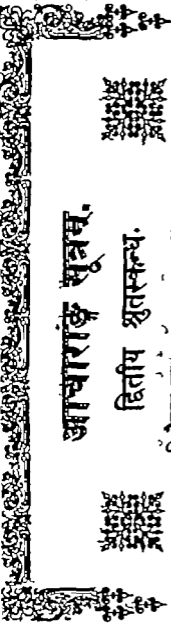
खा० खादिमकी जात, सा० स्वादिमकी जात पा० पाणी से प० फूलनसे बी० बीजसे ह० हरी वनस्पति से, सं० मि श्रित उ० मिश्रहुआ सी० सीतोदकसे उ० भींजाहो र० सचित्तरजसे, प० भराहो त० इस तरह का अ० अशन, पा० पानी खा० खादिम सा० स्वादिम प० गृहस्थके हाथमें वा० या प० गृहस्थके पात्र में, अ० अप्रासुक अ० अनेषणिक, म० मानता हुआ ला० मिलतेभी नो० नहीं प० ग्रहणकरे ॥ १ ॥ से० वे आ० भिक्षु

पणएहिं वा, बीएहिं वा, हरिएहिं वा, संसत्तं, उम्मीस्सं, सीओदएण वा उसित्तं,

रयसा वा परिघासिय, तहप्पगार असणं वा पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा, पर

हत्थंसि वा परपायंसि वा, अफासुयं अणेसणिज्जंति मण्णमाणे लाभेवि संते नो पडिगा

हेज्जा ॥ १ ॥

कि यदि १ अशन १, पान २, खादिम ३, स्वादिम ४, चारों प्रकारका आहार सूक्ष्म जंतुओं से, लीलन फूलन से, बीज से, अनाज से या किसी प्रकार की वनस्पति से मिश्रित है, सचित्त पानी से भिंजा हुवा है या सचित्त रज से भरा हुवा है ऐसा आहारादिक गृहस्थ अपना हस्त से या पात्रादिक से लेकर

---

१ अन्न गेहूं चावल, चना, जुवार, जौ, मकाइ, मूंग, उडीद मसूर, चवले, कोंद्रे कांगणी आदि चौवीस प्रकार के अनाज को अशन कहते हैं २ पचीस प्रकार का धोवन, तक्र, आछ, या उष्ण पानी को पान कहते हैं ३ दुग्धादि के संयोग से पकाया या बदाम, पिस्ता, द्राक्षादि मेवा, आम्र, केला, आदि फल को खादिम कहते हैं ४ सोपारी, लविंग, चूर्ण आदि मुखवास को स्वादिम कहते हैं

नक प०ग्रहण करते सि०कदाचित् से०वे तं०उसे आ० लेकर ए० एकान्त में अ० जावे ए० एकान्त अ०जा कर अ० नीचे आ० आ।प में अ० नीचे उ०उपाश्रयमें अ० अल्प अंडे अ० अल्प प्राणी, अ० अल्पबीज अ० अल्पहरी अ० अल्प ओस अ० अल्प उदक, अ० अल्प तृणपररहा पानी प० फूलन द० पानी म० मिट्टी म० करोलिये सं० जाले वि० निकाल निकालकर उ० मिश्रहुवे हो उसे वि० विशुद्धकर त० तब सं० साधु भुं०भोगवे पि०पीवे अं०जो णो०नहीं सं०समर्थहोवे भो० भोगवने पा०पीनेको से०वे त० उसे आ०लेकर

हेज्जा ॥ १ ॥ से य आहच्च पडिगाहिए सिया से तं आयाए एगंत मवक्कमेज्जा ए गंत मवक्कमित्ता अहे आरामसि वा अहे उवस्सयंसि वा, अप्पंडे, अप्पपाणे, अप्प बीए, अप्पहरीए, अप्पोसे, अप्पोदए, अप्पुत्तिंग—पणग-दग-मट्टिय-मक्कडा-संताणए वि गिंचिय २ उम्मीस विसोहिय २ तओ संजया मेव भुंजिज्ज वा पीइज्ज वा जं च णो संचाएज्जा भोत्तए वा पाइत्तए वा से त—मायाय एगंत मवक्कमेज्जा, एगंत मवक्क

देने को आमंत्रण करे तो उस को अप्रासुक तथा अनेषणिक जानकर ग्रहण करना नहीं ॥ १ ॥ कदाचित् अनजानपने से ऐसा आहार आजावे तो उस को लेकर निर्जन स्थान में जाना यहां उपाश्रय में या बगी चेमें, बीज, जंतु, जनस्पति या सचित्त पानी वाला स्थान न होवे ऐसे स्थान दृष्टि से देखकर फिर अपने लाये हुवे आहार में से जो भाग जंतुमिश्रित होवे उस को पृथक् कर उस में रहे हुवे जीव जंतुओं निकाले फिर

प०प्रस्थन्न स्थानमें म०जावे ए०एकान्त स्थानमें अ०जाकर, अ०अपगता०दग्ध प०स्थानको अ०हड्डीकाढगला कि०मोरकीट्टकाढग तु०तुसोंकाढग गो०गोबरकाढग अ० अन्यप्रकार त० वैसेही प० स्थान प०प्रतिलेख२ प० पूंजकर त० तब सं० साधु प० परिठावे ॥२॥ से०वे भि० साधु भि० साध्वी ग० गृहस्थके घरमें पि० आहार केलिये प्र० प्रवेश करता हुवा से०वे जं० जो पु० और ओ०औषधि जा० जाने क० पुन सा० सजीव अ० द्विदल न करी अ० तिरछी छेदन न करी, अ० असत्व है त० रूपी छि० फलीओं अ० अभग

मिया अहे ज्झामथंडिलंसि वा, अट्ठिरासिंसि वा, किट्टरासिंसि वा, तुसरासिंसि वा, गोमयरासिंसि वा अण्णयरंसि वा, तहप्पगारंसि थंडिलंसि पडिलेहिय२ तओ संजयामेव परिट्ठवेज्जा ॥२॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठे समाणे, से जाओ पुण ओसहीओ जाणेज्जा, कसिणाओ, सासिआओ अविदलकडाओ अतिरिच्छछिण्णाओ, अव्वोच्छिण्णाओ तरुणियं वा छिवाडिं अणाभिकंतं भ

हम आहार को आप भोगवे. यदि वह आहार खाने पीने लायक न होवे तो एकान्त निर्जन स्थान में जाकर जहां जमीन अचित्त होवे, हड्डी के, मोरकीट के भूसा के, गोबर के ढग होवे ऐसे स्थान देखकर रजोहरण से पूंजकर उसे यत्ना पूर्वक परिठावे ॥ २ ॥ साधु साध्वी गृहस्थ के घर में धान्य कणादि अखंड होवे, छेदन भेदन न किया होवे और उन में पूरा शस्त्र न परगमा होवे ऐसा कच्चा या कच्ची

न करी अ० अभेद पे० देखकर अ० अप्रासुक अ० अनेषणिक म० जानकर अ० मिलने पर भी न० नहीं प० ग्रहणकरे ॥३॥ से० वे भि० साधु भि० साध्वी जा० यावत् प० गृहस्थके घरमें प०प्रवेशकर से० वे जं० जो पु० और ओ० औषधि जा० जाने अ० अपूर्ण अ० सचित्त वि० छिद्र करी ति० तिर्छी काटी अ० सचित्त त० कच्ची मु० मुंगादिकी फली अ० अभेद अ० भूमी हुइ पे० देखकर फा० फासुक ए० एषणिक ए० जानकर ला० मिलेतो प० ग्रहण करे ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु भि० साध्वी जा० यावत् प०

भामाज्जित पेहाए अफासुयं अणेसणिज्जंति मण्णमाणे लाभे संते णो पडिगाहेज्जा ॥३॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा जाव पविट्ठेसमाणे से जाओ पुण ओसहीओ जाणे ज्जा अकसिणाओ, असासियाओ विदलकडाओ तिरिच्छच्छिण्णाओ वोच्छिण्णाओ त रुणियं वा छिवाडिं अभिक्कंतभाज्जियं पेहाए फासुयं एसणिज्जंति मण्णमाणे लाभे संते पडिगाहेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा जाव पविट्ठेसमाणे से जं पुण

मुंगादिक की फलीयां अप्रासुक तथा अनेषणिक जानकर गृहस्थ देवे तो भी नहीं ग्रहण करे ॥ ३ ॥ और अनाज, फलादि को छेदन भेदन कर अचेत निर्जीव किया है तथा कच्ची फली भी छेदन, भेदन, पचन, पाचन कर अचेत की हुई है ऐसा जानने में आवे तो उसे फासुक जान मिले तो ग्रहण करना ॥ ४ ॥

प॰एकान्त स्थानमें भ॰जावे ए॰एकान्त स्थानमें भ॰जाकर, भ॰अथगृषा॰दग्ध य॰स्थानको अ॰हड्डीकाढगला कि॰कोरकीटकाढग तु॰तृणोंकाढग गो॰गोबरकाढग भ॰ अन्यप्रकार त॰ वैसेही य॰ स्थान प॰प्रतिलेखन२ प॰ पूंजकर त॰ तब सं॰ साधु प॰ परिठावे ॥२॥ से॰वे भि॰ साधु भि॰ साध्वी ग॰ गृहस्थके घरमें पि॰ आहार केलिये भ॰ प्रवेश करता हुवा से॰वे अं॰ जो पु॰ और ओ॰औषधि जा॰ जाने क॰ पूर्ण सा॰ सजीव भ॰ द्विदल न करी भ॰ तिरछी छेदन न करी, भ॰ अप्रासुक है त॰ कच्ची छि॰ फलीयाँ अ॰ अप्रासुक

मिचा अहे ग्झामथडिलंसि वा, अट्ठिरासिंसि वा, किट्टरासिंसि वा, तुसरासिंसि वा, गोमयरासिंसि वा अण्णयरंसि वा, तहप्पगारंसि थंडिलंसि पडिलेहिय२ तओ संजयामेव परिट्ठवेज्जा ॥२॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठे समाणे, से जाओ पुण ओसहीओ जाणेज्जा, कसिणाओ, सासिआओ अविदलकडाओ अतिरिच्छच्छिण्णाओ, अव्वोच्छिण्णाओ तरुणियं वा छिवाडिं अणाभिकंत भ

उस आहार को आप भोगवे यदि वह आहार खाने पीने लायक न होवे तो एकान्त निर्जन स्थान में जाकर जहां जलीहुई जमीन होवे, हड्डी के, कोरकीट के भूसा के, गोबर के ढग होवे ऐसे स्थान देखकर रजोहरण से पूंजकर उसे यत्ना पूर्वक परिठावे ॥ २ ॥ साधु साध्वी गृहस्थ के घर में धान्य कणादि सजीव होवे, छेदन भेदन न किया होवे और उन में पूरा शस्त्र न परिणमा होवे ऐसा कच्चा या कच्ची

न करी अ० अमेघ पे देखकर अ० अफ्रासुक अ० अनेषणिक म० जानकर आ० मासुवे णो० नहीं प० ग्रहणकरे ॥३॥ से० वे भि० साधु भि० साध्वी जा० यावत् प० गृहस्थके घरमें प०प्रवेशकर से० वे जं० जो पु० और ओ० औषधि जा० जाने अ० अपूर्ण अ० अचित्त वि० द्विदल करी ति० तिर्छी काटी अ० सचित्त त० कची मु० मुंगादिकी फली अ० अचेत अ० भूमी हुइ पे० देखकर फा० फ्रासुक ए० एषणिक प० जानकर ला० मिलेतो प० ग्रहण करे ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु भि० साध्वी जा० यावत् प०

मामज्जित पेहाए अफासुयं अणेसणिज्जति मण्णमाणे लाभे सन्ते णो पडिगाहेज्जा ॥३॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा जाव पविट्ठेसमाणे से जाओ पुण ओसहीओ जाणे ज्जा अकसिणाओ, असासियाओ विदलकडाओ निरिच्छच्छिण्णाओ वोच्छिण्णाओ त रुणियं वा छिवाडिं अभिक्कंतभज्जियं पेहाए फासुयं एसणिज्जंति मण्णमाणे लाभे संते पडिगाहेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा जाव पविट्ठेसमाणे से ज्ज पुण

मुंगादिक की फलीयां अफ्रासुक तया अनेषणिक जानकर गृहस्थ देवे तो भी नहीं ग्रहण करे ॥ ३ ॥ और अनाज, फलादि को छेदन भेदन कर अचेत निर्जीव किया है तथा कची फली भी छेदन, भेदन, पचन, पाचन कर अचेत की हुई है ऐसा जानने में आवे तो उसे फ्रासुक जान मिले तो ग्रहण करना ॥ ४ ॥

सोल काल एव म० वे मं० जो मा० मान पि० पौंवा व० बहुत रजयुक्त मु मूंजादुला म० आग्र गा० पारनर गा० भीजेहुवे गारमके ग० एकरक्त भ० भूंजेहुवे भ० अप्रासुक भ० अनषणिक म० जानकर मा० माम लाभ पर णो० नहीं ग ग्रहण करे ॥ ॥ मे० वे मि० साधु भि० साध्वी गा० यावत् प० गृहस्थके घर में मे० वे म० जो पु० आर मा० मान पि० पौंव गा० जानत् गा० चावलके सुर पुरे भ० अनेक वक्त दु० दूसरी वक्त ती० तीसरी वक्त म० भूंजेहुवे फा० प्रासुक ए० एषणिक ला० मिले प० ग्रहणकरे ॥ ६ ॥ मे० व मि० साधु भि० साध्वी गा० गृहस्थके घरमें जा० यावत् प० प्रवेश करने के का० मपि

जाणेजा-पिहुय वा,बहुरयं वा भुज्जिय वा, मंथुया, चाउल वा, चाउलपलंब वा, सई भज्जि य अफासुयं, अणेसणिज्जं, मण्णमाणे लाभे संते णो पडिगाहेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा जाव पविट्ठे समाणे से ज्ज पुण जाणेज्जा पिहुय वा जाव चाउलपलंबं वा असइं भज्जियं दुक्खुत्तो वा भज्जियं तिक्खुत्तो वा भज्जियं फासुयं एसणिज्जं जाव लाभे संते पडिगाहेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा गाहावइ

साधु साध्वी को पौंवा, मुरमुरा, धूंगा, ऊंबी, होल्या, वगैरे आधे पकेहुवे मिलने पर भी ग्रहण नहीं करना ॥ ५ ॥ साधु साध्वी को पौंवे, मुरमुरे, ऊंबी, होल्या प्रमुख बहुत भुंज के अचित्त किया होवे तो उस को प्रासुक जानकर ग्रहण करना ॥ ६ ॥ शाक्यादि साधु ब्राह्मण, भिक्षाचारी, इत्यादि मनुष्यों के साथ

सपी णो० नहीं अ० अन्य तीर्थीयोंसग ग० गृहस्थ सग प० अच्छा साधु अ० पार्श्वस्थ के स० साथ गा० गृहस्थके घर पिं० आहार के लिये प० प्रवेशकरे णि० निकले ॥ ७ ॥ से० वे सा० साधु सा० साध्वी ब० बाहिर वि० व्युत्सर्ग स्थान वि० स्वाध्याय स्थान णि० निकलते प० प्रवेश करते णो० नहीं अ० अन्य तीर्थीओ साथ गा० गृहस्थों के साथ प० अपार्श्वस्थ साधु अ० पार्श्वस्थ साथ ब० बाहिर वि० व्युत्सर्ग भूमि वि० स्वाध्याय भूमि नि० निकले प० प्रवेशकरे. ॥ ८ ॥ पूर्ववत् ॥ ९ ॥ से० वे भि० साधु भि० साध्वी गा० यावत् प० प्रवेशकर णो० नहीं अ० अन्य तीर्थीको मा० ब्राह्मणादिकको पा० साधु अ० पार्श्वस्थको

कुलं जाव पविसित्तु कामे, णो अन्नउत्थिएण वा, गारत्थिएण वा परिहारिओवा अ परिहारिएण सद्धिं गाहावइकुल पिंडवायपडियाए पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा बहिया वियारभूमिं वा, विहारभूमिंवा, णिक्खममाणे पविसमाणे वा, णो अण्णउत्थिएण वा, गारत्थिएण वा, परिहारिओ वा अपरिहा रिएण वा सद्धिं बहिया वियारभूमिं वा विहारभूमिं वा णिक्खमेज्ज वा पविसेज्जवा॥८॥

आहार लेने के लिये साधुको गृहस्थ के घर में आना नहीं व निकलना नहीं॥७॥साधु साध्वी को अन्य तीर्थी, ब्राह्मण, पार्श्वस्थ आदि मनुष्यों के साथ दिशा जंगल व स्वाध्याय भूमि में जाना नहीं आना नहीं ॥ ८ ॥

अ० चारों आहार दे० देवे अ० दिलावे ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु भि० साध्वी जा० यावत् प० प्रवेश करते हुए से० वह जं० जो जा० जाने अ० अशनादि चारों आहार अ० अपना ए० एक साधुको स० अंगे करकर पा० प्राणी भू० भूत जी० जीव स० सत्व स० आरंभकर स० तैयारकर, की० मोललेके, पा० उधारले

स भिक्खू वा भिक्खुणी वा गामाणुगामं दूइज्जमाणे णो अण्णउत्थिएण वा, गारत्थिएण वा, परिहारिओ अपरिहारिएण वा सद्धिं गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा जाव पविट्ठसमाणे णो अण्णउत्थियस्स वा गारत्थियस्स वा परिहारिओ अपरिहारिअस्स वा असणं वा ( ४ ) देज्जा वा अणुपदेज्जा वा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा २ जाव पविट्ठसमाणे से ज्जं पुण जाणज्जा असणं वा ( ४ ) अस्संपडियाए, एगं साहम्मियं समुद्दिस्स पाणाइं, भूयाइं, जीवाइं, सत्ताइं, समारम्भ

साधु साध्वी पूर्वोक्त मनुष्यों की साथ ग्रामानुग्राम विहार भी नहीं करे ॥ ९ ॥ साधु साध्वी पूर्वोक्त मनुष्यों को अशनादि चारों प्रकार का आहार आप देवे नहीं दूसरे से दिलावे नहीं ॥ १० ॥ किसी गृहस्थने एक साधु के लिये जीवों की घात कर आहार निपजाया, मोल लिया, उधार लिया, निर्बल की पास से बलात्कार से लिया, मालिक की आज्ञा बिना लिया, या साधु का निवास स्थान में लेकर आया या नगरादि आपने हाथ किया, या दूसरे से करवाया या उस को घर बाहिर निकाला होवे, या घर में रखा होवे गृहस्थने

अ॰ बलात्कारसेले, अ॰ मालिक की रजाबिनदे, अ॰ सन्मुखलादे आ॰ ऐसा करदे, त॰ तथाप्रकार अ॰ असनादि चार आहार पु॰ दूसरेने निपजाया अ॰ दातारने बनाया ब॰ घर बाहिर णी॰ निकाला अ॰ नहीं निकाला, अ॰ अपनेलिये प॰ दूसरे कलिये प॰ भोगाया अ॰ नहीं भोगा अ॰ अफासुक आ॰ यावत् णो॰ नहीं प॰ ग्रहण करे ॥ ११ ॥ ए॰ ऐसे ब॰ बहुत सा॰ साधु ए॰ एक सा॰ साध्वी, ब॰ बहुत सा॰ साध्वी स॰ उने उद्देश च॰ चारों आ॰ आलापक भ॰ कहना ॥ १२ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी गा॰

समुद्दिस्स, कीयं, पामिच्चं, अच्छेज्जं, आणिसिट्ठ, अभिहड आहट्टु चेतेति तहप्पगार अ सण वा(४)पुरिसंतरकड अपुरिसंतरकडं वा बहिया णीहडं वा, अणीहडं वा, अतट्ठियं वा अणतट्ठियं वा, परिभुत्त वा अपरिभुत्त वा, आसेविय वा अणासेविय वा, अफासु य जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ ११ ॥ एवं बहवे साहम्मिया, एगा साहम्मिणी, बहवे साहम्मिणीओ, समुद्दिस्स चत्तारि आलावगा भाणियव्वा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा

उस को अपना करके रखा होवे या नहीं और उसने उपयोग में लिया होवे तो भी उस को अफासुक और अनेषणिक जानकर साधु तथा साध्वी ग्रहण करे नहीं, ॥ ११ ॥ उक्त कथनानुसार बहुत साधु के लिये किया, एक साध्वी के लिये किया, या बहुत साध्वी के लिये किया यों चारों आलापक कहना ॥१२॥ जो भोजन गृहस्थने संख्या मुकरर कर शाक्यादि साधु, ब्राह्मण, अतिथि, दरिद्रि, व भिखारी इत्यादि के

गृहस्थके घर जा० पात्र प  ध्यान करते हुवे से० व ज० जो मा० जाने अ० अन्नादि चारों आहार ब० बहुत स० श्रमणादि साधु मा० ब्राह्मण अ० अतिथि कि० कृपण व० भिखारी प० गिन २ कर स० उद्देशकर पा० प्राण जा० यावत स० सत्व का स० आरंभकर आ० सेवन कर सा० या अ० नहीं सेवाहुवा अ० अप्रासुक अ० अनेषणीय जा० यावत नो नहीं प० ग्रहे ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी, गा० गृहस्थके घरमें प० प्रवेश करते हुए मे वे जे० जो जा० जाने अ० अन्नादि चारों प्रकार का आहार ब० बहुत स०

( २ ) गाहावइकुलं जाव पविट्ठेसमाणे से ज्जं पुण जाणेज्जा असणं वा ( ४ ) बहवे समण माहण अतिथि किवणवणीमए, पगणिय ( २ ) समुद्दिस्स पाणाइं जाव सत्ताइं समारम्भ आसेविय वा अणासेवियं वा अफासुयं अणेसणिज्जंति मण्णमाणे लाभेसंते जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गाहावइकुलं जाव पविट्ठे समाणे से ज्जं पुण जाणेज्जा असणं वा ( ४ ) बहवे समणे माहण अतिथि कि

किये प्राणी आदि की घात कर निपजाया होवे उस आहार को उन्होंने भोगवा होवे या नहीं तो भी उसे अप्रासुक अनेषणीक जानकर लाभ होने पर भी ग्रहण नहीं करना ॥ १३ ॥ यदि भोजन गृहस्थने बहुत साधु, ब्राह्मण अतिथि, कृपण, व भिखारी के लिये बनाया होवे और घर के बाहिर न निकाला होवे, अपने आप में न लिया होवे, भोगवा न होवे तो ऐसा अनेषणिक आहार साधु साध्वी ग्रहण

साधु मा० माह्मण अ० अतिथि कि०कृपण व० भिखारीको स० उद्देशकर पा० प्राणादि जा० यावत् आ० लाकर दे० देवे तं० उसे त० तथा प्रकार अ० अशनादि चारों आहार को अ० स्वयं बनाया अ० घर बा हिर नहीं णी०लाया अ०उसे अपना न किया अ० भोगवा नहीं अ० सेवन नहीं किया अ० अफ़ासुक अ० अनेषणिक णों०नहीं प० लेवे॥१४॥अ० अब पु०फिर ए०ऐसा जा०जाने पु०दूसरेने बनायाब०बाहिर निकासा अ०अपनाकिया प० भोगवा आ० सेवन किया फ० फ़ासुक ए० एषणिक जा० यावत् प० ग्रहण करे. ॥ १५ ॥ से० वे भि०

वणत्रणीमए समुद्दिस्स पाणाइ ( ४ ) जाव आहट्टु चेतेति, त तहप्पगार अस णं वा ( ४ ) अपुरिसतरकडं अबाहियाणीहडं अणत्तट्ठियं अपरिभुत्त अणासेवितं अफासुय अणेसणिज्ज जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १४ ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा पुरि सतरकडं बहियाणीहडं अत्तट्ठिय परिभुत्तं आसेवियं फासुयं एसणिज्ज जाव पडिग्गाहेज्जा ॥ १५ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावइ कुलं पिंडवायपडियाए पविसित्तुकामे, से जा

-हीं करे ॥ १४ ॥ यदि ऐसा जानने में आवे कि यह भोजन दूसरे के पास कराया है, बाहिर निकासा है, अपने नेश्राय में किया है, भोगवा है, तो ऐसे फ़ासुक निर्दोष आहार जानकर ग्रहण करना ॥ १५ ॥ जिस कुल में नित्य छ्वात्रय दियाजाता होवे, प्रारंभ में अग्रपिंड निकाला जाता होवे, भोजन दान दिया जाता

सा• आचार मं० जिसको स० सर्वार्थमें स० समितियुक्त स० ज्ञानादिसहित स० सदा यत्नाकर

समिते सहिते सयाजए त्तिबेमि ॥ १७ ॥ इति पिंडेसणाज्झयणस्स—पढमोद्देसो सम्मत्तो

पि• ऐसा बे० कहताहूं इ० यह पि० पिण्डेषणा अ० अध्ययन का प० प्रथम उद्देशा

मैं श्री तीर्थंकर के कथनानुसार कहता हूं ॥ १७ ॥

* * *

से भिक्खू वा ( २ ) गाहावइकुल पिंडवाय पडियाए अणुपविट्ठे समाणे से ज्ज पुण जाणेज्जा असणं वा ( ४ ) अट्ठमियोसहिएसु, वा अद्धमासिएसु वा, मासिएसु वा, दोमासिएसु वा तिमासिएसु वा, चउमासिएसु वा, पंचमासिएसुवा, छ

से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थके घरमें पि० आहार प० गृहण करने की अ० प्रवेश करते हुवे से० वे ख० जो पु० फिर जा० जाने अ० अशनादि चारों आहार, अ० आठ उपवास के पारणेका, म० पखके उपवास का पारना, मा० मास समण का दो० दोमहीने का, ति० तीनमहीने का, च० चारमहीने का प०

गृहस्थ के घर में आठ उपवास * पंदरह उपवास, मासखमण, दो मास समण, तीनमास समण, चार मास समण, पंचमास समण, छे मासखमण का पारणा होवे या ऋतु का, ऋतु के अंत का और ऋतु के

* कोई टब्बा वाले आठ उपवास के पारणे को अष्टमी का उपवास का पारणा लिखते हैं

पावनतीने का ग० ऐमीने का पानेका उ० अनुका, उ० अतुकेमन्निर द्रिक, उ० अनुपन्नेका प० पुरुष म० माणु पा० ब्राम्हण भ० भोमिय कि० कृपण व० भिखारी ए० एक में से उ० निकालकर प० देनाहुवे पे० दृष्टक दो० दोमें से उ०निकालकर प०देताहुवा पे०देखकर ती०तीनमें से उ०निकालकर प०देता हुवा पे० देखकर च० चारमें से उ० निकालकर प० देता हुवा पे० देखकर कु० कुंभीके मुखसे का० काष्ट के पात्रमें से से० संचयकिया हुवा नि० निचे नहीं ऐसा प० देता हुवा पे० देखकर त० तथाप्रकार अ०

मासिएसु वा, उऊसु वा, उठसंधीसु वा, उउपरियट्टेसु वा— बहवे समण माहण अतिहि किवण-वणीमगे एगातो, उक्खातो परिएसिज्जमाणे पेहाए, दोहिं उक्खा हिं परिएसिज्जमाणे पेहाए, तिहिं उक्खाहिं परिएसिज्जमाणे पेहाए, चउहिं उक्खा हिं परिएसिज्जमाणे पेहाए, कुंभीमुहातो वा, कालोवातितो वा, सणिहिसणिचयाओ वा परिएसिज्जमाणे पेहाए तहप्पगारं असण वा ( ४ ) अपुरिसंतरकडं जाव आणा स

मासि दिन का उत्सव होवे; उस के लिये अशनादि चारों प्रकार के आहार बनाये होवे और श्रमणादि साधु, ब्राम्हण, अतिथि, दरिद्री व याचक वगैरों को भोजन के लिये परोसाये होवे, उन को एक, दो, तीन, चार मिट्टी के पात्र से परोसते होवे, गृहस्थने स्वयं बनाकर भोगता न होवे तो उस आहार को अप्रासुक तथा अनेषणिक मानकर ग्रहण नहीं करना और दूसरेने बनाया होवे और गृहस्थने भोगलिया होवे तो

मधनादि आहार अ० स्वयंने किया जा० यावत् म० मोगा नहीं हो अ० अप्रासुक अ० अनेषणिक जा० यावत् णो० नहीं ग्रहणकर अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० माने पु० दूसरेने किया जा० यावत् आ सोमनाकिया फा० निर्जीव शुद्ध जा० यावत् प० ग्रहण करे ॥ १ ॥ से० ये भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेश करते हुवे स० से जा० जो पु० और कु० कुल जा० जाने त० वह ज० यथा—उ० उग्र कुल भो० भोगकुल रा० राजकुल ख० क्षत्रीयकुल इ० इक्ष्वाकुकुल ह० हरिवंशकुल ए० एषिककुल वे० वैश्य

क्ति अफासुय अणेसणिज्ज जाव णो पडिग्गाहेज्जा अह पुण एवं जाणेज्जा पुरिसत रकड जाव आसेवित फासुयं जाव पडिग्गाहेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव पविट्ठेसमाणे से जाइं पुण कुलाइं जाणेज्जा त जहा—उग्गकुलाणि वा, भोग कुलाणि वा, राइण्णकुलाणि वा खत्तियकुलाणि वा, इक्खागकुलाणि वा, हरिवंसकुलाणि वा, एसियकुलाणि वा, वेसियकुलाणि वा, गंडागकुलाणि वा, कोट्टागकुलाणि वा

उस आहार को प्रासुक व एषणिक मानकर ग्रहण करना ॥ १ ॥ १ उग्रकुल ( आदिनाथजीने ) जो आ रक्षपने स्थापन किया २ भोगकुल पूज्यस्थान स्थापन किया, ३ राज्यकुल राज्यपन स्थापन किया, ४ क्षत्रियकुल जो राज्याधीश किया, ५ इक्ष्वाकुकुल, ( आदिनाथजी का ) हरिवंश कुल ( नमिनाथजी का ) ये छे कुल क्षत्रियों के है ७ एष्यकुल ( गोपाल ) ८ वैश्यकुल ९ गंडक कुल ( उद्घोषणा करनेवाला )

कुल ग० गडरूकुल को० कोशगकुल ग्रा० ग्रमपत्कनकुल यो० पाक्कणालियकुल भ० अन्य त० तथा प्रकारके कु कुलमें भ० दुगंच्छा उत्पन्न नहीं होवे भ० निंदनीक कुलोंमें भ० अशनादि चारों आहार फा० फासुक ए० एषनिक जा० यावत् प० ग्रहण करे ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थके घरमें पिं० आहार क अर्थे प० प्रवेश करते हुवे से० वे ए० ऐसा जा० जाने अ० अशनादि चारों आहार, स० समुदायमें पि० पितृ निमित्त इं० इन्द्रमहोत्सवमें, खं० स्कन्धमहोत्सवमें रु० रुद्रमहोत्सवमें, मु० मुकुंदमहोत्सवमें भू० भूत

गामरक्खकुलाणि वा, पोक्कसालियकुलाणि वा, अण्णयरेसु वा तहप्पगारेसु कुलेसु अदुगञ्छिएसु अगरहितेसु वा, असणं वा ( ४ ) फासुयं एसणिज्जं जाव पडिगाहेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठे समाणे से ज्जं पुण जाणेज्जा—असणं वा ( ४ ) समवाएसु वा, पिंडणियरेसु वा, इंदमहेसु वा खंदमहेसु वा, रुद्दमहेसु वा, मुगुंदमहेसु वा, भूतमहेसु वा, जक्खमहे

१० आहार कुल (सुनार) ११ ग्राम रक्षकुल (कोतवाल का) १२ पोक्कसालियकुल (वनकरका) यह कुल ऐसे के घर शाखकुल तथा अन्य ऐसी जाति के कुल कि जहां उत्तम आचार होवे जहां जाने से तिरस्कार नहीं होवे या निंदा नहीं होवे ऐसे कुलों में साधु निर्दोष आहार ग्रहण करे ॥ २ ॥ कोई समय गृहस्थ के यहां बहुत लोगों का समागम मिला होवे, पितृ भोजन, इन्द्रका, स्कंध का, रुद्रका, ऐसे अन्य

महोत्सवहो, ज० यक्षमहोत्सवहो, णा० नागमहोत्सवहो थू० स्तूपमहोत्सवहो चे० चैत्यमहोत्सवहो रु० वृक्षमहो त्सवहो, गि० पर्वतमहोत्सवहो द० गुफाका महोत्सवहो अ० कूपमहोत्सवहो त० तळावमहोत्सवहो द० द्रहमहो त्सवहो णं० नदीकामहोत्सव स० सरोवर महोत्सवहो, सा० समुद्रका महोत्सवहो, आ० स्थान महोत्सवहो अ० अन्य और त० तथा प्रकारके वि० विविध प्रकारके म० महोत्सव व० होवेहो प० बहुत स० साधु मा० ब्राह्मण अ० अतिथी कि० कृपण व० भिक्षुक ए० एकवरतन से उ० निकाल प० देवाता पे० देखकर दे० दो जा० यावत् सं० विनाशिक स० अविनाशिक त० तथा प्रकार अ० अशनादि चारों आहार अ०

सु वा, णागमहेसु वा, थूममहेसु वा, चेइयमहेसु वा, रुक्खमहेसु वा, गिरिमहेसु वा, दरिमहेसु वा, अगडमहेसु वा, तडागमहेसु वा, दहमहेसु वा, णादिमहेसु वा, सरमहेसु वा, सागरमहेसु वा, आगरमहेसु वा, अण्णतरेसु वा, तहप्पगारेसु विरूवरूवेसु, महामहेसु, वट्टमाणेसु, बहवे—समण माहण—अतिहि—किवण—वणीमए—एगातो उक्खातो परिएसिज्जमाणे पेहाए, दोहिं जाव संणिहिसंणिचयातो वा परिएसि

भी कोई महोत्सव होवे और वहां शाक्यादि साधु, ब्राह्मण, अतिथि, दारिद्रि, भिक्षु, भाटचारण, एकत्रित हुवे होवे उन को एक या अनेक पात्र से भोजन निकालकर देते होवें, गृहस्थने स्वयं बनाने पर भोगवा नहीं होवे उस अशुद्ध आहार को साधु ग्रहण नहीं करे. यदि पूर्वोक्त कार्य के लिये बनाया हुवा भोजन में

लाकार ग्रतापर मा० पारए पा० नहीं प्र प्रगणकरे ॥ म० अप पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने दि०
ला ने० ३ररा दा० दिया भ० और म० ता भुं० भोगवते प० देखकर गा० गृहपति की मा०
भजा गा० गृहपतिकी भ० भगिनी गा० गृहपति का पु० पुत्र, गा० गृहपतिकी पु० पुत्री, सु० पुत्रवधू धा०
धायमाता दा० दास दा० दासी क० नोकर क० नोकरनी से० वे पु० पहिले मा० देखकर आ० आयु
ष्यवान ! भ० बहिन ! दा० इसमें से० मुझे इ० इसमेंसे भ० कुछ भो० भोजन जात से० ऐसे व० कहते
का प० इतना भ० अशनादि चारों आहार भ० लेकर द० दो ग० तथा प्रकार भ० अशनादि चारों

अमाणे पेहाए तहप्पगारं असणं वा (४) अपुरिसंतरकडं जाव णो पडिग्गाहेजा
॥ अह पुण एवं जाणेजा दिण्णं जं तासिं दायव्वं, अह तत्थ भुंजमाणे पेहाए गा
हावति भारियं वा, गाहावति भगिणिं वा, गाहावति पुत्तं वा, गाहावति धूयं वा, सु
ण्हं वा, धाई वा, दासं वा, दासिं वा, कम्मकरं वा, कम्मकरिं वा, से पुव्वामेव
आलोएज्जा आउसो त्ति वा भगिणी त्ति वा, दाहिसि मे इत्तो अन्नयरं भोयणजायं?
सेवं वदंतस्स परो असणं वा (४) आहट्टु दलएज्जा तहप्पगारं असणं वा (३)

प जिसको दे। आप उनको दिया होवे, भोगवने का होवे उसने भोगव लिया होवे, और कुटुम्बी जन भोगवते
होवे तो साधु गृहपति का, उन की स्त्री, पुत्र, पुत्री, दास, दासी, नोकर, नोकरनी को देखकर कहे कि
आयुष्यवान ! इस भोजन में से मुझे कुछ देवोगे ? साधु का ऐसा वचन सुन के देवे तो उस को प्रासुक

सयत्ताणं जाएज्जा परो वा से देज्जा फासुयं जाव पडिग्गाहेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) परं अद्ध जोयण मेराए संखडिं णच्चा संखडि पडियाए णो अभिसधारे ज्जा गमणाए ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) पाईणं संखडी णच्चा पडिणं गच्छे अणाढायमाणे, पडीणं संखडिं णच्चा पाईणं गच्छे अणाढायमाणे, दाहिणं संखडिं णच्चा उदीणं गच्छे अणाढायमाणे, उदीणं संखडिं णच्चा दाहिणं गच्छे अणाढा

णाहार स स्वयं जा० याचनाकरे प दूसरे को द० देवे फा० फासुक प० ग्रहण करे ॥३॥ से० वे साधु साध्वी प० दोकोस के अन्दर सं जेमनको भ० जानकर सं० जेमन प० लेनेको णो० नहीं अ०इच्छे ग० जानेको ॥ ४ ॥ से० वे साधु साध्वी पा० पूर्वमें सं० जेमन ण० जान प० पश्चिम ग० जावे अ० अनादर करता; प० पश्चिम में सं जेमन ण० जान पा० पूर्व में ग० जावे अ० अनादर करता दा० दक्षिण में सं० जेमन ण०जान उ० उत्तर में ग०जावे अ०अनादर करता उ०उत्तर में सं० जेमन ण०जान द० दक्षिण

सथा एपणिक जा कर ग्रहण करना ॥ ३ ॥ दो कोश से अधिक जाना साधु को कल्पता नहीं है, परंतु दो कोश के अंदर यदि कोइ जेमन होवे तो उस में से भोजन लेने के लिये जावे नहीं ॥ ४ ॥ जिस दिशा में जेमन होवे उस दिशा में साधु जावे नहीं परंतु इस में लोलुपी नहीं बनता हुवा उस का तिरस्कार कर

जावे भ० भागार करता ॥ ४ ॥ ज० जहां मा० यह स० जेमन सि० कदाचित् से० त ज० यथा गा० गामें ण० नगर में खे० खेटमें क० कब्बमें मं० मंडपमें प० पाट्टणमें भ० भागर में दो० द्रोणमुखमें णि० निगम में मा० आश्रम में रा० राजधानी में सं० सन्निवेश में स० जेमन स० जेमनमें ने णो० नहीं अ० भिगमकर गा० जानेका क० केवलीने फरमाया भा० आगमन यह है ॥ ५ ॥ स० जेमन में गे स० जेमन स० सन भ० जानाहोते भ० आहारकर्मी उ० उद्देशिक मी० मिश्र की० मोललिया पा० उधार लिया अ० छीनकर

गमाणे ॥ ५॥ जत्थेन सा संखडि सिया, त जहा गामासि वा, णगरसि वा, खेडासि वा, कब्बडसि वा, मडंबंसि वा, पट्टणासि वा, आगरासि वा, दोणमुहासि वा, निगमासि वा, आसमसि वा, रायहाणिसि वा, सणिवेसासि वा सखडिं संखडियाए णो अभि संधारेज्जा गमणाए, केवली बूया आयाणमेय ॥ ६ ॥ संखडिं संखडिपडियाए अ भिसंधारमाणे— आहाकम्मिय वा, उद्देसिय वा, मीसजाय वा, कीयगड वा पामिच्च

भय दिया में जावे ॥ ४ ॥ जिस ग्राम, नगर, पुर, पाटणादि में जेमन होवे वहां जाना नहीं क्यों कि कारन ज्ञानीने जमन में जाने म कर्मों का आश्रव कहा है ॥ ६ ॥ यदि साधु उक्त प्रकार के जेमन में जायेंगे तो धार्मिक गृहस्थ भाजन एकत्र करेंगे, आयकर्म देकर आहार करेंगे, स्वयं के और साधु के लिये सचित्त आहार बनावेंगे योग्य वस्तु मोल लाकर देंगे उधार लेकर देवेंगे, निर्बल के पास से बलात्कार से लेकर देवेंगे,

सिया म० एगाविनलिया म० सन्मुखसमकरदे आ०ऐसा दि०देता हुवा मुं०भोगवे अ गृहस्थ भि०साधुके प० लिये खु छोटे दु० द्वारको म० बडा कु० करे म० बडे द्वारको खु० छोटे दु० द्वार कु० करे स० समभूमाको वि० विसमकरे वि० विसम समाको स० समकरे प० हवावाली सि० समाको पि० विनाहवाकी कु० करे पि० विनाहवाकी प० हवाकी करे अं० अंदर या० बाहिर उ० उपाश्रयकी ह० हरिकाय छि० छेद २ कर दा० खिदार २ कर सं० बिछोना स० बिछावे ए० ऐसी तरह वि० दोषसमे सि० स्थानक के

वा अच्छेज्ज वा, अणिसिट्ठं, वा अभिहडं, वा आहट्टु चिज्जमाण भुंजेज्जा असंजए भि-क्खुपडियाए—खुड्डियदुवारियाओ महल्लियाओ कुज्जा, महल्लियदुवारियाओ खु-ड्डियाओ कुज्जा, समाओ सिज्जाओ विसमाओ कुज्जा, विसमाओ सिज्जाओ समाओ कुज्जा, पवायाओ सिज्जाओ णिवायाओ कुज्जा, णिवायाओ सिज्जाओ पवायाओ कु-

धणि की आज्ञा विना देवेंगे, अन्य स्थान से सन्मुख लाकर देवेंगे; इस तरह दिया हुवा आहार वे खावेंगे और भी साधु के लिये अंधकारवाली जगह में प्रकाश करने के लिये छोटा द्वार का बडा द्वार करेंगे, सम भूमि को विषम करेंगे, विषम भूमि को सम करेंगे, शिशिर ऋतु में शीत का निवारन के लिये वायु आने के मार्ग का रुंधन करेंगे, उष्ण काल में वायु आने के लिये छोटे द्वार करेंगे, अंदर या बाहिर हरी घास अंकुरादि होवेंगे उन का छेदन करेंगे, छेदन करने योग्य नहीं होंगे तो मृत्तिकादि से आच्छादित

मं० मे ए० एकदा अ० अन्यतर स० वमन का आ० मागवेमा पि० पिवेगा छ दस्तोंकर व० वमनकरे मु० खानेपर वा० या से० वे पा नहीं स सीधा प परिणमे अ० अन्यतर से० मे दु० दुःख रो० रोगा आ आतक म०समुत्पन्न होवेगा के०केवलीने फरमाया आ०कर्म बन्ध का हेतु ए०यह ॥ १ ॥ इ० यहां स० निश्चय भि० साधु गा० गृहपति गा० गृहपतिनी प० परिव्राजक प० परिव्राजिका ए० एक स्थान सो० मदिरा पा पीकर मो० मदे व० मिश्रपने हु० बाहिर उ० उपाश्रय प० देखते हुव णो० नहीं

से एगया अण्णतरं ससहिं आसित्ता, पिवित्ता, छड्डेज्ज वा, वमेज्ज वा, भूत्ते वा से णो सम्म परिणमेज्जा, अण्णयरे वा से दुक्खे रोयातंके समुप्पज्जेज्जा केवली बूया आयाणमेयं ॥ १ ॥ इह खलु भिक्खू गाहावतीहिं, वा गाहावतिणीहिं वा परिवायएहिं वा, परिवाइयाहिं वा एगज्झ सद्धिं सोंड पाउ भो था तिमिस्स हुरत्था वा उवस्सय पडिलेहमाणे णो लभेज्जा, तमेव

भेमनवार के भोजन में भिष्ट स्निग्ध, व मद्यासेवाले पुरुषों का सेवन करने से वमन, विशूचिकादि अनेक रोग उत्पन्न होते हैं केवली भगवानने इस में आश्रवका कारण बतलाया है ॥ २ ॥ ऐसे भेमनवार में बहुत स्त्री, पुरुषों, योगी, योगिनी से मिलकर आहार पाचन के लिये कदापि मद्यपान भी करेगा फिर नशे में बेभान बन के स्वस्थान नहीं पहुंचता रास्ता में ही गिरजायगा वहां मदोन्मत्त बन विषयासक्त होगा

उ० मित्र ग० ग्राम उ० उपाश्रयके मे० मिश्रभाव मा० अंगीकार कर अ० परस्पर णा० या म० य
म० उल्लपन रि० रित्रीत होकर इ० स्त्री शरीर का कि० नपुसक के त० उस मि० साधु के उ० समीप
आकर पू० कहे आ० आयुष्मान साधु ! म० मय आ० बगीचेमें उ० उपाश्रयमें रा० रातको वि० सन्ध्या
को गा० ग्राम धर्म से क० करेंगे र० एकान्तमें मे० मैथुन धर्म प० परिचारणा करेंगे सा० भवतेगी त० उस
का से० साधक मा० आवेगा अ० अयोग्य से० निश्चय ए० यह सं० जानकर ए०यह सा० कर्मबन्धके

उवस्सयं समिमिस्सामाव मावेज्जआ अण्णमण्णे वा से मते विप्परियासिय भूते इत्थिविग्गहे

वा किलीव वा त भिक्खु उवसंकमित्तु बूया "आउसतो समणा अहे आरामंसि वा,

अहे उवस्सयांसि वा, राओ वा, वियाले वा, गामधम्मणियंतिय कट्टु रहस्सियमेहुणध-

म्मपरियारणाए आउट्ठामो," स येगेतितो सातिज्जेज्जा । अकरणिज्ज चेय सखाए

। एत आयतणा संति संविज्जमाणा पच्चात्ताया भवति तम्हा से सजए णिग्गंठे

एक समय में कोइ व्यभिचारिणी स्त्री या नपुंसक साधु पे आसक्त होकर कहे कि अहो साधु ! इस बगीचे
में या उपाश्रय में अमुक रात्रि को रहेंगे और अमुक समये भोगविलास करेंगे इस तरह उस साधु का
आमंत्रण देकर यत्न में करेंगे और वह साधु कामातुर हो कुकर्म करने से भ्रष्ट बन जायगा इस लिये इस
स्थान का अयोग्य जान सेवन में आना नहीं क्यों की वहाँ जाने से पूर्वोक्त नुकसान होते हैं, इस लिये पूर्व

से० वृद्धिपावे हुवे प० पीडाकारी भ० होवे त० इसलिये स० वे से० साधु नि० निर्ग्रन्थ त० तथा प्रकारके पु० पूर्व जेमन प० पश्चात् जेमन सं० जेमन में सं० भोजनार्थ णो० नहीं अ० धारे ग० जाना ॥२५ से० वे भि० साधु साध्वी अ० दोनोंमें से एक सं० जेमन सो० सुनके नि० अवधार कर स० वहां जाने उ० उत्सुक बन अ० स्वयं पु० निश्चय स० जेमन में णो० नहीं सं० समर्थ त० वहां इ० दूसरे कु० कुलमें सा० बहुत घर की ए० निर्दोष वे० विशेषनिर्दोष पि०आहार आदि प०ग्रहण करके आ०आहार आ०भोगवे मा० माया ठा० स्थान सं० स्पर्शे, णो० नहीं ए० ऐसे क० करे॥से० वे त० तहां का० समय पर अ० मवे

तहप्पगारं पुरेसंखडिं वा पच्छासंखडिं वा संखडिं संपडियाए णो अभिसं धारेज्जा गमणाए ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अन्नतर संखडिं वा सो- च्चा णिसम्म संपरिहावति उस्सूयभूतेण अप्पाणेणं "धुवा संखडी" णो संथाएति तत्थ इयरेतरेहिं कुलेहिं सामुदाणियं एसियं वेसियं पिंडवायं पडिगाहित्ता आहारं आ हारेत्तए माइठाणं संफासे। णो एवं करेज्जा ॥ से तत्थ कालेणं अणुपविसित्ता तत्थे

संखडी तथा पश्चात् संखडी में संखडी ग्रहण करने को जाना नहीं ॥ २ ॥ यदि कोइ साधु साध्वी जेमन का नाम श्रवण करके वहां जेमन में भिक्षार्थ आयगा तो वह फिर भिन्न २ कुलों में से निर्दोष आहार लाने का परिश्रम नहीं करेगा किन्तु वहां ही सदोष आहार का भोगी होगा ऐसा प्रमाद बुद्धि का कारण जेमन

गकर न०गरी १०नगर० क क०पुरुषों ग० अनेक घरों मा ए०निर्दोष वे०विशेषनिर्दोष पि०आहार प०ग्रहणकर मा०आहार मा०भोगवे ॥३॥ से० वे भि०साधु साध्वी से० वे जं०जो पु०और मा०जाने गा०ग्राममें जा० यावत् रा० राजधानी में इ० इस प० निश्चय गा० ग्राममें जा० यावत् रा० राजधानी में सं० जेमन लि० स्थान में उस गा० ग्राम को रा० राजधानी को म० जेमन प० लिये णो० नहीं अ० धारे ग० जाने का के० केवलीने बू० कहा आ० कर्मबन्ध का कारण से० यह ॥ आ०आकीर्ण सं० जेमन में अ० प्रवेश करते पा०

तंरतोर्हि कुल्लेहि सामुदाणिय एसिय वेसिय पिंडवाय पडिगाहित्ता आहार आहारेज्जा ॥ ३ ॥ स भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण जाणेज्जा गाम वा, जाव रायहाणिं वा इमंसि खलु गामंसि वा जाव रायहाणिंसि वा सखडी सिया तंपिय गाम वा राय हाणिं वा संखडिपडियाए णो अभिसंधारेज्जा गमणाए, केवली बूया आयाण मेयं ॥ आइण्णोवमाण सखडिं अणुपविस्समाणस्स पाएण वा पाए अक्कंतपुव्वे भ-

को वहां कदापि जाना नहीं परंतु भिक्षा समय बहुत घरों से आधाकर्मादि दोष रहित आहार ग्रहण करके भोगवना ॥ ३॥ ग्राम या नगर में जेमन होवे तो वहां जाने की इच्छा साधु को करना नहीं; क्योंकि केवल ज्ञानीने इस में कर्मबंध का कारण बताया है जैसे कि वहां जिमन को बहुत मनुष्य एकत्रित होते हैं उस की भीड में गृहस्थों के पांवसे साधु के पांव हाथ से हाथ, पात्र से पात्र मस्तक से मस्तक,

पगसेपग अ० अथडाना पु० पहिले म० होवे, ह हाथसे हाथ स० सघार्षित पु० पहिले म० होवे, पा० पाम से पाम अ० आस्फालन पु० पहिले म० होवे, सी० मस्तकसे मस्तक स० संघट्ट पु० पहिले म० होवे, का शरीर से शरीर सं० संक्षोभित पु० पहिले म० होवे, दं० लकडीसे, अ० हड्डीसे, मु० मुष्टिसे, ले० पत्थरसे, क० कवेलूसे अ० मारपीट पु० पहिले म० होवे सी० सीतोदकसे उ० छींटना पु० पहिले म० होवे, र० धूलसे प० भराना पु० पहिले म० होवे अ० अनेषणीक प० भोगवना पु० पहिले म० होवे, अ० दूसरे को दि०

वति, हत्थेण वा हत्थे सचालियपुव्वे भवति, पाएण वा पाए आवडियपुव्वे भवति सीसेण वा सीसे संघट्टिय पुव्वे भवति, काएण वा काए सक्खोभियपुव्वे भवति, दंडेण वा, अट्ठिणा वा, मुट्ठिणा वा, लेलुणा वा, कवालेण वा, अभिहय पुव्वे भवति, सीतोदएण वा उसीत्तपुव्वे भवति रयसा वा परिघासियपुव्वे भवति अणेसणिज्जेण वा परिभुत्तपुव्वे भवति, अण्णेसिं वा दिज्जमाणे पडिगाहितपुव्वे भवति, तम्हा स संजए णिग्गये तहप्पगारं आइण्णोमाणं संखडिं सखडिपडियाए णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ४

और शरीर से शरीर का संघट्टन होगा, यहां कोइ क्रोधी साधु को लकडी से, मास्थि से, पत्थर से, कवेलू से वगैरा जो मिलेगा उस से मारेगा, सचित्त जल का संघट्टा होगा, बहुत जनों के चलने से उडती हुइ धूलि से साधु का शरीर खराब होगा, अशुद्ध आहार ग्रहण किया जायगा, अन्य को देने को आहार साधु मांगेगा या गृहस्थ देगा, जिस से अंतराय लगेगा, ऐसे अनेक दोषों का स्थान संखडी को जान साधु को

हो गुरे प० लेना पु० पहिले म० ग्रहे, न० इसलिये म० व मे० साधु पि० निग्रन्थ त० तथा प्रकार आ० धीरवाले म० जेमन में मे० जेमन केलिये णो० नहीं भ० ग्रहे ग० जानेका ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थके घरमें पि० आहारलेने प० प्रवेशकरे तब से० वे जं० जो पु० और आ० जाने भ० चारों आहार प० शुद्ध स्यात् अ० अशुद्ध स्यात् वि० शंका स० युक्त म० अपनेको अ० अशुद्ध ल० लेश्यासे त० तथा प्रकार का अ० अशनादि चारों आहार ला० मिलनेपभी णो० नहीं प० ग्रहणकरे ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थके घरमें प० प्रवेश करने के का० अभिलाषी स० सर्व भ० उपकरण सा० साथलेकर गा० गृहस्थके घरमें पिं० आहार प० लेनेको प० प्रवेशकरे णि० निकले ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु

से भिक्खू वा ( २ ) गाहावइ कुल पिंडवाय पडियाए पविट्ठसमाणे से ज्ज पुण जाणेज्जा असणं वा ( ४ ) एसणिज्ज सिया अणेसणिज्ज सिया वितिगिच्छसमा वण्णेण अप्पाणेणं असमाहडाए लेस्साए तहप्पगारं असणवा (४) लाभेसंते णो पडिग्गा हेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गाहावतिकुल पविसिउ कामे सव्वं भंडग मायाए गाहावति कुल पिंडवाय पडियाए पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा ॥ ६ ॥ से भिक्खू

तथा प्रकार का जेमन में जाना नहीं ॥ ८ ॥ गृहस्थ के घर भिक्षार्थ गये मुनि को जो आहार सदोष के निर्दोष होने पर शंका युक्त मालुम पडे तो वह आहार मिलनेपर भी नहीं ग्रहण करना ॥ ९ ॥ साधु

साध्वी ब॰ बाहिर वि॰ स्वाध्याय स्थान वि॰ स्थंडिल स्थान णि॰ जाते हुवे प॰ प्रवेश करते हुवे स॰ सर्व भं॰ भंडम उपकरण मा॰ साथले ब॰ बाहिर वि॰ स्वाध्याय स्थान वि॰ स्थंडिल स्थान प॰ प्रवेशकरे णि॰ निकले ॥ ७ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी गा॰ ग्रामानुग्राम दू॰ विहार करते स॰ सर्व भ भंडोपकरण मा॰ साथले गा॰ ग्रामानु ग्राम दू॰ जावे ॥ ८ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी अ॰ अथ पु॰ फिर ए॰ ऐसा

वा [ २ ] बहिया वियार भूमिं वा विहारभूमिं वा णिक्खम्ममाणे पविसमाणे स-र्व्वं भंडग मायाए बहिया वियारभूमिं वा विहारभूमिं वा णिक्खमेज्जा वा पविसेज्जा वा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगामं दूइज्जमाणे सव्व भंडग—मायाए गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अह पुण एवं जाणेज्जा ति

साध्वी गृहस्थ के घर भिक्षार्थ जावे अपना भंडोपकरण * साथ ले जावे ॥ ६ ॥ साधु साध्वी स्वाध्याय भूमि वा स्थंडिल भूमि में जावे समय अपना भंडोपकरण साथ लेकर जावे ॥ ७ ॥ पूर्वोक्त रीत्या साधु साध्वी ग्रामानुग्राम विचरते अपना सर्व भंडोपकरण साथ रखे ॥ ८ ॥ साधु साध्वी बहुत बारिस पडते धूंयर

---

* भंडोपकरण साथ ले जाने का मतलब यह है कि किसी के पास वस्त्रपात्र बिना अमर्यादित रीति से नहीं जाना

साधु साध्वी से० वे जं० मो कु० कुल जा० जाने तं० त जह ज०यथा स०महाराजा रा०सामान्यराजा कु० ठाकर रा० प्रधानादि रा० राजा के वंश के अं० अंदर प० बाहिर से नजीक बैठे ग० जाते पि० आमंत्रण देवे अ०नहीं आमंत्रणदते अ षा०ो आहार ला० मिलतो णो० नहीं प० लं ॥ १० ॥ +

से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत प० प्रवेशकर से० वे अ० जो जा० जाने मं० मांसादिक प०

पुण कुलाइ जाणज्जा त जहा—खत्तियाण वा, राईण वा, कुराईण वा, रायपेसियाण वा, रायवंसट्ठियाण वा, अंतो वा, बहिया वा सणिविट्ठाण वा, गच्छताण वा, णिमंते माणाण वा, अणिमंतेमाणाण वा असण वा ( ४ ] लाभेसते णो पडिगाहेज्जासि त्तिबेमि ॥ १४ ॥ इति पिंडेसणाज्झयणस्स—तइओद्देसो सम्मत्तो *

से भिक्खु वा ( २ ) जाव पविट्ठेसमाणे से ज्ज पुण जाणेज्जा, मसाइय वा म

साधु को उपाश्रय में या उपाश्रय बाहिर मिले और आहार लेने को आमंत्रण करे तो साधु को राजपिण्ड आहार ग्रहण करने की आज्ञा नहीं देता मैं कहता हूँ ॥ १० ॥ इति पिण्डैषणा नामक दशम अध्ययन का तृतीय उद्देशा पूर्ण हुआ आगे और भी जेमनवार में जाने का निषेध करते हैं *

साधु को गोचरी गये बाद मालूम पड़े कि उन के यहां मांस, मदिरा मधुयुत भोजन अथ भाजन

प० प्रवेश करना मा० मांगना पु० पूछना प० आवृत्ति देना अ० अनुप्रेक्षा ध० धर्मकथानुयोगचिन्तवन से० वे प० ऐसे ण० जानकर त० तथा प्रकार पु० पहिला जेमन प० पीछेका जेमन स० जेमन के लिय णो० नहीं अ० धारे ग० जाना ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थके घर पिं० आहार के प० लिय प० प्रवेश करते से० वे जं० जो पु० और जा० जाने म० मांस यावत् मी० प्रीति भोजन ही० लेजाते पे० देखकर अ० बीच म० मार्ग में भ० अल्प अंडे जा० यावत् अ० अल्प सं०

चिंताए, सत्र णच्चा तहप्पगार पुरेसखडिं वा पच्छासंखडिं वा संखडिपडियाए णो अभिसंधारेज्ज गमणाए ॥१॥ से भिक्खू वा ( २ ) गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए पविसमाणे से जं पुण जाणेज्जा मंसाइयं जाव संमेलं वा हीरमाणं पेहाए अंतरा से मग्गा अप्पंडा जाव अप्पसंताणगा, णो जत्थ बहवे समण माहणा जाव उवागम

ध० धर्मोपदेश या ध्यान मौन नहीं रखसके ऐसी जो पूर्व संखडी और पश्चात् संखडी में संखडी लेने के लिये साधु को विचार मात्र नहीं करना ॥ १ ॥ परंतु यदि ऐसा मांस मत्स्य के मधु प्रमुख विवाह भोजन, मृतक भोजन, या प्रीति भोजन में मुनि को कोइ ले जाते होवे और मार्ग में मुनि को वनस्पति पानी के जंतु नहीं होवे, वैसे ही श्रमण ब्राह्मणादिक भी बहुत न होवे कि जिस से मुनि को जाना आना

जा० जाने सी० अञ्जनेवाली गा० गायके खी० दुधनिकालते प० देखकर भ० अशनादि चारों आहार उ० निपजाते पे० देख पु० पहिलेसे भ० नहीं दिया से० ऐसा ण० जान णो० नहीं गा० गृहस्थके घरमें पि० आहार लेने प० प्रवेशकरे पि०निकले ॥ से० वे त०उसको आ०लेकर ए०एकान्त में अ०जावे अ०मौन अ० कोइनहीं तहां चि० ऊभारहे । अ० अब पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने खी० दुधरने वाली गा० गायके खी० दुधनिकाला भ० अशनादि चारों आहार, उ० निपज्या पे० देख पु० पहिले ए० दिया से० व ए० ऐसा ण० जान त० तब स० सयति गा० गृहस्थके घर पि० आहार प० लिये प० प्रवेशकरे

ओ खीरिज्जमाणीओ पेहाए, असणं वा( ४ ) उवक्खडिज्जमाण पेहाए पुरा अप्प जूहिए सेवं णच्चा णो गाहावइकुल पिंडवाय पडियाए णिक्खमेज्ज वा पविसेज्ज वा, ॥ से तमायाए एगंत मवक्कमेज्जा, अणावाय—मसलोए चिट्ठेज्जा—अह पुण एवं जाणेज्जा खिरिणीओ गावीओ खीरियाओ पेहाए, असणं वा ( ४ ) उवक्खडिय पेहाए, पुरापजूहित, से एवं णच्चा ततो सजयामेव गाहावतिकुलं पिंडवायपडिया

ऐसा एकान्त स्थान में जाकर खड़ा रहना जब मालूम होवे कि गाय दोहाइ गइ है, भोजन तैयार होगया है, और अन्य याचकों को दियागया है तब उस गृहस्थ के घर आकर यत्ना पूर्वक आहार लेने को जाना

गा गृहस्थकपुत्र की स्त्री भा भार, दा० दास, वा दासी, क० नोकर क० नोकरनी त० तथा प्रकारके कु० कुलमें पु० पहिले प० परिचित प०पीछेके से० परिचित पु० पहिले के भि भिक्षाचरी अर्थ अ०प्रवेश करूंगा अ० अपि ह यहां ल०प्राप्त करूंगा पिं आहार लो० सरसवस्तु खी० दूध द० दही न०मक्खन घ० घृत गु गुड ते० तेल म० मधु म० मदिरा मं मांस सं० तिलपापडी, फा० तिलपापडी, पू० मालपूवा,

वा, गाहावतिपुत्ताचा, गाहावतिधूयाओ वा गाहावतिसुण्हाओ वा, धाईओ वा, दासा वा, दासीओ वा कम्मकरा वा, कम्मकरीओ वा, तहप्पगाराइ कुलाइ पुरे सथुयाणि वा, पच्छासथु याणि वा पुव्वामेव भिक्खायरियाए अणुपविसिस्सामि, अविय इत्य लभिस्सामि पिंड वा, लाय वा खीरं वा, दधिं वा, नवणियं वा, घय वा, गुलं वा, तेल्ल वा

स्वजन समीप में भिक्षार्थ जाउंगा और यहां अन्न, पान, दूध, दही, माखण, घी, गुड, तेल, मधु, मद्यमांस,[१] तिलपापडी, गुड का पानी, बुंदि के श्रीखंड मिलेगा उन को मैं पहिले खाकर पात्रों साफ कर फिर अन्य

१ साधुको मद्यमांस वस्तु लेनेका आगम में निषेध किया है "अमज्जमंसासि अमच्छरिया" इति आ गम वचनात परंतु कोइ प्रमादी मांस गृद्धि साधु मद्यमांस की इच्छा करे इस लिये यहां लिया गया है, एसा टीकाकार कहते हैं

गि० दिट मातन मे० उसे पु० पहिले भु० भागकर पे० पीकर प० पात्र मं० पूंछ प० पूनकर न० स्मरण प० बाद भि साधुओंसाथ गा० गृहस्थके घर पि० आहार प० लेने प० प्रवेश करूंगा णि० नि करूंगा मा "मातास्थान मे० स्पर्शे" णो० नहीं ए० ऐसे क० करे से० वे त० तहां भि० साधु साथ का० समयपर अ० अनेकरूप भ का० भिन्न २ कु० कुलमें सा० समुदान गोरी की ए० निर्दोष ये० ऐसा निर्दोष शति पि० आहार प० लेवे आ० आहार आ० भोगवे॥५॥ए० यह ख० निश्चय त० उस भि०साधुका

मडु वा, मज्ज वा, मस वा, सक्कुलिं वा, फाणियं वा, पूय वा, सिहरिणिं वा, त भु दासेर भुच्चा पेच्चा पडिग्गहं संलिहिय संमज्जिय, ततो पच्छा भिक्खूहिं सद्धि गा हावतिकुल पिंडवायपडियाए पविसिस्सामि णिक्खमिस्सामि वा, माइट्ठाणं सं फास। णो एवं करेज्जा, । से तत्थ भिक्खूहिं सद्धि कालेण अणुपविसित्ता तत्थिय रेयरेहि कुलेहिं सामुदाणिय एसिय वेसिय पिंडवाय पडिगाहेत्ता आहारं आहारेज्जा ॥ ५ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स वा भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ ६ ॥ इति पि

स्नेहियों के साथ भिक्षार्थ जाउंगा, तो यह मातृ स्थान दोष पात्र है इस लिये मुनि को ऐसा नहीं करना किन्तु अन्य स्नेहियों के साथ योग्य समयपर भिन्न २ कुलों में भिक्षा निमित्त जाकर भिक्षाचर्या निर्दोष आहार ग्रहण कर उपभोग में लेना ५ ॥ इस प्रकार से शुद्ध आहार ग्रहण करना भोगवना यह साधु का आ

मि० साध्वी का० सां० आचार है ॥ ६ ॥ ✽ ✽

से वे मि० साधु साध्वी आ० यावत् प० प्रवेशकर गवेषणा करते हुवे से० वे ज जो जा० जाने अ० अग्रपिंड उ० निकालता पे देखकर अ० अग्रपिंड णि० रखता हुवा पे०देखकर अ० अग्रपिंड ही० लेजाता पे देखकर अ०अग्रपिंड प विभाग करता पे०देखकर अ०अग्रपिंड प०भोगवता पे०देखकर अ० अग्रपिंड प० न्हाखता पे० देखकर पु० पहिले अ० भोगवलिया अ० स्वस्थान लेगया ज० जहां अन्य स० साधु मा०

डेसणा ज्झयणस्स चउत्थोद्देसो सम्मत्तो ✽ ✽

से भिक्खू वा(२)जाव पविट्ठे समाणे से जं पुण जाणेज्जा अग्गपिंड उक्खिप्पमाण पेहाए, अग्गपिंड णिक्खिप्पमाण पेहाए, अग्गपिंडं हीरमाण पेहाए अग्गपिंड परिभाइज्जमाण पेहाए, अग्गपिंडं परिभुज्जमाणं पेहाए, अग्गपिंडं परिठ्ठवेज्जमाण पेहाए, पुरा असिणाति वा, अवहारा

धार है ॥ ३ ॥ यह पिण्डैपणा नामक दशम अध्ययन का चतुर्थ उद्देशा पूर्ण हुवा आगे साधु को आहार लेने की विधि बताते हैं + +

गृहस्थ के घर में तैयार बनाहुवा भोजन में से प्रारंभ में देवता को नैवेद्य देने निमित्त निकाला हुवा आहार को निकालते समय, फेंकते समय, लेजाते समय, बाँटते समय, खाते समय, या देवालय के आसपास डालते समय; बहुत शाक्यादि साधु, ब्राह्मण, भिखारी, वगैरेने पहिले खाया हुवा है इस लिये इस को

रपन्पेरे से० वे त तहां प० पडता हुवा प रपड्युवा या० पा त० तहां मे० इसका का० शरीर उ विष्टासे, पा० मूत्रसे, से० खेलसे, सि० श्लेष्मसे व वमन से पि० पित्तसे पू० रापसे सु वीयसे सो रक्तसे च मरासे; त० तया प्रकार का० शरीर णो० नहीं अ० ननीक में रही पु० पृथ्वीसे णो० नहीं स० भींजी पृथ्वीसे णो० नहीं स०सचित्त पृथ्वीसे, णा० नहीं चि०सचित्त सि०सिलासे णो०नहीं चि सचित्त ले०पत्थरसे को० आश्रय में दा०काष्टके जी० जीव प रहे स० अंडे सहित स प्राणी सहित जा यावत् स जाले सहित णो० नहीं अ० मसले णो० नहीं प० पूंछे सं० घसे णि० विशेषघसे, उ पूंछे च मसले, अ०

क्कमेमाणे पयलेज्ज वा पवडेज्ज वा, से तत्थपयलेमाण वा, पवडेमाणे वा, तत्थ से काये उच्चारेण वा, पासवणेण वा, खेलण वा सिंघाणेण वा, वंतेण वा, पित्तेण वा, पूएण वा, सुक्केण वा, सोणिएण वा, उपलित्ते सिया, । तहप्पगारं कायं णो अणंतरहियाए पुढवीए, णो ससणिद्धाए पुढवीए, णो ससरक्खाए पुढवीए, णो चित्तमंताए सिलाए णो चित्तमंताए लेलूए, कोलावाससि वा, दारुए जीवपतिट्ठिए स

नावेगा तो वह विषम स्थान से पतित होगा, जिस से उस के शरीर का भंग होगा और नीचे गिराहुवा विष्टा, मूत्र, थूक, श्लेष्म, वमन, पित, रक्त, राध और वीर्य से शरीर अशुद्ध होगा ऐसे समय पर साधु को वहां रहे हुवे सचित्त पृथ्वी सिला, पत्थर, घांस, पानी वगैरे से शरीर शुद्ध नहीं करना; परंतु सूका घास,

रपड़ेपडे से० वे त तहां प० पड़ता हुवा प रपड़ाहुवा वा० या त० तहां से० इसका का० शरीर उ
विष्ठासे, पा० मूत्रसे, खे० खेलसे, सि० श्लेष्मसे व वमन से पि पित्तसे पू० राधसे सु०वीर्यसे सो रक्तसे
उ० भरावे। त० तथा प्रकार का० शरीर णो० नहीं अ० नजीक में रही पु० पृथ्वीसे णो० नहीं स० भींजी
पृथ्वीसे णा० नहीं स०सचित्त पृथ्वीसे, णो० नहीं चि०सचित्त सि०सिलासे णो०नहीं चि०सचित्त ले०पत्थरसे
को० आश्रय में दा०काष्टके भी जीव प रहे स० अंडे सहित स प्राणी सहित जा० यावत स जाले
सहित णो० नहीं अ० मसले णो० नहीं प० पूंजे स० घसे णि० विशेषघसे, उ० पूंछे उ मसले, म०

कममाणे पयलेज्ज वा पवडेज्ज वा, से तत्थपयलेमाणे वा, पवडेमाणे वा, तत्थ से
काये उच्चारेण वा, पासवणेण वा, खेलेण वा सिंघाणेण वा, वंतेण वा पित्तेण वा,
पूयेण वा, सुक्केण वा, सोणिएण वा, उपलित्ते सिया,। तहप्पगार कायं णो अणंत
रहियाए पुढवीए, णो ससणिद्धाए पुढविए, णो ससरक्खाए पुढविए णो चित्तमंता
ए सिलाए णो चित्तमंताए लेलूए, कोलावासंसि वा दारुए जीव पतिट्ठिए स

जावेगा तो वह विषम स्थान से पतित होगा, जिस से उस के शरीर का भंग होगा और नीचे गिराहुवा
विष्टा, मूत्र थूक, श्लेष्म, वमन, पित्त, रक्त, राध और वीर्य से शरीर अशुद्ध होगा ऐसे समय पर साधु को
वहां रहे हुवे सचित्त पृथ्वी शिला, पत्थर घांस, पानी वगैरे मे शरीर शुद्ध नहीं करना; परंतु सूका घास,

मगर प० गामानुगाम ग० जाते हु० साधु अ० अटवी म० मार्ग प० पश्चात् तु० आहार जा० पानी जा यावत् भ० ग भा प्रहण कर ए० एकान्त में जाते, ए० एकान्त में जाकर अ० नीचे आ० जाना दुरा ई० स्थान पे० देखकर जा यावत् भ० दूसरा न० तथा प्रकार का प० देखे देखकर के प० पूज, प० पूजकर क० फिर म साधु भ० माने जा० यावत् प० विशेष मुहाते ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर एसा जाने जो पु० भोर जा० जाणे गो० वेल सि०

अंडे, स पाण, जाव गमनाणए, णो आमज्जेज्ज वा, णो पमज्जेज्ज वा, संलिहेज्ज वा गिरिहज्जवा उव्वलेज्जवा उव्वट्टेज्ज वा, आयावेज्ज वा, पयावेज्ज वा, से पुव्वमेव अप्पस सरक्खतण वा, पत्तं वा रइ वा मम्मरं वा जाएज्जा, जाइत्ता सेतमायाए, एगंतमवक्कमेज्जा, एगंतमवक्कमित्ता अहे झामथीडिल्लसि वा, जाव अण्णयरसि वा, तहप्पगारासि पडिलेहिय २ प मज्जिय, २ ततो संजयामेव आमज्जेज्ज वा, जाव पयावेज्ज वा ॥ ३ ॥ से भिक्खूवा २ जाव गामेणु गमाणे से ज्ज पुण जाणेज्जा, गोण वियाल पडिपहे पेहाए, महिस वियाल

रणा, कांटे का टुकडा कंकर पत्ता होवे उसे गृहस्थ की आज्ञा से प्रहण कर एकान्त जाकर शरीर को शुद्ध करना ॥ ३ ॥ विहार करता साधु को मार्ग में विकराल बैल, महिष, मनुष्य, अश्व, हस्ती, सिंह, व्याघ्र, रींछ, शरभ ( अष्टापद ) सियाल, बिल्ली, कुत्ता, आदि जंगली जानवरों खडे होवे और जाने को

दृष्ट प० रस्तेमें पे० देखकर म० महिष वि० दुष्ट प० रस्तेमें पे० देखकर ए० ऐसेही म० मनुष्य, अ० अश्व ह० हाथी सी० सिंह, व० व्याघ्र, दी० चरगडा अ० रींछ त० तरक्ष प० शरभ सि० सियाल वि० मार्जार सु० कुत्ता, को० सूवर को० लोंकडी चि चित्ता नि दुष्ट प० रस्तेमें प देखकर स० होव प० रस्ता होने से सं० साधु ज० जावे णो० नहीं ऊ० सरल ग० जाय ॥ ४ ॥ से० वे भि साधु साध्वी जा० यावत् स० प्रवेशकर अं० बीचमें ओ० गर्त होवे खा० खीला होवे कं० कांटा होवे घ० उतार भूमी होवे भ० फटी भूमी होवे वि० विसमजगाहोव वि० कीचड होवे प० परिहरे स होवे प० रस्ता प० जाव से सयवि

लं पडिपहे वेहाए, एव मणुस्स, आस, हत्थि, सीह, वग्घं, दीविय, अच्छं त रच्छं, परसरं, सियाल, विराल, सुणय, कालसुणय, काकतिय, चित्ताचिल्लरय, त्रियाल, पडिपहे पेहाए सति परक्कमे संजयामेव परक्कमेजा णो उज्जुयं गच्छेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव पविट्ठे समाण अतरा स आवाआ वा खाणू वा, कटए वा, घसी वा भिलूगा वा, विजल वा, परियावज्जेजा, सति परक्कमे

अन्य रास्ता होवे तो उस सीधे रास्ते से जाना नहीं ॥ ४ ॥ भिक्षार्थ जाते रास्ते में खाड, खीला, कांटा, पत्थर, उतार की जमीन, फटी जमीन, ऊंची जमीन, नीची जमीन, कीचडवाली जमीन होवे, और जाने का

से० वे मि० साधु साध्वी गा० गृहस्थ के घर में प्रवशकर से० व ज० जो आ० जाने स० साधु मा० मा
भण गा० भिक्षाचर अ० अतिथि पु० पहिले प० प्रवेश किया पे० देखकर णो० नहीं ते० उनकी सं०
दृष्टिमें स०मुख्य द्वारपर चि०ऊभारहे के०केवलीने बू फरमाया आ० कर्मबन्धका कारण यह पु० पहिले पे०
देखके त० उनकेलिये प० अन्य अ० अशनादि चारों आहार आ० बनाकर द० देवे अ० अथ मि० साधु
को पु० पहिले कही प० ऐसी प० प्रतिज्ञा प० ऐसा है हेतु ए० ऐसा उ० उपदेश जं जिसलिये णो०
नहीं ते० उनकी स दृष्टिमें स० द्वारजे पर चि० ऊभारहे से०वे त०उसको आ०गया मानकर ए० एका

जाणेज्जा समण वा, माहण वा, गामपिंडोलगं वा, अतिथिं वा, पुव्वपविट्ठ पेहाए
णो तेसिं संलोए सपडिदुवारे चिट्ठेज्जा केवली बूया "आयाण मेयं" पुरा पेहाए तस्स
द्वाए परो असणं वा ( ४ ) आहट्टु दलएज्जा, अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा एस
पडिन्ना एस हेऊ, एस उवएसो, जं णो तेसिं संलोए सपडिदुवारे चिट्ठेज्जा से त मायाए

श्रमण, ब्राह्मण, भिखारी, अतिथि ने प्रवेश किया होवे तो वहां उन की दृष्टिगोचर खडा नहीं रहना
क्यों कि केवली भगवान्, ने इस में कर्मबन्धका कारण बतलाया है ऐसा करने से गृहस्थ उन को देखकर
उन के लिये आहारादि बनाकर देवेंगे इस लिये साधु को पूर्वोक्त कहे मुजब ऐसी प्रतिज्ञा, ऐसा हेतु और
ऐसा उपदेश भगवंत का है कि गृहस्थ के वहां गये हुए याचकों के देखते साधु को खडा नहीं रहना किन्तु

त० वहां ग० जावे ग०जाकर से० वे पु० पहिलेही भा० कहे आ०आयुष्यमान् स०साधु इ०यह भो अहो भ०अशनादि चारों आहार स०सर्व भनोंकी नि०नेश्राय में तं०इसे भुं०खावो प०विभागकरो से०वे ए०ऐसा भ० बोलतेको प०दूसरा भ०कहे आ० आयुष्यमान तु०तुम निश्चय प० विभाग करो से से त० वहां प० विभाग करते णो० नहीं अ० अपनीतर्फ स आधिक २ डा० स्वादिष्ट २ ऊ० उत्तम २ र० रसिक २ म० मनोज्ञ २ णि० स्निग्ध २ लु० लूखा २ से० वे त० वहां अ० अमूर्च्छित अ० अगृद्ध अ० अनासक्त अ० एकाग्र चित्त रहित व० बहुत स० बरोबर प०विभाग करे, से०वे प० विभाग करता प० अन्य व० कहे

सफासे, णो एवं करेज्जा। से त मायाए तत्थ गच्छेज्जा(२)से पुव्वामेव आलोएज्जा आउ संतो समणा इमे भो असणे वा ( ४ ) सव्वजणाए निसिट्ठे तं भुंजह च णं परि भाएह ष णं सेवं वदत परोवएज्जा आउसतो समणा तुम चेव ण परिभाएहि से तत्थ परिभाएमाणे णो अप्पणो खद्ध २ डाय २ ऊसढं २ रसिय २ मणुन्न २ णिद्ध २ लुक्ख २ से तत्थ अमुच्छिते, अगिद्धे, अगाढिए, अणज्झोववण्णे, बहुसममेव, परिभाए

तो वह मायास्थान स्पर्शता है इस लिये ऐसा विचार नहीं करना किन्तु गृहस्थ ने दिया हुवा आहार को ग्रहण कर दूसरे साधुओं के पास आकर कहे कि यह आहार अपने सब के लिये मिश्र है यदि इच्छा होवे तो एकत्र मिलकर भोगवे या इच्छा न होवे तो विभाग कर लेवे यदि उनमें से कोई साधु कहे कि

भिक्षाचारी भ० अतिथि पु० पहिले प० प्रवेशकिये पे० देखकर णो० नहीं ते० उन्हें उ० उल्लंघकर प० प्रवेशकरे ओ० करे से० वे त० उसको आ० ग्रहणकर ए० एकान्तमें अ० जावे अ० मोन अ० अदृष्ट चि० खडारहे अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने प० पीछे किसीने दि० दानदिया त० तब त० उनसे णि० निकले बाद सं० साधु प० प्रवेश करे ओ० याचनाकरे ॥ ९ ॥ ए० ऐसा ख० निश्चय त० उस भि० साधु भि० साध्वी की सा० समाचारी ॥ १० ॥ इति ॥ * *

मपिंडोलग वा, अतिहिं वा पुव्वपविट्ठं पेहाए णो ते उवातिकम्म पविसेज्ज वा ओभासेज्ज वा । से य त– मायाए एगंत–मवक्कमेज्जा अणावाय–मसलोए चिट्ठेज्जा । अह पुण एवं जाणेज्जा, पडिसेहिए वा दिन्ने वा, ततो तंसि णिवाट्टिते सजयामेव पविसेज्ज वा ओभासेज्ज वा ॥ ९ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ १० ॥ इति पिंडेसणा ज्झयणस्स पंचमोद्देसो सम्मत्तो ॥ *

को उल्लंघ कर अन्दर नहीं जावे और याचना भी नहीं करे परंतु आवश्यकीय कार्य होवे तो एकान्त में छिपकर मौनस्थ रहे जब गृहस्थ उन को कुच्छ देवे या निकाल देवे तब साधु उस का घर में जावे, और याचना करे ॥ ९ ॥ साधु साध्वी का यह आचार है ऐसा मैं श्री तीर्थंकरदेव के कथनानुसार कहता हूं ॥ १० ॥ यह पिण्डैषणा नामक दशम अध्ययन का पंचम उद्देशा पूर्ण हुवा आगे योग्यायोग्य आहार का विचार करते हैं

ग० व भि० साधु साध्वी गा०ग्राम जाते ग० वे ऊ० जो पु फिर जा० जाने र०रस्ते में प० उगा, स०बहुत प्राणी पा० आहार गवेषणा में० समूहमें का सं० सामने पेढ० देखकर न० नहीं ज०यथा कु कुत्ते सूर स्य० सूअरकी जात भ० अग्रपिंड ग्राम म० मसुर सं० सामने पे० देखकर ग० होनेपर प० द गग रास्ता ग० साधु पा० नहीं ज० सरलमार्ग ग० जावे ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ना० पास र० रोगकारन पो० नहीं गा० गृहस्थ कु० घरके द० द्वारशाखा अ० पकड २ चि० ऊभारहे णा०

स भिक्खू वा ( २ ) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा, रसेसिणो बहवे पाणा घा सेसणाए संथडे संणिवतिए पेहाए, तंजहा, कुक्कुडजातिय वा, सूयरजातिय वा, अ ग्गपिंडसि वा, वायसा संथडा संणिवडिया पेहाए, सति परक्कमे संजयामे व णो उज्जुयं गच्छेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव पविट्ठसमाणे णो गाहावतिकुलस्स दुवारसाहं अवलंबिय २ चिट्ठेज्जा, णो गाहावति कुलस्स द-

साधु साध्वी का भिक्षार्थ जाते मार्ग में रसलुब्ध जीवों जैसे कि कूकडे, सूअर, या अग्रपिंड को भक्षण करनेवाले काग प्रमुख एकत्रित हुवे होवें और जाने का अन्य मार्ग होवे तो उस रास्ते में जाना नहीं ॥ १ ॥ साधु साध्वी जिस गृहस्थ के घरों भिक्षार्थ गये होवें उस के घर के द्वार को, कपाट को पकड कर खडा रहना

नहीं गा० गृहस्थके घरके द० पाणी डोलनेके स्थान चि०ऊभारहे, णो०नहीं गा० गृहस्थकेघर च० आचमन लेने के स्थान चि० ऊभारहे, णो० नहीं गा० गृहस्थकेघर सि० स्नान करने के स्थान प० मलमूत्र करने के स्थान स०देखता हुवा स०मूल्यद्वारपें चि०ऊभारहे, णो०नहीं गा०गृहस्थके घरके आ०आले (गोख) थि०थेगला स० सन्धि, द० द्वार भ० स्नपनस्थान बा० हाथ प० ऊचाकर २ अ० अंगूलीसे उ० उद्देश २ ओ० नीचाझुक २ उ० ऊंचाहो २ णि० देखे, णो नहीं गा० गृहस्थको अ० अंगूलीसे उ० उद्देश २ जा० याचनाकरे, णो० नहीं गा० गृहस्थको अं० अंगूली चा० चला २ कर जा० याचनाकरे, णो० नहीं गा०

गच्छमाणमपए चिट्ठेज्जा । णो गाहावतिकुलस्स चदणिउयए चिट्ठेज्जा, णो गाहावइ कुलस्स सिणाणस्स वा वच्चस्स वा संलोए सपडिदुवारे चिट्ठेज्जा, णो गाहावतिकुलस्स आलोय वा, थिग्गल वा, संधिं वा, दगभवण वा, बाहाउ पगिज्झिय २ अंगु लियाए वा उद्दिसिय २ ओणमिय २ उण्णमिय २ णिज्झाएज्जा, णो गाहावतिं अंगु लियाए उद्दिसिय २ जाएज्जा, णो गाहावतिं अंगुलियाए चालिय २ जाएज्जा, णो गा

नहीं, हाथ पांव धोने का, स्नान करने का, पेशाब करने का, स्थान को देखता हुवा खडा रहे नहीं आला, भंडारीया, खिमोरी, कोना, खोचरा, इत्यादि को अंगूली से दूसरे को बतावे नहीं, आपभी ऊंचा नीचा देखे नहीं, गृहस्थ की वस्तुओं अंगूली से बताकर याचना करे नहीं, गृहस्थ के शरीर को अंगूली लगाकर,

गृहस्थ का अ० अंगुलीसे स० सर्वताकर २ मा० माग, णो० नहीं गा० गृहस्थको अ० अंगुलीसे उ० ऊंचार२ जा० याच णा नहीं गा० गृहस्थको व० गुणानुवाद कर २ जा० याचे, णो० नहीं व० वचन फ० कठिण व० कर। अप जो म० साधु क० काल भुं० जीमता पे० देखकर से० वे ज० यथा गा० गृहस्थ ज० यावत् क० नोकरनी स० उसे पु० पहिले भा० कहे आ० आयुष्मान ! भ० भगिनि ! दा० देवोगे मे० मुझे ए० इसमें से अ० कोइ भी भो० भोजन जात से० वे ए० ऐसे व० कहते को प० प्रसंग ह० हाथ, २ म० पात्र २ द० कुरछी ३ भा० भाजन ४ सी०शीतोदक वि०अचेतन उ० उष्ण उदक अचेतनसे, उ० पश्चात्कर प० धोकर

हारति अंगुलियाए तज्जिय २ जाएज्जा णो गाहावतिं अंगुलियाए उक्खुलंपिय २ जाएज्जा, णो गाहावतिं वंदिय २ जाएज्जा, णो वयण फरुसं वदेज्जा। अह तत्थ कंचि भुंजमाणं पेहाए तंजहा—गाहावइं वा, जाव कम्मकरिं वा, से पुव्वामेव आलोएज्जा, आउसो त्ति वा भइणित्ति वा दाहिसि मे एत्तो अन्नयरं भोयणजातं। से एवं वदंतस्स परो हत्थं वा मत्तं वा दव्विं वा, भायणं वा, सीतोदगवियडेण वा उ-

सणोदगवियडेण वा उच्छोलेज्ज वा पधोएज्ज वा, से पुव्वामेव...

सणंगी अचेतन से धर धोकर, सोंचा मारकर, याचना करे नहीं, वैसे ही गृहस्थ का गुणानुवाद करके भी याचना करे नहीं परंतु उन के घर में गृहस्थ, गृहस्थ की स्त्री, पुत्र, पुत्री, दास, दासी, जो कोइ भोजन घर में होवे और भोजन तैयार हुवा होवे तो उन से कहे कि अहो आयुष्मान् गृहस्थ या बहिन —

के से० वे पु० पहिलेसे ही आ० कहे आ० आयुष्मन् ! भ० बहिन ! मा० मत ए० यह तु० तुम ह० हाथ, म० पात्र, द० कुडछी भा० भाजन, सी० सीतोदक वि० अचित कर, उ० उष्णोदक वि० अचितकर उ० धोवो, प० पखालो अ० वांछो, मे० मुझेदेना ए० ऐसाही द० दो से० वे ए० ऐसे व० कहते को प० गृहस्थ ह० हाथ यावत् भाजन सी शीतोदक अचित्त से० उ उष्णोदक अचित्त से उ० पखाले प० धोवे आ० ऐसाकर द देवे त० तथा प्रकार पु० पूर्व कर्म ह० हाथसे यावत् भाजनसे अ० अशनादि चारो आहार अ० अफासुक अ० अनेषणिक ला० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे । अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने णो० नहीं पु० पूर्वकर्म क० किया उ० पा लिसे

सिणोदगवियडेण वा, उच्छोलेज्ज वा, पहोएज्ज वा से पुव्वामेव आलोएज्जा, आउसोत्ति वा भगिणित्ति वा मा एय तुमं हत्थं वा, मत्तं वा, दव्विं वा, भायणं वा, सीतोदगवियडेण वा, उसिणोदगवियडेण वा, उच्छोलेहि वा पहोएहि वा, अभिकंखसि मे दातुं एमेव दलाहि से सेव वदंतस्स परो हत्थं वा ( ४ ) सीओदगवियडेण वा, उसिणोदगवियडेण वा, उच्छोलेत्ता पहोइत्ता आहट्टु दलएज्जा, तहप्पगारेण पुरे कम्मएण हत्थेण वा ( ४ ) असणं वा ( ४ ) अफासुयं अणेसणिज्जं जाव

आहार में से मुझे कुच्छ देवोगे ! ऐसा सुन वे हाथ, कुरछी, भाजन विगैरे अचित्त पानी से प्रक्षालन कर देवे तो उसी समय कहदेना कि तुम अचित्त पानीसे धोकर मुझे देना चाहते हो परंतु यह मैं नहीं लेसकुंगा इतना कहने परभी यह गृहस्थ पात्रादि धोकर देवे तो उस आहारको नहीं लेना और वैसेही पहीले धोए हुवे पात्र

मा० यावत् प० ग्रहण करे. ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और जा० जाने पि० पाणी ब० फूली जा० यावत् चा चांवल के मुरमुरे, भ० गृहस्थने भि० साधु केलिये चि० सचित्त सि० सिलापे जा० यावत् म करोलीयेंके स जालेमें को० कूटाहै को० कूटता है, को० कूटेगा उ उफणाहै उफ-णताहै उफणेगा त० तथा प्रकारके पि० पाणी जा० यावत् चा० मुरमुरे अ० अफ्रासुक जा० यावत् णो० ग्रहण नहीं करे ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० यावत् स० प्रवेशकर से० वे जाणे पि० बीडलूण

फासुय जाव पडिगाहेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्जं पुण जाणेज्जा पि हुयं वा बहुरय वा जाव चाउलपलंब वा असजए भिक्खूपडियाए चित्तमताए सिलाए जाव मक्कडासंताणाए कोट्टेसु वा कोट्टिंति वा, कोट्टिस्सति वा, उप्फणिंसु वा ( ३ ) तहप्पगार पिहुय वा जाव चाउलपलंब वा अफासुयं जाव णो पाडिगा हेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव समाणे से ज्जं पुण जाणेज्जा बिल वा लो

उस से ही ऐसा होवे तो उस को प्रासुक तथा एषणिक जानकर ग्रहण करना ॥ २ ॥ साधु के लिये कोइ असंयति पाणी, मुरमुरे, विगैरा सचित्त सिलापर कूटकर तैयार करते हैं, या करेंगे, इसमें उफणते है, या उफणेंगे तो उसको अशुद्ध जानकर ग्रहण नहीं करना ॥३॥ साधु साध्वी के लिये बीड लवण भिक्षा लवण

साधु अथ उ० सेवे नि० डालते आ० साफ करते प० पूछते ओ० उतारते उ० उठाते अ० अग्निकाय के जीव की हिं० हिंसा होवे अ० अब भि० साधुको पु० पहिले कहा ए० यह प्रतिज्ञा ए० यह हेतु ए० यह कारण ए० यह उपदेश जं० जो त० तथा प्रकार, अ० अशनादि चारों आहार, अ० अग्निपर रक्खा अ० अप्रासुक अ० अनेषणिक ला० मिलेतो णो० नहीं प० लेवे ॥ ५ ॥ ए० यह ख० निश्चय त० उस भि० साधु भि० साध्वी की सा० समाचारी ॥ ६ ॥ × * ×

ण वा ( ४ ) अफासुय लाभेसत णो पडिगाहेज्जा, । केवली बूया "आयणमेय" । अ सजए भिक्खुपडियाए उस्सिंचमाणे वा निस्सिंचमाणे वा, आमज्जमाणे वा, पम ज्जमाणे वा, ओयारेमाणे वा, उयत्तेमाणे वा, अगणिजीवे हिंसेज्जा अह भिक्खूण पुव्वोवदिट्ठा एस पइण्णा, एस हेऊ, एस कारणे, एसुवएसे, जं तहप्पगारं असणं वा ( ४ ) अगणि णिक्खित्तं अफासुयं अणेसणिज्ज लाभेसंते णो पडिगाहेज्जा ॥ ५ ॥ एय खलु तस्स भिक्खुस्स वा भिक्खुणीए वा सामग्गिय ॥ ६ ॥ इति पिंडेसणाअज्झय णस्स छट्ठो उद्देसो सम्मत्तो * *

इस लिये अग्नि स्पर्श का आहार नहीं लेवें ॥ ५ ॥ साधु साध्वी का यही आचार है ॥ ६ ॥ यह पिण्डै षणा नामक प्रथम अध्ययन का षष्ठ उद्देश पूर्ण हुआ आगे आहार ग्रहण करने की विधि कहते हैं

उ० ऊसल मा० लाकर उ० लगाकर दु० चढे से० वह त० वहां दु० चढता हुआ प० आपडे प० पडे से० यह त० वहां प पडता हुआ प० पडता ह० हाथ पा० पाँव बा० बाँह, उ० छाती उ० पेट सी० मस्तक अ० और भी का० शरीर में इं० इन्द्रियमात्रि लू० रगडावे पा० प्राणी जा० यावत् स० सत्व अ० मरे अ० दबीहोवे ले० मसलावे स० भेलेहोवे सं० सघट्टहोवे प० परिताप उपजे कि० किलामना पावे ठा० एकस्थान से अ० दूसरे स्थान म० मावे त० तथा प्रकार मा० मालोहड दोष युक्त अ अशनादि चारों आहार ला निसेसा

णिय दुरुहेज्जा से तत्थ दुरुहमाणे पयलेज्ज वा पवडेज्ज वा से तत्थ पयलेमाण वा पवडेमाणे वा, हत्थ वा, पायं वा, बाहु वा, ऊरू वा, उदर वा, सीस वा, अण्णयरं वा कायसि इंदियजायं लूसेज्ज वा, पाणाणि वा जाव सत्ताणि वा अभिहणेज्ज वा, वत्तेज्ज वा, लेसेज्ज वा, संघएज्ज वा, संघट्टेज्ज वा, परियावेज्ज वा, किलामेज्ज वा, ठाणाओ ठाणं संकामेज्ज वा, त तहप्पगारं मालोहडं असणं वा ( ४ )

आदि लगाकर गृहस्थ चढेगा और यह गृहस्थ कदाचित् वहां से रपटकर गिरजावे तो उस का हाथ, पाँव आँखादि शरीर का अंग भंग होवे, और वस्तु का भी नाश होवे, नीचे रहे हुवे सूक्ष्म बादर जीवों का भी विनाश होवे इस लिये उच्चस्थान पर रहा हुवा आहार को ऐसा पाप का कारण मान उस को ग्रहण

भा० ग्रहन नहीं करे ॥ १ ॥ से० वह भि० साधु साध्वी जा० ग्रहस्थ प० में ग० जैसे जा० जाने अ० अ
शनादि चारों आहार को० कोठीमें कु० कोठामें भ० अशनादि भि० साधु केलिये उ० उकरणसे अ० नी
चानन भा० ओंडाइसे मा० निकाल द० देवे त० तैसा अ० अशनादि मा० मालोहडदोष युक्त ण० जान
कर ना० मान होवे णा० नहीं प० ग्रहण करे ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत गोचरकर
प० १ सा०जाने अ०अशनादि चारों आहार म० मिट्टी मे पैकरूपा त० तथा प्रकारका अ० अशनादि आ

स्सणगा णा पडिगाहेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा [ २ ] जाव समाणे से ज पुण
जाणेज्जा असण वा ( ४ ) कोट्ठियातो वा, कोल्लज्जातो वा अस्संजए भिक्खु
पडियाए उक्कुज्जिया, अवउज्जिया, ओहरिया, आहट्ट दलएज्जा, तहप्पगारं असण वा
( ४ ) मालोहडंति णचा लाभेसंते णो पडिगाहेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ )
जाव समाणे से ज पुण जाणेज्जा, असणं वा ( ४ ) मट्टिओलित्तं तहप्पगार अ

नहीं करना ॥ १ ॥ यदि गृहस्थ साधु साध्वी के लिये कोठी में से, कोठा में से, ऊंचा
नीचा झुककर आहार लाकर देवे तो उसे ग्रहण नहीं करना ॥ २ ॥ जो आहार मधुक मिट्टी से लिपकर
ढंककर रक्खा हो वह आहार मुनि को नहीं लेना केवली भगवानने इस में दोष बताये क्योंकि असंयति

हार मा पावत् मा० मास होतो णो०नहीं प० लवे के०केवलीने वू कहा आ० कर्मबन्धका कारण मे० यह अ०असंयाते भि०साधु केलिय म०मिट्टीसे लिपाहुवा अ०अशनादि चारों आहार उ०भेदवाहुवा पु०पृथ्वीकाय स० आरंभकरे त० वैसेही आ० पानी ते० अग्नि वा० वायु व० वनस्पति त० त्रस का० काय का स० आरंभकरे पु० पुनरपि आ० बन्ध करते प० पश्चात् कर्म क० करे, अ० अथ भि० साधु पु० पहिले उपदेशाया जा० यावत् जे० जो त० तथा प्रकार म० मिट्टी से बन्ध किया अ० अशनादि आहार जा० मास होता णो० नहीं प० ग्रहणकरे ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर मे० वे आ०

सण वा ( ४ ) जाव लाभेसते णो पडिगाहेज्जा, केवली बूया "आयाणमेयं असंज ए भिक्खुपडियाए मट्टिओलित्तं असणं ( ४ ) उब्भिन्दमाणे पुढविकाय समारंभे ज्जा तहा आउ—तेउ—वाउ—वणस्सति—तसकायं समारभेज्जा पुणरवि ओलिंपमाणे प च्छाकम्म करेज्जा, अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा जाव जं तहप्पगारं मट्टिओलित्तं अ सणं वा ( ४ ) लाभेसंते णो पडिगाहेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव

गृहस्थ साधु के लिये आहार निकालके और उस को फिर बंध करते पृथ्वी, पानी, अग्नि, हवा, वनस्पति और त्रस यों छे ही काय जीवों की घात करे, इस लिये मिट्टि से बंध किया हुवा आहार लेवे नहीं ॥ ३ ॥ साधु

साधु पु० पहिले क्या णो० नहीं प० करे ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प्रवेश कर से० वे जा० जाणे अ० अशनादि चारों आहार अ० अतिऊष्ण अ० असयति भि साधु केलिये सू० सूपसे वि० पन्रेसे ता० सुपरपसेसे प० पत्रसे प० पत्तेके टुकडेसे, सा शाखासे सा० शाखाके टुकडे से पि० पींछीसे पि० पींछा हाथमेंलेकरके चे० वस्त्र से चे० वस्त्र के टुकडे से ह हाथसे मु० मुखसे फु० फूंके वी० वींजे मे० व पु० पहिलेही आ० कहे आ आयुष्यवंत भ बहिन आ मत प० मत दु० तुम अ० अशनादि आहार

विहा जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव पविट्ठे समाणे से ज्ज पुण जाणज्जा असणं वा ( ४ ) अच्चुसिणं असंजए भिक्खुपडियाए सू वण वा, विहुणेण वा, तालियंटेण वा पत्तेण वा पत्तभंगेण वा, साहाए वा, साहा भंगेण वा, पिहुणेण वा, पिहुणहत्थेण वा चेलेण वा चेलकण्णेण वा, हत्थेण वा, मुहेण वा, फुमेज्ज वा, वीएज्ज वा, से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसोत्ति वा, भगिणि-

लिये मुनि को पूर्वोक्त खास उपदेश है कि अग्नि व पानी पर रहाहुवा आहार ग्रहण नहीं करना ॥ ८ ॥ आहार, पानी अति ऊष्ण होने से गृहस्थ उस को मुनि के लिये सूपडा से, पन्ना से, मोरपींछ का पिंजणा से, विंजणासे, शाखा से, शाखा का टुकडासे, मोर पींछ से, कपडा से, कपडा की किनार से, हाथ से, व मुखसे हवा डालकर ठंडा करने लगे तो मुनि को प्रारंभ में ही कहदेना कि हे आयुष्यमान, या बहिन,

फिर पा० पानी की जाव जा०जाने तं०वह म०यथा उ० १ आटेका धोवन सं० २ ओसावनका पानी, चा० ३ चांवलका धोवन, अ० दूसरे तरहका त० तथा प्रकारका पा० पानीकी भात अ० तत्काल का अ० स्वाद नहीं पलट्या अ० वर्ण नहीं पलट्या अ० अन्य पुद्गल नहीं परिणमा अ० शस्त्र नहीं परगमा अ० अफ्रासुक अ० अनएषणीय म० जानकर णो० नहीं प० ग्रहणकरे. ॥ ८ ॥ अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने

से भिक्खू वा ( २ ) जाव पविट्ठेसमाणे से जं पुण पाणगजात जाणेज्जा तंजहा उस्सेइमं वा, संसेइम वा, चाउलोदगं वा, अण्णतरं वा तहप्पगारं पाणगजात, अहुणाधोत, अणबिल, अवोक्कत, अपरिणतं, अविद्धत्थ, अफासुय, अणेसणिज्जं, मण्णमाणे णो पडिगाहेज्जा ॥ ८ ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा चिराधोत, अंबिल, वक्कत, परिणत,

विधि बताते हैं ) साधु साध्वी गृहस्थ के घर गये वहां आटे का धोया हुवा पानी,(१)ओसावन का पानी,(२) चावलों का धोया हुवा पानी,(३)और ऐसी जातका पानी पड़ा होवे, तो और तुर्तका*बना हुवा होवे,उसका वर्ण, गंध, रस, स्पर्श पलट्या नहावे, शस्त्र परगमकर अचेत न हुवा होवे तो उसको अफ्रासुक तथा अनेषणिक जानकर साधुको ग्रहण नहीं करना॥८॥और उक्त प्रकार के पानी को बनाये बहुत समय हुवा होवे, वर्ण, गंध,

* एसा पानी को बनाये एक मुहूर्त न हुवा होवे वहांतक ग्रहण नहीं करते हैं ऐसी परंपरा है

पाणीकी जात ! से० वे से० ऐसे प० गृहस्थ व० बोले आ० आयुष्यमान् स० साधु ! तु० तुमही स्वय पानी की जात प० पात्रसे उ० उठाकर ओ० ऊंधाकर ग० ग्रहण करो; त० तथा प्रकार पा० पानीकी जात स० स्वयं वा० या गि० ग्रहण करे प०गृहस्थ दि० देवे, फा० फ्रासुक सा० मिलेतो प० ग्रहण करे ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जा० जाने पा० पानीकी जात अ० छगाहुवा पु० पृथ्वी कायमें जा० यावत स० मकडीके जालसे ओ० उसपे नि० रक्खाहो वसे अ० असंयति भि० साधु केलिये उ० पाणी से भीना वा० या स० स्निग्ध क० अर्ध भीना भ० भाजन सी० सचित्तपाणी सं० भेला आ०

पियाण ओयात्तियाण गिण्हाहि तहप्पगारं पाणगजातं सय वा गिण्हिज्जा परो वा से विज्जा फासुय लाभेसंते पडिगाहेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खु वा [ २ ] से जपु ण पाणग जाणेज्जा अणंतरहियाए पुढवीए जाव सताणए, ओहट्टु निक्खित्ते सिया असजए, भिक्खुपाडयाए उदउल्लेण वा ससिणिद्धेण वा, सकसाएण वा मत्तेण सीओदएणं वा, संभोएत्ता, आहट्टु दलएज्जा तहप्पगार पाणगजातं अफासुय लाभे

उस भाजन में से पानी लो तब वह मुनि को लेना और अन्य देवे तो भी ग्रहण करना ॥ १० ॥ जो पानी सचित्त मिट्टि, हरी पात्रत् जीवजंतु वाली जमापर रक्खा हुवा होवे और असंयति गृहस्थ उस को सचित्त पानी, या मिट्टि से भरे हुवे हाथों से या ऐसे पात्रों मे या अचित्त में सचित्त मिलाकर देवे तो

२१ आ०आमलका धोवण, चिं० २२ इमलीका धोवण, अ० और भी त० वैसा पा०पानी स०गुठली युक्त, स० छालयुक्त स० बीजयुक्त, अ० गृहस्थ भि० साधु के लिये छ० छाबमें दू०वस्त्र में० वा० चलनीमें, आ० छानकर प० विशेष छानकर प० पुडकर आ० यों ह० देवे त० वैसा पा० पानी अ०सदोष म० मिलेतो णो० नलेवे ॥ १ ॥ से० वे भि०साधु साध्वी जा०यावत् प०प्रवेशकरे से० वे आ० सरायमें, आ० बगीचे में

मुद्दिया पाणगं वा, दाडिम पाणगं वा, खज्जूर पाणगं वा, णालिएर पाणग वा, करीर पाणग वा, कोलपाणग वा, आमलगपाणगं वा, चिंचापाणगं वा, अण्णतरं वा तहप्पगार पाणगजात सअट्ठियं, सकणुयं, सबीयगं असजए भिक्खुपडियाए छब्बेण वा, दूसेण वा, वालगेण वा, आवीलियाण, पवीलियाण, परिसाडियाण आहट्टु दलएज्जा, तहप्पगारं पाणगजात अफासुयं लाभेसंते णो पडिगाहेज्जा ॥ १ ॥ से भि-

पानी, १६ अनार का पानी, १७ खारक का पानी, १८ नालियर का पानी, १९ केर का पानी, २० बेर का पानी, २१ आमला का पानी, २२ इमली का पानी और अन्य भी इसी तरह का पानी होवे उस में गुठली, छाल बीज रहा होवे और गृहस्थ साधु के लिये वस्त्र से या चालनी से छानकर देवे तो उस को अप्रासुक जानकर मुनि को ग्रहण नहीं करना ॥ १ ॥ मुनि को गोचरी जाते मार्ग में, मुसाफिरखाना में,

नापे पि०पीपर, पि०पीपरका चूर्ण, मि०मिरच, मि०मिरचका चूर्णका सिं०आद्रक, सिं०आद्रकका चूर्ण, अ० और भी त० तथा प्रकार आ० कच्चे अ० अशस्त्र परिणत अ० सदोष जा० यावत् नहीं ग्रहणकरे ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी आ० ग्रहस्थ घरमें प्रवेशकर से० वे जाणे प० फलकी जात त० वह अ० यथा अं० आम्रकेफल अं० अम्बाडे के फल वा ताडकेफल झि० झिझिरीवेल केफल, सु० शतद्रूफल स० सल्लकिफल अ० औरभी त० इसप्रकारके प० फलकी जात अ० कच्चे अ० अशस्त्र परिणत अ० अफ्रासुक

वा ( २ ) जाव पविट्ठे समाणे से जं पुण जाणेज्जा पिप्पालिं वा, पिप्पालिचुन्न वा मिरियं वा मिरियचुन्न वा, सिंगबेर वा, सिंगबेरचुन्न वा, अन्नतर वा तहप्पगार आमग असत्थपरिणतं अफासुयं जाव लाभेसते णो पडिगाहेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव पविट्ठे समाणे से जं पुण जाणेज्जा, पलम्बजात तंजहा—अम्बपलंब वा, अंबाडगपलंबं वा, तालपलंबं वा, झिज्झिरिपलंबं वा, सुरभिपलंब वा, सल्लइ पलंब वा, अण्णतर वा तहप्पगार पलबजात आमग असत्थपरिणतं अफासुय अ

मिरची का चूर्ण, अदरक, अदरक का चूर्ण, और भी ऐसी जात के चूर्ण अपक्व और और शस्त्र से न मेदाये होवे तो अफ्रासुक जानकर ग्रहण नहीं करना ॥ ८ ॥ और आम्रफल, अंबाडे के फल, ताडफल, झिझिरि वेल का फल, शतद्रुफल, सल्लकि फल, तथा अन्य भी इस प्रकार के फल अपक्व और शस्त्र से

से साधु साध्वी गा० यावत् प्रवेशकर से० वे स० मंजरीकीजात जा जाने तं० वह अ० यथा-अं० आंबकी मंजरी क० कवीठकी मंजरी, दा० दाडिमकी मंजरी बि० बिल्लकी मंजरी अ० और भी त० तथा प्रकारकी म मंजरी की जात आ० कची अ० अशस्त्र परिणित अ० अफ्रासुक आ० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० प्रवेशकर से० वे म० चूर्ण की जात जा० जाने तं० वह ज० यथा—उ०गूलरका चूर्ण व० वडफलका चूर्ण, पि० फेंफरफलका चूर्ण, आ० पीपलफलका चूर्ण, अ० और त० तथा प्रकारका आ० कचा दु० थोडापीसा सा०बीज सहित अ० अफ्रासुक आ० यावत् णो० नहीं लेवे

तंजहा—अंबसरडुय वा, कविट्ठसरडुयं वा, दाडिमसरडुयं वा, बिल्लसरडुय वा, अ ण्णतरं वा तहप्पगारं सरडुयजातं आमगं असत्थपरिणतं अफासुयं जाव णो पडि गाहेज्जा ॥७॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे सेज्जपुण मथुजातं जाणेज्जा तं जहा—उंबरमथुं वा, णग्गोहमथुं वा, पिलक्खुमथुं वा, आसोत्थमथुं वा, अण्णतरं वा

॥ ७ ॥ गुलर का चूर्ण, वड का चूर्ण, फेंफर का चूर्ण, पीपल का चूर्ण, तथा और भी ऐसा अन्य प्रकार का भी चूर्ण कच्चा, कम पिसा हुवा तथा सबीज मालूम पडे तो अफ्रासुक जानकर ग्रहण नहीं करना ॥८॥ मुनि को गोचरी जाते आधी पकी हुइ शाकभाजी नहीं लेना ऐसे ही सडाहुवा खल, पुराणा मधु, तथा मदिरा, पुराणा घृत, और पुराणा मदिरा के नीचे बैठा हुवा कचरा मुनि को नहीं लेना अर्थात् जो वस्तु

(सांठा) का टुकड़ा, अं० अंकफरेला, क० कसेला, सिं० सींगोड़ा, पू० मिश्रालु अ अन्य त० इस प्रकार के अ० कच्चे श० सचित्त जा० यावत् पो० नहीं लेवे ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जा० जाने उ० उत्पल उ० उत्पल नाल, भि० पद्मकंदमूल मि० पद्मकंदवेल पो० पद्मकेशर पो० पद्मकन्द अ० और भी त० इस प्रकारके जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ २१ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा०

समाणे से ज्ज पुण जाणेज्जा—उच्छुमेरगं वा, अंकरेलुयं वा, कसेरुगं वा, सिंघाडगं वा, पूतिआलुगं वा, अण्णतरं वा तहप्पगारं आमगं असत्थपरिणयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण जाणेज्जा उप्पलं वा, उप्पलनालं वा, भिसं वा, भिसमुणालं वा, पोक्खलं वा पोक्खलत्थिभगं वा, अण्णतरं वा तहप्पगारं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव समा

वैसे ही मुनि को उत्पल, उत्पल नाल, पद्म कंदका मूल, पद्म कंद की वेल, पद्म केशर, पद्म कंद और भी ऐसी अन्य वस्तु कच्ची तथा शस्त्र भेदित न होवे तो ग्रहण नहीं करना ॥ ११ ॥ साधु साध्वी को अग्रबीज फूलादि, मूल बीज केलादि, खाखाबीज-इत्यादि, गांठ बीज इक्षुकादि, यह चार प्रकार की वनस्पति तथा केला, नालियेर, खजूर, ताड तथा अन्य भी ऐसी कोइ वस्तु कच्ची तथा शस्त्र भेदित न होवे तो अप्रासुक जा

क० केसगर्भ म० और भी त० इस तरह भा० कचा अ० सचित्त मा पावत् णो० नहीं प० लेवे ॥१३॥ से० वे भि० साधु साध्वी भा० प्रवेशकर से० वे भा० जाने ल० लसुन ल० लसुनपत्र ल० लसुण डाली, ल० लसणकंद ल० लसण छाल अ० और भी त० वैसा भा० कचा अ० सचित्त भा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहणकरे ॥ १४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी भा० प्रवेशकर से० वे भा० जाने अ० अस्थिकफल कुं० कुंभमें पकाया, ति० तिंदुकफल वे० बीलफल प० पलमफल का० भीपरभीफल म० और भी अ० कच्चे म०

ण्णतरं वा तहप्पगारं आमगं असत्थपरिणयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा ल्हसुणं वा, ल्हसुणपत्तं वा, ल्हसुणनालं वा, ल्हसुणकंदं वा, ल्हसुणचोयं वा, अण्णयरं वा तहप्पगारं आमं असत्थपरिणतं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ १४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा अत्थिअं वा, कुंभिपक्कं, तिंदुगं वा, विलुयं वा, पलगं वा, का-

॥ १३ ॥ साधु को लसण, लसण का पान, लसण की डांडी, लसणका कंद, लसण का फल, लसणकी छाल तथा और भी ऐसा अन्य कंद् अपक्व तथा शस्त्र से भेदाया हुवा न होवे तो ग्रहण नहीं करना ॥१४॥ साधु को अगथिया के फल, टिंबरु के फल, बिल के फल, फणस के फल श्री परणी के फल, तथा और भी ऐसी तरहका अन्य फल घर में मसार डालके पकाये होवे और अपक्व तथा शस्त्रसे भेदाये हुवे न होवे तो

इ० यहां स० निग्रंथ पा० पूर्वमें प० पश्चिम में दा० दक्षिण में, उ० उत्तर में सं० कितनेक स० श्रावक भ० होते है, गा० गृहस्थ जा० यावत् क० नोकरनी, ते० उन में ए० यह वु० वार्ता पु० पहिले भ० होवे जे० जो इ० ये भ० होते हैं स० साधु भं० ज्ञानवंत सी० आचारवान, व० व्रतवान, गु० गुणवान, सं० संयमी, सं० संवृत, ब० ब्रह्मचारी, उ० निवर्ते मे० मैथुन ध० धर्मसे णो० नहीं स० निग्रंथ ए० इनको क० कल्पे आ० आधाकर्मी अ० अशनादि चारों आहार, भो० खाने के लिये पा० पीने केलिये से० वे जं० जो पु० फिर इ० यह अ० हमारे अ० अर्थ चि० बनाया त० वह अ० सब अ० अशनादि चारों आहार स०

इह खलु पाईणं वा, पडीणं वा, दाहिणं वा, उदीणं वा, सतेगतिया सड्ढा भवंति गाहावती वा जाव कम्मकरी वा, तेसिं च णं एवं वुत्तपुव्वं भवंति—जे इमे भ वंति समणा, भगवतो, सीलमंता, वयमंता, गुणमंता, संजता, संवुडा, बंभचारी, उवर- या मेहुणाओ धम्माओ णो खलु एतेसिं कप्पति आहाकम्मिए असणं वा ( ४ ) भोइत्तए वा, पाइत्तए वा, से जं पुण इमं अम्हं अट्ठाए णिट्ठितं तंजहा असणं वा

इस जगत् के चारों दिशा में कितनेक श्रद्धावंत गृहस्थ, गृहस्थ की स्त्री, पुत्र, पुत्री, बहिन, दास, दासी, नोकर, नोकरनी, रहते हैं वे ऐसा बोलते हैं कि, "जो मुनि ज्ञानवंत, आचारवंत, व्रतवंत, गुणवंत, संयमवंत, संवरवंत, ब्रह्मचारी, तथा मैथुन का त्याग करनेवाले होते हैं वे आधाकर्मिक आहार पानी बिलकुल नहीं लेते हैं" इस लिये जो अपने लिये किया वह सब उन को दे देवेंगे और पुनः अपने लिये बनावेंगे

ग्राम में आ० यावत् रा० राजधानीमें सं० कितनेक भि० साधुके पु० पहिले के. सं० परिचय वाले,प० या प० पीछेके प० परिचय वाले प० रहते हैं तं० वह ज० यथा गा० गृहस्थ मा० यावत् क०, नोकरनी त० तथा प्रकारके कु घरोंमें णो० नहीं पु० पहिले भ० आहार अर्थ पा० पानी अर्थ णि० निकले प० प्रवेश करे, के० केवलीने बू० फरमाया आ० कर्मबन्ध थे० था ! पु० पहले पे० देखके त० उसके प० गृहस्थ अ० अर्थ अ० अशनादि चारों आहार उ० करे, उ० निपजावे, अ० अथ भि० साधुने पु० पहिले कहा यावत् उपदेशा, जं० जो णो० नहीं त० तथा प्रकारके कु० कुलमें पु० पहिले भ० आहारार्थ पा० पानी के-

भिक्खुस्स पुरेसंथुया वा, पच्छासंथुया वा परिवसंति तंजहा गाहावती वा जाव कम्मकरी वा तहप्पगाराइं कुलाइं णो पुव्वामेव भत्ताए वा पाणाए वा णिक्खमेज्ज वा पविसेज्ज वा, केवली बूया "आयाणमेयं," पुरा पेहाए तस्स परो अट्ठाए असणं वा ( ४ ) उवकरेज्ज वा, उवक्खडेज्ज वा, अह भिक्खूण पुव्वोवदिट्ठा ( ४ ) जं णो तहप्पगाराइं कुलाइं पुव्वामेव भत्ताए वा पाणाए वा पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा,

लिये अच्छे भोजन, पानी, उपकरण, बनावेंगे इस लिये भिक्षाकाल पहिले जाना नहीं कदाचित् कारण प्रसंगे पहिले जाने का होवे और आहारादि का समय न हुवा होवे तो तुर्त वहां से पीछा फिर जाना और एकान्त में कोई न देखे ऐसे स्थान खडे रहे बाद भिक्षाकाल होवे तब भिन्न २ घरों में से निर्दोष आहार

नहीं ख० निश्चय मे० मुझे क० कल्पे आ० आधाकर्मी अ० असनादि चारों आहार, भो० खानेको पा० पीनेको मा० मत उ० करो मा० मत उ० बनावो, से० वे से० ऐसे व० बोलते को प गृहस्थ आ० आधाकर्मी अ० असनादि चारों आहार उ० बनाकर आ० ला द० देवे त० तथा प्रकारका अ० असन अ० अप्रासुक णो० नहीं लेवे ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् स० प्रवेशकर से० वे जा० जाने म मांस (गिर) म० मच्छ (वनस्पति) भ० भूनता पे० देखे ते० तेलकीपुरी आ० पाहुणे केलिये उ० बनावे पे०

आउसोत्ति वा भगिणित्ति वा णो खलु मे कप्पति आहाकम्मियं असणं वा [ ४ ] भोत्तए वा पायए वा, मा उवकरिज्जा, मा उवक्खडेहि से सेवं वदंतस्स परो आहाकम्मियं असणं वा ( ४ ) उवक्खडेत्ता आहट्टु दलएज्जा तहप्पगारं असणं वा ( ४ ) अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा—मंसं वा, मच्छं वा, भज्जिज्जमाणं पेहाए तेल्लपू-

बनाया हुवा आहार पानी कल्पता नहीं है इस लिये मेरेलिये बनाना नहीं इतना कहने पर भी गृहस्थ आधाकर्मादि आहार पानी बनाकर देवे तो मुनि को ग्रहण नहीं करना ॥ २ ॥ मांस (गिर) मत्स्य नामक वनस्पति विशेष भुंजाते हुवे देख और पाहुणा के लिये पूरीयां तेल में तलाती हुइ देख गृहस्थ के यहां उसे

बुरा २ प० परिठावे पा० पापस्थान स० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसे क० करे पु० अच्छा २ क० बुरा २ स० सब भुं० भोगवे णो० नहीं किं मरा प० परिठवे ॥८॥ से० व भि० साधु साध्वी ब० बहुत प अपसे भो० भोजन प० लेआया, ब बहुत सा० साधु त० तहां व० रहते हैं स० संभोगी स० शुद्धाचारी अ० आदरने योग्य, अ० नजीकर्दे ते० उनका अ बिनपूछे, अ० बिन आमंत्रे प० परिठावे पा० पापस्थान सं० स्पर्शे, णो० नहीं ए० ऐसे क०करे से वे त०उसे मा०लेकर त०तहां ग०जावे से० वे पु०पहिलेजैसे आ०करे

साइत्ता, कसाय २ परिठ्ठवेसि, माइट्ठाणं सफासे, णो एव करेज्जा पुष्फ पुष्फाचि वा कसाय कसायेत्ति वा सव्वमेय भुजेज्जा णो किंचिवि परिठ्ठवेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) बहुपरियावण्णं भोयणजायं पडिगाहेत्ता बहवे साहम्मिया तत्थ व-सति सभोइया, समणुन्ना, अपरिहारिया, अदूरगया, तेसिं अणालोइया, अणामंतिया परिठ्ठवेति माइट्ठाणं सफासे णो एव करेज्जा से त मादाय तत्थ गच्छेज्जा २ से पु

ष्टक प्रकार के पानी में से अच्छा २ पीजावे और खराब २ डाल देवे तो यह भी दोष पात्र है इस लिये ऐसा न करें जैसा आवे वैसा सब पीजावे ॥ ८ ॥ यदि साधु अपनी जरूरतसे विशेष आहार ले आया होवे और अपनी पास में अन्य समान धर्मी मुनि रहते होवें तो उन को बिना बताये और बिना आमंत्रण किये परठवे नहीं यदि परठावेगे तो वह दोष पात्र है इस लिये ऐसा नहीं करना किन्तु उस आहारको लेकर

अमनोज्ञ अ० मालक की आज्ञाविना अ० अफ्रासुक जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहणकर त० वह च ए-सरे स० अच्छा सं० मालक की आज्ञायुत फा० फासुक जा० मिलतो प० ग्रहणकरे ॥ ८ ॥ इति ॥

से० वे ए० कितनेक साधु सा० साधारण वा० या पिं० आहार प० ग्रहण करके ते० वे सा० स्वधर्मीयों को अ० बिनपूछे जा० जिसको २ इ० चाहे त० उसको २ ख० शीघ्र २ द० देवे मा० पापस्थान स० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क० करे। से वे त० तब मा० लेकर के त० वहां ग० आवे जाकर पु० परिले

अणिसिठ्ठ अफासुय जाव णो पडिगाहेज्जा तं परेहिं समणुण्णातं सणिसिठ्ठं फा-सुय लाभेसन्ने जाव पडिगाहेज्जा ॥ ७ ॥ एय खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणिए या सामागियं ॥ ८ ॥ इति पिंडेसणाज्झयणस्स नवमोद्दसो सम्मत्ता *

से एगतिओ साधारणं वा पिंडवाय पडिगाहेत्ता ते साहम्मिए अणापुछित्ता जस्स २ इच्छइ तस्स २ खद्ध २ दलाति, माइठाण सफास, नो एव करेज्जा, से त-

उन की आज्ञा बिना ग्रहण नहीं करना यदि वह आज्ञा देवे तो या स्वयं देवे तो ग्रहण करना॥ ७ ॥ उक्त प्रकार से साधु साध्वी की समाचारी है ॥ ८ ॥ यह पिण्डैषणा दशम अध्ययन का नवम उद्देशा पूर्ण हुवा आगे आहार पानी लाने की विधि बताते हैं + +

कोई भी साधु सब साधुओं के लिये साधारण आहार लाया होवे और उन में से उन को बिनापूछे अपनी इच्छानुसार चाहा उसे शीघ्र २ देवे वह दोषपात्र होता है इसलिये ऐसा नहीं करना परंतु जैसा

प० दूसरे ब० कोई ता० उतना २ पि० देवे स० सबको प० दूसरा कोई स० सबही पि० देवे ॥ १ ॥
से० वे ए० कितनेक साधु म० मनोज्ञ भो० भोजन प० लाकर प० प्रान्त भो० भोजन से प० छिपावे मा०
रखे मे० यह दा० देखावूंगातो से० वे वं० उसे द० देखकर स० स्वयं मा० लेलेवेंगे मा० आचार्य जा०
यावत् ग०गणावच्छेदक णो०नहीं स०निश्चय मे०मुझे क०किसीकोभी किं०किंचित दा०देवूंगा, सि०कदाचित
मा०स्थानस्थान सं० स्पर्शो णो० नहीं प० ऐसा क०करे से० वे त० उसको आ०लेकर त०वहां ग०जाकर पु०

॥ १ ॥ से एगतिओ मणुण्णं भोयणजायं पडिगाहित्ता पंतेण भोयणेण पलिच्छाए
सि मामेतं दाइयं, संतं दट्ठूण सयं माइए आयरिए वा जाव गणावच्छेइए वा,
णो खलु मे कस्सति किंचि दायव्वं सिया माइट्ठाणं सफासे णो एवं करेज्जा । से
त मायाए तत्थ गच्छेज्जा (२) पुव्वामेव उत्ताणए हत्थे पडिग्गहं कट्टु इमं खलु
२ त्ति आलोएज्जा णो किंचिवि णिगूहेज्जा सेएगतिओ अण्णतरं भोयणजायं पडि-

आचार्य की इच्छानुसार करे परंतु अपने छांदे से किसी कोकुच्छ न देवे ॥ १ ॥ जो कोइ साधु आहार
लाकर मन में ऐसा विचार करे कि जो यह आहार मैं खुला बतावूंगा तो आचार्य, उपाध्याय यावत् गणा
वच्छेदक ले लेंगे और मेरे तो किसी को देना नहीं है. ऐसा विचार कर अच्छे आहार को खराब आहा
र से ढककर फिर आचार्यादिक को बतावे तो यह दोष पाप है इस लिये ऐसा नहीं करना परंतु जैसा

म० इक्षुमध्य जा० यावत् सि० सिंग आदिकी फली अ० अप्रासुक जा० यावत् णो० नहीं लेवें ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जा० जाने ब० बहुत अ० गुठली वाला मं० फलकागिर म० मच्छकार वनस्पति ब० बहुत कांटे अ० इस प०पात्रमें अ०खानपीना ब०न्हासन्य बहुत त० तथा प्रकार ब०बहुत अ० गुठली मं० फलकागिर, म० मच्छकार वनस्पति अ० मिलेतो जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहणकरे ॥४॥ से० वे भि० साधु साध्वी आ० गवेषकर सि० कदाचित प० दूसरा ब० बहुत अ० गुठली वाला मं०, मिर

उज्झियधम्मए—तहप्पगारं अतरुच्छुयं जाव सिंबलिथालगं वा अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण जाणेज्जा बहुअट्ठियं, मंसं वा, मच्छं वा, बहुकंटगं अस्सिं खलु पडिगाहितंसि अप्पे सिया भोयणजाए बहुउ-ज्झियधम्मिए तहप्पगारं बहुअट्ठियं मंसं मच्छं वा बहुकंटगं लाभेसंते जाव णो-पडिगाहेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव समाणे सिया णं परो बहु अट्ठिए

खाना थोड़ा और फेंकना बहुत ऐसा अप्रासुक अनेषणिक जानकर ग्रहण नहीं करना ॥ ३ ॥ साधु साध्वी को बहुत बीजवाले फलों का गिर, बहुत कंटक युक्त मत्स्य नामक वनस्पति कि जिस में खाना थोड़ा और फेंकना बहुत होवे ऐसे ग्रहण करना नहीं ॥ ४ ॥ कदाचित् मुनि को कोई आमंत्रण करे कि अहो आयु-ष्यमान् श्रमण बहुत गुठली युक्त फल लेवोगे ? ऐसा सुनकर तुरत ही उत्तर देना कि अहो आयुष्यमान् या

गु० गुठली मे० गिर प० मसगकर णि० समकर दे०देवे त०तथा प्रकार प० पात्रमें प० दूसरे के हाथमें प० दूसरे के पात्रमें अ अफासुक अ अनेषणिक ला० मिलेतो णो०नहीं प० लेवे ॥ से० वे भा० अथवा प० ग्रहण करे सि कदाचित् तं० उसे णो० नहीं हि०अच्छा व०कहे णा०नहीं अ०बुरा व०कहे ॥ से०वे त०तब मा० ग्रहणकर ए० एकान्त म० आवे, आकर म० नीचे आ० बगीचेमें अ० नीचे उ० उपाश्रय में, अ० अल्प अण्डे मा० यावत् अ० अल्प मकडीके मालें मे० गिर २ म० मच्छ वनस्पति मो० खाकर अ० गुठली कं० कांटे ग० ग्रहणकर से० वे त० उसे लेकर ए एकान्त म० आवे अ० नीचे ज्झा० दग्धजमीन को मा यावत् प० पूजकर प० परिठावे ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० यावत् प्रवेशकर सि० कदा

हुप्पगारं पडिग्गहगं परहत्थंसि वा, परपायंसि वा, अफासुयं अणेसणिज्जं लाभेसंते जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ से आहच्च पडिगाहिए सिया तं णो "हि"त्ति वएज्जा, णो अणहि त्ति वएज्जा, से त मायाए एगंत मवक्कमेज्जा ( २ ) अहे आरामंसि वा, अहे उवस्सयंसि वा, अप्पंडे जाव अप्पसंताणए मंसगं मच्छगं भोच्चा, अट्ठियाइं कंटए गहाय, से त मायाए एगंत मवक्कमेज्जा अहे ज्झामथंडिलंसि वा, जाव पमज्जिय २, परिट्ठवेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव समाणे सिया से परो अभिहट्टु

नहीं बोलना परंतु उस आहार को लेकर एकान्त स्थल में जाकर जीव जंतु रहित उपाश्रय या बाग में बैठकर उस को खाना तथा गुठली और कॉंटे यत्ना से निर्जीव स्थंडिल में परठाना ॥ ५ ॥ गृहस्थ के यहां

करो अ० अनान में ! सो० वह भ० कहे णो० नहीं ख० निश्चय मे० मैंने आ० आनके दि० दिया अ० अभाण में दि० देखागया, पा० मांगता स० निश्चय आ० आयुष्यमान इ० अत्र पि० देसाहु सं० तुम को भुं० भोगवो प० विभागकरो सं० उसकी प० दूसरेने स० आज्ञादी स० तब सि० रमाउवे याद ख० सब ख० साधु भु खावे पी० पीवे, जे० जो च० निश्चय णो० नहीं स० समर्थ भो० खाने पा० पीन सा० स्वधर्मी त० तहां व० वसवेरो सं० सभोगी स० अच्छे अ० ग्रहण करने योग्य अ० नजीक ते० उनको अ० देने सि० कदाचित् णो० नहीं म० जहां सा० स्वधर्मी म० जो व० बहुत प० भास हुआ की० करनेका

आउसो इयाणिं णिसिरामि त भुंजह च णं, परिभाएह च ण, तं परेहिं समणुन्ना य समणुसिह ततो सजयामेव भुंजेज्ज वा पीएज्ज वा, ज च णो सचाएति भोत्तएवा पायए वा, साहम्मिया तत्थ वसति समोइया, समणुन्ना, अपरिहारिया, अदूरगया, ते सिं अणुप्पदायव्वं, सिया णो जत्थ साहम्मिया जहेव बहुपरियावन्ने कीरति तहेव

इस को खाओ या दूसरेका विभाग करो इस तरह यदि गृहस्थ रजा देवे तो, यतना पूर्वक इस (भाचित) लवण को खाना और विशेष होने से स्वतः न खासके तो नजीक में रहनवाले अन्य साधर्मी मुनियों को देना और दूसरे मुनि न होवे तो जैसे आहार परठाने कि विधि बतलाइ है वैसे परिठाना ॥ ६ ॥ साधु साध्वी का यद

यह ज० यथा इ० यह पि० आहार इ० यह लुखा, इ० यह तीखा इ० यह कडुवा, इ० यह कसायला इ० यह खट्टा, इ० यह मीठा णो० नहीं ख० निश्चय ए० इसमेंसे किं० किंचित गि० रोगीका स० सधे ऐसा मा० पापस्थान सं० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसे क० करे ॥ त० तैसेही तं० उन आ० कहे ज० जैसा त० उन गि० रोगी को स० मदे तं० यह ज० यथा ति० चरके को चरका क० कडुवेको कडुवा, क० कसायले को कसायला अ० खट्टेको खट्टा म० मीठेको मीठा करे ॥ १ ॥ भि० साधु ए० कितनेक ए० ऐसे मा० कहे स० स्थिर

आलोएज्जा तंजहा—इमे पिंडे, इमे लोए, इमे तित्तए, इमे कडुए, इमे कसाए इमे अंबिले, इमे महुरे, णो खलु एत्तो किंचि गिलाणस्स सदतित्ति, माइट्ठाणं सं फासे णो एवं करेज्जा। तहेव तं आलोएज्जा, जहेव तं गिलाणस्स सयति तंजहा तित्तयं तित्तएत्ति वा, कडुयं कडुएत्ति वा, कसायं कसाएत्ति वा, अंबिलं अंबिलेत्ति वा, महुरं महुरेत्ति वा ॥ १ ॥ भिक्खागा णामेगे एवं माहंसु समाणे वा, वसमाणे वा,

पसन्द न पडे तो तुम खाजाना उस समय वह भिक्षा लानेवाला साधु स्वयं उस आहार को खाने की इच्छा से रोगी साधु को उलटा समझावे कि—यह आहार चरका, कसायला, खट्टा, कडुक, मिष्ट है, दुःसमद है ऐसा करनेवाला साधु दोषपात्र है इस लिये साधु को जैसा आहार होवे वैसा कहना पथ्यको पथ्य और अपथ्य को अपथ्य कहना ॥ १ ॥ भिक्षार्थी मुनि अपना सभोगी, एकस्थान रहनेवाला या ग्रामानु

नहीं भरा हा० हाथ अ० नहीं भरा म०पात्र त० तथा प्रकार अ०स्वच्छ हा० हाथ म०पात्र मे अ० अशनादि
।।रोआहार स०स्वयं जा०याचे प०दूसरा दि देवे फा०प्रासुक जा०यावत् प ग्रहणकरे इ०यह प०प्रथम पिं०
आहारेषणा ॥१॥ आ०अथ अपर दो०दूसरी पि० आहारेषणा स०भरे हुवे ह०हाथ स० भरे म०पात्र त० तैसे
ही दो० दूसरी पि० पिंडेषणा इ० यह दो० दूसरी पिं० पिंडेषणा ॥ २ ॥ आ० अथ अपर त० तीसरी
पिं० आहारेषणा, इ० यहां स० निश्चय पा० पूर्व मे प० पश्चिम मे, दा० दक्षिण में, उ० उत्तर में सं० कि-

ससट्ठे हत्थे असंसट्ठे मत्ते, तहप्पगारेण असंसट्ठेण हत्थेण वा, मत्तेण वा, असण
वा ( ४ ) सयं वा ण जाएज्जा, परो वा से दिज्जा, फासुयं जाव पडिगाहेज्जा, इति प
ढमा पिंडेसणा ॥ १ ॥ अहावरा दोच्चा पिंडेसणा—संसट्ठे हत्थे संसट्ठे मत्तए तहेव
दोच्चा पिंडेसणा इति दोच्चा पिंडेसणा ॥ २ ॥ अहावरा तच्चा पिंडेसणा—इह खलु
पाईणं वा पडीणं वा, दाहिणं वा, उदीणं वा, संतेगतिया सड्ढा भवंति—गाहावती

पात्र स्वच्छ हाथ से और स्वच्छ पात्र से मिला हुवा आहार में याचकर लेवूंगा, या अन्य देवे तो ग्रहण
करूंगा यह प्रथमा पिण्डैषणा ॥१॥ भरे हाथ से या भरे पात्र से देवे तो लेवूंगा- यह द्वितीय पिंडैषणा ॥२॥
इस पृथ्वी पर पूर्व पश्चिमादि दिशाओं में गृहस्थ यावत् नोकरनी बहुत श्रद्धावान् होते हैं उन के वहां पात्र,

पा० हाथमें गि० लेकर उ० उठा द० दवेतो, त० तथा प्रकार भो० भोजन जात स० स्वयं जा० जाचे प० दूसरे दे० देवे, फा० फासुक जा० यावत् प० लेवे, त० तीसरी पिं० पिंडेषणा ॥ ३ ॥ अ० अथ अ० अपर च० चौथी पिं० आहारैषणा से० वे भि० साधु भि० साध्वी से० वे जा० जाने पि० पौंवा पा० चांवल, अ० इसमें स० निम्रव प० पात्रमें अ० अल्प प० पश्चात् कर्म अ० अल्प प० फोतरे आदि त० तथा प्रकार पि० पौंवा स० स्वयं जा० जाचे जा० यावत् प० ग्रहणकरे, च० चौथी पिं० पिंडेषणा ॥ ४ ॥

तहप्पगारं भोयणजाय सय वा ण जाएज्जा परो वा से देज्जा फासुय जाव पडिगा हेज्जा तच्चा पिंडेसणा ॥ ३ ॥ अहावरा चउत्था पिंडेसणा से भिक्खू वा भिक्खु-णी वा से ज्ज पुण जाणेज्जा, पिहुर्य वा, जाव चाउलपलंबं वा, अस्सि खलु पडि गाहितंसि अप्पे पच्छाकम्मे अप्पे पज्जवजाते तहप्पगारं पिहुं वा सय वा जाएज्जा जाव पडिगाहेज्जा, चउत्था पिंडेसणा ॥ ४ ॥ अहावरा पंचमा पिंडेसणा से भि-

या बहिन तुम स्वच्छ हाथ और भराहुवा पात्र या भराहुवा पात्र और स्वच्छ हाथ से इस आहार को मेरा पात्र में या हाथ में दो" और इस तरह से मिलाहुवा आहार ग्रहण करना यह तृतीया पिंडैषणा ॥ ३ ॥ साधु या साध्वी को पौंवा मुरमुरा ऐसा मालूम पडे कि जिस को लेने से बहुत कम पश्चात् कर्म दोष लगेगा या तो उस की छाल आदि कम फेकनी पडेगी तो ऐसा पौंवा मुरमुरा विगैरा ग्रहण करना यह चौथी पिंडैषणा (४) मुनि या आर्या ने जो भोजन गृहस्थ ने स्वताने अपना भोगार्थ प्याला, थाली, आदि किसी

सातवी पिं॰आहार एषणा से॰ वे भि॰ साधु साध्वी जा॰ यावत् प्रवेश करके उ॰ न्हाखनेका ध॰ धर्म जिसका मो आहार जाति जा॰ जाने जं॰ जिसे अ॰ अन्य ब॰ बहुत दु॰ द्विपद च॰ चतुष्पद स॰ साधु मा॰ ब्राह्मण अ॰ अतिथि, कि॰ कृपण व॰ भिख्यारी णा॰ नहीं वांछे त॰ तथा प्रकारका उ॰ न्हाखनेका ध॰ धर्म धारक भो॰ भोजन जात स स्वयं जा॰ याचना करे, प॰ गृहस्थादि देवे जा॰ यावत् फा॰ फासुक प॰ ग्रहण करे ॥ स॰ सा तवी पिं पिंडैषणा ॥ ७ ॥ इ॰ इतनी स॰ सात पिं॰ पिंडैषणा ॥ ५ ॥ अ॰ अथ अपर स॰ सात पा॰

छट्टा पिंडेसणा ॥ ६ ॥ अहावरा सत्तमा पिंडेसणा से भिक्खू वा ( २ ) समाणे उज्झियधम्मियं भोयणजाय जाणेज्जा जं च अन्ने बहवे दुपय-चउप्पय-समण-माहण—अतिहि—किवण—वणीमगा णावकंखंति तहप्पगारं उज्झियधम्मिय, भोयणजायं सयं वा णं जाएज्जा परो वा से दिज्जा जाव फासुय पडिगाहेज्जा सत्तमा पिंडेसणा ॥ ७ ॥ इच्चेयाओ सत्त पिंडेसणाओ ॥ ४ ॥ अहावरा सत्त पाणेसणाओ तत्थ

छट्ठी पिंडैषणा ( ६ ) जो भोजन फेंकने योग्य मालूम पडे और अन्य मनुष्य, पशु या श्रमण ब्राह्मणादिक भी लेने को न इच्छते होवे तो वैसा भोजन साधु साध्वी लेवे यह सातवीं पिंडैषणा ( ७ ) इस तरह सात पिंडैषणा जानना ॥ ४ ॥ अब सात पानैषणा कहते हैं जिस में पहिली पानैषणा हाथ स्वच्छ और पात्र

बोले भि० सोठ प०अंगीकारकी स०निश्चय ए० इतने भ०भयवमन करने वाला भ०मैं एकही स० शुद्ध प० अङ्गीकार की जे० जो ए० यह भ०भयको वमन करनेवाले ए०यह प०प्रतिज्ञा प०अङ्गीकारकरके वि०विचरतेहैं. जो० जो भ० मैं भी ए० यह प० प्रतिज्ञा प० अङ्गीकार कर वि० विचरता हूं स० सर्व ते० वे जि० जिनाज्ञा में उ० सावधान अ० परस्पर में स० सहायक ए० ऐसे वि० विचरते हैं ॥ ६ ॥ पूर्ववत् ॥ ७ ॥

जा भिष्छा पडिवन्ना खलु एते भयत्रतारो अहमेगे सम्मं पडिवन्ने जे एते भयवता-रो एयाओ पडिमाओ पडिवज्जिताण विहरति, जो य अहमसि एयं पडिमं पडिवज्जि ताण विहरामि सव्वे ते जिणाणाए उवट्ठिता अन्नोन्नसमाहीए एवं च ण विहरं ति ॥ ६ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ ७ ॥ इति पिंडेसणाज्झयणस्स एकादसोद्देसो ॥ इति पिंडेसणा णामं दसममज्झयण सम्मत्तं ॥

सात आहार की एषणा और सात पानी की एषणा में से यथा शक्ति किसी भी एक को प्रतिज्ञा अंगीकार करनेवाले साधु को ऐसा कदापि नहीं बोलना कि; मैं एकिला ही शुद्ध प्रतिज्ञा धारक हूं अन्य की प्रतिज्ञा झूठ है परंतु ऐसा बोलना कि दूसरे साधु प्रतिज्ञा धारन कर विचरते हैं और मैं भी प्रतिज्ञा धारण कर विचरता हूं हम सब जिनाज्ञा के पालक परस्पर समान हैं ॥ ६ ॥ उक्त प्रकार से साधु साध्वी का आचार है ॥ ७ ॥ यह पिंडैषणा नामक दशम अध्ययन का एकादश उद्देशा समाप्त हुआ और पिंडैषणा नामक दशम अध्ययन समाप्त हुआ आगे शय्या की शुद्धि के लिये शय्यास्य एकादश अध्ययन कहते हैं.

आसे त० तथा प्रकार उ० उपाश्रय प० देखकर प० पूंजकर त० फिर स० साधु अ० कायोत्सर्ग, से० शयन नि० सज्झाय चे० करे. ॥ २ ॥ से० वे ज०जो उ० उपाश्रय आ० जाने अ० इसकेलिये ए० एक सा० साधु को स० उद्देशकर पा० प्राणी भू० भूत जी० जीव स० सत्व का स० आरंभकर स० उद्देशकर की० मोलले पा० उधारले अ० छीनकरले अ० मालीक की आज्ञाविनाले, अ० सन्मुखला, आ० योंकर दे० देवे त० तथा प्रकार उं० उपाश्रय पु० दूसरे का बनाया अ० दातार का बनाया, जा० यावत् आ० सेवित

एए संताणए, तहप्पगारे उवस्सए पडिलेहित्ता पमज्जित्ता ततो सजयामेव ठाणं वा सेज्जं वा निसीहियं वा चेतेज्जा ॥ २ ॥ से ज्जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा अस्सिं पडियाए, एगं साहम्मियं समुद्दिस्स पाणाइं भूयाइं जीवाइं सत्ताइं समारब्भ समुद्दिस्स कीयं, पामिच्चं, अच्छेज्जं, अणिसट्ठं, अभिहडं, आहट्टु चेएति, तहप्पगारे उवस्सए पुरिसंतरकडे वा, अपुरिसंतरकडे वा, जाव आसेविते वा, णो ठाणं वा, सेज्जं वा,

को दृष्टि से देखकर रजोहरण से पूंजकर फिर कायोत्सर्ग, शयन, व स्वाध्याय करे ॥ २ ॥ जो उपाश्रय खास साधु के लिये प्राण, भूत, जीव और सत्व का विनाश करके बनाया होवे, मोल लिया होवे, किराये पर लिया होवे, अदलाबदला करके लिया होवे, निर्बल की पास से बलात्कार से छीन लिया होवे, मालिक की रजा विना लिया होवे, साधु को सन्मुख लाकर देवे उस उपाश्रय को [illegible] अन्य

ज्झायकरे चे० करे ॥ अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा मा० माने पु० अन्य बनाया आ० सेवन किया प० देसकर प० पूजकर त० फिर से० साधु ठा० कायास्सर्ग से० शयन णि० सज्झाय चे० करे ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज्ज० जो उ० उपाश्रय जा०जाने अ० असपातिने भि० साधु वास्ते क० कडीयों ड छाइ उ० लसवपाइ छ० छवाया लि० लींपा घ० साफकिया म० सिनगारा सं० चुव साफकिया ध० धूप दीया त० तथा प्रकारका उ०उपाश्रय अ० दातार का बनाया आ० यावत् अ० असेवन किया णो०नहीं ठा० काउसग्ग कर से० शयन णि० सज्झाय चे करे ॥ अ० अथ पु० फिर ए ऐसा जाणे पु० दूसरेने

पडिलेहित्ता पमज्जित्ता ततो सजयामेव ठाणं वा सेज्जं वा णिसीहियं वा चेतेज्जा॥५॥

से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण उवस्सय जाणेज्जा असंजए भिक्खुपडियाए कट्टिए वा, उक्कपिए वा, छन्ने वा, लित्ते वा, घट्ठे वा, मट्ठे वा, संमट्ठे वा, संपधूमिए वा तहप्पगारे उवस्सए अपुरिसंतरकडे जाव अणासेविए णो ठाणं वा सेज्जं वा णि

बनाया है उनोंने भोगवलिया होवे बाद साधु को देवे तो साधु उसे दृष्टि से देसकर, रजोहरण से पूजकर वहां कायोत्सर्ग, शयन, स्वाध्याय करे ॥ ५ ॥ गृहस्थ ने साधु के लिये उपाश्रय में कडीयां करवाइ होवे, छवाया होवे, लींपाया होवे, रंग चढाया होवे, साफ कराया होवे, और सुवासाया होवे, और गृहस्थ ने भोगवा न होवे तो साधु उस में कायोत्सर्ग, शयन, स्वाध्याय नहीं करे. यदि गृहस्थ ने भोगवलिया होवे

फिर प० ऐसा जा० पु० दूसरेने बनाया आ० भोगवलिया प० देखकर प० पूजकर त० तब सं० साधु मा० यावत् चे० करे ॥ ७ ॥ से वे भि साधु साध्वी से० वे पु० और उ० उपाश्रय जा० जाने अ० असयतिने भि० साधुके प० लिये उ० पानी मयूत कं० कन्द मू० मूल प० पत्र पु० फुल फ० फल बी० बीज ह हरी ठा० स्थानसे ठा० अन्य स्थान सा० लेजाय ब० बाहिर णि० निकाले त० तथा प्रकारका उ० उपाश्रय अ० स्वय कृत जा० यावत् णो० नहीं ठा० कायोत्सर्ग से० शयन णि० स्वाध्याय

तेज्जा ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा पुरिसतरकडे जाव आसेविते पडिलेहित्ता पमज्जित्ता ततो सजयामेव जाव चेतेज्जा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा असंजए भिक्खुपडियाए उदगपसूयाणि कंदाणि वा, मूलाणि वा, पत्ताणि वा, पुप्फाणि वा, फलाणि वा, बीयाणि वा, हरियाणि वा, ठाणातो ठाणं साहरति, बहिया वा णिणक्खु तहप्पगारे उवस्सए अपुरिसंतरकडे जाव णो ठाण वा

भादि नहीं करे. और अन्यने बनाया होवे गृहस्थ ने भोगवा होवे तो साधु वहां कायोत्सर्गादि करे ॥ ७ ॥ असंयति गृहस्थ साधु साध्वी के लिये उपाश्रय में से मूल, कंद, पान, फूल, फल, हरी वनस्पति, अनाज, वगैरा सचित्त वनस्पति निकालकर अन्य स्थान ले गया होवे और गृहस्थ ने उसे न भोगवा होवे तो उस

ज० यथा—स० स्कंधपर मं०मचाणपर मा० मालापर पा० प्रासादपर ह० हर्म्यतल में अ० अन्य त० इस प्रकारके अं० ऊपरके स्थान प० नहीं अ० अन्यत्र आ० गरूरी का० कारण से ठा० कायोत्सर्ग से शयन सि० स्वाध्याय चे० करे, । से० वे भ० भिक्षु सि० कदाचित चे० रहा हुवा णो नहीं त० वहां सी शीत पानी वि० अचेत से उ० ऊष्ण पानी वि० अचेत से ह० हाथ पा० पांव अ० आंख दं० दांत मु० मुख उ० धोने प० विशेषधोवे णो० नहीं त० तहां ऊ० ऊंचस्थानसे प पड़े से० उसे ज० यथा उ वड़ी नीत पा० पेशाव खे० खेंकार सिं० श्लेष्म वं० वमन पि० पित्त पू० राध सो० रक्त अ० अ० अन्य स०

क्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण उवस्सयं जाणेज्जा तजहा—खधंसि वा, मंचसि वा, मालंसि वा, पासायासि वा हम्मियतलंसि वा, अण्णतरंसि वा तहप्पगारासि अतलिक्ख जायंसि णण्णत्थ आगाढा गाढेहिं कारणेहिं ठाण वा, सेज्ज वा, णिसीहियं वा चेतेज्जा ॥ से आहच्च चेतिते सिया णो तत्थ सीओदगवियडेण वा, उसीणोदगवियडेण वा हत्थाणि वा, पादाणि वा, अच्छीणि वा, दंताणि वा, मुहं वा, उच्छोलेज्ज वा पहोएज्ज वा णो तत्थ ऊसढं पगरेज्जा तजहा उच्चार वा, पासवण वा, खेलं वा सिंघाण वा, वंत वा पित्त वा,

मचाणपर बनाहुवा मकान में, या भिंति के माळे पर, बागले या चांदनी पर, जरूरी कारण सिवाय रहना नहीं कदापित कारण से रहना पड़े तो वहां ठंडा अचित्त पानी से, या ऊष्ण पानी से हाथ, पाँव, मुंह, दांत का

सेo से भो उo उपाश्रय जाo जाने सo स्त्री पुरुष सo बालक पुरुष क्षुद्रपंतु युक्त, सo पशुयुक्त भo आ हार पाणी युक्त तo तथा प्रकार साo गृहस्थके उo उपाश्रय में णोo नहीं ठाo कायोत्सर्ग सेo सयन णिo सज्झाय चेo करे। भo पाप स्थान मेंo यह। भिo साधु को गाo गृहपतिके कुo घरके सेo साथ संo रहते हुवेको अo कम्पनहो विo विसूची कालो छo छर्देहो उo व्याधी होवे भo दूसरे सेo वे दुःo दुख रोo रोग भाo मार्वक सo उत्पन्नहो भo भसंपावि कo करुणा से तंo ते भिo साधुके गाo शरीर को तेo तेलसे घo घीसे से णo मक्खन से वo चरबी से मo मगाये पo मसले सिo स्नान से कo पीठीसे

सपसु, भत्तपाण तहप्पगारे सागारिए उवस्सए णो ठाण वा, सेज्ज वा, णिसीहियं वा चेतेज्जा आयाण मेय ॥ भिक्खुस्स गाहावतिकुलेण सद्धिं संवसमाणस्स; अलस ए वा, विसूइया वा छड्डियाणे उव्वाहिज्जा, अण्णतरे वा से दुक्खे रोयातंके समुप्पज्जेजा असजए कलुणवडियाए, तं भिक्खुस्सगातं तेलेण वा, घएण वा, णवणीतेण वा, वसाए वा अब्भंगेज्ज वा मक्खिज्ज वा, सिणाणेण वा, कक्केण वा लोद्धे

मकान में गृहस्थ के बालक पुत्र पंतु या गोमहिषादि पशुओं रहते होवें और उन के खानपान के पदार्थ भी वहां ही होवें, ऐसे गृहस्थ के परिचयवाले मकान में रहना नहीं ऐसे स्थान में रहने से अनेक दोषों उत्पन्न होते हैं जैसे कि वहां रहते साधु को कदाचित् सोजन, वमन, इत्यादि रोग उत्पन्न हो जावें तो

से॰ शैय्या णि॰ स्वाध्याय चे॰ करे ॥ ११ ॥ आ॰ पाप मे॰ यह भि॰ साधु को सा॰ गृहस्थके उ॰ उपाश्रय में व॰ रहने को इ॰ यहां ख॰ निश्चय गा॰ गृहस्थ वा॰ या जा॰ यावत् क॰ नोकरनी अ॰ आपसमें अ॰ क्रोधकरे व॰ कुवचन बोले रुं॰ रोके उ॰ उपद्रवकरे अ॰ अथ भि॰ साधु उ॰ ऊंचा म॰ मन णि॰ करे ए॰ यह अ॰ परस्पर उ॰ लडो वा॰ या॰ मा॰ मत उ॰ लडो, मा॰ मत उ॰ उद्वेगपामो, अ॰ अथ भि॰ साधु पु॰ पहिले कहा ए॰ यह प॰ प्रतिज्ञा जा॰ यावत् त॰ तथा प्रकारके

क्खूण पुव्वोवदिट्ठा एस पतिण्णा ज तहप्पगारे सागारिए उवस्सए णो ठाण वा, सेज्ज वा, णिसीहियं वा, चेतज्जा ॥ ११॥ आयाणमेय भिक्खुस्स सागारिए उवस्सए वसमाणस्स इह खलु गाहवती वा जाव कम्मकरी वा अन्नमन्न अक्कोसति वा, वयति वा, रुंभति वा, उद्दवति वा, अह भिक्खू उच्चावय मणं णियच्छेज्जा एते खलु अन्नमन्न उक्कोसन्तु वा, मा वा उक्कोसंतु वा, जाव मा वा उद्दवंतु । अह भिक्खूण पुव्वोवदिट्ठा

और गृहस्थवाले मकान में रहने से दूसरा दोष यह उत्पन्न होता है जैसे गृहस्थ उन की स्त्री यावत् नोकरनी परस्पर में लडेंगे उन को देखकर साधु के मन में उद्वेग उत्पन्न होगा और विचार भी उत्पन्न होगा कि लडो या मत लडो यावत् मत उपद्रव होवो ऐसे दोषों का स्थान गृहस्थ का सहवास जानकर यहां

यह भि० साधु को गा० गृहस्थके स० साथ स० रहते को इ० यहां स० निश्चय गा० गृहपतिका कुं० कुण्ड स गु० मेखला म० मणि मो० मोती हि० चांदी सु० सोना क० कड़ा तु० भुजबन्ध ति० कण्ठा पा सां कला हा० हार अ० अर्धहार, ए० एकावली, मु० मुक्तावली, क० कनकावली, र० रत्नावली, त० यु वति कु० कुमारिका अ० अलंकार से वि० विभूषित पे० देख, अ० अथ भि० साधु उ० ऊंचा मन णि० करे ए० ऐसी सा०या णो० नहीं ए० ऐसी यह इ० ऐसा पं० इसको मू० कहे इ० ऐसा म० मन सा० होवे

क्खुस्स गाहावतीहिं सद्धिं संवसमाणस्स—इह खलु गाहावतिस्स—कुंडले वा, गुण वा, मणिं वा, मोत्तिए वा, हिरण्णे वा सुवण्णे वा, कडगाणि वा, तुडियाणि वा, तिसरगाणि वा, पालंबाणि वा, हारे वा, अद्धहारे वा, एगावली वा, मुत्तावली वा, कणगावली वा, रयणावली वा, तरुणियं वा कुमारिं अलंकियविभूसियं पेहाए अह भिक्खू उच्चावयं मणं णियच्छेज्जा, एरिसिया वा सा णो वा एरिसिया इति वा

या है कि उन के घर में कुंडल, कंदोरा, मणि, मोती, चांदी, सोना, कड़ा, बाजुबंध, भुजबंध, कंठे, सांकले, हार, अर्धहार, एकावलि मुक्तावलि, कनकावलि, रत्नावलि, विगैरे आभूषणों से भूषित, युवा कुमारिका को देख साधु के मन में वितर्क उत्पन्न होवे कि मेरे घर में भी ऐसे आभूषणों थे, या ऐसे

मैथुन प० परिचारणा केलिये आ० करना जा० आ ए० इनके स० साथ मे मैथुन प०सेवन आ० करे पु० पुत्र स० निश्चय म० प्राप्त होवे ओ०भलवान ते० तेजवान घ० रूपवान ज० यशस्वी स०विजयी आ० अलौकिक द०देखने योग्य, ए० इस प्रकारका णि०शब्द सो० सुनकर णि० अवधारकर ता०उनमें की अ०कोइक स०श्रद्धावंत त०उन त०तपस्वी भि० साधु को मे० मैथुन प० सेवनको आ०करे, अ०अथ भि० साधुने पु पूर्वोक्त उ० उपदेशा जा० यावत त० तथा प्रकारका सा० गृहस्थ युक्त उ० उपाश्रय ठा० कायोत्स

मेहुणधम्मपरियारणाए आउट्टेज्जा पुत्त खलु सा लभेज्जा—आयंसिं, तेयंसिं, वच्च सिं, जसंसिं, संपराइयं, आलोय, दरिसणिज्जं, एयप्पगार णिग्घोसं सोच्चा णिसम्म तासिं च ण अण्णयरी सड्ढिया तं तवस्सिं भिक्खुं मेहुणधम्मपरियारणाए आउ ट्टावेज्जा अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा जाव ज तहप्पगारे सागारिए उवस्सए णो ठाणं वा सेज्जं वा णिसीहियं वा चेतेज्जा ॥ १५ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स

के त्यागी है इस से जो कोइ स्त्री इसका संग करके उन से मैथुन सेवन करेंगे तो बलिए, तेजस्वी, स्वरूपवान्, निरोगी, बुद्धिशाली, दर्शनीय, व अलौकिक पुत्र की प्राप्ति होगी ऐसा सुन पुत्राभि लाषिणी कोइ स्त्री साधु से मैथुन सेवना चाहे इस लिये उन को ऐसे स्थान में रहना नहीं ॥ १६ ॥ साधु साध्वी का निर्दोष उपाश्रय में रहने का यह आचार है ॥ १७ ॥ इति शैय्याख्य एकादश अ

म० मय भि० साधुका पु०पहिले उपदेशा जा० यावत् अ०जो व० यथा मकारका उ० उपाश्रयमें णो० नहीं ठा० कायोत्सर्ग से०यथन, णि०स्वाध्याय चे करे ॥१॥ आ०पापस्थान मे०यह भि०साधु को गा०गृहस्थके स० साथ सं० रहते को इ० यहां खु० निश्चय गा० गृहस्थ अ० अपने स० लिये वि० विविध मकारके भो० भोजन उ० निपजाव अ० अथ मि साधु प० भिये अ० अशनादि चारों आहार उ० पकावे उ० उनकरण मिलाप त० उगे भि साधु अ पाछे भो० भोगवना पी० पीना वि० आसक्तवने, अ०अथ भि० साधु पु० पहिले उपदेशा जा० यावत् णा नहीं ठा वते उ० उपाश्रय में ठा कायोत्सर्ग चे करे

हिय वा चेतेज्जा ॥ १ ॥ आयाणमय भिक्खुस्स गाहावतीहिं सद्धिं संवसमाणस्स इह खलु गाहावतिस्स अप्पणो सअट्ठाए विरूवरूवे भोयणजाए उवक्खडिए सिया अह भिक्खुपडियाए असण ( ४ ) उवक्खडेज्जा वा, उपकरेज्जा वा, त च भिक्खू अभिकखेज्जा भोत्तए वा, पीत्तए वा, वियट्टित्तए वा, अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा जा

इस लिये मुनि को खास उपदेश है कि उन को ऐसे स्थल में कदापि रहना नहीं ॥ १ ॥ और भी गृहस्थ की साथ रहने में सातवां दोष यह है कि गृहस्थ के घर में प्रतिदिन तरह २ का भोजन तैयार होते हैं, और साधु यहां रहे तो उन के लिये भी गृहस्थ अधिक बनावे, और साधु भी उसे भोगवने की इच्छा करे

उ० उपाश्रय में णो० नहीं पे० करे ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी उ० वडीनीत पा० लघुनीत उ० बाधा हुवे रा० रातको वि० सन्ध्याको गा० गृहस्थके कु० घरके दु० द्वार अ० उघाडे ते० चोर त० उसके अं० अन्धारेमें अ० प्रवेशकरे, त० उन भि० साधु को णो० नहीं क० कल्पे ए० ऐसे व० बोलना अ० यह ते० चोर प० प्रवेश करताहै णो० नहीं प० प्रवेश करताहै उ० छिपाताहै णो० नहीं उ० छिपाताहै आ० पडाहै णो० नहीं आ० पडाहै व० बोलताहै णो० नहीं व० बोलताहै ते० चोरने ह० लिया अ० अन्यने ह० लिया त०

ठाण वा जाव चेतेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) उच्चारपासवणेण उब्बाहिज्ज-माणे राओ वा वियाले वा गाहवतिकुलस्स दुवारवाहं अवगुणेज्जा तेणे य तस्संधियारि अणुपविसेज्जा,तस्स भिक्खुस्स णो कप्पति एव वदित्तए "अयं तेणे पविसइ वा, णो वा पविसइ उवल्लियति वा, णो वा उवल्लियति, आयवति वा, णो वा आयवति, वयति वा, णो वा

साधु दुःख बने इस लिये ऐसा स्थान में साधु को रहना नहीं ॥ २ ॥ गृहस्थ की साथ मुनि को रहने में नवमा दोष यह है कि साधु लघुनीत, बडी नीत करने को रात्रि को या सन्ध्या को गृहस्थ के घर की बाहिर निकले; उस समय घर का द्वार खुल्ला देखकर चोर प्रवेश करे और मुनि तो ऐसे नहीं बोल सकते हैं कि "यह चोर प्रवेश करता है, या छुपाता है, दौडता है, बोलता है, या इसने चोरा या अन्यने चोरा, उस का चुराया, या अन्य का चुराया, यह चोर खडा है, यह उस का साहायक है, यह मारनेवाला है, इसने

लसुन म० मत्स्य भरे भा० यावत् चे० करे ॥ ३ ॥ से० वे आ० मुसाफरखानेमें अ० बगीचेके घ गलोमें, गा० गृहस्थके घरमें प तापसके मठमें अ० वारम्बार सा० साधुओ ओ० रहतेहोवे णो० नहीं भो० रहे ॥ ७ ॥ से वे भा० सरायमें जा० यावत् प० मठमें जे० जो भ० साधु ऊ० ऋतुबद्धने वा० वर्षामध्यु क० कल्प उ० ऋतुम्पतिक्रमी तं० तहांही मु० वार २ स० रहे भ० यह भा० भायुष्मवंतो ! का० का लातिक्रांत कि० क्रिया भ० होती है ॥ ८ ॥ से० वे भा० सराय में आ० यावत् प० मठ में जे० जो भ०

से जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा तणपुंजेसु वा, पलालपुंजेसु वा, अप्पंडे जाव चेतेज्जा ॥ ६ ॥ से आगतारेसु वा, आरामागारेसु वा, गाहावतिकुलेसु वा, परियावसहेसु वा, अभिक्खण २ साहम्मिएहिं ओवयमाणेहिं णो ओवएज्जा ॥ ७ ॥ से आगतारे-सु वा जाव परियावसहेसु वा जे भयतारो उडुबद्धिय वासावासिय वा, कप्पं उवातिणि-त्ता तत्थेव भुज्जो २ संवसति अय माउसो कालाइक्कतकिरिया भवति ॥ ८ ॥ से

मासे भादि न होवे तो वहां साधु को रहना ॥ ६ ॥ जिस मुसाफिरखाने में, बंगले में, घर में, या मठ में वारम्वार अन्य साधुओं आकर रहते होवे तो वहां नहीं रहना ॥ ७ ॥ मुसाफिर खाना, बंगला, घर, मठ में शेष काल में एकमास और चतुर्मास में चार मास रहे बाद फिर पीछा वारंवार आकर रहे तो हे आयु ष्यमन् उस को कालातिक्रांत क्रिया लगती है ॥ ८ ॥ साधु जिस स्थान एकमास रहे होवे वहां दो मास

अ० अतिथि कि० कृपण व० भिखारी स० उद्देशकर त०वहां गा०गृहस्थ आ०घर चे० बनाये हुवे भ होते हैं ते० यह अ यथा आ० लोहकार शाला, आ० धर्म शाला, दे० देवालय, म०सभा प० परब प० दुकान प० मालकी बखार जा० रथशाला जा० चूनेके कारखाने, सु० सूतार शाला, द०दर्भशाला, ब०चर्मकारखाने, व० वल्कलके कारखाने, व० वनस्पतिशाला, इं० कोयलेके कारखाने, क० लकड़के कारखाने, सु० स्मशान, स०शान्तिगृह, सु०सूनाघर, गि०पर्वतपर घर, क०गुफा से०पाषाण मंडप भ० भवन गि० घर जे०जो भ०साधु

त पत्तियमाणेहिं, त रोयमाणेहिं बहवे—समण—माहण—अतिहि किवण वणीमए समुद्दिस्स तत्थ २ आगारीहिं आगाराइ चेइआइ भवति तंजहा—आएसणाणि वा, आयतणाणि वा, देवकुलाणि वा, सहाओ वा, पवाणि वा, पणियगिहाणि वा, पणियसालाओ वा, जाणगिहाणि वा, जाणसालाओ वा, सुधाकम्मताणि वा दब्भकम्मताणि वा, वद्धकम्मताणि वा, वक्ककम्मताणि वा, वणकम्मताणि वा इंगालकम्मताणि वा, कट्ठकम्मताणि वा, सुसाणकम्मताणि वा, सतिकम्मताणि वा, सुण्णागारकम्मता

सारी, व मार्गचारणों के लिये मकान बनाते हैं जैसे किः—१ लोहार की शाला, २ धर्मशाला, ३ देवस्थान, ४ बैठने की सभा, ५ पानी की परब ६ किराने की दुकान ७ माल की बखार ८ रथशाला, ९ चुने के कारखाने, १० धास के कारखाने, ११ चम के कारखाने, १२ वल्कलमणके कारखाने १३

कासा आ० यावत् भ० भवनपर ते० उसमें अ० आये नहीं मो० आयेंगे भ० यह आयुष्यमन् अ० अनभिक्रान्त क्रिया भ० होवे ॥११॥ इ० यहां स० निश्चय पा० पूर्व आ० यावत् उ० उत्तर में स० कितनेक स० श्रद्धावत भ० होते हैं. त० वह ज यथा—गा० गृहस्थ आ० यावत् क नोकरनी ते० उनको ए० ऐसा बु० वार्तालाप भ० होवे जे० जो इ० ये भ० होते हैं स० साधु भ० भगवंत सी० आचारवत आ० यावत् उ० निवर्ते मे० मैथुन ध० धर्म से णो० नहीं ख० निश्चय ए० इन भ० भगवन्तको क० कल्पे आ० आधाकर्मी उ० उपाश्रय में व० रहनेको से० वे जा० जो इ० यह अ० हमने अ० अपने लिये चे० बनाये भ० हैं तं० वह भ० यथा—

आगाराइं चेइयाइं भवति तजहा—आएसणाणि वा, जाव भवणगिहाणि वा, जे भयतारो तहप्पगाराइं आएसणाणि वा जाव भवणगिहाणि वा तेहिं अणोवयमाणेहिं ओवयति अयमाउसो अणभिक्कतकिरिया वि भवति ॥ ११ ॥ इह खलु पाईण वा जाव उदीणं वा सतेगइआ सड्ढा भवति तजहा—गाहावई वा जाव कम्मकरी वा, तेसिं च ण एवं वुत्तपुव्व भवति, जे इमे भवति समणा भगवतो सीलमंता जाव उवरया मेहुणाओ धम्माओ णो खलु एएसिं भयताराणं कप्पति आहाकम्मि

इत्यादि साधु यावत् भाट चारणों के लिये मकान बनाते हैं उस में वे साधु ब्राह्मणादि न रहे होवें और इस में जाकर जो मुनि रहते हैं हे आयुष्यमान, उस अनभिक्रान्त क्रिया लगती है ॥ ११ ॥ इस जगत् में

जा० यावत् उ० उत्तर में ए० कितनेक स० श्रद्धावंत भ० होते हैं ते० उनको आ० आचार गो० गोचर णो० नहीं सु० सुना भ० होवे जा० यावत त० उसे रो० रुचीकर ब० बहुत स० साधु मा० ब्राह्मण जा० यावत व० भिखारीयों प० गिन २ कर स० उद्देशकर त० तहां २ अ० गृहस्थने अ० घर चे० बनाये भ० होते हैं त० वे ज० यथा—आ० लोहारशाला जा० यावत् भ० भवनघर जे० जो भ० साधु त० तैसे आ० लोहारशाला जा० यावत भ० भवनघर में उ० आते हैं इ० तरह २ के प० इकेमकान व० रहते हैं आ० आयुष्यमान् ! म० महावर्ज कि० क्रिया भ० होती है ॥१३॥ इ० यहां ख० निश्चय पा० पूर्व

उदीण वा संतेगतिया सड्ढा भवति, तेसिं च णं आयारगोयरे णो सुणिसते भवइ जाव त रोयमाणेहिं बहवे समण माहण जाव वणीमए पगणिय २ समुद्दिस्स त त्थ २ अगारीहिं अगाराइ चेइयाइ भवति तजहा—आएसणाणि वा जाव भवणगि हाणि वा, जे भयतारो तहप्पगाराइ आएसणाणि वा जाव भवणगिहाणि वा उवा गच्छति इतरातरेहिं पाहुडेहिं वट्टंति अयमाउसो महावज्जकिरिया वि भवइ ॥१३॥

जगत् की चारों दिशाओं में कितनेक श्रद्धालु जीवों रहते हैं वे साधु के आचार गोचर के अजान हो मात्र दान का ही फल समझते हुवे बहुत शाक्यादि साधु ब्राह्मणों के लिये अलग २ उद्देश कर मकानों बनवाते हैं, ऐसे मकानों में यदि साधु रहे तो उसे महावर्ज क्रिया लगती है ॥ १३ ॥ इस जगत् की चारों दिशा में

किसनेक स० श्रद्धावंत म० होते हैं तं० यह म यथा—गा० गृहस्थ भा० यावत् क० नोकरनी ते० उन को भा आचार गो० गोचर णो नहीं सु सुणा हुआ भ० होता है, जा० यावत् त० यह रो० रुचिवंत हो ए०एक स०साधु स०उद्देशकर त०वहां आ०गृहस्थ अ०घर चे० बनायाहुवा भ० होवे, तं० यह यथा-आ० लोहारशाला जा० यावत् भ०भवनघर म०महा पु०पृथ्वीकाय का स०आरंभकरे ए०ऐसे म० महा आ०पानी ते० अग्नि वा० वायु व० वनास्पति त०त्रसकाया सं०आरंभ कर म० महा सं० विस्तरन म०महा से म० महा आ० आरम म० महा वि विविध प्रकार पा० पापकर्म तं यह ज० यथा छ० छपावे ल० लिपावे सं०

तिया सड्डा भवति तंजहा गाहावई वा जाव कम्मकरी वा, तेसिं च णं आयारगो यरे णो सुणिसते भवति, जाव त रोयमाणेहिं एक्क समणजाय समुद्दिस्स तत्थ २ आगारीहिं आगाराइं चेइयाइं भवंति, तंजहा आएसणाणि वा जाव भवणगिहा-णि वा, महया पुढविकाय समारंभेण एव महया आउ-तेउ-वाउ-वणस्सइ-तसकाय समारंभेणं महया सरंभेण महया आरंभेणं महया विरूवरूवेहिं पावकम्मेहिं तंजहा छायणओ लेवणओ, संथारदुवार पिहणओ, सीतोदए वा परिट्ठवियपुव्वे भवति, अगणिका

ऐसे मकान में यदि साधु रहे तो दोनों पक्ष का सेवनेवाला होता है अर्थात् द्रव्ये साधु होने पर भावे गृहस्थके

लोहार शाला जा० यावत् भ० भवनकर म० महा पु० पृथ्वी काय स० आरंभकर जा० यावत् अ अग्नि काय उ० प्रज्वलित पु० पहिले भ० होवे जे० जो भ० साधु त० तथा प्रकार आ० लोहार शाला मा० यावत् भ० भवनघर उ० जावे इ० तरह २ के पा० इकेमकानमे व रहसे ए० एकपक्ष क० कर्म से० सेवे आ० आयुष्यमान् अ० अल्प सा० सावद्य कि० क्रिया भ० होवे ॥ १६ ॥ पूर्ववत ॥ १७ ॥ इति

से ये य० और प० नहीं सु० सुलभ फा० फासुक उ० दोषरहित अ० ऐषणिक, णो० नहीं य०

काय वा उज्जालिय पुव्वे भवति, जे भयंतारो तहप्पगाराइ आएसणाणि वा जाव भवणगिहाणि वा' उवागच्छति इतरातरेहिं पाहुडेहिं वट्टति एगपक्खं ते कम्मं सेवति अयमाउसो अप्पसावज्जा किरियावि भवति ॥ १६ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥१७॥ इति सेज्जाज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो ॥

से यह णो सुलभे, फासुए, उञ्छे, अहेसणिज्जे, णो य खलु सुद्धे इमेहिं पाहुडेहिं तज

लगती है अर्थात दोष नहीं लगता है ॥ १६ ॥ (ये नव प्रकार की वसति में अभिक्रान्त क्रियावाली वसति और अल्प क्रियावाली वसति साधु को उतरने योग्य है अन्य वसति अयोग्य है ) यह सब मुनि तथा आर्या का आचार है ॥ १७ ॥ यह शय्यारूय एकादश अध्ययन का द्वितीय उद्देशा समाप्त हुवा आगे भी उपाश्रय की योग्यायोग्यता बताते हैं

* *

यदि कोइ गृहस्थ साधु को विनंति करे कि यहां पर आहार पानी सुलभ है इस लिये रहने की कृपा

पहिले भ० होवे, ए० एसे पि० रखालिये पु पहिला भ० है प० विभाग किया पु० पहिले भ० है, प० भोगवलिया पु पहिला भ० है प छोडदिया पु० पहिले भ० है, ए० ऐसे वि० कहते को स० साधु वि० करे ह० हां भ० होवे ॥२॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो उ० उपाश्रय जा० जाने, खु० छोटा खु० छोटेद्वार वाला, नी० नीचा सं० सकडा, भ० होवे, त० वैसे उ० उपाश्रय में रा० रातको वि० संध्याको णि० नि

सतेगइआ पाहुडिया उक्खित्तपुव्वा भवति, एव णिक्खित्त पुव्वाभवति, परिभाइय पुव्वा भवति, परिभुत्त पुव्वा भवति परिट्ठाविय पुव्वा भवति, एवं वियागरेमाणे समियाए वियागरेति? हंता भवति ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा, खुड्डियाओ खुड्डुवारियाओ नीयाओ संनिरुद्धाओ भवति तहप्पगारे

फिर साधु से कहते हैं कि यह मकान हमने हमारे लिये बनाया है हमने रक्खा है, विभाग किया है, भोगव लिया है नापसंद होने से छोडदिया है. अब आप इस में रहे ऐसी छलना से विचक्षण मुनि कदापि ठगावे नहीं परंतु उक्त कथनानुसार स्थानक के दोष सुना देवे तो वह मुनि यथार्थपना का उल्लंघन करता नहीं है ॥ २ ॥ कारण योगे मुनि को, चरक तापसादिक के मठों में साथ एक ही मकान में रहवे यदि वह मकान बहुत छोटा होवे, तो वैसा मकान में रात्रि या संध्या समये निकलते, प्रवेश करते पहिला हाथ आगे रखकर

प० पहते, ह० हाथ, पा० पाँव, ई० इन्द्रियों, लू० घसाय, पा० माणी भा० यावत् स० सत्व अ० मरे, व० मरे अ० भय भि० साधुको पु० पहिले कहा आ० यावत् जं० जो त० तैसे उ० उपाश्रय में पु० आगे ह० हाथमे प० पीछे पा० पाँवसे त० तब से० साधु णि० निकले प० प्रवेशकरे ॥ १ ॥ से० वे आ० सरायमें यावत् मठमें अ० विचारकर उ० उपाश्रय भा० याचे जे० जो त तहां ई० मालक जे० जो स० तहां स० अधिकारी ते० उनसे उ० उपाश्रयकी अ० माज्ञाले, का० इच्छाहो स० निश्चय भा० आयुष्यमान

क्खम्ममाणे वा, पविसमाणे वा पयलेज्ज वा, पवडेज्ज वा, से तत्थ पयलेमाणे पवडे माणे हत्थं वा, पाय वा, जाव इंदियजायं वा लूसेज्ज वा पाणाणि जाव सत्ताणि अभिहणेज्ज वा जाव ववरोवेज्ज वा अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा जाव ज तहप्पगारे उवस्सए पुरा हत्थेणं पच्छापाएणं तता सजयामेव णिक्खमेज्ज वा पविसेज्ज वा ॥ २ ॥ से आगतारेसु वा ( २ ) अणुवीइ उवस्सय जाएज्जा, जे तत्थ ईसरे, जे तत्थ स माहिट्ठए ते उवस्सय अणुण्णवेज्जा काम खलु आउसो अहालंदं अहापरिण्णात

हि इन्द्रियादि जीवों की, प्राणी वनस्पति, मूषकादि जीव, मिट्टि, पानी, अग्नि, वायु की घात होवे इस लिये साधु को भास भगवान है कि ऐसे स्थान में पहिले हाथ आगे रखकर पीछे पाँव रखना ॥ १ ॥ साधु को रहने के लिये धर्मशाला, बंगला, घर या मठ जो मिले तो उस की याचना करने में बहुत सावध रहना

न० मन्मन ध० धर्मी अ० मसले म० लगावे णो० नहीं प० महाव्रतको जा० यावत् चिं० धर्म चिंतवन त० तथा प्रकारका उ० उपाश्रयमें णो० नहीं ठा० कायसग्ग जा० यावत् से० करे ॥९॥ से० व भि साधु साध्वी न० वे जं० जो पु० फिर उ० उपाश्रय जा०जाने इ यहां ख० निश्चय गा० गृहस्थ जा० यावत् क० नोकरनी अ० परस्परमें गा शरीर को सिं० स्नानस क० सुगन्धि द्रव्यसे लो० लोढने च० ग चु० चूर्ण प पद्म आ० लगावे प० घसे उ० लेपकरे उ० उतारे णो० नहीं प० म

य तल्लेण वा घण्ण वा, णवणीएण वा, वसाए वा, अग्भगोति वा मक्खेंति वा, णो पण्णस्स जाव चिंताए, नहप्पगारे उवस्सए णो ठाण वा जाव चेतेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज पुण उवस्सय जाणेज्जा इह खलु गाहावई वा जाव कम्मकरीओ वा अण्णमण्णास्स गाय सिणाणेण वा, कक्केण वा, लोद्देण वा, वण्णे ण वा, चुण्णेण वा पउसेण वा, आघसाति वा, पघसाति वा, उवलेवाति वा, उव्वट्टि

माता, नोकरनी अपने शरीर को तेल, घृत, मक्खन, चरबी, विगैरे लगाते होवें, मसलते होवें, और वहां धर्म चिन्तवन में विघ्न पड़ता होवे तो रहना नहीं ॥ ९ ॥ जिस मकान में गृहस्थ, स्त्री विगैरे परस्पर अपने शरीर का सुगन्धि द्रव्य, लोद्र, चूर्ण, पद्म लगाते होवे, घसते होवें ऐसे मकान में रहने से धर्म चिन्तवन की अन्त

कलते प० प्रवेश करत, पु० आगे ह० हाथसे प० पीछे पा० पांवसे त० सब सं० साधु णि० निकले प० प्रवेशकरे, के केवलीने बू० फरमाया आ० दोष स्थान मे पड़, जे जो त० वहां, स शाक्यादि साधु मा० ब्राह्मण, छ० छत्र, म० पात्र, द० दण्ड, ल लकडी, भि० कमंडल, चे० वस्त्र, चि० पड़दा च० चर्म च० पगरखी च० चर्म स्वण्ड दु० अबन्ध, दु विसरेपडे, अ० अस्थिर च० चलविचल, भि० साधु रा रात को, वि० सध्याको, णि० निकलता, प प्रवेश करता प० रपटे, प० पडे, से० वे त० तहां, प० रपटते

उवस्सए, राओ वा, वियाले वा, निक्खममाणे वा, पविसमाणे वा, पुरा हत्थेण पच्छा पायेण ततो सजयामेव णिक्खमेज्ज वा, पविसेज्ज वा, केवली बूया "आयाणमेय," जे तत्थ समणेण वा, माहणेण वा, छत्तए वा, मत्तए वा, दडए वा, लट्ठिआ वा, भिसिया वा, चेले वा, चिलिमिली वा, चम्मए वा, चम्मकोसए वा, चम्मच्छेदणए वा दुब्बद्धे, दुण्णिक्खित्ते, अणिकपे चलाचले भिक्खू य राओ वा, वियाले वा, णि-

पीछे पाँव रखता हुवा यतना पूर्वक निकलना अन्यथा केवली भगवानने कर्मबंध का कारण कहा है क्यों कि यहां रहे हुवे शाक्यादि साधु ब्राह्मणादिक के छत्र, पात्र, कमंडल, दंडा, लट्ठी, वस्त्र, पड़दा, पुराणे वस्त्र विगैरे विसरे हुवे पडे होवे तो रात्रि को या सध्या को उन के उपकरणों को ठोकर लगे जिस से साधु रपटकर गिरजाय और उस के हाथ, पाँव, कान, आंख, नाक, शरीरादि में इजा होवे और नीचे

प० पहले, ह० हाथ, पा० पाँव, इं० इन्द्रियों, लू० घसाय, पा० प्राणी जा० यावत् स० सत्व अ० मरे, व० मरे अ० भय भि० साधुको पु० पहिले कहा आ० यावत् जं० जो त० तैसे उ० उपाश्रय में पु० आगे ह० हाथमे प० पीछे पा पाँवसे त० तब सं० साधु णि० निकले प० प्रवेशकरे ॥ ३ ॥ से० वे आ० सरा यमें यावत् मठमें अ० विचारकर उ० उपाश्रय जा० याचे जे० जो त० तहां ई० मालक जे० जो स० तहां स० अधिकारी ते० उनसे उ० उपाश्रयकी अ० आज्ञाले, का० इच्छाहो स० निश्चय आ० आयुष्यमान

क्खम्ममाणे वा, पविसमाणे वा पयलेज्ज वा, पवडेज्ज वा, से तत्थ पयलेमाणे पवडे माणे हत्थं वा, पाय वा, जाव इंदियजाय वा लूसेज्ज वा पाणाणि जाव सत्ताणि अ- भिहणेज्ज वा जाव ववरोवेज्ज वा अह भिक्खूण पुव्वोवदिट्ठा जाव ज तहप्पगारे उ वस्सए पुरा हत्थेणं पच्छापाएणं तता संजयामेव णिक्खमेज्ज वा पविसेज्ज वा ॥ ३ ॥ से आगतारेसु वा ( २ ) अणुवीइ उवस्सय जाएज्जा, जे तत्थ ईसरे, जे तत्थ स माहिट्ठए ते उवस्सय अणुण्णवेज्जा काम खलु आउसो अहालंदं अहापरिण्णात

इ इन्द्रियादि जीवों की, प्राणी वनस्पति, मूषकादि जीव, मिट्टि, पानी, आग्नि, वायु की घात होवे इस लिये साधु को खास भलामन है कि ऐसे स्थान में पहिले हाथ आगे रखकर पीछे पाँव रखना ॥ ३ ॥ साधु को रहने के लिये धर्मशाला, बंगला, घर या मठ जो मिले तो उस की याचना करने में बहुत सावध रहना

कलते प० प्रवेश करते, पु० आगे ह० हाथसे प० पीछे पा० पांवसे त० तब स० साधु णि० निकले प० प्रवेशकरे, क केवलीने बू० फरमाया आ० दोष स्थान मे यह, मे जो त तहां, स शाक्यादि साधु मा० ब्राह्मण, छ० छत्र, म पात्र, द० दण्ड, ल० लकडी, भि० कमंडल, चे० वस्त्र, चि० पडदा च० चर्म च० पगरखी च० चर्म खण्ड दु० अबन्ध, दु० बिखरेपडे, अ० अस्थिर च० चलविचल, भि० साधु रा रात को वि० सन्ध्याको, णि० निकलता, प प्रवेश करता प० रपटे, प० पडे, से० से त० तहां, प० रपटने

उवस्सए, राओ वा, वियाले वा, निक्खममाणे वा पविसमाणे वा, पुरा हत्थेण पच्छा पायेण ततो सजयामेव णिक्खमेज्ज वा, पविसेज्ज वा, केवली बूया "आयाणमेय," जे तत्थ समणेण वा, माहणेण वा, छत्तए वा, मत्तए वा, दंडए वा, लट्ठिआ वा, भिसिया वा, चेले वा चिलिमिली वा, चम्मए वा, चम्मकोसए वा, चम्मच्छेदणए वा दुब्बद्धे, दुण्णिक्खित्ते, अणिकंपे चलाचले भिक्खू च राओ वा, वियाले वा, णि-

पीछे पॉव रखता हुवा यतना पूर्वक निकलना अन्यथा केवली भगवानने कर्मबंध का कारण कहा है क्यों कि वहां रहे हुवे शाक्यादि साधु ब्राह्मणादिक के छत्र, पात्र, कमंडल, दंडा, लट्ठी, वस्त्र, पडदा, पुराणे शस्त्र विगैरे बिखरे हुवे पडे होवे तो रात्रि को या सन्ध्या को उन के उपकरणों को ठोकर लगे जिस से साधु रपटकर गिरजाय और उस के हाथ, पॉव, कान, आंख, नाक, शरीरादि में इजा होवे और जीवे

प० लेवे ॥९॥ से वे भि०साधु साध्वी से०वे जं०जो पु०और उ० उपाश्रय आ०आने स०गृहस्थ युक्त सा० अग्नि युक्त स०पानी युक्त णो०नहीं प० प्रज्ञावंतको पि०निकालना प० प्रवेशकरना णो० नहीं प० प्रज्ञावंतको वा०वांचना चिं०धर्म चिन्तवन, त०क्या प्रकारका उ०उपाश्रयमें णो०नहीं ठा०कायोत्सर्ग आ०यावत् चे०करे ॥१॥से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो उ० उपाश्रय जा० जाने गा० गृहस्थके घरके म०बीच २ में से ग० जाने आवे प० पग २ प० प्रतिबन्ध होवाहै णो० नहीं प० प्रज्ञावंतको पि० जाना आना जा०

णा अफासुए जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा ससागारियं, सागणियं, सउदयं, णो पण्णस्स निक्खमण पवेस णाए, णो पण्णस्स वायण जाव चिंताए तहप्पगारे उवस्सए णो ठाणं वा जाव चेतेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा गाहावइकु लस्स मज्झं मज्झेणं गंतुं, पए २ पडिबद्धं, णो पण्णस्स णिक्खमण जाव चिंताए

नाम से पहिले धारक होना, बाद में उस का निमंत्रण होवे तो भी अधनादि ग्रहण नहीं करना ॥ ९ ॥ जिस मकान में गृहस्थका, अग्नि जल पड़ा होवे और जाने आने में तकलीफ होती होवे वहां साधु साध्वी को के घर में होकर साधु को उपाश्रय में जानेका होवे और वहां जाने आने में

यावत् चिं० धर्मचिंतवन, त०वैसे उ०उपाश्रयमें णो०नहीं ठा कायोत्सर्ग चे०करे.॥७॥से०वे भि० साधु साध्वी से जे.जं० जो पु० फिर उ० उपाश्रय जा० जाने, इ० यहां ख०निश्चय गा०गृहस्थ जा०यावत् क० नोकरनी अ० आपस में अ० आक्रोशकरे जा० यावत उ० मारकूटकरे णो० नहीं प० महावतको जा० यावत् चिं० धर्म चिंतवन से० ऐसा ण० जान त० वैसे उ० उपाश्रयमें णो० नहीं ठा० कायोत्सर्ग वगैरे जा० यावत् चे० करे ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु से जे जो पु० फिर उ० उपाश्रय जा० जाणे, इ० यहां ख० निश्चय गा० गृहस्थ जा० यावत् क नोकरनी अ० परस्पर गा० शरीरको ते० तेल घ० घृत

तहप्पगारे उवस्सए णो ठाणं वा जाव चेतेज्जा ॥ ७ ॥ स भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण उवस्सय जाणेज्जा, इह खलु गाहावई वा जाव कम्मकरीओ वा अण्णमण्ण मक्कोसाति वा जाव उद्दवेंति वा, णो पण्णस्स जाव चिंताए सेवं णच्चा तहप्पगारे उवस्सए णो ठाणं वा जाव चेतेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण उवस्सय जाणेज्जा, इह खलु गाहावई वा जाव कम्मकरीओ वा अण्णमण्णस्स गा

प्रतिबंध होता होवे या वाचना, पृच्छा, धर्मचिन्तवन में विघ्न पडता होय तो वहां रहना नहीं ॥ ७ ॥ जिस मकान में गृहस्थ यावत् नोकरनी परस्पर लडाइ झगडे करते होवे और वहां धर्म चिन्तवन की अन्तराय होती होवे तो साधु साध्वी को रहना नहीं ॥ ८ ॥ जिस मकान में गृहस्थ की स्त्री, पुत्री, पुत्रवधु, धाय

प० मरनन घ° घरवी अ० मसले म० लगाते णो० नहीं प० भआर्मवको जा० यावत् चि० धर्म चिंतवन त० तथा प्रकारका उ० उपाश्रयमें णो० नहीं ठा० कावसग्ग जा० यावत् चे० करे ॥९॥ से० भ भि साधु सा ध्वी ने० ये ज्जं० जो पु० फिर उ० उपाश्रय जा०जाने इ यहां ख० निश्चय गा० गृह स्थ जा० यावत् क० नोकरनी अ परस्परमें गा० शरीर को सि० स्नानस क० सुगन्धि द्रव्यसे लो० लोढने च० ग ा सु चूर्ण प० पद्म आ० लगावे प० घसे उ० लेपकरे उ० उतारे णो० नहीं प० म

य तल्लेण वा घएण वा, णवणीएण वा, वसाए वा, अब्भंगेति वा, मक्खेंति वा, णो पण्णस्स जात्र चिंताए तहप्पगारे उवस्सए णो ठाण वा जात्र चेतेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण उवस्सयं जाणेज्जा इह खलु गाहावई वा जात्र कम्मकरीओ वा अण्णमण्णस्स गाय सिणाणेण वा, कक्केण वा, लोद्धेण वा, वण्णेण वा, चुण्णेण वा पउमेण वा, आघसंति वा, पघसंति वा, उव्वलेन्ति वा, उव्वहिं

माता, नोकरनी अपने शरीर को तेल, घृत, मक्खन, चरबी, विगेरे लगाते होवें, मसलते होवें, और वहां धर्म चिन्तवन में विघ्न पड़ता होवे तो रहना नहीं ॥ ९ ॥ जिस मकान में गृहस्थ, स्त्री विगेरे परस्पर अपने शरीर को सुग न्ध द्रव्य, लोद, चूर्ण, पद्म लगाते होवे, घसते होवें ऐसे मकान में रहने से धर्म चिन्तवन की अन्त

ध्यानको णि० निकलना जा० यावत् चिं० धर्मचिंतवन व० वैसा व० उपाश्रयमें णो० नहीं ठा०कायोत्सर्ग दे करे. ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज० जो पु० फिर उ० उपाश्रय जा० जाने, इ० यहां ख० निश्चय गा० गृहस्थ जा० यावत् क० नोकरनी अ० परस्पर के गा० शरीर को सी० शीतोदक अचित्तकर उ० उष्णोदक अचित्तकर, उ० पखाले, प० धोवे सिं० सींचे सि० स्नानकरे णो० नहीं प० प्रज्ञावंतको वा यावत् णो० नहीं ठा० कायोत्सग जा० यावत् चे० करे ॥ ११ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी

ति वा णो पण्णस्स णिक्खमण जाव चिंताए तहप्पगारे उवस्सए णो ठाणंवा जाव चेतेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा इह खलु गाहावई वा जाव कम्मकरीओ वा अण्णमण्णस्स गाय सीओदगवियडेण वा उसीणादगवियडेण वा, उच्छोलेंति वा, पधोवंति वा, सिंचति वा, सिणावेंति वा, णो पण्णस्स जाव णो ठाणंवा जाव चेतेज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं

राय पडती हो तो वहां रहना नहीं ॥ १० ॥ जिस मकान में गृहस्थ यावत् नोकरनी उष्ण पानी से या ठंडा पानी से स्नान मजन करते होवें, और जहां धर्म ध्यान की अन्तराय पडती होवे, तो वहां रहना नहीं ॥ ११ ॥ जिस मकान में गृहस्थ यावत् नोकरनी नग्न हो मैथुन सेवन का वार्तालाप करते हों और धर्म

सें० वे जो॰ जो उ॰ उपाश्रय जा॰ जाने, इ॰ यहां स॰ निश्चय गा॰ गृहस्थ जा॰ यावत् क॰ नोकरनी णि नग्नहो ठि॰ रहे, णि॰ नग्नहो उ॰ छिपकर मे॰ मैथुन धर्म वि कहे र॰ एकान्त में मं॰ विचारना मं करे णो॰ नहीं प॰ प्रज्ञावंतको णो नहीं ठा॰ कायोत्सर्ग जा॰ यावत् चे॰ करे ॥ १२ ॥ से॰ वे भि साधु साध्वी से॰ वे जो॰ जो उ॰ उपाश्रय जा॰ जाने जा॰ जिससे सं॰ चित्रित णो॰ नहीं प प्रज्ञावंतको जा॰ यावत् चि॰ चिन्तवन णो॰ नहीं चे॰ करे ॥ १३ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी अ॰ चाहे स॰ बीछोना प गवेषना, से॰ वे ज॰ जो पु॰ और स॰ बीछोना जा॰ जाने स॰ अण्डे सहित जा॰ यावत् स॰ जाले सहित त॰ वैसा

पुण उवस्सय जाणेज्जा इह खलु गाहावई वा जाव कम्मकरीओ वा णिगिणा ठिता, णिगिणा उवलीणा, मेहुणधम्म विण्णवेंति, रहस्सियं वा मंत भंतेति णो पण्णस्स जाव णो ठाणं वा जाव चेतेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्जं पुण उवस्सय जाणेज्जा आइण्णसलेक्खं णो पण्णस्स जाव चिताए जाव णो ठाणं वा चेतेज्जा॥ १३॥ से भिक्खू वा ( २ ) अभिकंखेज्जा संथार एसित्तए से ज्जं पुण संथारयं जाणेज्जा

ध्यान में अन्तराय पडती होवे तो यहां रहना नहीं ॥ १२ ॥ जिस मकान में चित्र चित्र करे हुवे होवें और वहां पूर्व कर्म की स्मृति होने से धर्म चिन्तवन में अंतराय होवे तो यहां रहना नहीं ॥ १३ ॥ साधु साध्वी को बिछाने के लिये पाट पाटलाकी जरूरत होवे तब उस की गवेषणा करे. और जिस में अंडे यावत्

सं० पीछोना स्रा० मिले तो णो० नहीं प० ग्रहण करे ॥१४॥ से०वे भि० साधु साध्वी से०वे जं० जो पु० फिर स०बिछोना जा०जाने, अ०अल्प अंडे जा०यावत् स०जाले ग०वजन त०वैसा ला०मिले तो णो०नहीं प० ग्रह ॥१५॥स०वे भि साधु साध्वी, से०वे पु०और स० संथारा जा जाने अ०अल्प अण्डे जा० यावत् स० जाले ल० छोटा अ० वजन पीछेनले त० वैसा सं शैय्या से संथारा ला० मिलेतो णो० नहीं प० ग्रहण करे ॥ १६ ॥ से० वे भि साधु साध्वी से० वे जो पु और सं० संथारा जा० जाने अ० अल्प

सअड जाव संताणग, तहप्पगार संथारग लाभेसते णो पडिगाहेज्जा ॥ १४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण संथारग जाणेज्जा अप्पंड जाव संताणग गरुयं तहप्पगार लाभसते णो पडिगाहेज्जा ॥ १५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण संथारय जाणेज्जा अप्पंड जाव संताणग लहुयं अपडिहारियं तहप्पगार सेज्जा संथारयं लाभेसते णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १६ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण संथारग

मकडी के जाले देखन में आवे तो उसे ग्रहण नहीं करे ॥ १४ ॥ जो संथारा अंडे, मकडी के जाले रहित होवे परंतु बहुत वजन होवे तो उसे ग्रहण नहीं करे ॥ १५ ॥ जो शैय्या व संथारा अंडे रहित चाहिये ह० हो परंतु दातार उसे लेने को ना करे तो उसे लेवे नहीं ॥ १६ ॥ जो संथारा अंडे जाले रहित होवे,

अण्डे आ० यावत् सं० माले ल० छोटा प० दातार पीछले णो० नहीं अ० यथा बद्ध त० तथा प्रकारका सं० मिलेतो णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ १७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे पु फिर स० संथारा जा० जाने अ० अल्प अण्डे आ० यावत् सं० माले ल० छोटा प० पीछाले अ०मजबूत त तथा प्रकारका स० संथारा ला० मिलेतो प० ग्रहण करे. ॥ १८ ॥ इ यह आ० दोषस्थान उ० परिहार करके, अ० अथ भि० साधु जा० जाने इ० यह च० चार प० प्रतिज्ञा स० संथार ए० याचे, त० इसमें ख० नि

जाणेज्जा अप्पंड जाव संताणगं लहुय पडिहारियं णो अहाबद्ध तहप्पगारं लाभेसंते णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १७ ॥ से भिक्खू वा [ २ ] से ज्जं पुण संथारयं जाणेज्जा अप्पंडं जाव संताणगं लहुयं पडिहारियं अहाबद्धं तहप्पगारं संथारगं जाव लाभेसंते पडिग्गाहेज्जा ॥ १८ ॥ इच्चेयाइं आयतणाइं उवातिकम्म अह भिक्खू जाणेज्जा इमाहिं चउहिं पडिमाहिं संथारगं एसित्तए तत्थ खलु इमा पढमा पडिमा —से भि-

छोटा होवे, और दातार पीछा लेवा होवे परंतु दृढ़ जाय, बिखरजाय ऐसा होवे तो उसे ग्रहण नहीं करे ॥ १७ ॥ जो संथारा अंडे रहित, बराबर, दातार पीछा लेता होवे, मजबूत मिलता होवे तो ग्रहण करे ॥ १८ ॥ साधु साध्वी को उपर्युक्त दोष रहित संथारा ग्रहण करने के लिये चार प्रकार की प्रतिज्ञा

प्रथम ६० यह प० प्रथम प० प्रतिज्ञा से० वे मि० साधु साध्वी उ० उद्देश २ कर सं० संथारा गा० याचे, त० यह ज० यथा—इ० यह क० बांसका बना जं० घास प० फुल गूंथनेके तृण मो० मोरपांख, त० तृण, कु० डाभ, कु० करादे प० गंठियो, पि० पिपल पान, प० पराल, से० वे पु० पहिले आ० कहे, आ० या पुष्पमान भ० बहिन दा० देवोंगे मे० मुझे ए० इनमे से अ० कोइक स० संथारा ? त० वैसे स० स्वयं जा० याचे प० दूसरे दे० देवे, फा० फासुक ए० एषणिक ला० मिलेतो प० ग्रहण करे प० प्रथम प० प्रतिज्ञा ।

क्खू वा ( २ ) उद्दिसिय ( २ ) संथारगं जाएज्जा तजहा इक्कडं वा, कढिण वा, जतुय वा, परग वा, मोरग वा, तण वा, कुस वा, कुच्चग वा, पव्वगं वा पिप्प- लग वा, पलालग वा, से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसोत्ति वा, भगिणित्ति वा, दा- हिसि मे एत्तो अण्णयर संथारग ? तहप्पगारं सयं वा ण जाएज्जा, परो वा से देज्जा फासुय एसणिज्जं लाभेसंते पडिग्गाहेज्जा पढमा पडिमा ॥ अहावरा दोच्चा पडिमा

कही है (१) पहिली प्रतिज्ञा यह है कि १ घणक, २ बांस का दण्डा, ३ घांस, ४ फुल्गुंथने का घांस, ५ पाँख, ६ तृण, ७ डाभ, ८ करादे, ९ गंठीयां, १० पिपलपान, ११ पराल इत्यादि संथारा में से [ शरदी वाली जमीन मिले उस का आच्छादन करने के लिये ] जो मिले उसे नाम लेकर ग्रहण करते समय जिस की आधीनता में होवे उसे पूछे कि अहो आयुष्यमन् या बहिन इस में से मुझे देवोंगे ? इस तरह स्वयं

म० अप अ०अपर दो० दूसरी प० प्रतिज्ञा से मे भि० साधु साध्वी पे० देख२ कर सं० संथारा जा०याचे त० वह ज० यथा—गा० गृहस्थ का या क० नोकरनी, पु० पहिले आ० कहे आ० आयुष्मान ! भ० भगिनि ! दा० देवोगे मे० मुझे ए० इसमे से अ० कोइ स० संथारा ! त० तथा प्रकार का स० संथारा स० स्वयं जा० याचे प० दूसरा दे० देवे, फा० फासुक ए० एषणिक प० ग्रहण करे. दो० दूसरी प० प्रतिज्ञा ॥ अ० अथ अ०अपर त० तीसरी प०प्रतिज्ञा से० वे भि० साधु साध्वी ज० जिसके उ०उपाश्रय में

से भिक्खू वा ( २ ) पेहाए २ संथारगं जाएज्जा तंजहा गाहावई वा जाव कम्म करीओ वा पुव्वामेव आलोएज्जा आउसोत्ति वा भगिणित्ति वा दाहिसि मे एत्तो अण्णयरं संथारगं ? तहप्पगारं संथारगं सयं वा णं जाएज्जा, परो वा से देज्जा फासु यं एसणिज्जं जाव पडिग्गाहेज्जा दोच्चा पडिमा ॥ अहावरा तच्चा पडिमा -से भिक्खू वा ( २ ) जस्सुवस्सए संवसेज्जा, जे तत्थ अहासमण्णागते तंजहा इक्कडे वा

याचकर लेवे या अन्य देता होवे तो लेवे निर्दोष जानकर ग्रहण करे ( २ ) दूसरी प्रतिज्ञा यह है कि उक्त प्रकार का संथारा गृहस्थ के घर में पड़ा हुवा देखने में आवे तो उसे याचकरलेवे या बिना याचे गृहस्थ अपनी इच्छा से देवे तो उसे ग्रहण करे ( ३ ) तीसरी प्रतिज्ञा यह है कि आप जिस मकान में रहे होवे

सं० नस से० जो त० तहाँ अ० यथा स० साधुको योग्य तं० वह अ० यथा, इ० भ्रण जा० यावत् प० पराल त० उसके ला० लाभमें सं० बसाही रहे त० उसके अ० नामिले उ० उत्कटासन नि० बैठे वि० विचरे, त० तीसरी प० प्रतिज्ञा ॥ अ० अथ अपर च० चौथी प० प्रतिज्ञा से वे भि० साधु साध्वी अ० यथा म० नमीक स० सथारा जा० याचे, तं० वह अ० यथा पु० सिला क० पाटिया अ० यथा स० नमीक त० उसके ला० मिलेतो सं० रहे अ० नामिलेतो उ० उत्कुटासन नि० बैठा रहे वि० विचरे. च०

जाव पलाले वा, तस्स लाभे संवसेज्जा, तस्स अलाभे उक्कडुए वा, निसज्जिए वा विहरेज्जा, तच्चा पडिमा ॥ अहावरा चउत्था पडिमा से भिक्खू वा ( २ ) अहा संथ डमेव संथारगं जाएज्जा, तंजहा पुढविसिलं वा, कट्ठसिलं वा, अहा संथडमेव तस्स ला भे संवसेज्जा अलाभे उक्कडुए वा निसज्जिए वा विहरेज्जा चउत्था पडिमा ॥ इच्चेया- ण चउण्हं पडिमाणं अण्णयरं पडिमं पडिवज्जमाणे तं चेव जाव अण्णोन्नसमाहीए एवं

यहां ही जो सथारा आदि मिलजाय तो उसे ग्रहण करे और न मिले तो सब रात उत्कटासन से बैठा रहे ( ४ ) चौथी प्रतिज्ञा यह है कि पत्थर, शिला, काष्ट का पाटिया, जो तैयार बिछाया हुवा मिलजाय तो उस पर शयन करे यदि न मिले तो उत्कटासन से रात्रि व्यतीत करे. इन चार प्रतिज्ञा में से किसी प्रकार की प्रतिज्ञा अंगीकार करनेवाले साधु को, अप्रतिज्ञी या इसकी प्रतिज्ञा अंगीकार करनेवाला साधु की निन्दा

चौथी प॰ प्रतिज्ञा॥ इ॰ इनमें च॰ चार प॰ प्रतिज्ञा अ॰ कोइ भी प॰ प्रतिज्ञा प॰ अंगीकार कर त॰ वेसे ही जा॰ यावत् अ॰ आपस में स॰ समता भाव सहित ए॰ इस तरह च॰ निश्चय वि॰ विचरे ॥ १९ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी अ॰ चाहे स॰ संथारा प॰ पीछादेना, से॰ वे पु॰ फिर सं॰ संथारे को जा॰ जाने स॰ अण्डे सहित, जा॰ यावत् सं॰ जाले सहित त॰ तथा प्रकारका सं॰ संथारा णो॰ नहीं प॰ पीछादेवे ॥ २० ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी अ॰ चाहे सं॰ संथारा प॰ पीछादेना से॰ वे पु॰ फिर स॰ संथारेको जा॰ जाने, अ॰ थोडे अण्डे जा॰ यावत सं॰ जाले त॰ तथा प्रकारका सं॰ संथारा प॰ देख देखकर प॰ प्र

य ण विहरंति ॥ १९ ॥ (२) से भिक्खू वा अभिकंखेज्जा संथारं पच्चप्पिणित्तए से जं पुण संथारगं जाणेज्जा सअंडं जाव संताणगं तहप्पगारं, संथारगं णो पच्चप्पिणेज्जा ॥ २० ॥ से भिक्खू वा (२) अभिकंखेज्जा संथारगं पच्चप्पिणित्तए से जं पुण संथारगं जाणेज्जा अप्पंडं जाव संताणगं तहप्पगारं संथारगं पडिलेहिय (२)

नहीं करनी परन्तु सब साथ शांत भाव से हिलमिलकर जिनाज्ञानुसार रहना ॥ १९ ॥ यदि साधु संथारा पीछा देने की इच्छा होवे और उस में अंडे जाले, होवे तो वैसाही पीछा देना नहीं ॥ २० ॥ परंतु वैसा जीव युक्त संथारा को अच्छी तरह देखकर, रजोहरण से पूंजकर, बाद धूप में रखकर, फिर झटककर

मार्जे प्रमार्ज कर आ॰ धूप में रक्खे धूपमें रखकर वि॰ झटक, झटक कर त॰ फिर स॰ साधु प॰ पीछादेवे ॥ २१ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी स॰ स्थिरवासी व॰ कल्प विहारी गा॰ ग्रामानुग्राम दू॰ फिरते पु॰ पहिले प॰ प्रज्ञावतको उ॰ बडी नीतकी पा॰ लघुनीतकी भू॰ जमीन प॰ देखे, के॰ केवली बू॰ फरमाया आ॰ पापस्थान मे॰ यह, अ॰ बिनदेखे उ॰ बडीनीत पा॰ लघुनीत भू॰ जमीन को भि॰ साधु भि॰ साध्वी रा॰ रात्रिको वि॰ स्यामको उ॰ बडीनीत पा॰ लघुनीत प॰ परिठवते प॰ रपटे प॰ पडे से॰ वे त॰ तहां प॰ रपटते प॰ पडते ह॰ हाथ पा॰ पांव जा॰ यावत् लु॰ घसाए पा॰ प्राणीयों जा॰ यावत् व॰ विराधे अ॰

पमज्जिय २ आयाविय २ विणिधूणिय २ तओ सजयामेव पच्चप्पिणेज्जा ॥ २१ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) समाणे वा, वसमाणे वा, गामाणुगामं दूइज्जमाणे, पुव्वामेव णं पण्णस्स उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेज्जा, केवली बूया "आयाणमेयं," अपडिलेहि- याए उच्चारपासवणभूमीए भिक्खू वा भिक्खुणी वा राओ वा, वियाले वा, उच्चार पासवण परिट्ठवेमाणे पयलेज्ज वा, पवडेज्ज वा, से तत्थ पयलेमाणे वा, पवडेमाणे

देवे ॥ २१ ॥ एक स्थान रहनेवाले साधु को, या मास कल्पविहारी, या ग्रामानुग्राम फिरनेवाले साधु को प्रथम लघुनित बडीनीत की भूमिका का अवलोकन करना चाहिये अन्यथा केवलज्ञानीने दोष कहा है रात्रि या संध्या को बिना देखी जमीन में जाने से, अनजान होने से अथडावे और पडे वो शरीर के अंगो

अथ भि० साधुको पु० पहिले दि० उपदेशा जा० यावत् जं० जो पु० पहिले प० महावतका उ० बड़ीनीतकी पा० लघुनीतकी भू० जमीनको प० देखे ॥ २२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० चाहे से० शैय्या सं० बिछोनाकी भू० जमीन प० प्रतिलेखना ण० इतना विशेष आ० आचार्य, उ० उपाध्याय, जा० यावत् ग० गणावच्छेदक, बा० बालक, बु० वृद्ध से० नवदीक्षित गि० रोगी, आ० पाहुणे, अ० अन्तमें म० मध्यमें, स० सम, वि० विषम, प० हवावाली नि० बिनाहवाकी, त० तब सं० साधु प० देखे देखकर प० पूंजे पूंजकर

वा हत्थ वा, पाय वा, जाव लूसिज्जा, पाणाणि वा जाव ववरोवेज्जा अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा जाव ज पुव्वामेव पण्णस्स उच्चारपासवण भूमिं पडिलेहेज्जा ॥ २६ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अभिकंखेज्जा सेज्जा संथारगभूमिं पडिलेहियए णणत्थ आयरिएण वा, उवज्झाएण वा, जाव गणावच्छेइएण वा, बालेण वा, वुड्ढेण वा, सेहण वा, गिलाणेण वा, आएसेण वा, अंतेण वा, मज्झेण वा, समेण वा, विसमेण वा, पवाएण वा, णिवाएण वा, तओ संजयामेव पडिलेहिय २ पमज्जिय २ बहुफासुय से

का भंग होवे और नीचे जीवों की भी घात होवे इस लिये सर्वस्थान लघुनीत और बड़ी नीत की भूमि पहिले से ही देखना ॥ २२ ॥ साधु साध्वी को पहिले से आचार्य, उपाध्याय, गणावच्छेदक, बाल, वृद्ध, रोगी के लिये अच्छा सातावारी स्थान छोड़कर खुद के लिये अन्य निर्दोष स्थान में बिछाना बिछाना

ब० बहुत फासुक से० शय्या सं० विछोना सं० करे ॥ २३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ब० बहुत फा० फासुक से० शय्या स० विछोना सं० बिछाकर अ० पीछे ब० बहुत फासुक से० बीछोना से० संथारापे दु० बैठे॥२४॥ से० वे भि० साधु साध्वी ब० बहुत फासुक से० शय्या सं० बिछोनापे दु० बैठसे हुवे से० वे पु० पहिले स० शिरसे का० शरीरको पा० पाँवतक प० पूंज पूंजकर त० फिर सं० साधु ब० बहुत निर्दोष से० शय्या बिछोने में दु० बैठे दु० बैठके त० फिर स० साधु ब० बहुत निर्दोष से० शय्या बिछोने मे स० सोवे ॥ २५ ॥ से० वे भि० साधु

ज्जा संथारगं सयरेज्जा ॥ २३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) बहुफासुयं सेज्जा संथारग संथरित्ता अभिकंखेज्जा बहुफासुए सेज्जासंथारए दुरुहित्तए ॥ २४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) बहुफासुए सेज्जा संथारए दुरुहमाणे स पुव्वामेव ससीसोवरियं का य पाए य पमज्जिय २ ततो संजयामेव बहुफासुए सेज्जासंथारगे दुरुहिज्जा दुरुहित्ता तओ संजयामेव बहुफासुए सेज्जासंथारए सएज्जा ॥ २५ ॥ से भिक्खू वा ( २ )

॥ २३ ॥ उपर्युक्त विधि अनुसार संथारा संथार कर उसमें यतना पूर्वक शयन करना ॥ २४ ॥ साधु साध्वी बिछोने में सोवे पहिले मस्तक से लगाकर पाँव तक सब शरीर रजोहरण से पूंजकर फिर निर्दोष बिछाने में शयन करे ॥ २५ ॥ निर्दोष बिछाने में उक्त विधि से शयन किये बाद अपना हस्त, पाँव, शरीर,

साध्वी व० बहुत निर्दोष से० शय्या स० बिछोने में स० सोते हुवे णा नहीं अ० परस्पर ह० हाथसे हाथ, पा० पांवसे पांव, का० शरीर से शरीर, आ० लगावे, से० वे अ० विनलगाते त० तब सं० साधु ब० बहुत फा० निर्दोष से० शय्या सं० बिछोने में स० शयनकरे ॥ २६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ऊ० ऊर्द्ध श्वास णि० निःश्वास का० खांसी छी० छींक ज० ऊबासी, उ० डकार वा० वायोत्सर्ग क० होवे पु० पहिले आ० मुख पो० गुदा पा० हाथसे प० ढककर त० फिर सं० साधु उ० उश्वास वा० वायोत्सर्ग क० करे ॥ २७ ॥ से वे भि० साधु साध्वी स० सम ए० एकदा से० शय्या भ० होवे, वि० विषम वे० एक

बहुफासुए सेज्जा संथारए सयमाणे, णो अण्णमण्णस्स हत्थेण हत्थं, पाएण पायं, काएण काय आसाएज्जा, से अणासायमाणे तओ संजयामेव बहुफासुए सेज्जा संथारए सएज्जा ॥ २६ ॥ स भिक्खू वा ( २ ) ऊससमाणे वा, णीससमाणे वा, कासमाणे वा, छीयमाणे वा, जंभायमाणे वा, उड्डोए वा, वातणिसग्गे वा, करेमाणे पुव्वामेव आसयं वा, पोसयं वा, पाणिणा परिपिहित्ता तओ संजयामेव उससेज्ज वा, जाव वायणिसग्गं वा करेज्जा ॥ २७ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) समाएगया, सेज्जा

अन्य के शरीर को नहीं लगाता हुवा साधु शयन करे ॥ २६ ॥ शयन किये बाद, श्वासोश्वास, खांसि, छींक, ऊबासी, डकार, वायोत्सर्ग आवे तब अपना मुख और आधिष्ठान हाथ से ढककर यतना पूर्वक करना ॥ २७ ॥ सोने के लिये कभी अच्छी भूमि मिले तो कभी बुरी मिले, कभी

दा से० शय्या म० होवे, प० वायुवाली वे० एकदा से० शय्या म० होवे, णि० हवाविनाकी, वे० एकदा से० शय्या म० होवे, स० कचरेवाली वे० एकदा से० शय्या म० होवे, अ० थोडे स० कचरे वाली वे० एकदा से० शय्या म० होवे, स० डांस मच्छरवाली वे० एकदा से० शय्या म० होवे, अ० अल्प द० मच्छरवाली वे० एकदा से० शय्या म० होवे, स० परीषुह वे० एकदा से शय्या म० होवे, म० विनापरी वे० एकदा से० शय्या म० होवे, स० उपसर्ग वाली वे० एकदा से० शय्या म० होवे, णि० उपसर्ग विना की वे० एकदा से० शय्या म० होवे, त० तथा प्रकारकी से० शय्या स० मास

भवेज्जा, विसमा वेगया सेज्जा भवेज्जा, पवाता वेगया सेज्जा भवेज्जा णिवाता वेगया सेज्जा भवेज्जा, ससरक्खा वेगया सेज्जा भवेज्जा, अप्पससरक्खा वेगया सेज्जा भवेज्जा सदंसमसगा वेगया सेज्जा भवेज्जा, अप्पदंसमसगा वेगया सेज्जा भवेज्जा, सपरिसाडा वेगया सेज्जा भवेज्जा, अपरिसाडा वेगया सेज्जा भवेज्जा, सउवसग्गा वेगया सेज्जा भवेज्जा, णिरुवसग्गा वेगया सेज्जा भवेज्जा, तहप्पगाराहिं सेज्जाहिं संविज्जमाणाहिं पग्ग-

हवावाली मिले तो कभी हवारहित मिले, कभी कचरावाली मिले तो कभी स्वच्छ मिले, कभी डांस, मच्छरवाली मिले तो कभी डांस मच्छर रहित मिले, कभी गिरीडुइ मिले तो कभी रमणिक मिले, कभी भयवाली मिले तो कभी भय रहित मिले, ऐसी विचित्र प्रकारकी भूमि मिलते साधु साध्वी

होवे प० अच्छी तरहसे ग्रहणकी वि विहार वि० विचरे णो० नहीं किं० किंचित् गि० खेदितबने ॥२८॥ ए० ऐसा ख० निश्चय त० उन भि० साधु भि० साध्वीकी सा० समाचारी स० सर्वथा स० सहित स० सदैव म० यत्नायुक्त त्ति० ऐसा बे० कहताहूं ॥ २९ ॥

हिततरागं विहार विहरेज्जा णो किंचिवि गिलाएज्जा ॥ २८ ॥ एवं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गिय ज सव्वट्ठेहिं सहिते सदाजएज्जासि त्तिबेमि ॥२९॥ इति सेज्जाज्झयणस्स तइओदेसो सम्मत्तो ॥ इति सेज्जा णाम मेकादस मज्झयणं सम्मत्तं

को सब समभाव से ग्रहण करना किसी स्थान हर्ष शोक करना नहीं ॥ २८ ॥ उक्त प्रकार से शैय्या ग्रहण करने का साधु साध्वी का आचार है जिस में सदैव यतना पूर्वक प्रवर्तना ॥ २९ ॥ यह शैय्यास्य एकादश अध्ययन का तृतीय उद्देशा संपूर्ण हुआ और एकादश अध्ययन भी समाप्त हुआ आगे आहारादि ग्रहण करते समय या ग्रामनुग्राम विचरते समय ईर्या समिति विचारना सो कहते हैं

# ईर्याख्य द्वादश मध्ययनम्

अ० प्राप्तहुवा स निश्चय वा वर्षाऋतु व० पानीवर्षा ब० बहुत पा० प्राणी अ० उत्पन्न हुवे ब० बहुत पी० बीज, अ० अंकूर प्रगट हुवे, अं० बीच म० मार्गके ब बहुत पा० प्राणी ब बहुत बी० बीज जा० यावत् सं० जाल अ० अनहुवा पं० रस्ता णो० नहीं वि० नाणाजाय म० रस्ता, से० ऐसा ण० जान णो० नहीं गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरे त० तब स० संघु वा० चौमासा उ० निवासकरे ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो जा० जाने गा० ग्राम में जा० यावत् रा० राजधानी में, इ० इस ख० निश्चय गा०

अब्भुवगते खलु वासावासे अभिपवुट्ठे बहवे पाणा अभिसंभूया, बहवे बीया अहु- णुब्भिन्ना, अंतरा से मग्गा बहुपाणा, बहुबीया, जाव सताणगा, अण्णोक्कता पंथा णो विण्णाया मग्गा सेवं णच्चा णो गामाणुगामं दूइज्जेज्जा तओ संजयामेव वासावासं उ वल्लिएज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्जं पुण जाणेज्जा गामं वा जाव रा

साधु साध्वी ऐसा जानेकि वर्षाऋतु मासहुवा, वर्षा पडनेसे बहुत जीवोंकी उत्पत्ति हुइ वनस्पतिके अंकूरोंसे मार्ग आच्छादित होगया और लोकों का आना जाना कम होने से मार्ग भी अच्छी तरह दिखता नहीं है तो विहार करने का बंध रख एक स्थान वर्षाकाल ( चारमास ) निवास करना ॥ १ ॥ जिस स्थान में

ग्राम में जा० यावत् रा० राजधानी में णो० नहीं म० विशाल वि० सज्झाय स्थल, णो० नहीं म० विशाल वि० स्थंडिलस्थल, णो० नहीं सु० सुलभ पी० बाजोठ प फटिया से० उपाश्रय सं० बिछोना, णो० नहीं सु०सुलभ फा०फासुक ए० निर्दोष अ० एषणिक ब० बहुत मं०जहां स०साधु मा० ब्राह्मण अ०अतिथि कि० कृपण व० भिखारी उ० आये, उ० आवेंगे, अ०सकड़ा वि रस्ता णो० नहीं प०प्रज्ञावंतको नि०गमनागमन, जा० यावत् ध० धर्मचिंतवन, सें० ऐसा ण० जान त० तथा प्रकारके गा० ग्राम में प० नगर में जा० या

यहाणिं वा इमंसि खलु गामंसि वा जाव रायहाणिंसि वा, णो महती विहारभूमी, णो महती विचारभूमी, णो सुलभे पीढ—फलग—सेज्जा—संथारए णो सुलभे फासुए उञ्छे अहेसणिज्जे बहवे जत्थ समण—माहण—अतिहि—किवण—वणीमगा उवगया उवागमिस्सति य अच्चाइण्णा वित्ती, णो पण्णस्स निक्खमणपवेसाए जाव धम्माणुओगचिंताए, सेवं णच्चा तहप्पगारं गामं वा णगरं वा जाव रायहाणिं वा,

पठन, पाठन, स्वाध्याय, ध्यान करने को विशाल भूमि न होवे जहां लघुनीत बड़ीनीत के लिये सरल स्थान न होवे जहां बाजोठ, पाट, पाटला, पराल, वस्त्र, आहार, पानी, औषधि निर्दोष व शीघ्र प्राप्त होती न होवे, शाक्यादि साधु, ब्राह्मण, भिखारी, दरिद्रियों की बहुत भीड होवे कि जिस से रास्ते में गमनागमन करने में

वत् रा० राजधानी में णो० नहीं वा० चौमासा उ० रहे ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं जो ग्रा० जाने गा० ग्राम जा० यावत् रा० राजधानी इ० इस गा० ग्राममें जा० यावत् रा० राजधानी में म० बडा वि० सज्झाय स्थान, म० बडा वि० स्थंडिल स्थान, सु० सुलभ पी० बाजोट फ० पाट से० शय्या सं० बिछोना, सु० सुलभ फा० फ्रासुक उं० निर्दोष अ० एषणिक णो० नहीं म० जहां ब० बहुत स० साधु मा० ब्राह्मण जा० यावत् उ० आये उ० आवेंगे, अ० अल्प वि० रस्ता जा० यावत् रा० राजधानी त०

णो वासावासं उवल्लिएज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण जाणेज्जा गामं वा जाव रायहाणिं वा, इमंसि खलु गामंसि वा जाव रायहाणिंसि वा महती विहारभूमी महती विचारभूमी सुलभे जत्थ पीढ फलग सेज्जा संथारए सुलभे फासुए उंच्छे अहेसणिज्जे, णो जत्थ बहवे समण जाव उवागया उवागमिस्सति य, अप्पाइण्णावित्ती जाव रायहाणिंसि वा ततो संजयामेव वासावासं उवल्लिएज्जा

कठिनता होवे, ऐसा ग्राम में या राज्यधानि में वर्षाकाल साधु को रहना नहीं ॥ २ ॥ जिस ग्राम या नगरमें पठन पाठन वडीनीत लघुनीत केलिये विशाल स्थान होवे अच्छी वस्तु, आहार, पानी, सुगमतासे मिलता होवे बहुत भिक्षुकों आये न होवें या आनेवाले भी न होवें ऐसे स्थल में मुनि को वर्षाकाल व्यतीत करना

वहां स० साधु वा चौमासा उ० रहे ॥ १ ॥ अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने चा० चारमहीने वा० वर्षाके वी० व्यतिक्रान्त हुवे हे० शीतकालकी प० पन्दरह रात्रि क० कल्प प० रहे अ० रस्ते बीच ब० बहुत प्राणी जा० यावत् से० जाले णो० नहीं ज० जहां ब० बहुत स० साधु मा० ब्राह्मण जा० यावत् उ० आये उ० आनेवाले हैं से० ऐसा जान णो नहीं गा० ग्रामानुग्राम दू० विहारकरे ॥३॥ अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने च० चारमहिने वा० वर्षाके वी० वीतगये हे० शियालेकी भी

॥ ३ ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा चत्तारिमासा वासाणं वीईक्कंता, हेमंताण य पंचद स रायकप्पे परिवुसिते अंतरासे मग्गा बहुपाणा जाव संताणगा णो जत्थ बहवे समण जाव उवागया उवागमिस्संति य सेवं णच्चा णो गामाणुगामं दूइज्जेज्जा॥४॥ अह पुण एवं जाणेज्जा चत्तारिमासा वासाणं वीईक्कंता हेमंताण य पंचदस रायक

॥ ३ ॥ अब ऐसा मालुम पडे कि वर्षाकाल का चारमास व्यतीत होगया है वैसे ही हेमन्त ऋतु के पंदरह दिनभी व्यतीत गये हैं परंतु एक ग्राम से अन्य ग्राम जाने का मार्ग वनस्पति तथा जीवों से भराहवा है और बहुत लोक ( श्रमण ब्राह्मणादिक ) गये नहीं है तो ऐसे समय साधु को ग्रामानुग्राम विहार करना नहीं ॥ ४ ॥ और ऐसे समय अल्पजंतु या वनस्पति युक्त मार्ग होगया हावे लोकों का आना जाना होने

पं० पन्दरे रा० रात्रिकल्प प० रहे अं० बीचरस्तेमें अ० अल्प अंडे जा० यावत् सं० माले ब० बहुत म० महा म० साधु आ० यावत् व० आते हैं से ऐसा ण० जान त० तब स० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करे ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरता, पु० पहिले जु० घूसरे प्रमाण पे देखता द० देख के त० त्रस प्राणी व आगे पा० पग री० रखे, सा० पीछे पा पग री० रखे, उ० उठाके पा० पग री० रखे, ति० तिर्छा क० कर पा० पग री० रखे, स० होनेपर प० रस्ता सं० साधु प० जावे करे णो० नहीं उ०

प्पे परिवुसिए, अतरासे मग्गा अप्पुंडा जाव सताणगा महवे जत्थ समण, जाव उ-वागमिस्साति य सेव णच्चा, ततो संजयामेव गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ ५ ॥ से भि-क्खू वा (२) गामाणुगाम दूइज्जमाणे, पुरओ जुगमाय पेहमाणे, दठुण तसे पाणे, उधट्टु पायं रीएज्जा साहट्टु पाय रीएज्जा उक्खिप्प पाय रीएज्जा, तिरिच्छवा कट्टु पा-दं रीएज्जा सति परक्कमे संजतामेव परक्कमेज्जा णो उज्जुय गच्छेज्जा तओ संजयामे-

हना जैसे भी मुनि को यतना पूर्वक विहार करना ॥ ५ ॥ साधु साध्वी चलते समय आगे चार हाथ भूमि देखकर चले जिस रास्ते में जीवोत्पत्ति देखने में आवे और अन्य रास्ता होवे तो उस सीधे रास्ते से नहीं जावे यदि अन्य रास्ता न होवे और उसी रास्ते से जाना पडे तो बहुत सावधानीसे जावे और जीवोंको

सीधा ग० जावे त० तब सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरता हुआ अं० रस्तेमें पा प्राणी बी० बीज ह० हरी उ० पानी म० मट्टि अ० समीप स० होवे प० मार्ग णो० नहीं उ सीधा ग० जावे त० तब स० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥७॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते अं रस्तेमें वि० विविध प्रकारके प० देशकी सीममें द० चोरका स्थान मि० म्लेच्छ के स्थान दु० हठग्राही के स्थान दु० दुर्लभ बोधि के स्थान, अ अकालचारी अ० अकालभक्षी, स० होवे ला० अच्छा वि० विहार योग्य सं० होते

व गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे पाणाणि वा, बीयाणि वा, हरियाणि वा, उदए वा, मट्टिया वा, अविद्धत्थे, सइ परक्कमे णो उज्जुय गच्छेज्जा, तओ सजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥७॥ से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगामं दूइज्जमाणे, अंतरासे विरूवरूवाणि पच्चंतिकाणि दस्सुगायतणाणि, मिलक्खूणि दुस्सण्णप्पाणि, दुप्पण्णवणिज्जाणि अकालपडिबोहीणि

देखकर आगे, पीछे, या एक बाजु पाँव रखता हुआ आगे निकले ॥ ६ ॥ रास्ते में प्राणी, बीज, वनस्पति, पानी, मिट्टि, होवे और दूसरा रास्ता होवे तो उस सीधे रास्ते से नहीं जावे ॥ ७ ॥ जिस रास्ते में चोरों, म्लेच्छों, अनार्यों अकालमें फिरनेवालें, अभक्ष्य खानेवालें और लूटारें व मद लोकों के विभाग में

अ० मनपद में णो० नहीं वि० विहारके लिये प० प्रवर्ते ग० जानेको के० केवलीने बू० कहा आ० पापस्थान मे० यह, ते० ये बा० अज्ञानी अ० यह ते० चोर, अ० यह उ० चौकसी, अ० यह ह० यहांसे आ० आया चि० ऐसा क० करके, तं० उस भि० साधु को अ आक्रोशकरे जा० यावत् उ० उपद्रवकरे, व० वस्त्र प० पात्र कं० कम्बल पा० रजोहरण अ० छेदे भ० भेदे अ० लूटे प० फाडे अ० अप भि० साधुने पु० पहिले उपदेशा, प० प्रतिज्ञा जा० यावत् णो० नहीं त० तथा प्रकार के वि० विविध तरह के प० देशकीहदपे द० चोर के स्थान जा० यावत् वि० विहार व वृत्ति णो० नहीं प० प्रवर्ते ग० जाना, त० तब स० साधु

अकालपरिभोईणि सति लाढे वियाराए सयरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाणमेयं" ते ण बाला "अय तेणे अयं उवचरे ए, अयं तओ आगए" त्तिकट्टु तं भिक्खु अक्कोसेज्ज वा जाव उद्दवेज्ज वा, वत्थ, प डिग्गहं, कंबलं, पायपुच्छणं, अच्छिंदेज्जवा अभिंदेज्ज वा अवहरेज्ज वा परिभवेज्ज वा अ ह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा पतिण्णा जाव ज णो तहप्पगाराणि विरूवरूवाणि पच्चंति याणि, दस्सुगायतणाणि, जाव विहारवत्तियाए णो पवज्जेज्जा गमणाए, तओ संजया

अन्य अच्छा देश मिले तो विहार नहीं करना केवल ज्ञानी ने इस में पापका कारण कहा है क्योंकि कुछ लोकों साधु को देखकर कहे चोर या उस का सहायक या जासुस ठेराकर अनेक उपद्रव करें, मारें, वस

गा॰ ग्रामानुग्राम दू॰ विचरे ॥ ८ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी गा॰ ग्रामानुग्राम दु॰ विहार करता अं॰ बीचमें अ॰ बिनाराजा का राज्य ग॰ बहुत राजावस बैठे जु॰ बालमयका राजा, दो॰ दोराज्यहो, वे॰राज्यमें वैरहो, वि विरुद्धराज्यहो स॰ होते ला॰ अच्छा वि॰ विहार केलिये सं॰ होते हुवे ज॰ जनपद आर्यदेश णो॰नहीं वि॰विहारकेलिये प॰प्रवर्ते ग॰जाना के॰केवलज्ञानीने बू॰फरमाया आ॰पाप स्थान मे॰यह ते॰वे बा॰मूर्ख अ॰यह ते॰चोर त॰उसे वे॰निश्चय णो॰नहीं वि॰विहार के लिये प॰प्रवर्ते ग॰जाना त॰तब सं॰साधु गा॰ग्रामानु ग्राम दू॰विचरे ॥९॥से॰वे भि॰साधु साध्वी गा॰ग्रामानुग्राम दू॰विचरते अं॰बीचमें वि॰अटवी सिं॰ कदाचित् से॰ वे

मेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥८॥से भिक्खू वा(२)गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे अरायाणि वा, गणरायाणि वा, जुवरायाणि वा, दोरज्जाणि वा, वेरज्जाणि वा, विरुद्धरज्जाणि वा, सति लाढे विहाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया 'आयाण मेयं" ते णं बाला "अय तेण" तं चेव जाव णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा,

पापादि करें तादें, रहलें ऐसा जान साधु साध्वी को उस रास्ते से जाना नहीं ॥ ८ ॥ जिस प्रान्त में कोई राजा न हो या बहुत राजा बन बैठे होवें, लघुवय का बाल राजा होवे, दो राजा राज्य करते होवें, राजा राजा में वैर होवे, परस्पर युद्ध होता हो, ऐसे प्रान्त में जाना नहीं जावे तो केवलज्ञानी ने इस में पाप का कारण कहा है क्योंकि वे साधु को चोकसी या चोर ठेराकर अनेक परिषह उपसर्ग देवेंगे इस लिये ऐसे देश को छोडकर अन्य उपद्रव रहित देश में विहार करना ॥ ९ ॥ ग्रामानुग्राम विहार करते मुनि या

स० जो जा० जान ए०एकदिन में दु० दोदिन में, ति० तीनदिन में, च० चारदिन में, प० पांचदिन में, पा० उल्लंघन पा० नहीं उल्लंघावे त० तथा प्रकार की वि० अटवी अ० अनेक दिनमें ग० उल्लंघावे स० होते भा अथवा णा० नहीं वि० विहार के लिये प० प्रवर्ते ग० गमन, के० केवलज्ञानीने बू० फरमाया आ० पापस्थान म० यह अं०बीचमें वा०वर्षाहोवे पा० प्राणी, बी० बीज, ह० हरी उ० पानी म० मट्टी अ० सचित्त होवे, अ० अब भि०साधुने पु०पहिले उ० उपदेशा आ० यावत् त० तथा प्रकारकी अ० अनेकदिन में ग०

( २ ) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे विह सिया से ज्ज पुण विह जाणेज्जा एगाहेण वा, दुयाहेण वा, तियाहेण वा, चउयाहेण वा, पचाहेण वा, पाउणेज्ज वा, णो पाउणेज्ज वा तहप्पगारं विह अणेगाहगमणिज्ज सति लाढे जाव णा विहारवत्तियाए पव्वज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाणमेय" अतरासे वासमि वा, पाणेसु वा, बीएसु वा, हरिएसु वा, उदएसु वा, मट्टियाए वा, अविद्धत्थाए अह भिक्खूण पुव्वोवदिट्ठा जाव ज तहप्पगार अणेगाहगमणिज्ज जाव णो गमणाए ततो सजयामेव गामाणुगा-

मार्ग को बीचमें महा मैदान उल्लंघने का आजावे और जिस का अंत एक दिन, दो दिन, तीन, चार, पांच दिन तक चलने से भी न आवे और दूसरा छोटा रास्ता मिले तो उस दीर्घ रास्ते से जावे नहीं ऐसे रास्ते में चलनेमें केवलज्ञानी ने अनेक दोषों बताये हैं क्योंकि ऐसे रास्ते में चलने का होने से यथा आ

गमनको व सब से० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानु ग्राम दू०फिरते अं बीचमें णा० नावसे सं०तिरपेसा उ०पानी सि०कदाचित् से०वे पु और णा०नाव जा०जाने अ० असयति भि० साधु प० लिये कि० मोलले, पा उधारले, णा० नावसे नावा प० बदला क करे, थ० स्थलसे णा० नाव ज० पानी में ओ० लेजावे ज० जलसे णा नाव थ० थलमें उ० निकाले पु० भरी णा० नावा उ० उलीचे स० मूंची णा०नावा उ०निकाले त० तथा प्रकारकी णा०नाव उ०उर्ध्वगामिनी अ०

मे दूइज्जेज्जा गमणाए ॥ १० ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगाम दूइज्जमाणे अं तरासे णावा सतारिमं उदयं सिया सेज्जं पुण णावं जाणेज्जा असजए भिक्खुपडिया ए किणेज्ज वा पामिच्चेज्ज वा, णावाए वा णावापरिणाम कट्टु थलाओ वा णाव ज लंसि ओगाहेज्जा जलाओ वा णाव थलंसि उक्कसेज्जा पुण्ण वा णावं उस्सिंचेज्जा सण्ण वा णावं उप्पीलावेज्जा तहप्पगार णावं उड्ढगामिणिं वा, अहेगामिणिं वा, तिरियगा

जावे तो जीव जतु वनस्पति उत्पन्न हो जावे इस लिये मुनि को ऐसे रास्ते में जाना नहीं ॥ १० ॥ मुनि या आर्या को एक ग्राम से दूसरे ग्राम जाते मार्ग में नावा से पसार होसके इतना जल आवे तो इस तरह वर्तना:–जो नावा साधु के लिये गृहस्थ ने मोल लेकर रखी होवे, उधीती लेकर रखी होवे, अदलबदल कर रखी होवे, जल मे स्थल में या स्थलसे जल में रखी होवे, कीचड़ में खुंची हुइ को निकाले, पानीभरा

मिणि वा पर जोयणमेराए अद्धजोयणमेराए अप्पतरो वा, भुज्जतरो वा, णो दुरु हेज्ज गमणाए ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) पुव्वामेव तिरिच्छसपातिम णाव जाणज्जा जाणिचा से त मायाए एगतमवक्कमिचा २ भडग पडिलेहेज्जा २ एगा ओ भोयणभडगं करेज्जा करित्तए ससीसोवरिय काय पाए य पमज्जज्जा, पमज्जिचा सागारियभत्त पच्चक्खाएज्जा पच्चक्खाइत्ता एगं पाय जले किच्चा, एग पाय थले किच्चा

अधोगामिनी ति० तिर्यक्गामिनी प० उत्कृष्ट जो० योजन लग अ० आधा जो० योजन मे० परमाण अ अल्प भु० बहुत णो० नहीं दु० बैठे ॥ ११ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी पु० पहिले ति० तिर्यक पानी में अ० आसके णा नाव जा०जाने जानके से वे त०उसे मा०ग्रहण कर ए एकान्त में अ०जावे आ कर भं० उपकरण प० देखे देखकर, ए० एकगठडी बान्धे बान्धकर, स० शिरसे का० शरीर को पा० पग तक प० पूंज, पूंजकर सा० आगार पुक्त भ० अनशन प० पचखे पचखकर ए० एक पा० पग ज० पानीमें

हो तो ऊलीच कर खाली करे, दिशा विदिशा में लेजाने को तैयार की होवे, योजन आधा योजन लेजाने की होवे, तो ऐसी नाव में साधु को बैठना नहीं ॥ ११ ॥ परंतु जो नाव गृहस्थ ने अपना गमन के लिये तैयार कराइ होवे उसे पहिले तपास करे और यदि गृहस्थ साधु को नाव में बैठाने का कबुल करे तो साधु एकान्त में जाकर वस्त्र, पात्र, पडिलेह कर एक गठडे में बंधे, बाद में अपना सब शरीर को रजोहरण से पूंज

किं० करके ए० एक पा पग प० रक्खे किं० करके त० तब स० साधु णा०नावमें दु० बैठे ॥१२॥ से० वे भि० साधु साध्वी णा णाव में दु० चढते हुवे णो० नहीं णा० नावके पु० आगे दु बैठे णो० नहीं णा० नावके अ अग्र दु० बैठे, णो० नहीं णा० नावके म० बीच में दु० बैठे णो० नहीं बा० हायको प० सम्भाकर २ अ० अंगुलीसे, उ० बता २ कर उ० नीचा ऊंचाहोकर णि० देखे ॥ १३ ॥ से० वे प० नाविक णा० नावमें बैठा णा० नावामें बैठे को व० कहे, आ० आयुष्यमान स० साधु ! ए० यह तु० तुम णा०

तओ सजयामेव णावं दुरुहेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) णावं दु रुहमाणे णो णावाए पुरओ दुरुहेज्जा, णो णावाए अग्गओ दुरुहेज्जा, णो णावातो म ज्झतो दुरुहेज्जा, णो बाहाओ पगिज्झिय पगिज्झिय अगुलिए उवदसिय २ उण्णमि- य २ णिज्झाएज्जा ॥ १३ ॥ से णं परो णावागतो णावागयं वएज्जा आउसतो समणा, एय तुम णावं उक्कसाहि वा, वोक्कसाहि वा, खिवाहि वा, रज्जुए वा, गहाय

कर एक पाँव पानी में रक्खे और दूसरा पाँव ऊंचा उठालेवे, फिर उठाया हुवा पाँव पानी में रखे और दूसरा पाँव को उठावे इस तरह यतना से चलता नाव पर चढे ॥ १२ ॥ साधु तथा आर्या को नावाके आगे, पीछे या बीच में बैठना नहीं, ऊंचे नीचे हो हाथ लंबे कर नावा या पानी बताना नहीं ॥ १३ ॥ नावा में बैठे हुवे साधु को नाविक कहे कि आयुष्यमन् श्रमण इस नावा को तुम खेंचो, पकडो, सही रक्खो

नाव उ०खेंचो, वा०स्थीकरो, सि०चलावो, र०दोर ग०पकडकर भा०फेको णो० नहीं से०वे प०परिज्ञा प० जाने तु मौनस्थ उ० बैठारहे ॥ १४ ॥ से० वे प० दूसरा णा० नावारूढ णा० णावारूढसे व० कहे आ० आयुष्यमान स० साधु ! णो० नहीं स० सकतेहो णा० नाव उ० खेंचने वो० रोकने जा० यावत् र० दोरा ग० पकडके आ० खेंचने आ० लावो ए यहां णा० नावका र० दोरा स० स्वय य० मैं णा० नाव उ० चलाऊं भा यावत् र० दोरा ग० पकड आ० खेंचूं, णो० नहीं प० परिज्ञा प० भलाजाने तु० चुप उ० रहे ॥ १५॥ से० वे प० दूसरा णा० नावारूढ णा० णावारूढसे व० कहे, का० आयुष्यमान् स०

आगसाहि णो से य परिन्न परियाणेज्जा तुसिणीओ उवेहेज्जा ॥ १४ ॥ से ण परो णावागतो णावागय वएज्जा "आउसतो समणा" णो सचाएसि णाव उक्कासित्तए वा वोक्कमित्तए वा खिवित्तए वा रज्जयाए वा गहाय आक्कासित्तए आहर एत णावाए र ज्जुय सय चेव ण वय णाव उक्कासिस्सामो वा जाव रज्जुए वा गहाय आकसिस्सामो णो सेयं परिण्ण परियाणेज्जा तुसिणीओ उवेहेज्जा ॥ १५ ॥ से ण परो णावागओ

तो साधु कुच्छ भी उत्तर नहीं देवे मौन सदा रहे ॥ १४ ॥ नावारूढ साधु को नाविक कहे कि यदि तुम नावा को चलाने में, दोरा पकडने में, या रोकने में असक्त हो तो अमुक दोरा मुझे लादो हम चलावेंगे, पकडेंगे ऐसा सुन साधु कुच्छ भी उत्तर देवे नहीं मौन रहे ॥ १५ ॥ नावारूढ साधु को नाव चलानेवाला

समण ! ए० इस तु० तुम णा० नावको अ० अलित्तेसे पी० पीठेसे, व० वांससे, व० वलेसे अ० वाहुसेसे व० चलावो, णो० नहीं से० वे प० परिज्ञा प० जाणे तु० चुप उ० बैठारहे ॥ १६ ॥ से वे प० दूसरा णा० नावारूढ णा० नावारूढसे व० कहे, आ० आयुष्यमान स० समण ! ए० यह तु० तुम णा० नावमें उ० पानी ह० हाथसे पा० पगसे म० पात्रसे प० पडगेसे, णा० नाव उ० उलिचनेके पात्रसे उ० उलीचो, णो० नहीं प० परिज्ञा प० जाने तु० चुप उ० रहे १७ से० वे प० दूसरा णा० नावारूढ णा० नावारूढसे व० कहे, आ० आयुष्यमान् स० साधु

णावागय वएज्जा आउसतो समणा एय ता तुम णाव अलित्तेण वा, पीढेण वा, वसे ण वा, वलएण वा, अवल्लएण वा, वाहेहि णो से य परिण्ण परिजाणेज्जा तुसिणीओ उवेहेज्जा ॥ १६ ॥ से ण परो णावागओ णावागय वदेज्जा, आउसतो समणा एयं ता तुमं णावाए उदयं हत्थेण वा, पाएण वा मत्तेण वा, पडिग्गहेण वा णावाउ-

बोले कि इस पटिये के अलते से, पटिये से, बांस से, वले से, या वाहुवे से नावा को चलावो ऐसा वचनका स्वीकार मुनि को करना नहीं किंतु मौन रखकर खडा रहना ॥ १६ ॥ नावारूढ साधु को नाविक कहे कि अहो साधु ! इस नाव में पानी भरा रहा है इसे तुम हाथ से, पाँव से, या भाजन से, उलीच कर बाहिर डालो ऐसा वचनों का साधु स्वीकार करे नहीं मौन रखकर खडा रहे ॥ १७ ॥ नावारूढ साधु से

ए॰ यह तु॰ तुम णा॰ नाव उ॰ छिद्र ह॰ हाथसे पा॰ पांवसे बा॰ बाहुसे उ॰ छातीसे उ॰ पेटसे सी॰ मस्तकसे का॰ शरीर से णा॰ पात्राके उलीचनेसे चे॰ कपडेसे, म॰ मट्टीसे, कु॰ कमलपत्रसे, कु॰ घांससे पि॰ रूको णो॰ नहीं मे उसे प॰ अच्छा जा॰ जाने ॥ १८ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी णा॰ नावके उ॰ छिद्रकर उ॰पानी आ॰ आवको पे॰देखकर उ॰ऊपरा ऊपरी णा॰ नाव क॰ डूबती पे॰ देखकर णो॰

स्सिंचणेण वा, उस्सिंचाहि णो सेयं परिण्ण परिजाणेज्जा तुसिणीओ उवेहेज्जा ॥ १७ ॥ से ण परो णावागतो णावागतं वएज्जा आउसतो समणा एय तो तुमं णावाए उत्तिंग हत्थेण वा, पाएण वा, बाहुणा वा, ऊरुणा वा, उदरेण वा, सीसेण वा, काएण वा, णावाउस्सिंचणेण वा, चेलेण वा, मट्टियाए वा, कुसपत्तएण वा, कुरुविंदेण वा, पिहेहि णो से यं परिण्ण परिजाणेज्जा ॥ १८ ॥ से भिक्खू वा (२) णावाए उत्तिंगेणं उदय आसवमाणं पेहाए उवरुवरि णाव कज्जलावेमाण पेहाए णो

नाव में बैठनेवाले अन्य लोक कहे कि अहो आयुष्यमान साधु इस में छिद्र से पानी भरा रहा है, उस को तुम हस्त, पाद, भुजा, उरू, उदर शरीर इत्यादि तुमारा शरीर के किसी अवयवसे, या इस में पानी ऊलीचने का बरतन पड़ा है इस से या कपड़ा, घास का पत्ता से शीघ्र रूको ऐसा सुन साधु को मौन रहना ॥१८॥ नावारूढ साधु साध्वीको नावा में छिद्रसे पानी भराता हुवा देख तथा नावा डूबती हुई देख यह बात अन्यको कहना नहीं और स्वतः को भी मन में सकल्प विकल्प करना नहीं किन्तु शान्तपने से स्वस्वरूप में

नहीं प० दूसरे को उ०पासमाकर ए ऐसा बू करे आ० आयुष्यमान गा० गृहस्थ ! ए० इस णा० नावमें उ० पानी उ० छिद्रकर आ०भारराई, उ०ऊपरा ऊपरी णा० नाव क० डूबतीहै ए०इस तरह म०मनको वा० वचनको णो०नहीं पु०आगे क०कर वि०विचरे, अ०अनुत्सुक अ चाहिर चित्त रहित, ए०रागद्वेष रहित आ० आत्मा को वि० मवर्वे स० समाधि सहित त० तब स० साधु णा० नावासे पारहोना उ० पानी को अ०पारहोने री० विचरे ॥ १९ ॥ पूर्ववत् ॥ २० ॥ * * *

पर उवसकमित्तु एवं बूया आउसतो गाहावइ एयं ते णावाए उदय उत्तिंगेण आ सवति उवरुवरि वा णावा कज्जलावेति एतप्पगार मण वा वायं वा णो पुरओ क ड्डु विहरेज्जा अप्पुस्सुए अबहिलेसे एगतिगएणं अप्पाण विपोसेज्ज समाहिए ततो संजयामेव णावा सतारिमे उदए अहारियं रीएज्जा ॥ १९ ॥ एय खलु तस्स भि क्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ज सव्वठेहिं सहिते सहाजए ज्जासि त्तिबेमि॥ २०॥ इति इरिया ज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो * *

रमवाहुना एकान्त मदेश में रहकर समाधिस्थ रहना इस तरह नावासे पार होनेका जलमार्ग में यथासुत्र सासे प्रवर्तना ॥ १९ ॥ यह ही साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है कि उनोंने सब बाबतों में समाखसे वर्तना ॥ २० ॥ इतिईर्याख्य द्वादश अध्ययन का प्रथम उद्देशा पूर्ण हुवा आगे नावारूढ हो गमन करने की विधि बताते हैं * * *

से णं परो णावागओ णावागयं वदेज्जा आउसंतो समणा एयं ता तुमं छत्तगं वा जा व चम्मछेयणगं वा गिण्हाहि एयाणि तुमं विरूवरूवाणि सत्थजायाणि धारेहि एयं ता तुमं दारगं वा, दारिगं वा, पज्जेहि णो सेतं परिण्णं परिजाणेज्जा, तुसिणीओ उवेहेज्जा ॥ १ ॥ से णं परो णावागओ णावागयं वदेज्जा एस णं समणे णावाए भंडभारिए भवति से णं बाहाए गहाय णावाओ उदगंसि पक्खिवह एतप्पगारं णिग्घो-

से वे प० दूसरा णा० नावागत णा नावागतको व कहे आ० आयुष्यमान स० साधु ! ए० यह तु० तुम छ० छत्र जा० यावत् च० चर्म छेदनकर गि० ग्रहण करो ए० यह तु० तुम वि० अनेक तरहके स० शस्त्र धा० धारणकरो ए० यह तु० तुम दा० बालक दा० बालिका को प० पीलाओ, णो० नहीं से० वे तं० उस प० प्रार्थना प० धारे तु० चुप चाप उ० रहे ॥१॥ से० वे प० दूसरा णा० नावारूढ णा० नावारूढ को व० कहे ए० यह स० साधु णा० नावमें भ० पत्थरसा भा० भार भूत भ० होते है, से० वे बा० हाथ से ग० लेकर

नावा पर रहे हुए लोकों साधु को कहे कि हे आयुष्यमान् श्रमण ! यह छत्र चर्म छेदने का हथीआर या अन्य हथीआरों को पकडकर रक्खो या बच्चा बच्ची को दुध पीलावों इत्यादि आज्ञा का साधु स्वीकार करे नहीं मौन रहे ॥ १ ॥ नावा पर रहे हुवे लोकों साधु को कहे कि यह साधु नावापर बहोत बोजारूप है इस लिये इस को हाथ से पकड कर पानी में फेंक दो ऐसा वचन सुनकर वस्त्रधारीमुनि

णा० नावसे उ० पाणीमें प डाले, ए० इस तरह का पि० करना सो० सुन णि० अवधारकर से० वे ची वस्त्रधारी सि० कदाचित् खि० शीघ्र ची० वस्त्र उ० ढके पि० ममभूतवके उ० मस्तकको क० बांधे ॥ २ ॥ अ० अथ पु०फिर ए० ऐसा आ०जाने अ प्यारे है जिसको कू० क्रूरकर्म ख० निश्चय बा० अज्ञानी बा० हाथ ग० पकडकर ना० नावासे उ० पाणीमें प० डाले से० वे पु० पहिलेही व० कहे आ आयुष्य मान् गा० गृहस्थ ! मा० मत मे मेरा ऐ०पहांमे तो०तुम बा०हाथ ग०पकड ना०नावसे उ०पानी में प० डालो स०स्वय वे०निश्चय अ० मैं णा०नावासे उ० पानी में ओ० उतरूंगा से० वे णे०ऐसा व० बोलते प० दूसरे

सं सोच्चा णिसम्म से य चीवरधारी सिया खिप्पामेव चीवराणि उव्वेढेज्ज वा णिव्वेढेज्ज वा उप्पोस वा करेज्जा ॥ २ ॥ अह पुण एव जाणेज्जा अभिकतकूरकम्मा खलु बाला बाहाहिं गहाय नावाओ उदगसि पक्खिवेज्जा, से पुव्वामेव वएज्जा आउसतो गाहावती मा मेत्तो बाहाए गहाय णावाओ उदगासि पक्खिवह सय चेव णं

को अपना वस्त्रों निकालकर दूसरा हलका वस्त्र धारण करना तथा शिरपरभी कपडा बांधना ॥ २ ॥ इतने में वह क्रूरकर्मी साधु को हाथ से पकडकर पानी में धकसने को तैयार होवे तो मुनि को पहिले से ही कह देना कि अहो आयुष्यमान् तुम मुझे पानी में मत डालो मैं स्वय ही पानी में उतर जाता हूं इतना कहने पर भी वह बाहुसे पकडकर साधु को पानी में डाल देवे तो मुनि को उसपर राग द्वेष लाना नहीं वैसे ही

स०सहसात्कार से, ब० बलात्कारसे बा०हायसे गा०ग्रहणकर, उ०पानी में प०प्रक्षेपे तं०उसवक्त णो०नहीं सु० अच्छामन करे, णो नहीं दु०दुरामन णो०नहीं उ०ऊंचा मन णि० करे णो० नहीं ते उस बा० अज्ञानी की घा०घात व०वध के लिये स०उठे अ० अल्पोत्सुक स०समाधियुक्त त०तब सं०साधु उ० पानी में प०प्रवेशकरे ॥ ३ ॥ से०वे भि०साधु साध्वी उ०पानीमें प०पड़ता हुवा णो०नहीं ह० हायसे हाथ, पा० पांवसे, पांव का० शरीरसे शरीर, आ० अड़ावे से०वे अ०विना अड़ावे अ०विना अड़ाता त०फिर सं०साधु उ०पानीमें प०पड़ता रहे ।४।

अह णावासो उदगासि ओगाहिस्सामि से णेव वयंत परो सहसा बलसा बाहाहिं ग हाय उदगंसि पक्खिवेज्जा त णो सुमणे सिया णो दुम्मणे सिया णो उच्चावयमण णिय च्छेज्जा णो तेसिं बालाणा घाताए वहाए समुट्ठेज्जा अप्पुस्सुए जाव समाहीए त तो सजयामेव उदगासि पवज्जेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) उदगासि पवमा णे णो हत्थेण हत्थ, पाएण पाय काएण कायं, आसाएज्जा से अणासादए अणासा यमाणे तओ संजयामेव उदगंसि पवज्जेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) उदगासि

संकल्प विकल्प करना नहीं वैसे ही अज्ञान पुरुषों का नाश करने को कदापि ऊठना नहीं शांत भाव से पानी में आकर पड़ना ॥ ३ ॥ साधु या आर्या ने पानी में बहता हायसे हाथ, पाँव से पाँव तथा शरीर का अन्य कोइ भी अवयव से दूसरा अवयव लगाना नहीं यतना पूर्वक पानी में बहते रहना ॥ ४ ॥ पानी में

से० पे भि०साधु साध्वी उ०पानी में प०बहता हुवा णो०नहीं उ०ऊंचा नीचाहोना क०करे मा० मत ए० यह उ० पानी क० कानमें अ० आंखमें ण० नाक में मु मुखमें प० प्रवेशकरे त० तब स० साधु उ० पानी में प० बहता रहे ॥ ५ ॥ से० पे भि० साधु साध्वी उ० पानी में प० बहते दो० श्रम पा० आवे खि० शीघ्र उ० उपाधि वि० छोड़दे वि० ममत्व नहीं करे णो० नहीं पे० निश्चय सा० मूर्च्छा करे, अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने पा० पारहुवा उ० पानी से ती० तीर पा० प्राप्त हुवा, त० तब सं० साधु

पवमाणे णो उम्मग्गणिम्मग्गिय करेज्जा मामेयं उदग कण्णेसु वा, अच्छीसु वा, ण क्कसि वा, मुहंसि वा परियावज्जेज्जा तओ सजयामेव उदगंसि पवज्जेज्जा ॥ ५ ॥ स भिक्खू वा ( २ ) उदगंसि पवमाणे दोब्बल्लिय पाउणेज्जा खिप्पामेव उवाधिं वि-गिंचेज्ज वा, विसोहेज्ज वा णो चेव ण सातिज्जेज्जा अह पुण एवं जाणेज्जा पारए सि-या उदगाओ तीरं पाउणित्तए तओ सजयामेव उदउल्लेण वा ससिणिद्धेण वा का-

पड़े हुवे साधु तथा आर्या को डुबकी मारना नहीं; कि जिस से कान, आंख, नाक तथा मुख में पानी जाकर कष्ट न होवे ॥ ५ ॥ मुनि तथा आर्या पानी में तीरते २ थक जावे तब उपाधि की ममता छोड़ भारी वस्त्रको छोड़देना उस समय वस्त्रों पर मूर्च्छित रहना नहीं और जब किनारा आजावे तब जबतक

उ० पानी से भींजा स० आस्म का० शरीरसे उ० पानी के कीनारे चि० रहे ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी उ० पानीसे उ० भींना स० चीगय का० शरीरको णो० नहीं आ० मसले प० पूंछे, सं० पूंछे णि० विशेष पूंछे, उ० घसे उ० विशेषघसे आ० आतापदे प० विशेष तपावे, अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जाने वि० सूकगया मे० मेरा का० शरीर छो० विच्छेदगया सि० भिनापना, त० तैसा का० शरीर को आ० मसले जा यावत् प० विशेष तपावे त० फिर सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ ७ ॥ से० वे भि साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम फिरते णो० नहीं प० दूसरे साथ प० बातों करता २

पुण उदगतीरे चिट्ठेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) उदउल्लं वा ससिणिद्धं वा काय णो आमज्जेज्ज वा पमज्जेज्ज वा संलिहेज्ज वा णिल्लिहेज्ज वा, उव्वलेज्ज वा, उव्वट्टेज्ज वा, आयावेज्ज वा, पयावेज्ज वा अह पुण एवं जाणेज्जा विगतोदए मे काए वोच्छिण्णसिणेहे तहप्पगारं काय आमज्जेज्ज वा जाव पयावेज्ज वा तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगाम दूइज्जमाणे णो

शरीर भीना रहे वहांतक किनारे पर बैठा रहना ॥ ३ ॥ पानी से भींजा हुवा शरीर को साधु, साध्वी ने दाबना नहीं, घसना नहीं, वैसे ही तपाना नहीं ( किन्तु पानी को गिरने देना ) जब शरीर की भीनाश सभीजाय तब उस को घसे, मसले, और तपावे फिर वहां से विहार करे ॥ ७ ॥ साधु साध्वी को मार्ग

गा० ग्रामानुग्राम दू०विचरे त० तब स०साधु गा० ग्रामानुग्राम दू०विचरे ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गामानुगाम दू० फिरते अं० बीचमें जं जघा प्रमाणे उ० पानी सि० कदाचित् से० वे पु० पहिले स सिरसे का० शरीर पा० पगतक प० पूंजे से० वे पु० पहिले प० पूंजकर ए० एग पा० पग ज०पानीमें कि०करे, ए०एक पा०पग थ०स्थलमें कि० करके त०तब स०समाति ज०जंघाप्रमाण उ०पानीमें अ० यत्नासे री० चले ॥ ९ ॥ से वे भि० साधु साध्वी ज० जघा प्रमाणे उ पानी अ० यत्नामें री० चलता

परेहिं सद्धिं परिजविया २ गामाणुगाम दूइज्जेज्जा तओ सजयामेव गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगाम दूइज्जमाणे अंतरासे जघासतारिमे उदए सिया से पुव्वामेव ससीसोवरियं कायं पादे य पमज्जेज्जा से पुव्वामेव पमज्जित्ता एग पाय जले किच्चा एग पाय थले किच्चा तओ सजयामेव जंघासतारिमे उदए अहारियं रीएज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जघासंतारि-

में गृहस्थों की साथ बहुत वार्तालाप करता हुवा चलना नहीं किन्तु यतना पूर्वक चलते रहेना॥ ८ ॥ साधु साध्वी को मार्ग में जंघा ( हींचण ) प्रमाण पानी आवे और उस को पार होना होवे, तो उस समय अपना सब शरीर को प्रमार्जन करके एक पाँव जल में एक पाँव स्थल में रखता हुवा यतना से पार होवे परंतु पानी को डोले नहीं ॥ ९ ॥ ऐसे समय मुनि या आर्या को अपना शरीर का कोइ भी अंगोपांग परस्पर

णो॰नहीं ह॰हाथसे हाथ पा॰पांवसे पांव, का॰कायासेकाया आ॰लगावे,से॰वे अ॰विनालगावे अ॰विनालगा- वा हुवा त॰ तब सं॰ साधु ज॰ जंघा प्रमाण उ॰ पानी में री॰ जावे ॥ १० ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी जं॰ जंघा प्रमाणे उ॰ पानीमें अ॰ यत्नासे री॰ उतरवे णो॰ नहीं सा॰ साता केलिये णो॰ नहीं प॰ दाह निवारने म महा म॰ ऊंडा उ॰ पानी में का॰ शरीर वि॰ भींजोवे, त॰ तब सं॰ साधु जं॰ जघा प्रमाण उ॰ पानी में अ॰ यथोक्तरीति री॰ चले, अ॰ अथ पु॰ फिर ए॰ ऐसा जा॰ जाने पा॰ पार सि॰कदाचित् उ॰ पानी के ती तीर पा॰ प्राप्त हुवा त॰ तब अ॰ साधु उ॰ पानी से भींजा

मे उदगे अहारियं रीयमाणे णो हत्थेण वा हत्थ, पादेण वा पाद, काएण वा कायं आसाएज्जा से अणासादए अणासादमाणे, तओ संजयामेव जंघासंतारिमे उदए अ हारियं रीएज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जंघासंतारिमे उदए अहारियं रीए माणे णो सायावडियाए णो परिदाहवडियाए, महति, महालयासि उदगासि कायं विओ सेज्जा तओ संजयामेव जंघासंतारिमे उदए अहारियं रीएज्जा अह पुण एवं जाणेज्जा पारए सिया उदगाओ तीरं पाउणित्तए तओ संजयामेव उदउल्लेण वा ससिणिद्धेण

लगाना नहीं ॥ १० ॥ साधु या आर्या को जघा प्रमाण पानी पसार करते शीतलताके लिये या दाह मिटाने के लिये जंघा से अधिक शरीर को पानी में भींजोना नहीं और किनारे आये बाद जबतक शरीर भींजा

स० भास्म का० शरीर उ० पानीके ती० किनारे चि ऊभारहे ॥ ११ ॥ से वे भि साधु साध्वी उ० पानीसे भींजा का० शरीर स० किंचित् आला का० शरीर णा० नहीं आ० मसले प० विशेष मसले म० अब पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने वि० सूकगया शरीर छि० साफहुवा भिनापना, त० वैसे का० शरीर को आ० मसले प० विशेष मसले त० फिर स० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करे ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू फिरते णो० नहीं म० कीचडसेभरे पा० पगसे ह० हरीकाय छि० छेद २ कर वि० एकत्र कर २ वि० विखेर २ कर उ० उन्मार्ग

वा काएण उदगतीरे चिट्ठेज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) उदउल्लं वा का यं ससिणिद्धं वा कायं णो आमज्जेज्ज वा, पमज्जेज्ज वा, अह पुण एवं जाणेज्जा विग तोदए मे काए छिण्णसिणेहे तहप्पगारं कायं आमज्जेज्ज वा जाव पयावेज्ज वा तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगामं दू इज्जमाणे णो मट्टियामएहिं पाएहिं हरियाणि छिंदिय २ विकुज्जिय २ विफालिय २

रहे वहां सम वहां ही खड़ा रहना ॥११॥ उक्त प्रकारसे नदी के किनारे रह करके पानी से भींजे शरीर को पूंछे नहीं, मसले नहीं जब शरीर सूकजाय बाद में मसले, साफ करे और ग्रामानुग्राम विहार करे ॥ १२ ॥ साधु साध्वी के पांव रास्ते चलते कीचड़ से भरागये होवें और उन्हें साफ करने के लिये उन्मार्ग जाकर

ह० हरीकी घात केलिये ग० माने, अ० अत्र पा० पग म० कीचड स्वि० शीघ्र ह० हरीकाय म० ममत्वता मा० पापस्थान स० स्पर्श णो० नहीं प० ऐसा क० करे से० वे पु० पहिले अ० थोडीहरी का म रस्ता प० देखे स० तब स० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरता हुवा अं० बीचमें व० किल्ले फ साइ पा० कोट, तो० तोरन, अ० अर्गल भ० मागस्के स्थूणे, ग० टेकरे द० खड्डे स होवे प० रस्ता सं० साधु प० जावे णो० नहीं उ०

उम्मग्गेण हरियवधाए गच्छेज्जा, जहेय पाएहिं मट्टिय खिप्पामेव हरिताणि अवह रतु माइट्ठाणं सफासे णो एव करेज्जा से पुव्वामेव अप्पहरिय मग्ग पडिलेहेज्जा त ओ सजयामेव गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा [ २ ] गामाणुगा मं दूइज्जमाणे अतरासे वप्पाणि वा, फलिहाणि वा, पागाराणि वा, तोरणाणि वा, अ ग्गलाणि वा अग्गलपासगाणि वा, गड्ढाओ वा, दरीओ वा, सति परक्कमे संजयामे

हरिकायकी घात करे तो यह दोषपाप है इस लिये ऐसा कदापि करना नहीं पहिलेसे ही विना वनस्पति का मार्ग देख उस रास्ते से ग्रामानुग्राम विहार करना ॥ १३ ॥ जो साधु साध्वी अच्छा मार्ग को छोड कर किल्ले, खाइ, कोट, तोरन, भर्गल, टेकर व खड्डेवाला विषम मार्ग में आवेगा वह पाप का भागी होगा, ऐसा केवलज्ञानी का फरमान है क्यों कि ऐसे मार्ग में चलने से साधु रपटकर गिरजाय वो पूर्वोक्त रीति से दुःखी

अच्छे ग० जावे, के० केवली बू० कहा पा० पापस्थान में०यह से० वे त तहां प० आता पु०रपडे प० प
से० वे त० तहां प० रपडा प पडता रु०वृक्ष गु०गुच्छ गु गुल्म ल० लता व० वेल त०तृण ग० गहन ह०
हरी अ० पकड २ कर उ० उतरे जे० जो त० तहां पा पंथीजन उ० आवे से० वे पा० हाथ जा० याचे
त० उस सं० साधु अ० पकड पकडकर उ० उतरे त० फिर गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ १४ ॥ से०

व परक्कमेज्जा णो उज्जुय गच्छेज्जा केवली बूया "आयाणमेयं" से तत्थ परक्कममाणे प
यलेज्ज वा पवडेज्ज वा से तत्थ पयलेमाणे पवडेमाणे रुक्खाणि वा, गुच्छाणि वा,
गुम्माणि वा, लयाओ वा, वल्लीओ वा, तणाणि वा, गहणाणि वा, हरियाणि वा, अ
वलंबिय २ उत्तरेज्जा जे तत्थ पाडिपहिया उवागच्छंति ते पाणी जाएज्जा तओ सं
जयामेव अवलंबिय २ उत्तरेज्जा तओ गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ १४ ॥ से भि

होगा यदि दूसरा रास्ता न मिले और उसी ही रास्ते से जाने की जरूरत होवे तो बहुत सावधानी से
जाना और उतरते पडते गिरने का प्रसंग आवे तो, संयम की, शरीर की, व अन्य जीवों की रक्षा के लिये
वृक्ष, वेल, घास जो हाथ में आवे उस की सहाय लेकर शरीर को बचावे और कोइ पथिक उस रास्ते से
जाता होवे तो उस का हाथ पकडकर उस का यतनासे उल्लंघन करे और ग्रामानुग्राम विचरे ॥ १४ ॥

वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करते अं०बीचमें ज०अनाजके बजार, स०गाडीयों, र० रथ स० स्वचक्री प० परचक्री से० सेना, वि० विविध प्रकारके स० सेनाके पडाव पे० देखकर स० होवे प० रस्ता से० साधु णो० नहीं उ० अच्छे ग जावे ॥ १५ ॥ से० वे प दूसरा से० सेनाका व० कहे आ० आयुष्मंतो ए० यह स० साधु से०सेनाका अ चौकस क०करता है से० इसलिये बा०हाथ पकड आ० निकाले, से० वे पं० दूसरे बा० हाथ पकड आ० निकाले त० तब णो० नहीं सु० सुमन सि० कदाचित् जा०

क्खू वा [ २ ] गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे जवसाणि वा, सगडाणि वा, रहा णि वा सचक्काणि वा परचक्काणि वा सेणं वा विरूवरूवं सणिविट्ठ पेहाए सति परक्क मे संजयामेव णो उज्जुयं गच्छेज्जा ॥ १५ ॥ से ण परो सेणागतो वदेज्जा आउसंतो एसण समणो सेणाए अभिनिवारियं करेइ से ण बाहाए गहाय आगंसह सेण प रो बाहाहिं गहाय आगसेज्जा त णो सुमणे सिया जाव समाहीए तओ संजयामेव

साधु साध्वी को ग्रामानुग्राम फिरते बीच में धान्य की बजार, रथ, गाडी, लस्कर व भला २ सेना का पडाव होवे और अन्य अच्छा रास्ता होवे तो उस रास्ते से जाना नहीं ॥ १५ ॥ कदाचित् अन्य रास्ता न मिले और उसी रास्ता से जाने का होवे, ऐसे समय सैन्य का कोइ आदमी ऐसा बोले कि अहो आयु ष्मान् सैनिकों ! यह साधु अपना सैन्य की तलाश करने के लिये गुप्त भेदु बनकर के आया है इस लिये

यावत् स० समाधियुक्त त० तब स० साधुको गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरना ॥ १६ ॥ से० वे० भि० साधु साध्वी का अं० रस्तामें पा० पथीजन उ० आवाहो ते० वे पा० पंथीजन ए० ऐसा कहे आ० आयुष्य मान् स०श्रमण! के० कैसाहे ए० इसगाम रा० राजधानी क० कितनेक ए० यहां आ० अश्व ह० हाथी गा० भिक्षाचरों म० मनुष्य प० रहते है ? से० वे ब० बहुत भ० भोजन ब० बहुत उ० पानी ब० बहुत म० मनुष्य ब० बहुत धनाज ? से० वे अ० अल्प उ० पानी अ० अल्प भ० आहार अ० अल्प मनुष्य अ० थोडी

गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ २१ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अंतरासे पाडिपहिया उवागच्छेज्जा ते ण पाडिपहिया एवं वदेज्जा आउसंतो समणा केवतिए एस गामे रायहाणी वा ? केवइया एत्थ आसा, हत्थी, गामपिंडोलगा मणुस्सा परिवसंति से ब हुभत्ते, बहुउदए, बहुजणे, बहुजवसे ? से अप्पुदए, अप्पभत्ते, अप्पजणे, अप्पजवसे? एयप्पगाराणि पसिणाणि पुट्ठो णो आइक्खेज्जा एयप्पगाराणि पसिणाणि णो पु-

रस को धक्के मारकर निकाल दो वहां धक्के मारते समनावे वो साधु को समता धारन करना ॥ १६ ॥ साधु साध्वी को रास्ते चलते कोइ पथिक जन पूछे कि, हे आयुष्यमान् श्रमण ! यह गांव कितना बडा है ? यहां कितने घोडे, हाथी, मनुष्य रहते हैं ? ऐसा प्रश्नो सुनकर कुच्छ भी उत्तर देवे नहीं वैसे ही मुनि

मान्य ! ए० सह तरह के प० प्रश्न पु० पूछे णो० नहीं आ० करे ए० ऐसे तरह के प० प्रश्न णो० नहीं पु० पूछे ॥ १७ ॥ पूर्वोक्त प्रकारसे ॥ १८ ॥ * * *

से वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामनुग्राम दू० फिरते अं० रस्तेमें व० किल्ला फ० खाइ पा० कोट जा० यावत् द० गुफा कु० टेकरे पा० प्रासाद णू० भोंयरे रु० वृक्षके घर प० पर्वतपर घर रु० वृक्षतल व्यन्तर

च्छेज्जा ॥ १७ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गिय ॥ १८ ॥

इति इरियाज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो * *

से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगाम दूइज्जमाणे अंतरासे वप्पाणि वा, फलिहाणि वा पागाराणि वा जाव दरीओ वा कूडागाराणि वा, पासादाणि वा, णूमगिहाणि वा,

को भी ऐसा प्रश्न किसी को पुछना नहीं ॥ १७ ॥ उक्त प्रकार से ग्रामानुग्राम विहार करने का साधु साध्वी का आचार है उस को समाधिभाव से पालन करना ॥ १८ ॥ यह ईर्यारूप्य द्वादश अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा आगे विहार की विधि कहते हैं * *

साधु साध्वी विहार करते रास्ते में किल्ले, खाइ, कोट, गुफा, टेकरा, प्रासाद, तलघर, वृक्ष से शोभित मकान, पर्वत पर बनाये हुवे मकान, वृक्ष के नीचे व्यन्तरादि के स्थान, व्यन्तरादिक के स्तूप, लोहारशाला

स्थान थू० स्तूप व्यन्तरादि के आ० लोहार शाला जा० यावत् भ० भवन घर णो० नहीं बा० हाथको प० ऊंचाकर करके अं० अंगुलीसे उ० उद्देश उद्देश कर उ० नम नम कर णि० देखे, त० तब सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विहारकरे ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० रस्तेमें क० कच्छ, द० बीड, णू० खड्डे, व० वेट, ग० अरण्य, ग० गहनवन, व० जंगल, व० उजाड पहाड, प० पर्वतके दुर्ग, प० पर्वतके घर, अ० कूप, त० तलाव, द० द्रह, न० नदी वा० बावडी पु० पुष्करणी दी० लम्बी बावडी,

रुक्खागिहाणि वा, पव्वयगिहाणि वा, रुक्खं वा, चेतियकडं थूभं वा, चेतियकडं आएसणाणि वा, जाव भवणगिहाणि वा णो बाहाओ पगिज्झिय २ अंगुलीयाए उद्दिसिय २ उण्णमिय २ णिज्झाएज्जा ततो संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे कच्छाणि वा, दवियाणि वा, णूमाणि वा, वलयाणि वा, गहणाणि वा, गहणविदुग्गाणि वा, वणाणि वा, वणपव्वयाणि वा, पव्वतविदुग्गाणि वा, पव्वतगिहाणि वा, अगडाणि वा, तलागा

यावत् भवनगृह तथा प्रत्येक जाव के घरों को अंगुली से बता २ कर नम २ कर देखे नहीं किन्तु यतना पूर्वक चलमार्ग ॥ १ ॥ इस तरह साधु तथा साध्वी ने ग्रामानुग्राम फीरते छोटे २ वृक्षोंके समूह, घांस का बीड, गहन जंगल, उजाड पहाड, छोटी खाड, गुफा, पर्वत पर के किल्ले, पर्वत पर के घरों, कूवा, तलाव, द्रह, नदी, बावडी, पुष्करणी, विना खोदा तलाव, गुंजालावडी इत्यादि स्थलोंको ऊंचे हाथ कर अं

गु० गमीर वावडी स० सरोवर, स० सरोवर की पंक्ति स० बहुत सरोवर की पंक्ति, णो० नहीं बा० हाथ को प० लम्बा कर २ जा० यावत् णि० दखे, के० केवलीने बू० कहा आ० पापस्थान यह मे० भो स० वहां मि० मृग प० पशु प० पक्षी, सि० सर्प, सी० सींह, ज० जलचर, थ० स्थलचर, खे० खेचर, स० होवे से० वे० उ० त्रासे वि० विशेष त्रासे, वा० बाडा आदि स शरण स्थान, क० वांछे बा० निकालता है मे० इमको अ० यह स साधु अ० अब भि० साधुको पु० पहिले उपदेशा प० प्रतीज्ञा ज० जो णो० नहीं बा० हाथ प लम्बाकर जा० यावत् णि देखे, स० तब स० साधु आ० आचार्य उ उपाध्याय के स० साथ गा०

णि वा, दहाणि वा, णदीआ वा, वावीओ वा, पुक्खरणीओ वा, दीहियाओ वा, गु जालियाओ वा, सराणि वा, सरपतियाणि वा, सर सरपातियाणि वा, णो बाहाओ पगिज्झिय २ जाव णिज्झाएज्जा केवली बूया "आयाणमेय" जे तत्थ मिगा वा, पसू वा, पक्खी वा, सिरीसिवा वा, सीहा वा, जलचरा वा, थलचरा वा, खेचरा वा, सत्ता तेउत्तसेज्ज वा, वित्तसेज्ज वा, वाड वा, सरण वा, कखेज्जा वारेति मे अय समणे अ- ह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा ( ४ ) पतिण्णा जं णो बाहाओ पगिज्झिय जाव णिज्झाए-

गूली से बतावे नहीं यदि बतावे तो केवलज्ञानी ने पाप कहा है क्यों कि वहां मृगादि अनेक वनचर, म च्छादि जलचर, पक्षी आदि खेचर जीवों को त्रास-भय होता है कि यह साधु हम को निकालता है इस लिये मुनि को खास उपदेश है कि उन्होंने ऐसा नहीं करना किन्तु यत्ना पूर्वक आचार्य उपाध्याय साथ

ग्रामानुग्राम दू० विहार करे ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी आ० आचार्य उ० उपाध्याय के स० साथ गा ग्रामानुग्राम दू० विहार करता णो० नहीं आ० आचार्य उ० उपाध्याय के ह० हाथसे हाथ जा० यावत् अ० विनाशीया त० तब स० साधु आ० आचार्य उ० उपाध्याय स० साथ दू० विचरे ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी आ० आचार्य उ० उपाध्याय से० साथ दू० चलते अ० रस्ते में पा० पंथीजन उ० आताहो ते वह पा० पथी जन ए० ऐसा व० कहे आ आयुष्यमान साधु ! के० कौन तु० तुम ?

ज्जा तओ सजयामेव आयरियउवज्झाएहिं सद्धिं गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) आयरियउवज्झाएहिं सद्धिं गामाणुगाम दुइज्जमाणे णो आयरियउवज्झायस्स हत्थेण वा हत्थ, जाव अणासायमाणे तओ सजयामेव आयरियउवज्झाएहिं सद्धिं जाव दूइज्जेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) आयरियउवज्झाएहिं सद्धिं दूइज्जमाणे अतरासे पाडिपहिया उवागच्छेज्जा तेण पाडिपहिया से एव वदेज्जा "आउसतो समणा के तुब्भे? कओ वा एह? कहिं वा गच्छिहिह?" जे तत्थ आ

ग्रामानुग्राम विहार करना ॥ २ ॥ साधु साध्वी का रस्ते चलते अपने आचार्य उपाध्याय को अपना हाथ पाँव लगाना नहीं परंतु विनय पूर्वक उन की साथ ग्रामानुग्राम फिरना ॥ ३ ॥ साधु साध्वीको आचार्य उपाध्याय साथ विहार करते रास्ते में कोइ पूछे कि "तुम कौन हो ? कहां से आये हो ! कहां जाते हो !" ऐसे

क॰ कहां से ए॰ आवते ? क॰ कहां ग॰ जावेरो ? मे॰ सो त॰ तहां आ॰ आचार्य उ॰ उपाध्याय से॰ वे भा॰ बोले वि॰ उत्तरदे आ॰ आचार्य उ॰ उपाध्याय भा॰ बोलते वि॰ उत्तर देवे णो॰ नहीं अ बी चमें भा॰ बात क करे त तब से॰ साधु अ॰ यों रा॰ बडोंके साथ दू॰ विचरे ॥ ४ ॥ से॰ वे भि साधु साध्वी अ॰ बडेसाधुके साथ गा॰ग्रामानुग्राम दू॰ विचरते णो॰ नहीं अ बडे साधुके ह॰ हाथसे हाथ जा॰ यावत् अ॰ अशातना नहीं करता त॰ तब से॰ साधु अ॰ बडे साधु साथ गा॰ ग्रामानुग्राम दू॰ विचरे ॥ ५ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी अ॰ बडेसाधु साथ दू॰ चलते अं॰ बीचमें पा॰ पंथीजन उ॰ आते

पहिए उवज्झाए वा से भासेज्जा वा वियागरेज्जा वा आयरियोवज्झायस्स भासमाणस्स वा वियागरेमाणस्स वा णो अंतराभास करेज्जा तओ संजयामेव अहारातिणियाए दूइज्जेज्जा ॥४॥ से भिक्खू वा (२) अहारातिणिय गामाणुगाम दूइज्जमाणे णो अहारातिणियस्स हत्थेणहत्थ जाव अणासायमाणे ततो संजयामेव अहारातिणिय गामाणुगाम दूइज्जेज्जा॥५॥ से भि

प्रश्नों का उत्तर आचार्यादि देवे साधु को बीच में बोलना नहीं किन्तु विनय पूर्वक बडे के साथ रहना ॥ ४ ॥ वैसे ही बडे साधु की साथ विहार करते उन को हाथ पाँव लगाना नहीं ॥ ५ ॥ बडे साधु की साथ

ते० यह पा० पथीक ए०ऐसा व० कहे आ०आयुष्यमान स०साधु ! के०कौन तु०तुम ? क० कहांसे ए०आये ? क० कहां ग० जाते हो ? जे० जो त० वहां स० सबसे बडे से वे भा बोले भा० उत्तरदे अ० बडे साधु भा० बोलते वि० उत्तर देते णो० नहीं अं० बीचमें बोलना भा० बोले त० तब स०साधु गा०ग्रामानु ग्राम दू० विचरे ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० चलते अं० बीच पा० पथिक

क्खू वा ( २ ) अहारातिणिय दूइज्जमाणे अतरासे पाडिपहिया उवागच्छेज्जा तेणं पाडिपहिया एवं वदेज्जा "आउसंतो समणा के तुब्भे? कओ वा एह? कहिं वा गच्छिहिह?" जे तत्थ सव्वरातिणिए से भासेज्जा वा वागरेज्जा वा अहारातिणियस्स भासमाणस्स वियागरमाणस्स वा णो अतराभासं भासेज्जा ततो सजयामेव गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा [ २ ] गामाणुगाम दूइज्जमाणे अंतरासे पाडिप

विहार करते कोइ प्रश्न पूछे तो इस का उत्तर बडे साधु ही देवे दूसरे को बीच में बोलना नहीं ॥ ५ ॥ रस्ते चलते कोइ पथिक पूछे कि अहो आयुष्यमान् साधु ! तुमने इस रस्ते से मनुष्य, बैल, भैंसा, पक्षी, सर्प, मच्छ इत्यादि देखे होवे तो कहो या बताओ उस समय साधु को मौन रहना * या ज्ञान होने पर

* "जाणं वा णो जाणंति वएज्जा" इस का कितनेक यह अर्थ करते हैं कि जानता हुवा मैं नहीं जानता हूं ऐसा बोले इस अर्थ में मृषावाद दोष आता है और तीर्थंकर कदापि मृषा बोलने का उपदेश

आ० आवे ते व पा० पंथिक प०एता य कर, आ०आगुष्यमान स०साधु। अ०संमानना प० यहांसे प० रस्तेमें पा० देखा, त० वह ज० यथा—म मनुष्य, गो० बैल, म० भैंसा, प० पशु प० पक्षी, सि सर्प सी०सिंह, ज०जलचर आ०कहो द०दर्शावो, त०उसे णो नहीं आ०कहे णो०नहीं दं०दर्शावे, णो०नहीं ते उस प०परिज्ञा प०जाने तु मौनस्थ उ०रहे, जा०ज्ञान णो इमको जा०ज्ञान व०कहे त तयसं साधु गा०ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ ७ ॥ से० वे भि साधु साध्वी गा ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० बीचमें प० पंथिक आ०

हिया आगच्छेज्जा ते णं पाडिपहिया एव वदेज्जा, आउसतो समणा अवियाइ एत्तो प डिपहे पासह तजहा मणुस्स वा गोण वा, महिस वा, पसु वा, पक्खि वा, सिरीसिवं वा, सीहं वा, जलचर वा, आइक्खह दसेह त णो आइक्खेज्जा, णो दसेज्जा, णो तेसिं तं परिण्ण परिजाणेज्जा तुसिणीओ उवहेज्जा, जाण वा णो जाणाति वएज्जा तआ सं जयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगाम दुइज्जे

मैं जानता हूं ऐसा बोलना इस तरह सर्व जीवों की रक्षा करता हुवा ग्रामानुग्राम विचरना ॥ ७ ॥

---

करे नहीं इस से कितनेक टब्बावाले "जानता हुवा मैं जानता हूं ऐसा नहीं बोले" इस में भाषा से अर्थ नहीं मिलता है क्यों कि ऐसा होता तो " जाणं वा जाणंति णो वएज्जा " ऐसा पाठ होना चाहिये इस में भी भाषा दोष रहता है और जिनभाषित सूत्रों में भाषा दोष कदापि नहीं होता है यदि यहां पर "णो" का

आवे ते० ये पा० पंथीक ए० ऐसा व० बोले आ० आयुष्यमान स० साधु ? अ० आपि ए० यहां प० रस्तेमें पा० देखा, उ० पानी प्रमुत कं० कंद मू मूल त० त्वचा प० पत्र पु० फूल फ० फल बी० बीज ह० हरी उ० पानी स० सत्ववादि अ० आपि स० भक्ती से० शेष त० वैसेही जा० यावत्

माणे अंतरास पाडिपहिया आगच्छेज्जा ते ण पाडिपहिया एव वदेज्जा आउसतो स
मणा अवियाई एतो पडिपहे पासह उदगपसूयाणि कंदाणि वा, मूलाणि वा तया
णि वा, पत्ताणि वा, पुप्फाणि वा, फलाणि वा, बीयाणि वा, हरिताणि वा, उदग वा,

इस तरह ग्रामानुग्राम विचरते मुनि तथा आर्या को कोइ पूछे कि आयुष्यमान् श्रमण, तुम ने इस रास्ते में कंद, मूल, पान, फूल, फल, बीज, वनस्पति, पानी का समूह और अग्नि देखी होवे तो कहो और बतावो

---

अर्थ "हम को" लिया जाय तो कोइ दोषोत्पत्ति नहीं आती है और अस्मद् शब्द का षष्ठिका अनेक वचन का रूप ' णो " होता है "मे, णो मज्झ, अम्ह, अम्हं, अम्हे, अम्हो, अम्हाण, ममाण, महाण, मज्झा ण, भामा " इति हेम व्याकरण अष्टमाध्याय ॥ पा० ३ ॥ सूत्र ११४ ॥ इस का अर्थ यह हो सकता है कि " ज्ञान होवे तो हम को ज्ञान है ऐसा बोले " अर्थात् कोइ परिषह जितने में समर्थ मुनि के लिये ऐसा वाक्य होवे तो अयोग्य कहा जाय नहीं इस अर्थ में भाषा दोष नहीं है और तीर्थंकर का वचन में बाधा भी नहीं आती है, वैसा ही अर्थ भी योग्य होता है, तत्त्व केवलिगम्य ॥

र० विचरे ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० बीचमें पा० पथिक उ० आवे त० वे प० पथिक ए० ऐसा व० कहे आ० आयुष्यमान स० साधु अ० अपि प० रस्ते में पा० देखा म० मनान जा यावत् से० सेना वि० विविध प्रकार सं० सनीविष्ट से० वे आ० कहो जा० यावत् र० विचरे ॥ ९ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० बीचमें प० पथिक सा०

साणिहिय अगाणि वा, सणिविक्खर्च सेसं तं चेव से आइक्खह जाव दूइज्जेज्जा ॥८॥

से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगाम दूइज्जमाणे अतरासे पाडिपहिया उवागच्छेज्जा

ते ण पाडिपहिया एव वदेज्जा आउसतो ! समणा अवियाइ एत्तो पडिपहे पासह ज

वसाणि वा जाव सेण वा विरूवरूव सणिविट्ठ से आइक्खह जाव दूइज्जेज्जा ॥ ९॥

तब उन को कुच्छ भी कहना नहीं और इन के कोइ भी प्रश्न का स्वीकार करना नहीं परंतु मौन रहना, या ज्ञान होवे तो "हम को ज्ञान है" (परंतु बताना हमारा धर्म नहीं है) ऐसा बोले इस तरह सर्व जीवों की रक्षा करता हुवा ग्रामानुग्राम विचरे ॥ ८ ॥ ग्रामानुग्राम विचरते साधु को कोइ पथिक ऐसा पूछे कि आयुष्यमान् श्रमण, इस मार्ग में तुम धान्य या सेना का पडाव देखते हो तो कहो और बताओ ऐसे समय में भी साधु को मौन रहना या ज्ञान होने पर मुझे ज्ञान है, परंतु कह नहीं सकता ऐसा बोले ॥ ९ ॥

यावत् म० आयुष्यमान स० साधु के० कौनसा ए० यहांसे गा० गाम जा० यावत् रा० राजधानी से० ये आ० कहो जा० यावत् दू० विचरे ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते हुवे अं० विचमें प० पथिक जा० यावत् आ० आयुष्यमान स० श्रमण के० कितना ए० यहांसे गा० ग्रामका, ण नगरका जा० यावत् रा० राजधानी का म० मार्ग से० उसे आ० कहो त० तैसेही जा० यावत् दू० विचरे. ॥ ११ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू फिरते से० वे

से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे पाडिपहिया जाव आउसं तो समणा केवतिए एत्तो गामे वा जाव रायहाणी वा से आइक्खह जाव दूइज्जेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा [ २ ] गामाणुगाम दूइज्जमाणे अतरासे पाडिपहिया जाव आउसतो समणा केवतिए एत्तो गामस्स वा णगरस्स वा जाव रायहाणीए वा मग्गे से आइक्खह तहेव जाव दूइज्जेज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा [३]

ग्रामानुग्राम विचरनेवाले साधु साध्वी को कोइ ऐसा पूछे कि हे आयुष्यमान् श्रमण यहां से कोनसा ग्राम या कोनसा शहेर आवेगा तब भी मुनि को पूर्वोक्त रीत्या मौन रखना ॥ १० ॥ और भी मुनि को कोइ पन्थिक ऐसा पूछे कि:—“ आयुष्यमान् श्रमण ! यहां से ग्राम या नगर का कोनसा मार्ग है सो बताओ ” वो मुनि को मौन रखना ॥ ११ ॥ (१) मुनि या आर्या को ग्रामानुग्राम विहार करते मार्ग में निकाल

(१) यह सूत्र जिन कल्पि साधु के लिये है ऐसा टीकाकार लिखते हैं

अं बीचमें गो॰ बैल सि॰ सिंह प॰ रस्तेमें पे॰ देख, जा॰ यावत चि॰ चीता का बचा वि॰ विकाल प॰ रस्तेमें पे देखकर णो॰ नहीं ते उससे भी डरके उ उन्मार्ग ग जावे, णो नहीं म॰ मार्गसे अन्य मार्ग से॰ जावे णो॰ नहीं ग॰ गहन वनमें दु॰ दुर्गमें अ॰ प्रवेशकरे, णो॰ नहीं रु॰ वृक्षपर दु चडे णो॰ नहीं म॰ बडा म॰ बहुत ऊडा उ पानी में का॰ शरीर वि॰ प्रक्षेपे णो॰ नहीं वा॰ वाड वा या स॰ शरण स॰ साथ क॰ वांछे, अ॰ अनुत्सुक, जा॰ यावत स॰ समाधिसे त॰ तब स॰ साधु गा॰ ग्रामानुग्राम

गामाणुगाम दूइज्जमाणे अतरासे गोण वियालं पडिपहे पेहाए जाव चिताचे ल्लम्ड वियाल पडिपहे पेहाए णो तेसिं भीतो उम्मग्गेण गच्छेज्जा णो मग्गाओ म ग्गं सकमेज्जा णो गहणं वा दुग्ग वा अणुपविसज्जा णो रुक्खसि दुरुहेज्जा णो महति महालयंसि उदयसि काय विउसेज्जा णो वाडं वा, सरण वा, सत्थ वा, क खेज्जा अप्पुसुए जाव समाहीए तओ सजयामेव गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ १ ॥ से- भिक्खू वा ( ५ ) गामाणुगाम दूइज्जमाणे अतरासे विहासिया से ज्ज पुण विह जाणेज्जा इमसिं खलु विहंसि बहवे आमोसगा उवकरणपडियाए सपिंडियागच्छेज्जा

बैल, या सिंह को खडा देख, उन से डरकर उन्मार्ग जाना नहीं, वृक्षपर चढना नहीं, पानी में प्रवेश करना नहीं बाड वगैरह का आश्रय या साथको वांछना नहीं किन्तु धैर्यतासे समाधि पूर्वक ग्रामानुग्राम विचरना

दू० विचरे ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० बीचमें वि० रस्तेम ते० मूयरे कदाचित से० वे ऊ० जो वि० मार्ग जा० जाने इ० इस ख० निश्चय वि० रस्तेमें ब० बहुत आ० मूयरे उ० उपकरण केलिये सं० एकत्रहो जावेहैं, णो० नहीं ते० उनसे भी० डरकर उ० उन्मार्ग चे० निश्चय जा० यावत् सं० समाधिसे त० तब सं० साधु गा ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ १३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा ग्रामानुग्राम दू० फिरता अं० बीच रस्तेमें आ० लुटारे स० एकत्रहो ग० आवे ते० उसको

णो तेसिं भिओ उम्मग्ग चेव जाव समाहीए ततो सजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥१२॥ से भिक्खू वा (२)गामाणुगाम दूइज्जमाणे अंतरासे विह सिया सेज्ज पुण विह जाणज्जा इमासि खलु विहरि बहवे आमोसगा उवकरणपडियाए संपिंडियागच्छेज्जा णोतेसिं भिओ उम्मग्ग चेव जाव समाहीएततोसजयामेव गामाणुगामदूइज्जेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा (२)गामाणुगामं दूइज्जमाणे अतरासे आमोसगा संपिंडिया गच्छेज्जा ते ण आमो

॥ १२ ॥ (१) साधु साध्वी को ग्रामानुगाम फिरते दीर्घ पंथ उल्लंघने का आमावे और ऐसा मालूम पडे कि इसमार्गमें बहुत लूटारु एकत्रित होकर वस्त्र लूटनेको आनेवालेहैं तो भी उनसे डरकरके उन्मार्गमें नजावे या चालु मार्ग का छोडकर अन्य मार्ग में जाना नहीं किन्तु समाधि भाव से चले जाना ॥ १३ ॥ साधु साध्वी को मार्ग में लूटारे मिले और कहे कि अरे साधु यह वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण हमारी पास रखकर हम

(१) यह सूत्र जिन कल्पि साधु के लिये है

आ० लुव्हरे ए० ऐसा व० कोई आ० आयुष्यमान स० साधु ! आ० सा ए० यह व० वस्त्र पा० पात्र कं० कम्बल पा० रजोहरण दे० देदे नि० नीचेरख तं० उसे णो० नहीं दे० देवे णि० नीचेरखदे, णो० नहीं वं० गुणानुवाद कर करके जा० याचे, णो० नहीं अं० हाथ जोडकर मा० याचे, णो० नहीं क० करुणा केलिये जा० याचे, ध० धर्मसे मा० याचे, तु० मौनरखने से से० वे भा० लुव्हरे स० स्वयं क० नहीं करने योग्य ति० कृतव्य ऐसा क० करके, अ० अक्रोशकरे भा० यावत् उ०उपद्रव करे, व० वस्त्र पा० पात्र कं०

सगा एव वदेज्जा आउसतो समणा आहर एय वत्थं वा पाय वा/कबलं वा पाय पुंच्छण वा देहि णिक्खिवाहि त णो देज्जा णिक्खिवेज्जा णो वंदिय २ जाएज्जा णोअंजलिकटु जाएज्जा णो कलुण पडियाए जाएज्जा धम्मियाए जाएज्जा तुसिणीय भावेण वा से णं आमोस गा सय करणिज्जं तिकटु अक्कोसति वा, जाव उद्दवति वा, वत्थं वा, पाय वा, कंब ल वा पायपुच्छणं वा, आच्छिदेज्ज वा, जाव परिट्ठवेज्ज वा, त णं णो गामसंसारिय

को दो या नीचे रखो तब मुनि को वे उपकरणा देना नहीं किन्तु नीचे रखना उन को चोर उठावे साधु को मानीमी, नरमाइ, लाचारी, दीनता करके पीछा याचना नहीं किन्तु धर्म कथन पूर्वक याचना या मौन रखकर खडा रहना कदाचित वे स्वेको अपना दुष्ट रिवाज से उन को धमकावे या गालीयों देवे मक्के या मुके मारे या वस्त्रादि लूट लज्जा रहित करे तो साधु ग्राम में या राज्य दरबार में इस बात का फैसाव

कम्मल पा० रजोहरण अ० लेवे जा० यावत् प० विसेरडाले, त० उने णो० नहीं गा० ग्राम स० सांसारिक कु० करे णो० नहीं रा० राज सं० सांसारिक कु० करे, णो० नहीं प० दूसरे की उ० पास माकर पू० कहे, आ० आयुष्यमान गा० गृहस्थ ! ए० यह स० निश्चय मे० मुझ को आ० लूटनेवाले उ० उपकरण केलिये स० स्वयं क० कर्तव्य दि० ऐसा क० करके अ० आक्रोश करते हैं जा० यावत् प० विसेरते हैं ए० इसप्रकारका म० मन व० वचन णो नहीं पु० आगे क० करके वि० विचरे, अ० अ

कुज्जा णो रायससारिय कुज्जा णो पर उवसकमित्तु बूया आउसतो गाहाव ई एते खलु मे आमोसगा उवकरणपडियाए सयं करणिज्जं त्तिकट्टु अक्कोसंति वा जाव परिट्ठवेंति वा एतप्पगार मण वा वय वा णो पुरओ कट्टु विहरेज्जा अप्पुस्सुए जाव समाहीए ततो सजयामेव गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ १४ ॥ एयं खलु तस्स

करे नहीं वैसे ही किसी गृहस्थ के पास जाकर कहे नहीं कि "आयुष्यमान् गृहस्थ! ये लूटारें अपना दुष्ट रिवाज अनुसार मुझ हेरान करते हैं, लूटते हैं" इस प्रकार की चलवल मन से या शरीर से भी करना नहीं किन्तु धैर्यता से समाधिपूर्वक यत्नासे ग्रामानुग्राम विचरना ॥ १४ ॥ उक्त प्रकार से साधु साध्वी का ईर्यापथ की विधि बतलाइ वैसे ही सदा समता युक्त सावधानी से सदा प्रवर्ते ऐसा श्री वीरप्रभु

उद्युक्त स० समाधिसे उ० तब सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ १४ ॥ अर्थ पूर्ववत् ॥ १९ ॥

भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ज सव्वट्ठेहिं सहिते सया जएज्जासि त्तिबे मि ॥ १५ ॥ इति इरियाज्झयणस्स तइओद्देसो सम्मत्तो इति इरिया नामं दुवालस मज्झयण सम्मत्त

की आज्ञानुसार मैं कहता हूं ॥ १५ ॥ इति ईर्यास्य द्वादश अध्ययन का तृतीय उद्देशा पूर्ण हुवा और द्वादश अध्ययन भी समाप्त हुवा अब साधु को भाषा समिति बताने के लिये भाषाजात नामक त्रयोदश अध्ययन कहते हैं

## ॥ भाषाजातनामं त्रयोदश मध्ययनम् ॥

से० वे भि० साधु साध्वी इ० ये व० वचन का भा० भाचार सो० सुनकरके णि० मवधारकर इ०ये भ० नहीं भाचरा पु० पहिले भा० भाने, जे० जो को० क्रोधसे वा० वचन वि० कहे, जे० जो मा० मानसे वा० वचन वि० कहे, जे० जो मा० मायासे वा० वचन वि० कहे, जे० जो लो० लोभसे वा० वचन वि० कहे, सा० जानकर फ० कठोर व० बोले अ० अजान में फ० कठोर व० बोले स० सर्व ये, यह सा०

से भिक्खू वा ( २ ) इमाइ वइ आयाराई सोच्चा णिसम्म इमाई अणायाराई पुव्वाई जाणेज्जा जे कोहा वा वाय विउजति, जे माणा वा वाय विउजंति, जे मायाए वा वायं विउजति जे लोभा वा वाय विउजति जाणओ वा फरुस वयाति अ

साधु साध्वी को जिस रीति से बोलना चाहिये उस को जानकर, जो रीति खराब होवे, और सत्पुरुषोंने आचरी न होवे, ऐसी रीति का परिहार करना जैसे कि।—क्रोध से बोलाते हुए वचनों, मान से बोलातेहुए वचनों, माया से बोलाते हुए वचनों, लोभ से बोलाते हुए वचनों, जान के बोलाते हुए कठिन अमनोज्ञ वचन, अजान में बोलाते हुए कठिन वचन, इत्यादि सर्व दोष युक्त वचनों का साधु साध्वी का परिहार

सावद्य व० छोडे वि० विवेक मा० आदर करके ॥ १ ॥ धु० ध्रुव चे० निश्चय जा० जाणे, अ० अध्रुव चे० निश्चय जा० जाणे, अ० अन्न, पा० पानी, खा० खादिम सा० स्वादिम, ल० मिले णो नमिले भुं० खाये णो० नहीं खाये, अ० अथवा आ० आयाथा, अ० अथवा णो० नहीं आ० आयाथा, अ० अथवा ए० आताहै, अ०अथवा णो०नहीं ए० आताहै, अ०अथवा ए० आवेगा अ० अथवा णो० नहीं ए० आवेगा, ए यहां आ० आयाथा, ए० यहां णो नहीं आ०आयाथा, ए०यहां ए०आताहै ए० यहां णो० नहीं ए० आ

जाणओ वा फरुसं वयति सव्व मेत सावज्ज वज्जेज्जा विवेग मायाए ॥ १ ॥ धुय चेय ज़ाणेज्जा अधुव चय जाणेज्जा असण वा, पाण वा, खाइम वा, साइमं वा, लभिय, णो लभिय, भुजिय, णो भुजिय, अदुवा आगते, अदुवा णो आगते, अदुवा एति, अदुवा णो एति, अदुवा एहिति, अदुवा णो एहिति, एत्थवि आगते, एत्थवि णो आगते, एत्थवि एति, एत्थवि णो एति; एत्थवि एहिति; एत्थ

करना ॥ १ ॥ साधु साध्वी को कोइ प्रश्न पूछे और उस की पूरी माहिति न होवे तो निश्चयात्मक उत्तर न देवे जैसे कि—यह ऐसा ही है, या एसा नहीं है, फलाना साधु आहार निश्चय ही लावेगा, या नहीं लावेगा; यहां खाकर ही आवेगा, या नहीं खाकर आवेगा; वह आया ही है, या नहीं आया है, आता ही है, या नहीं, आता है; आवेगा ही, या नहीज आवेगा; यहां आया हुआ ही है, या नहीं है; यहां

तारे ए० यहां ए० आवेगा, ए० यहां णो० नहीं आवेगा ॥ २ ॥ अ० विचारकर णि० निश्चय से बोलने वाला स० समिति युक्त स० साधु भा भाषा भा० बोले, त० वह ज० यथा—ए० एक वचन, दु० द्विवचन, व०बहुत वचन, इ० स्त्री वचन, पु पुरुष वचन, ण० नपुंसक वचन, अ० आध्यात्म वचन, उ० उ

वि णो एहिति ॥२॥ अणुवीइ णिट्ठाभासि समियाए संजए भासं भासेज्जा तंजहा ए

गवयण, दुवयणं, बहुवयण, इत्थिवयण पुरिसवयण णपुंसगवयण, अज्झत्थवयण उ

आता ही है, या नहीं आता है, यहां आवेगा ही या नहींज आवेगा वगैरह ॥ २ ॥ जब बोलने का काम पड़े तब पहिले उस का मन से विचार कर निर्णय करे यदि मन से निर्णय न होवे तो दूसरे को पूछकर निर्णय करे फिर भाषा समिति में किसी प्रकारका दोष न होवे ऐसी भाषा के १६ प्रकार से विचार करके भाषा बोले सो कहते हैं (१) एक वचन घट, पट, मनुष्य इत्यादि (२) द्विवचन, दो घट, दो पट, दो मनुष्य (संस्कृत में, घटौ, पटौ, मनुष्यौ) (३) बहुवचन, बहुत घट, पट, मनुष्य (४) स्त्री वचन, नदी नगरी (५) पुरुष वचन देव, नर, (६) नपुंसक वचन कमल, सुख (७) अध्यात्म वचन मन में होवे सो मुख में आवे (८) उत्कर्ष वचन, गुणानुवाद (९) अपकर्ष वचन-अवर्णवाद (१०) उत्कर्षअपकर्ष पहिले गुणानुवाद फिर अवर्णवाद जैसे सक्कर मिष्ट है परन्तु भरद करती है (११) अपकर्ष उत्कर्ष वचन पहिले अवर्णवाद बाद में गुणानुवाद करे जैसे नीम कड़वा है परन्तु निरोगी है (१२) भूतकाल वचन (किया,

स्त्री वचन, अ० अपकर्ष वचन, उ० उत्कर्ष अपकर्ष वचन, अ० अपकर्ष उत्कर्ष वचन, ती० भूतकाल वचन, प० वर्तमानकाल वचन, अ० भविष्यकाल वचन, प० प्रत्यक्ष वचन, प० परोक्ष वचन ॥ १ ॥ से० वे ए० एक वचन व० बोलूंगा इ० ऐसा ए० एक वचन व० बोले, जा० यावत् प० परोक्ष वचन बोलूंगा इ० ऐसा प० परोक्ष वचन बोले, इ० स्त्रीवेद, पु० पुरुषवेद, ण० नपुंसकवेद ए० ऐसा वे० वेद, अ० अन्यथा, वे० वेद, अ० विचारकर णि० निश्चयमापी स० समितिसे सं० साधु मा० भाषा मा०

ती५त्रय

वणीतवयणं, अवणीतवयण, उवणीयावणीयवयण, अवणीयउवणीयवयण, तीयवयण, पडुप्पन्न वयण, अणागत वयणं, पच्चक्खवयणं, परोक्खवयण ॥ २ ॥ से एगवयण वदिस्सामीति एगवयणं वदेज्जा जाव परोक्खवयणं वदिस्सामीति परोक्खवयणं वदेज्जा इत्थीवेस, पुरिसवेसं, णपुंसगवेस, एवं वा चेयं अण्णहा वा वेयं अणुवीई णिट्ठा-

लिया ) (१३) वर्तमान काल वचन करता है, भरता है, लेता है, देता है (१४) भविष्यकाल वचन करूंगा, भरूंगा, लेवूंगा, देवूंगा, (१५) प्रत्यक्ष वचन, यह है (१६) और परोक्ष वचन वह है ॥१॥ साधु साध्वी को जहां एक वचन बोलने का होवे वहां एकही वचन बोले ऐसे ही जहां परोक्ष वचन बोलने का होवे वहां परोक्ष वचन बोले. वैसे ही यह स्त्री ही है, यह पुरुषही है, या नपुंसक ही है, यह भाव ऐसी ही है, या वैसी है, यह सब यथास कर निश्चय हुवे बाद वैसे ही बोले यों सब बातों की पूर्ण तपासकर निश्चय हुवे

वाले इ० ये भा० पापस्थान व० निवार कर. ॥ ४ ॥ अ० अब भि० साधु भा० जाने च० चार भा भाषाके भेद तं० वह ज० यथा—स० सत्य मे० एक प० पहिली भा० भाषा, बी० दूसरी मो० मृषा, त० तीसरी स० सत्यमृषा, जं० जो णे० नहीं स० सत्य णे० नहीं मो० मृषा, अ० असत्यमृषा णा० नामे तं० वह च० चौथी भा० भाषा ॥ ५ ॥ मे० अब मे० कहताहूं जे० जो अ० गत कालमें प० वर्तमान कालमें, अ० अनागत कालमें अ अर्हत भ० भगवन्त स० सर्व ते० वे प० यही

भासी समियाए सजए भास भासेज्जा इच्चेयाइं आयतणाइ उवातिकम्म ॥ ४ ॥ अह भिक्खू ण जाणेज्जा चत्तारि भासा जायाइं तंजहा सच्च मेग पढम भासज्जायं बीय मोस, तइय सच्चामोस, ज णेव सच्चं णेव मोस "असच्चमोसं" णाम तं चउत्थ भासज्जात ॥ ५ ॥ से बेमि जेय अतीता, जेय पडुप्पन्ना, जे य अणागता अरहता भगवतो सव्वेते एयाणि चेव चत्तारि भासज्जायाइं भासिंसु वा, भासंति वा, भासिस्संति

वाद भाषा समिति को यत्ना पूर्वक बोले और भाषाका सर्व दोष का परिहार करे ॥ ४ ॥ साधु साध्वी को चार प्रकार की भाषा का ज्ञान होना चाहिए १ सत्य, असत्य भाषा, सत्यमृषा, तथा ४ सत्यासत्य रहित ॥ ५ ॥ अब मैं कहता हूं कि अहो जंबु गतकालके, वर्तमानकालके, और अनागतकालके सर्व तीर्थंकरोंने उक्त रीति मुजब भाषा के चार ही प्रकार बताये हैं, बताते हैं, और बतावेंगे इन चारों प्रकार के भेदों में

च चार भा भाषाकी जात भा० कहा था० कहेलेहै भ० कोमे प० प्रस्पी प० रूपती प० प्रस्पेंगे स०सब प् यह अ० अचित्त ब० वर्णवन्त ग गंधवन्त र० रसवन्त फा० स्पर्शवन्त च० चयोपचयवाली वि० विपरीत स्वभाववाली भ० होतीहै स० कही है ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी पु० पहिले भा० भाषा अ० अभाषा, भा० बोलते भा० भाषा भा० भाषा भा भाषाका वक्त बीता भा० बोलाइ भाषा अ० अभाषा ॥ ७ ॥ से० वे भि साधु साध्वी जा० जो भा० भाषा स० सत्य जा० जो भा भाषा मो०

वा, पण्णविंसु वा, पण्णवेंति, वा पण्णविस्सति वा, सव्वाइ च ण एयाणि अचित्ताणि वण्णमंताणि, गंधमंताणि, रसमंताणि, फासमंताणि, चओवचइयाइ विपरिणामधम्मा इ भवंतीति समक्खायाइं ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) पुव्व भासा अभासा, भासमाणा भासा, भासा, भासासमयवितिक्कंता भासिया भासा अभासा ॥ ७ ॥

बोलाती हुइ भाषा के पुद्गल निर्जीव और वर्ण, गंध, रस और स्पर्श सहित है तथा हानी वृद्धि को प्राप्त होकर अनेक प्रकार से परणमते हैं ॥ ६ ॥ साधु साध्वी को जानना चाहिये कि जहांतक वचन बोले नहीं वहांतक वह अभाषा है और जब बोलते हैं तब ही भाषाकोभाषा कहीजातीहै बाद भाषा अभाषा कही जाती है ॥ ७ ॥ साधु या आर्या उक्त चारों प्रकार की भाषा में से जो भाषा पाप की वृद्धि करती होवे,

मृषा जा०जो भा० भाषा स० सत्य मृषा, जा० जो भा भाषा अ० असत्य मृषा त० तथा प्रकार की भा भाषा सा सावद्य, स० क्रियावाली क० कर्कश, क० कटुक णि० निष्ठूर, फ० कठोर, अ० आश्रव उत्पाद क, छे० छेदकरता, प परिताप कर्ता, उ उपद्रव कर्ता भू० जीव वधकर्ता, भ० बोलता हुवा णो० नहीं बोले ॥८॥ से०वे भि० साधु साध्वी जा० जो भा भाषा स०सत्य सू०सूक्ष्म जा० जो भा० भाषा अ०असत्य मृषा, त तथा प्रकार अ० असावद्य अ० अपापकारी जा० यावत् अ० दयासे पूर्ण अ० वांछे भा० भा षा भा बोलनी ॥९॥ से० वे भि० साधु साध्वीपु०पुरुषको आ बोलाते आ० बोलाते हुवे अ० नहीं सुने

से भिक्खू वा ( २ ) जाय भासा सच्चा, जाय भासा मोसा जाय भासा सच्चा मोसा, जाय भासा असच्चा मोसा, तहप्पगार भास सावज्ज, सकिरिय, कक्कसं, कडुयं, णिट्ठुरं, फरुस, अण्हयकरिं, छेदकरिं, परितावणकरिं, उवद्दवकरिं, भूतोवघाइयं, अभि कस्व णो भास भासेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाय भासा सच्चा सुहुमा जाय भासा असच्चा मोसा तहप्पगारं भास असावज्ज अकिरियं जाव अभूतोवघा इयं अभिकंख भासं भासेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) पुम आमंतेमाणे आ-

अनर्थदंड करतीहोवे, उद्वेग उत्पन्न करतीहो, दया रहितहो, मर्म प्रगट करती हो, आश्रव छेद, भेद, परिताप करतीहो उपद्रव करती हो तो वैसी कोइ भी भाषा जानबूझकर बोलना नहीं ॥८॥साधु साध्वी अत्यन्त सूक्ष्म बुद्धिसे विचार करके सत्य व्यवहार भाषा पूर्वोक्त दोषों रहित व दया पूर्ण बोले ॥ ९ ॥ साधु साध्वी

तो णो• नहीं ए० ऐसा व० कहे हो• मूर्ख, गो० गोला, व• वृषभ, कु• कुपक्षी, घ० दास, सा• कुत्ता ते० चोर, चा० व्यभिचारी, मा० कपटी, मु० झूठा ए ऐसा तु० तू इ० ऐसाही से० तेरे म० मातापिता ए० ऐसे प्रकारकी भा० भाषा सा० सावद्य स० पापकारी जा यावत् अ० बांधता णो० नहीं बोले ।१०।

साधु साध्वी पुरुषको आ० बोलावे आ० बोलावे हुवे अ० पु•नसुनेतो ए० ऐसे व० बोले अ०

अपडिसुणमाणे णो एवं वदेज्जा होले त्ति वा, गोलेत्ति वा वसले त्ति वा, कु वा, घडदासे त्ति वा, साणे त्ति वा, तेणे त्ति वा, चारिए त्ति वा, माई त्ति वा, मुसावादीत्ति वा एयाइ तुम, इतियाइं ते जणगा एतप्पगार भास सावज्जं सकिरिय भासेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा ( २ ) पुम आमंतेमाणे णमाणे एव वदेज्जा अमुगेत्ति वा आउसोत्ति वा आउसतोत्ति

बोलाये हुवे न सुना होतो ऐसा न बोल " रे मूर्ख, गुन्हाम, चांडाल, कुपक्षी, कर, कुत्ता, चोर, व्यभिचारी दगलबाज, झूठा तू ऐसा है, तेरे बाप भी ऐसा है वगैरह ऐसी दोषयुक्त ॥ १० ॥ साधु साध्वी किसी को बोलाते या बोलाये हुए उत्तर न देते इस तरह बोले आयुष्यमान्, श्रावक, उपासक, धर्मात्मा, धर्म प्रिय, वगैरह ऐसी तरह की निर्दो

अमुक आ० आयुष्यमान, अ० आयुष्यवन्त सा० श्रावक उ० उपासक ध० धर्मी ध० धर्मप्रिय, ए० ऐसी भा० भाषा अ० निर्दोष अ० दयापूर्ण अ० बोले भा० बोलना ॥ ११ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी इ० स्त्रीको भा० बोलते भा० बोलाते हुये अ० अनसुने णो० नहीं ए० ऐसे व० बोल, हो० मूर्खणी गो० गोली इ० स्त्री ग० रीससे णे० कहना ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी, इ० स्त्रीको भा० बोलाते भा० बोलाते अ० अनसुने ए० ऐसा व० बोले, आ० आयुष्यवन्ती, भ० बहिन, भ० भाग्यवती सा० श्राविका,

सावगेति वा उपासगेति वा धम्मिएति वा धम्मपियेति वा एयप्पगारं भासं असावज्जं जाव अभूतोवघातियं अभिकंख भासेज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा (२) इत्थी आमंतेमाणे आमंतिते य अपडिसुणमाणी णो एवं वदेज्जा —होलेति वा गोलेति वा इत्थीगमेणं णेतव्वं ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) इत्थियं आमंतेमाणे आमंतिए य अपडिसुणमाणी एवं वदेज्जा आउसो ति वा, भगिणिति वा, भगवति ति वा साविगेति वा उवासिएति वा धम्मिए ति वा धम्मपिएति वा एतप्पगारं भासं अ

ए भाषा बोले ॥ ११ ॥ इस प्रकार किसी स्त्री को बोलते या बोलाये हुवे नहीं सुनते मूर्ख, गोली, वगैरह सदोष वचन से बोलावे नहीं ॥ १२ ॥ किन्तु आयुष्यमती, बहिन, भगवती, श्राविका, उपासिका, धार्मिक,

उ० उपासिका, ध० धर्मात्मा ध धर्मप्रिय ए० ऐसी अ० निर्वद्य जा० यावत् भा० बोले भा० बोले ॥१३॥ से० वे साधु साध्वी णो० नहीं ए० ऐसा व० बोले ण० आकाश देवहै ति० ऐसा ग० गर्जना देव ति० ऐसा वि० विद्युत देव ति० ऐसा वि० वर्षाद देव ति० ऐसा णि निवद्व दे० देव, प० वर्षो वर्षाद मा० मत प० वर्षो, नि निपजो स० धान्य म० मतनिपजो, वि० जाओ र० रात्रि, मा० मतजाओ, उ० उदय होवो सू० सूर्य, मा० मतऊगो, सो० यह राजा ज० जीतो, मा० मतजीतो णो० नहीं ए० इसप्रकार भा० भाषा भा० बोले प० प्रज्ञावंत ॥१४॥ से० वे भि० साधु साध्वी अं० आकाश में गु० गुह्यानुचरित स० समुच्छिम,

सावज्ज जाव अभिकंख भासेज्जा ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) णो एवं वदेज्जा णभोदेवे त्ति वा, गज्जदेवे त्ति वा, विज्जुदेवे त्ति वा, पवुट्टदेवे ति वा, निवुट्ठदेवेति वा, पडउ वास माया पडउ णिप्फज्जउवा सस्स, मा वा णिप्फज्जउ, विभायउ वा रयणी, मावा विभायउ, उदउ वा सूरिए मावा उदउ, सो वा राया जयउ मावा जयउ णो

धर्मप्रिया, इत्यादि निर्दोष शब्दों से बोलावे ॥ १३ ॥ साधु साध्वी आकाश, गर्जना, विद्युत, वर्षा को देव कहकर बोलावे नहीं वर्षा होवो या मत होवो, धान्य उत्पन्न होवो या मत होवो रात्रि व्यतीत होवो या मत होवो, सूर्य का उदय होवो या मत होवो; अमुक राजा जय पावो या मत पावो वगैरह वचन बोले नहीं ॥ १४ ॥ साधु साध्वी को आकाश को अंतरिक्ष, गुह्यानुचरित वगैरह नामों से बोलाना और वर्षा

पि० परा प० मर्षा ए० ऐसा ब०बोले बु० बर्षा ब मेघ ॥१८॥ ए० यह ख० निश्चय त० उन भि० साधु भि० साध्वीकी सा०समाचारी जं०जो स० सर्वथा स० सममाव स० सदा यत्नाकरे ति० ऐसा कहताहूं॥१६॥

से० वे भि० साधु साध्वी ज० जैसा वे० एकेक रू० रूप पा० देखे त० वैसा ता० उसे णो नहीं ए० नेणा व० कहे, त० यह ज० यथा—गडीको गंडी, कु कुष्टीको कुष्टी जा० यावत् म० मधुममेही को मधुम

एतप्पगार भास भासेज्ज पण्णत्तं ॥ १४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अतलिक्खे ति वा गुज्झाणुचरिणत्ति वा समुच्छिए वा, णिवइए, पओए, एवं वदेज्ज वा, वुट्ठे वलाहगेत्ति ॥१५॥ एय खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा, सामग्गियं ज सव्वट्ठेहिं समिए सहिए सयाजएज्जासि त्तिबेमि ॥ १६ ॥ इति भासा ज्झयणस्स पढमोद्देसा सम्मत्तो

से भिक्खू वा ( २ ) जहा वेगइयाइ रूवाई पासेज्जा तहाविं ताइ णो एव वदेज्जा तजहा गडी गडी ति वा, कुट्ठी कुट्ठी ति वा, जाव महुमेही महुमेहीति वा, हत्थच्छिण्णे ह

को पयोद; या बलाहक परा ऐसा बोले इस तरह गर्जना विद्युत के संबंध में कहना ॥ १८ ॥ उक्त प्रकारसे साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है उनको सर्व बावतों में सावधानपनासे रहना ॥ १६ ॥ यह भाषा जात प्रयोदश अध्ययन का प्रथम उदेशा पूर्ण हुवा आगे साधुको बोलने की विधि बताते हैं

साधु साध्वी किसीको कुरूप देखे तो उस ही रूप के नामसे उसे बोलावे नहीं जैसे —गंडमाल के रोगवाले को गंडी; कोढ रोगवाले को कुष्टी, मधुममेह का रोगवाले को मधुममेही, हाथ कटे को लूला,

मही, ह० हाथकटे को हत्थ कहा, ए० ऐसही—पा० पग—ण० नाक—क० कान—उ० ओष्ठ—च्छि छेदेका जे० जो आ० प्राप्त हुवे त० तैसा त० तैसी भा० भाषासे बू० बोलाया हुवा ? कु० कोपकरे मा० मनुष्य ते० तैसी त० तथा प्रकारकी भा० भाषा अ० सांच्चवा णो० नहीं भा०बोले ॥१॥ से० वे भि० साधु साध्वी ज० जैसा ए०एकेक रू० रूप पा० देखे त० तैसे ता० उसे ए० ऐसे व० कहे ओ० ओजस्वी को आजस्वी ते०तेजस्वी को तेजस्वी, व०वाचालको वाचाल, ज०यशस्वी को यशस्वी, अ०अभिष्ट रूपीको अभिष्ट रूपी प०

त्थच्छिण्णे ति वा, एव पाय, णक्क, कण्ण उट्ठ च्छिण्णे त्ति वा, जेया वन्ने तहप्पगारा तहप्पगाराहिं भासाहिं बूइया बूइया कुप्पति माणवा, तेयावि तहप्पगाराहिं भासाहिं अभिकख णो भासेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जहा वेगइयाइ रूवाइ पा सेज्जा तहावि ताइ एवं वदेज्जा ओयंसी ओयंसीति वा, तयसी तेयसीति वा वच्चसी वच्चसीति वा, जसंसी जसंसीति वा, अभिरूव अभिरूवेति वा, पडिरूवं पडिरूवेति वा,

पांव कटे को पांगला, नाक कटेको नकट्या, कान कटे को बूचा, वगैरह वचन की जिससे बोलने से कुपित होवे ऐसे वचनसे नहीं बोलावे॥१॥साधु साध्वी किसी मनुष्यसे बोलना चाहे तो उसके अनेक गुणोंमें से किसी एक उत्तम गुण के नाम से बोलावे जैसे कि—बलवन्त को बलवन्त, तेजस्वी को तेजस्वी; वक्ता को वक्ता;

प्रतिरूपी को प्रतिरूपी, पा० प्रसादवत को प्रसादवत द० दर्शनीय को दर्शनीय जे० जैसा गुण त० तैसा प्रकार ए० इस प्रकार भा० भाषासे बू० बोलता ? हुआ णो० नहीं कु० कुपित होवे मा मनुष्य से० वैसी त० तथा प्रकार ए० इस प्रकार भा० भाषा अ० सांच कर भा० बोले त० तथा प्रकार की भा० भाषा भ० निर्वद्य भा० बोले ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ज० जैसा ए० एकेक रू० रूप पा० देखे तं० वह ज० यथा व० किल्ला भा० यावत् भ० भुवनपर त० तैसा ता० उसे णो० नहीं व० बोले, त० वह

पासादिय पासादियेति वा, दरिसणिज्ज दरिसणीएति वा जेया वण्णे तहप्पगारा ए यप्पगाराहिं भासाहिं बूइया बूइया णो कुप्पति माणवा तेयावि तहप्पगारा एयप्पगाराहिं भासाहिं अभिकंख भासेज्जा तहप्पगार भास असावज्जं जाव भासेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जहा वेगतियाइ रूवाइ पासेज्जा तंजहा वप्पाणि वा जाव भवणगिहाणि वा, तहावि ताइ णो एव वदेज्जा तंजहा सुकडेत्ति

यशस्वी को यशस्वी; मनोहर को मनोहर; रमणिक को रमणिक; दर्शनीय को दर्शनीय; इत्यादि वचन कि जिस से वह प्रसन्न रहे और निर्दोष शब्द होवे उससे बोलवे ॥ २ ॥ साधु साध्वी किल्ला; कोट; प्रासाद; वगैरह आरंभी वस्तु को देख कर ऐसा नहीं कहे कि ये बहुत अच्छे इमादार बनाय, कल्याणकारी है;

ज० यथा—सु० अच्छा किया सु० अच्छी तरहसे किया सु० छ्यवहार है क० कल्याण कारी है क० करने योग्य है ए० इस प्रकारकी भ० भाषा सा० सावद्य जा० यावत् णो० नहीं भा० बोले ॥ २ ॥ से० व भि० साधु साध्वी ज० जिस प्रकार ने० एकेक रू० रूप पा० देखे त० वह ज० यथा—व० किल्ला जा० यावत् भ० भुवनघर त० वैसे ता० उसे ए० ऐसे व० बोले, त० वह ज० यथा—आ० आरंभ कारी है सा० सावद्य है, प० महेनत से बनाई पा० प्रसन्नकारी का प्रसन्नकारी द० देखने योग्य का देखने योग्य शोभनिक को शोभनिक प० प्रतिरूपको प्रतिरूप कहे, ए० इस प्रकार भा० भाषा अ० निर्वद्य जा० यावत्

वा, सुकुकडेति वा, साहुकडेत्ति वा, कल्लाणेत्ति वा करणिज्जेत्ति वा, एयप्पगार भा स सावज्ज जाव णो भासेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा [ २ ] जहा वेगइयाइ रू वाइ पासेज्जा तंजहा वप्पाणि वा जाव भवणगिहाणि वा, तहावि ताइ एव वदेज्जा तंजहा आरंभकडेत्ति वा, सावज्जकडेत्ति वा पयत्तकडेत्ति वा, पासाइय पासादिएत्ति वा दरिसणीय दरिसणीएत्ति वा अभिरूव अभिरूवेत्ति वा पडिरूव पडिरूवेति वा पयप्प

करने योग्य है, ऐसी सावद्य भाषा बोले नहीं ॥ २ ॥ किन्तु कोट किल्ला आदि आरंभ से बने को आरंभसे पाप से, परिश्रम से बने का और ने देखने स्वरूप, चित्त को प्रसन्न हो तो वैसाही कहे अयोग्य प्रशंसा

मा० बोले ॥ ४ ॥ भि० वे भि० साधु साध्वी अ० अस पा० पाणी खा० खादिम सा० स्वादिम उ बना हुवा पे० देख त० तैसे त वसे णो नहीं व कहे, त० यह ज० यथा सु अच्छाकिया, सु अच्छी तरह किया, सा० सुन्दर किया क० कल्याण कर्ता क० करने लायकहै, ए० ऐसी तरह भा० भाषा सा० सावद्य णो० नहीं भा० बोले ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ अशनादि चारों आहार उ० तैयार हुवा पे० देख ए० ऐसा कहे आ० आरभसे बना, सा० पापसे बना प० मेहनतसे बना, प० अच्छेको

गार भास असावज्ज जाव भासज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) असण वा, पाण वा, खाइम वा साइमं वा उवक्खाडिय पेहाए तहावि तं णो एवं वदेज्जा तजहा—सुकडेति वा, सुट्ठकडेति वा, साहुकडेति वा, कल्लाणेति वा, करणिज्जेति वा, एयप्पगार भास सावज्ज जाव णो भासेज्जा ॥ ५ । से भिक्खू वा ( २ ) असण वा ( ४ ) उवक्खाडिय पेहाए एवं वदेज्जा तजहा आरभकडेति वा, सावज्जकडेति वा,

न करे ॥ ४ ॥ इस तरह साधु साध्वी अशनादि चारों प्रकार का आहार तैयार बनाहुवा देख ऐसा न बोले कि अच्छा बनाया, सुघडता से बनाया, स्वादिष्ट बनाया, करने योग्य, इत्यादि सावद्य भाषा बोले नहीं ॥ ५ ॥ साधु साध्वी चारों प्रकार का आहार तैयार बनाहुवा देख कहे कि यह आहारादि आरंभसे, पापसे या परिश्रमसे बनाहुवा है और मे रूखा होवे तो रूखा कहना, ताजा होवे तो ताजा कहना; रसवाला होवे

मच्छा उ० सरसको सरस र० रसालको रसाल म मनोज्ञको मनोज्ञ, ए० ऐसी तरह भा० भाषा अ० निर्दोष भा करे ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी म मनुष्य गो बैल म० भैंसा मि० मृग प० पशु प० पक्षी सि० सर्प ज० जलचर, से० वे प० पुष्ट का० शरीर पे० देखकर णो० नहीं ए० ऐसा व० कहे थु स्थूल प० मदयुक्त व० वर्तुलाकार है, व० वधकरने योग्य है, पा० पचानेयोग्य है ए० इसतरहकी भा० भाषा सा० सावद्य जा० यावत् णो० नहीं बोले ॥ ७ ॥ से० वे भि साधु साध्वी म मनुष्य जा० यावत् ज० जलचर से० वे

पयत्तकडेति वा, भद्द भद्दएति वा, ऊसढं ऊसढेति वा, रसिय रसिएति वा, मणुण्ण मणुण्णेति वा, एयप्पगारं भासं असावज्जं जाव भासेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा (२) मणुस्सं वा, गोणं वा, महिसं वा, मिगं वा, पसुं वा, पक्खि वा, सिरीसिवं वा, जलयरं वा, से तं परिवूढकायं पेहाए णो एवं वदेज्जा थुल्लेति वा पमेतिलेति वा, वट्टेति वा वज्झेति वा, पाइमेति वा, एयप्पगारं भासं सावज्जं जाव णो भासेज्जा ॥ ७ ॥ से भि-

रसिक कहना, मनोहर को मनोहर कहना ऐसी निर्दोष भाषा बोलना ॥ ६ ॥ साधु साध्वी को मनुष्य, बैल, महिष; मृग; पशु पक्षी, सर्प, जलचर आदि को देख कर ऐसा नहीं बोलना कि यह पुष्ट, चरबीवाला, है इसे मारो, पचाओ, ऐसी पाप की भाषा सदैव त्यागे ॥ ७ ॥ मुनि तथा आर्या को मनुष्य यावत् पशु

प० पुष्ट का० शरीर पे० देखकर ए० ऐसा व० कहे, प० पुष्ट शरीर है, उ० फूलाहुआ शरीर है, उ० उपचित हुआ म० मांस सो० रक्त, ब० बहूत प प्रतिपूर्ण इं० इन्द्रियों है, ए० ऐसी तरहकी भा० भाषा अ० निर्दोष भा० यावत् भा० बोले ॥ ८ ॥ से वे भि० साधु साध्वी वि० विविध प्रकार गा० गायों पे० देखकर णो० नहीं ए० ऐसा व बोले त० वह ज० यथा गा० गायों दो० दूहने लायक हैं, द० दमने योग्य गो० बैलों, व० खेडने योग्य र रथके योग्य ए० ऐसी तरकी भा० भाषा सा० सावद्य णो० नहीं

क्खू वा ( २ ) मणुस्सं वा जाव जलयरं वा से त्त परिवूढकाय पेहाए एवं वदेज्जा परिवूढकाएति वा उवचितकाएति वा, उवचितमंससोणिएति वा, थिरसंघयणेति वा, बहुपडिपुण्णइंदिएति वा, एयप्पगारं भासं असावज्जं जाव भासज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा, ( २ ) विरूवरूवाओ गाओ पेहाए णो एवं वदेज्जा तंजहा गाओ दोज्झाति वा दम्माइ वा, गोहरावाहिमाति वा, रहजोग्गाति वा, एयप्पगारं भासं साव

द्य देख कर कारणसर ऐसा कहना कि ये शरीर बडे हुवे हैं, उपरे हुवे हैं, लोही मांस से भरे हुवे हैं, संपूर्ण अंग युक्त है ऐसी निर्दोष भाषा बोले ॥ ८ ॥ साधु साध्वी विविध प्रकार की गायों देख कर ऐसा नहीं कहे कि इस गाय का दुध निकालने योग्य है, और बैलो को देख ऐसा न बोले की ये हलमें या रथमें

भा० बोले ॥ ॥ से० व भि० साधु साध्वी वि विविध प्रकारकी गा० गायों पे० देख ए० ऐसे बोले तं० वह ज० यथा जु० जुवान है, ध० बैल गा० गाय है, र० रसवतिहै, ह छोटीहै, म० बडीहै म० धोरी स० भारउठाने समर्थ ए० ऐसी भा० भाषा अ० निर्वद्य भा० बोले ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी त० तैसेही ग० जाकरके उ० उद्यानमें प० पर्वतमें व० वनमें रु० वृक्ष म० बडा पे० देख णो० नहीं ए० ऐसे व० कहे तं० वह ज० यथा पा० प्रासाद योग्य, घा० या तो० तोरण योग्य, गि० घर योग्य, फ० पटिये

ज णो भासेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) विरूवरूवाओ गाओ पेहाए एवं वदेज्जा तंजहा जुवं गवेति वा, धेणूति वा, रसवतीति वा, हस्सेति वा, महल्लएतिवा महव्वएति वा संवाहणेति वा, एयप्पगारं भासं असावज्जं जाव भासेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा, ( २ ) तहेव गंतु मुज्जाणाइं पव्वयाइं वणाणि वा, रुक्खा महल्ला पेहाए णो एवं वदेज्जा तंजहा पासायजोग्गाति वा, तोरणजोग्गाति वा,

मानने योग्य है ॥ ९ ॥ साधु तथा साध्वी का विविध प्रकार की गायों देख कर काम पडे तो ऐसा बोले ना कि यह बैल जुवान है, यह गाय दूध देनेवाली रसवाली है, या यह बैल छोटा है, बडा है, बोजा उठाने को समर्थ है, ऐसी निर्दोष भाषा बोले ॥ १० ॥ साधु साध्वी बगीचे में पर्वतपर के वनमें जाकर बडे २ हरे बडे वृक्षों को देख कर ऐसा न कहे कि इस वृक्ष का लक्कड महल, हवेली, तोरण, घर, पटिया,

म० अर्गल योग्य,—णा॰ नाव—उ० मछवा—पी० पाट—च० कथरोट—पं० हल—कु० कूंडी—ज० यत्रकीलाठ णा० नली—गं० गाडी—आ० आसन—स० सैया—आ० वाहन—उ० उपाश्रय—जो० योग्य, इ० इस तरहकी भा० भाषा सा० सावद्य जा० यावत् णो० नहीं भा० भासे ॥ ११ ॥ से वे भि० साधु साध्वी त० ते सेहि ग० गये उ० बगीचेमें प० पर्वतपर व० वनमें० रु० वृक्ष म० बडा पे० देखकर ए ऐसा व० कहे, त यह अ० यथा जा० जातिवाले, दी० लम्बा व० गोलहै, म० बडाहै, प० पसरी शाखाओं, वि० सघन

गिहजोग्गाति वा, फलिहजोग्गाति वा, अग्गल णावा-उदगदोणि पीठ-चगवेर-ण गल-कुलिय-जतलट्ठि-णालि-गडी-आसण—सयण -जाण उवस्सयजोग्गाति वा ए यप्पगार भास सावज्ज जाव णो भासेज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) तहे व गतु मुज्जाणाइ पव्वयाणि वणाणि य रुक्खा महल्ला पेहाए एव वएज्जा तजहा जा तिमतातिवा दीहवट्टाति वा, महालयाति वा, पयायसालाति वा, विडिमसालाति

अर्गल, नाव, मछवा, पाट, कथरोट, हल, कूंडी, घाणी आदि की लाट, पानी की नाली, रथ का हाथा, आसन, सैया, वाहन, और उपाश्रय बनाने योग्य है ऐसी सावद्य भाषा बोले नहीं ॥ ११ ॥ किन्तु प्रसंग पडने पर ऐसा बोले कि यह वृक्ष अच्छी जात के हैं, ऊंचे तथा वर्तुलाकार है, बडे विस्तृत है, बहु

शाम्बारे, प०प्रमम करतारे, जा०यावत् प० प्रतिरूपरे, ए०ऐसी भा०भाषा अ०निर्वेध जा०यावत् अ०शांतकर भा० बोले ॥१२॥ से०वे भि० साधु साध्वी ब० बहुत स० उत्पन्न हुए व० वनफल पे०देखकर त०वैसही वे पर णो० नहीं ए० ऐसे व० बोले, त वह ज० यथा—प० पकेहैं, पा पकाके खावो, वे तोडने योग्य व०कोमलहैं, वे० टुकडे करने योग्य ए० ऐसी तरहकी भा० भाषा सा०सावद्य जा० यावत् णो० नहीं बोले ॥ १३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ब० बहुत सं० उत्पन्न हुवे फ० फल अ० आम्र देखकर ए० ऐसे ब० बोले, त० वह ज० यथा अ० असमर्थ ब० बहुत लगेहैं फ० फला, ब० बहुत स० उत्पन्न हुवेहैं, भू० को

वा, पासादियाति वा, जाव पडिरूवाति वा एयप्पगार भास असावज्ज जाव अभिक ख भासेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) बहुसभूता वणफला पेहाए तहा वि ते णो एवं वदेज्जा तजहा पक्काति वा, पायखज्जाति वा, वेलोचियाति वा, टालाति वा वेहियाति वा एयप्पगारं भासं सावज्ज जाव णो भासेज्जा ॥ १३ ॥ से भि क्खू वा बहुसंभूता फला अबा पेहाए एव वदेज्जा तजहा असंथडाति वा बहुनि

शाला युक्त है, रमणीय, वगैरह ऐसी निर्दोष भाषा बोले ॥ १२ ॥ साधु साध्वी ने बहुत पके हुवे फलों देख कर ऐसा नहीं बोलना कि ये फल पके हुवे हैं पकाकर खाने योग्य है, अभी ही तोडने योग्य है, कोमल है, टुकडा करने योग्य है, ऐसी सावद्य भाषा बोलना नहीं ॥ १३ ॥ साधु साध्वी बहुत पके हुवे, आम्र को देख प्रसग परे तो ऐसा बोले कि यह वृक्ष फलों से भारी हुवा है, बहुत सघन फल लगे हैं

मस फसरे ए० ऐसी अ० निर्वद्य भा० बोले. ॥ १४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ब० बहुत सं० उत्पन्न हुए ओ० औषधि पे देखकर त० तैसी वा० उसे णो० नहीं ए० एसे व० कहे, त० वह ज० यथा, प० पकीहै, नी० हरीहै, छ० छवीदारहै, ला० काटने योग्यहै, भ० भूंजने योग्यहै, ब० बहुत ख० खाने योग्यहै, ए० इस प्रकार भा० भाषा सा० सदोष णो० नहीं भा० बोले ॥ १५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ब० बहुत सं० उत्पन्न हुए ओ० औषधि पे० देखकर त० तथापि ए० ऐसे व० बोले, रु० अंकूरे निकले,

वहिमफलाति वा, बहुसंभूयाति वा, भूतरूवाति वा, एयप्पगारं भास असावज्जं जाव भासेज्जा ॥ १४ ॥ से भिक्खू वा [ २ ] बहुसंभूयाओ ओसहीओ पेहाए तहावि ताओ णो एवं वदेज्जा तंजहा पक्काति वा, नीलियाति वा, छवीइ या, लाइमाइ वा, भज्जिमाइ वा, बहुखज्जाइ वा, एयप्पगारं भास सावज्ज णो भासेज्जा ॥ १५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) बहुसंभूयाओ ओसहीओ पेहाए तहावि एवं वदेज्जा तंजहा

कोमल है अर्थात् कितनेक पूरे पके नहीं है वगैरह ऐसी निर्वद्य भाषा बोले ॥ १४ ॥ साधु साध्वी धान्य अनाज के खेतों को पके देख ऐसा नहीं बोले कि यह पके हैं, दूध भरे हैं, इन को काटकर आगि भूंजकर होला, ऊंबी, पुंख बना कर खाने योग्य है ॥१५॥ साधु साध्वी अनाजके पकेहुवे खेत देख कर कारण पडे तो ऐसा बोले कि यह अनाज बहुत बोया हुवा है, बहुत उत्पन्न हुवा है, मजबूत है, बहुत अच्छा है, बीज

ब० बहुत पेदाहुवे, थि० स्थिरहै, उ० रसभरहै, गा० या ग० गर्भितहै, प० प्रसूतहै, स० पदेहुवेहैं, ए० ऐसे माकहै ॥ १६ ॥ से वे भि० साधु साध्वी ज० यथा वे० एकेकके स० शब्द सु० सुने त० तैसे ए० ऐसे णो नहीं ए० ऐसे व० बोले, सं० वह ज० यथा सु० अच्छा शब्द दु० बुराशब्द, ए० ऐसे सरह सा० सावद्य जा० यावत् णो० नहीं भा० बोले ॥ १७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ज० जैसा वे० एकेक स० शब्द सु० सुने त तैसे ए० ऐसे व० कहे, त० वह ज० यथा सु अच्छेशब्दको सु० सुशब्द, दु०

रूढाति वा, बहुसमुताति वा, थिराति वा, ऊसढाति वा, गब्भियाति वा, पसुयाति वा, ससराति वा, एयप्पगार असावज्ज जाव भासेज्जा ॥ १६ ॥ से भिक्खू वा (२) जहा वेगइयाइं सद्दाइं सुणज्जा तहावि एयाइं णो एवं वदेज्जा तंजहा सुसद्देति वा दुसद्देति वा एयप्पगार सावज्ज जाव णो भासेज्जा ॥ १७ ॥ से भिक्खू वा (२) जहा वेगइयाइं सद्दाइं सुणेज्जा तहावियाइं एवं वदेज्जा तंजहा सुसद्द सुसद्देति वा

उत्पन्न हुवा है ऐसी निर्वद्य भाषा बोले ॥ १६ ॥ साधु साध्वी अच्छा अवाज सुनकर ऐसा नहीं कहे यह अच्छा है या खराब अवाज सुनकर ऐसा नहीं कहे कि यह खराब है ऐसी सावद्य भाषा नहीं बोले ॥ १७॥ परंतु शब्दका स्वरूप बताने के लिये सुशब्द को सुशब्द कहे और खराब शब्द को खराब शब्द कहे ऐसी

पुरेसन्दे को दु० दुराशब्द, ए० ऐसी तरह अ० निर्दोष जा० यावत् मा० बोले ॥ १८ ॥ ए० ऐसे रू० रूप क० कृष्ण ग० गंध सु० सुरभिगंध, र० रस ति० तीक्ष्ण फा० स्पर्श क० कर्कश ॥ १९ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी, व० वमनक्रिया को० क्रोध च० और मा० मान च० और मा० माया च० और लो० लोभ अ० विचारकर णि० निश्चय मा० बोलने वाले, णि० सुना जैसा अ० स्थिरतासे बोले

दुसद्दं दुसद्दे ति वा एयप्पगारं असावज्जं जाव भासेज्जा ॥ १८ ॥ एवं रूवाइं कण्हे ति वा, गंधाइ सुब्भिगंधेति वा, रसाइं तित्ताणि वा, फासाइ कक्खडाणि वा, ॥ १९ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) वंता कोहं च, माणं च, मायं च, लोभं च, अणुवीइ णिट्ठाभासी, णिसम्मभासी, अतुरियभासी, विवेगभासी, समियाए संजते भासं भासेज्जा ॥ २० ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ २१ ॥

निर्दोष भाषा बोले ॥ १८ ॥ इसी तरह कृष्णादि वर्ण सुरभि आदि गंध, तिक्तादि रस, और कर्कशादि स्पर्श को भी प्रीति या द्वेष बुद्धि से बोलना नहीं किन्तु स्वरूप बताने खातर जैसा होवे वैसा यथार्थपने बोलना ॥१९॥ साधु साध्वी को क्रोध, मान, माया, लोभ का त्याग कर विचार पूर्वक, निश्चय पूर्वक, जैसे सुना वैसा, विवेकसे, शांततासे लक्षपूर्वक, निर्दोष भाषा बोलना ॥ २० ॥ यही साधु साध्वीका पवित्र

वि० विवेकसे बोले, स० समतासे बोले, सं० साधु भा० भाषा भा० बोले ॥ २० ॥ पूर्ववत् ॥ २१ ॥

इति भासाज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो॥ इति भासाणाम तयोदश ममज्झयणं सम्मत्त

आधार है ॥ २१ ॥ यह भाषा जात त्रयोदश अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा भाषा जात त्रयोदश अध्ययनभी समाप्त हुवा उक्त अध्ययन में दूसरी भाषा समिति कही आगे तीसरी एषणा समिति कहते हुवे वस्त्र याचने की शुद्धि के लिये चतुर्दश वस्त्रैषणा अध्ययन कहते हैं

## ॥ वस्त्रैषणाख्यं चतुर्दशमध्ययम् ॥

से० वे भि० साधु साध्वी, अ० चाहे व० वस्त्र, ए० गवेषने को से० वे ज० जो पु० फिर व० वस्त्र जा० जाने तं० वह ज० यथा जं० ऊनके, भं० रेशमके, सा० शणके, पो० पत्रके, खो० कपासके, तू० अर्कतूलके, त० तथा प्रकार का व० वस्त्र जे० जो नि० निर्ग्रन्थ त० तरुण, जु० चौथा आराका जन्मा ब,० बलवन्त अ० नीरोगी, थि० दृढसंघयणवाला, से० वे ए० एक व० वस्त्र धा० धारण करे णो० नहीं बि० द्वितीय जा० जो णि० निग्रन्थिनी सा० वह च० चार सं० साडी ( पछेवडी ) धा० धारणकरे ए० एक

से भिक्खू वा भिक्खुणी वा अभिकंखेज्जा वत्थं एसित्तए से जं पुण वत्थं जाणेज्जा तंजहा—जंगियं वा, भंगियं वा, साणयं वा, पोत्तयं वा, खोमियं वा, तूलकडं वा, तहप्पगारं वत्थं जे णिग्गंथे तरुणे, जुगवं, बलवं, अप्पायंके थिरसंघयणे से एगं वत्थं धारेज्जा णो बितियं जा णिग्गंथी सा चत्तारि संघाडीओ धारेज्जा एगं दुह

साधु साध्वी को वस्त्र की याचना बहुत सावधानी से करना—जैसे कि, १ ऊन के, २ रेशम के, ३ शनके ४ पत्र के, ५ कपास के, ६ आकडेके और ऐसे अन्यभी वस्त्र प्राप्त होवे तो उसे ग्रहण करना इतने प्रकार के वस्त्रोंमें से स्थिर संघयण का धणी, युवान, बलवान, निरोगी, तीसरा चौथा आराका जन्मा हुवा को एकही वस्त्र रखना न कि दूसरा और साध्वी को चार साडी रखना चाहिये जिस में एक दो हाथ के पनेवाली, स्वस्थान ओढने को, दो तीन हाथ के पनेवाली एक भिक्षार्थ और दूसरी स्थंडिल के लिये,

दु० दोहाथ का विस्तारकी दो० वो ति० तीनहाथ का विस्तार वाली ए० एक च० चारहाथ का विस्तार वाली ए० इन व० वस्त्रों से अ० अविद्यमान अ० अथ प० फिर ए० परस्पर स० सीवे ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी प० अधिक, अ० अर्धयोजनसे व० वस्त्र केलिये णो० नहीं अ० इच्छे ग० जाने को ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज० जो पु और व० वस्त्र जा० जाने अ० इस केलिये ए० एक सा० साधुको स० उद्देशकर पा० प्राणी ( ज० जैसे पि० पिण्डैषणामें ) ॥ ३ ॥ ए० ऐसे ब० बहुत

त्थवित्थार, दो तिहत्थवित्थाराओ एग चउहत्थवित्थार, एएहिं वत्थेहिं अविज्ज माणेहिं अह पच्छा एगमेग ससीविज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) परं अ द्धजोयणमेराए वत्थपडियाए णो अभिसधारेज्जा गमणाए ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण वत्थ जाणेज्जा अस्सिंपडियाए एग साहम्मिय समुद्दिस्स पाणाइ (जहा पिंडेसणाए) ॥ ३ ॥ एव बहवे साहम्मिया एग साहम्मिणिं बहवे

एक चार हाथ के पनेवाली समवसरण में जाने को ऐसे चार पछेवडी रखना यदि इतना पनेवाला वस्त्र न मिले वो दूसरा वस्त्र मिलाकर सूइ सुत्र से सीकर पूरा करे ॥ १ ॥ साधु साध्वी को दोकोष से अधिक वस्त्र याचने को जाना नहीं ॥ २ ॥ साधु साध्वी के लिये प्राणी आदि की हिंसा करके वस्त्र बनायाहोवे वो लेना नहीं जैसे आहारैषणा में विधि कही है वैसे ही यहां जानना ॥ ३ ॥ उक्त प्रकार से बहुत साधु

सा॰साधु के लिये ए॰एक सा॰साध्वी के लिये ए॰बहुत सा॰साध्वी के लिये ए॰बहुत स॰श्रमण, मा॰माहण, त॰ तैसेही पु॰ पुरुषान्तर कृत (ज॰ जैसे पिं॰ पिंडैषणा में) ॥ ४ ॥ से॰ वे मि॰ साधु साध्वी से॰ वे ज्ज॰ जो पु॰ फिर व॰ वस्त्र जा॰ जाने अ॰ असंयति ने भि॰ साधु के लिये की॰ मोल लिया, धो॰ धोया, र रंगा पु॰ पुष्टकिया, घ॰ साफ किया, म॰ सुधारा, सं॰ तैयार किया, सं सुगंधिकिया, त॰ तैसा व वस्त्र अ अपुरुषान्तर कृत जा यावत णो॰ नहीं प॰ ग्रहणकरे अ॰ और

साहम्मिणीआ बहवे समण माहणा तहेव पुरिसतरकडं (जहा पिंडेसणाए) ॥ ४ ॥
से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण वत्थ जाणेज्जा असंजए भिक्खुपडियाए की
तं वा, धोतं वा, रत्तं वा, घट्ठं वा, मट्ठं वा, संमट्ठं वा, संपधूमितं वा, तहप्पगारं वत्थं
अपुरिसतरकडं जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा पुरिसतरकडं जा

के लिये बनाया, एक साध्वी के लिये बनाया, बहुत साध्वी के लिये बनाया, तथा बहुत श्रमण, ब्राह्मणादि के लिये बनाया पुरुषान्तर कृत इस का विशेष वर्णन पिंडैषणा अध्ययनमें कहा है वैसा ही समझना ॥ ५ ॥ जो वस्त्र गृहस्थने साधु साध्वी के लिये मोल लिया होवे, धोया होवे, रंगायाहुवा, साफ कियाहुवा सुधराया हुवा, धूप आदि लगाकर सुगन्धित किया हुवा और उसको नवीन बनाया होवे तो साधु साध्वी

पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने पु० पुरुषान्तर कृत जा० यावत् प० ग्रहण करे. ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज्ज० जो पु० और व० वस्त्र जा० जाने वि० विविध प्रकार के म० बहुमूल्य तं० यह ज० यथा आ० चर्मके, स० अति सूक्ष्म स० अति शोभित आ० गाडरके रोमके, का० रंगित कपासके खो० श्वेत कपासके, मि० मृग चर्मके दु० बंगाली कपास के, प० पष्कूल सूतके म० मलया वस्त्रके प० ... के अं० अंशुक देशके, ची० चीनदेशके, दे० देसराग, अ० आमिल जात, ग० गामके, फा० फलक

व पडिग्गाहेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्जाइं पुण वत्थाइं जाणेज्जा, वि रूवरूवाइं महद्धणमोल्लाइं तंजहा आजिणाणि वा, सहिणाणि वा, सहिणकल्लाणाणि वा, आयाणि वा कायकाणि वा, खोमियाणि वा, मियाणि वा, दुगुल्लाणि वा, पट्टाणि वा, मलयाणि वा, पत्तुण्णाणि वा, अंसुयाणि वा, चीणसुयाणि वा, देसरागाणि वा, अमिलाणि वा, गज्जलाणि वा, फालियाणि वा, कायहाणि वा, कम्बलगाणि वा,

को लेना नहीं परंतु दूसरेने किया होवे तो ले लेना ॥ ५ ॥ साधु तथा साध्वी को निम्नोक्त बताये हुवे पृथक् २ जाति के बहु मूल्यवान् वस्त्रों लेना नहीं चर्मके कपडे, सुंवाले कपडे, सुशोभित कपडे, बकरे के बालसे बने हुवे कपडे, बहली रंगसे बने हुवे कपडे, सफेद रूइके, बंगाली रूइके कपडे, पट्टसूतके, मलय

के का० कापसके क० रत्नकम्बल पा० ऊनके रोमके अ० अन्यभी त तथा प्रकार के व० वस्त्र म० बहुमूल्य, ला० मासहाने पर णो० नहीं प० ग्रहण करे ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जा० जो पु० और आ० चर्मके पा आवरण व० वस्त्र जा० जाने तं० यह ज० यथा उ० उद्रमच्छके, पे० पशुके पे० पशमीनेके कि० कृष्ण मृगके चर्मके णी० नीलमृग के चर्मके गो० श्वेतमृगसे चर्मके क० सुवर्ण जैसे तेजस्वी क० सोने के तारके क० सोने के पत्रसे क० सोनेकी रजसे व० व्याघ्रके चर्मके वि० सिंहके चर्मके आ० आभूषणके

पावरणाणि वा, अण्णयराणि तहप्पगाराइं वत्थाइ महद्धणमोल्लाइं लाभे संते णो पडिग्गाहेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) सेज्जाइं पुण आईणपाउ रणाणि वत्थाणि जाणेज्जा तंजहा उद्दाणि वा, पेसाणि वा, पेसलेसाणि वा, किण्ह मिगाईणगाणि वा, णीलमिगाईणगाणि वा, गोरमिगाईणगाणि वा, कणगाणि वा, कणगकंताणि वा, कणगपट्टाणि वा, कणगखइयाणि वा, कणगफुसियाणि वा, वग्घाणि वा, विवग्घा

सूत्र के, घासके, अमुक, चीनांशुक, देशराग, आमिल, गज्जल, फालिक और मलमल के कपड़े तथा ऐसी तरहका अन्य कोई भी बहु मूल्यवान् कपड़े लेना नहीं ॥ ५ ॥ साधु तथा साध्वी को निम्नोक्त चर्म के वस्त्र लेना नहीं—उद्रजात के मत्स्य के चर्म, पेरा नामक जानवर का चर्म, काला नील, धोला, मृग का चर्म, सुवर्ण जैसी कांतिवाला, तारसे, या सुवर्ण की पाट से, या किनखाब से, या जरी से, मरे हुवे चर्म,

भा विचित्र गूपणाकार अ० अन्य त तथा मकारके आ० चर्मके पा० मावरण व० वस्त्र ला० मासहोने पर णो० नहीं प० ग्रहण करे ॥ ७ ॥ इ० यह आ० पापस्थान को उ० उल्लंघकर अ अथ भि० साधु जा० जाने च० चार प मतिज्ञासे व वस्त्र ए० गवेषने को त० तहां इ० यह ख० निश्चय प० प्रथमा प प्रति ज्ञा (१) से०वे भि साधु साध्वी उ उद्देशकर व० वस्त्र जा० याचे त० यह ज० यथा ज ऊनके भ० रेशमके सा० शणके पो० पत्रके, खो० कपासके, तू० अर्कतूलके त० तथा मकारका व० वस्त्र स० स्वय जा०

णि वा, आभरणाणि वा, आभरणविचित्ताणि वा, अण्णयराणि वा, तहप्पगाराणि आईणपाउरणाणि वत्थाणि लाभे सते णो पडिग्गाहेज्जा ॥ ७ ॥ इच्चेयाइ आयत णाइ उवातिकम्म अह भिक्खू जाणेज्जा चउहिं पडिमाहिं वत्थ एसित्तए तत्थ ख-लु इमा पढमा पडिमा से भिक्खू वा ( २ ) उद्दिसिय वत्थ जाएज्जा तजहा ज गिय वा, भागिय वा, साणय वा, पोत्तय वा, खोमिय वा, तूलकड वा तहप्पगार व

चाम के चर्म से मढे हुवे, आभूषणरूप, या आभूषण से जडे हुवे तथा ऐसी जातका अन्य कोइ भी चमका कपडा मुनिको पहिनना नहीं ॥ ७ ॥ शुद्ध वस्त्र धारन करने के लिये उपर्युक्त दोषों का निवारन कर मुनि को निम्नोक्त चार प्रतिज्ञासे वस्त्र याचना प्रथम प्रतिज्ञा यह है कि, साधु तथा साध्वी को उनके, रेशमके, शणके, पानके, कपासके, अर्कतूलके, वस्त्रमें से अमुक जातका वस्त्र लेने की धारना

याचे प० अन्य दे० देवे तो फा० फासुक ए० एपणिक ला० भासहोने प० ग्रहण करे प० प्रथमा प मति
मा अ० अथ अ अपर दो० द्वितीया प० प्रतिमा से० वे भि० साधु साध्वी पे० देख देखकर व० वस्त्र
मा० याचे वं० यह ज० यथा गा० गृहस्थ जा० यावत् क० नोकरनी से वे पु पहिलेही आ० कहे
आ० आयुष्मन् भ० भगिन दा० देवोगे मे० मुझे ए० इसमेंसे अ अन्यतर व० वस्त्र ? त० तथा प्रकार
का व० वस्त्र स० स्वयं जा० याचे प० अन्य से० उसे दे० देवे जा० यावत् फा० फासुक ए० एपणिक
ला० मिलेतो प० ग्रहण करे दो० द्वितीया प० प्रतिमा ( २ ) अ० अथ अ० अपर त० तृतीया प० प्रतिमा

त्थ सय वा ण जाएज्जा परोवा ण देज्जा फासुय एसणीय लाभे सते पडिगाहेज्जा
पढमा पडिमा ॥ १ ॥ अहावरा दोच्चा पडिमा से भिक्खू वा ( २ ) पेहाए २ वत्थ
जाएज्जा तंजहा गाहावती वा जाव कम्मकरी वा से पुव्वामेव आलोएज्जा 'आउ
सोत्ति वा, भगिणित्ति वा, दाहिसि मे एत्तो अण्णयरं वत्थं" ? तहप्पगारं वत्थं स
य वा ण जाएज्जा परो वा से देज्जा, जाव फासुय एसणीय लाभे सते पडिग्गाहेज्जा

करना वैसा कपडा स्वतः याचते या गृहस्थ देते निर्दोष होवे तो ग्रहण करना दूसरी प्रतिमा यह है कि
साधु तथा साध्वीको अपने जरूरतके वस्त्र गृहस्थके घर देख कर याचना प्रारंभ में ही गृहस्थके
घरके मनुष्यों को देख कर कहना कि हे आयुष्मन् या भगिनि मुझे तुम्हारे इस वस्त्र में से एकाद वस्त्र

सं० वे भि० साधु साध्वीसे०वे उं० जो पु० और व० वस्त्र जा० जाने त० वह अ० यथा अ० अंदर पहिना उ० ऊपरके वस्त्र त० तैसा व० वस्त्र स० स्वयं जा० याचे आ०यावत् प०ग्रहण करे त० तृतीया प०प्रतिज्ञा (३) अ० अथ अ० अपर च० चतुर्थी प० प्रतिज्ञा से० वे भि साधु साध्वी उ० न्हांखने योग्य व० वस्त्र जा० याचे ज० जिसको ब० अन्य ब०बहुत स० शाक्यादि साधु मा० ब्राह्मण अ० अतिथि कि० कृपण, व० भिक्खारी ण० नहीं अ० वांछे त० तथा प्रकारका उ० न्हांखने योग्य व० वस्त्र स० स्वय

दोघा पडिमा ॥ २ ॥ अहावरा तच्चा पडिमा से भिक्खू वा ( २ ) स जं पुण वत्थ जाणेज्जा तजहा—अतारेज्जगं वा, उत्तरिज्जग वा, तहप्पगारं वत्थ सयं वा ण जाएज्जा जाव पडिग्गाहेज्जा तच्चा पडिमा ॥ ३ ॥ अहावरा चउत्था पडिमा से भिक्खू वा ( २ ) उज्झियधम्मियं वत्थ जाएज्जा जं चण्णे बहवे समण माहण अतिहि किवण वणिमगा णावकखंति तहप्पगार उज्झियधम्मियं वत्थं स-

देवेगे। इस तरह वस्त्र याचते गृहस्थ वस्त्र देवे सो निर्दोष जानकर ग्रहण करना तीसरी प्रतिज्ञा गृहस्थने अंदर पहिना हुवा या बाहिर पहिना हुवा वस्त्र याच कर लेना या गृहस्थ देता होवे सो निर्दोष जानकर ग्रहण करना चौथी प्रतिज्ञा मुनि तथा आर्या को फेंकने योग्य वस्त्र याचना कि जो वस्त्र अन्य श्रमण

आ० याचे प० अन्य से० उसे दे० देवे फा० फासुक जा० यावत् प० ग्रहणकरे च० चतुर्थी प० प्रतिज्ञा इ० यह च० चार प० प्रतिज्ञा ज० जैसे पिं० पिण्डैषणा में. ॥ ८ ॥ सि० कदाचित् वी० इन ए० एषणा से ए० गवेषते प० अन्य म० कोई आ० आयुष्मन् स० साधु ए० आव तु० तुम मा० माससे, द० दशरात्रि से, पं० पांचदिन से सु० कल, सु० परसों तो तब दे० तुमको म० हम आ आयुष्मन् अ० अन्य तर व० वस्त्र दा० देवेंगे त० तथा प्रकार का णि० शब्द सो० सुनकर णि० अवधार कर से० वे पु०

ये वा ण जाएज्जा परो वा से देज्जा फासुयं जाव पडिग्गाहेज्जा चउत्था पडिमा ॥ ४ ॥ इच्चेयाणं चउण्हं पडिमाणं जहा पिंडेसणाए ॥ ८ ॥ सिया णं तीए ए सणाए एसमाणं परो वदेज्जा आउसतो समणा एज्जाहि तुमं मासेण वा, दसराएण वा, पंचराएण वा, सुए वा, सुयतरे वा, तो ते वयं आउसो अण्णयरं वत्थं दास्सामो त हप्पगारं णिग्घोसं सोच्चा णिसम्म से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसोत्ति वा भइणि

ब्राह्मण, मुसाफीर या भिखारी इच्छे नहीं ऐसा वस्त्र याच कर लेवे या गृहस्थ देवे तो लेवे यह चारों प्रकार की प्रतिज्ञा का विशेष खुलासा पिण्डैषणा अध्ययनसे धारना ॥ ८ ॥ पूर्वोक्त प्रतिज्ञानुसार वस्त्र की याचना करने वाले कोई गृहस्थ कहे कि अहो आयुष्मन् साधु तुम एक मास, दशदिन, पांच दिन, रहकर या कल या परसों आना मैं तुम को वस्त्र देऊंगा ऐसा वचन सुन कर साधु को उत्तर देना चाहिये कि

परिलेही आ० कहे आ० आयुष्मत् भ० भगिनी णो० नहीं स० निश्चय मे मुझे क० कल्पताहै ए० ऐसा स० सुरतका व० वचन प० सुनने को अ० इच्छतोहो मे० मुझे दा० देनेको इ० अधुनाही द० देवो से० वे ए० एसा व० बोलते को प० अन्य व० बोले आ० आयुष्मन् स० श्रमण अ० पीछे आवो तो० तब ते० तुमको व० हम अ० दूसरा व० वस्त्र दा० देवेंगे से० वे पु० पहिलेही आ० कहे आ आयुष्मन् भ० बहिन णो० नहीं स निश्चय मे० मुझे क० कल्पताहै ए० ऐसा म० सुरत का व वचन प० सुनने को अ० इच्छतेहो मे० मुझ दा० देनेको इ० अधुनाही द० देवो से वे से० एसा व० बोलते को प० अन्य णे० लेजाने वाला व० बोले आ० आयुष्मन् भ० बहिन आ० लाव ए० यह व० वस्त्र स० साधुको दा०

वि वा णो खलु मे कप्पति एयप्पगारे सगारे वयणे पडिसुणेत्तए अभिकखं-
सि मे दातु इयाणि मेव दल्याहि सेणेव वयत परोवदेज्जा आउसतो सम
णा अणुगच्छाहि तो ते वय अण्णयर वत्थं दास्सामो से पुव्वामेव आलोएज्जा,
आउसो ति वा भइणि ति वा णो खलु मे कप्पइ एयप्पगारे संगारे वयणे पडि
सुणेत्तए अभिकखसि मे दातु इदाणिमेव दल्याहि से सेव वयत परो णेत्ता वदे-

ऐसा सुरत का वचन सुनना मुझे कल्पता नहीं है यदि वस्त्र देने की तुम्हारी इच्छा होवे तो अधुना ही देवो ऐसा सुन गृहस्थ कहे अरु ठेरो मैं तुम को वस्त्र देऊंगा, तब साधु को कहना की यहभी मुझे नहीं

देवेंगे अ० अपि व० अपन प० पीछेसे अ० अपने स० लिये पा० माणी, भू० भूत जी० जीव स० सत्वका स आरंभ कर स० उद्देश कर जा० यावत् चे० बनावेंगे ए० ऐसा णि० शब्द सो० सुनकर णि० अवधार कर त० तथा प्रकार का व० वस्त्र अ० अप्रासुक जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे ॥ १ ॥ सि० कदाचित् प० दूसरा णे० लेजाने वाला व० बोले आ० आयुष्मन् भ० बहिन आ० ला ए० यह व० वस्त्र सि० सुगंधि

ज्जा "आउसोत्ति वा भइणित्ति वा आहरेय वत्थ, समणस्स दास्सामो, अवियाइं वयं पच्छावि अप्पणो समट्ठाए पाणाइं, भूयाइं, जीवाइं, सत्ताइं समारम्भ समुद्दिस्स जाव चेइस्सामो" एयप्पगारं णिग्घोस सोच्चा णिसम्म तहप्पगारं वत्थं अफासुयं जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १ ॥ सिया णं परो णेत्ता वएज्जा आउसोत्ति वा भगिणि त्ति वा आहरेयं वत्थं सिणाणेण वा जाव आघंसित्ता वा, पघंसित्ता वा, समण

कल्पता है देना होवे तो अधुनाही देदो ऐसा सुन गृहस्थ अपने घरके मनुष्यों से कहे कि अमुक वस्त्र साधु को देदो. अपने लिये माणी, भूत, जीव, सत्व की घात कर नया वस्त्र बनावेंगे ऐसा वचन सुन साधुको उसी समय वहांसे पीछा लौटना, परंतु ऐसा सदोष वस्त्र ग्रहण करना नहीं ॥१॥ कदाचित् मुनिको लेजाने वाला गृहस्थ कहे की अहो आयुष्मन् या बहिन उस वस्त्रको लावो इसको यहां अपन सुगंधि द्रव्यसे

पहिलेही आ० करे आ० आयुष्मन् भ० भगिनी णो० नहीं ख० निश्चय मे० मुझे क० कल्पता है ए० ऐसा स० मुखका व० वचन प० सुनने को अ० इच्छतीहो मे० मुझे दा० देनेको इ० अधुनाही द० देवो से० वे ए० ऐसा व० बोलते को प० अन्य व० बोले आ० आयुष्मन स० श्रमण अ० पीछे आवो तो० तब ते० तुमको म० हम अ० दूसरा व० वस्त्र दा० देवेंगे से० वे पु० पहिलेही आ० करे आ० आयुष्मन् भ० भगिन णो० नहीं ख० निश्चय मे० मुझे क० कल्पता है ए० ऐसा म० मुख का व० वचन प० सुनने को अ० इच्छतेहो मे० मुझ दा० देनेको इ० अधुनाही द० देवो से० वे से० ऐसा व० बोलते को प० अन्य ने० लेजाने वाला व० बोले आ० आयुष्मन् भ० भगिन आ० लाव ए० यह व० वस्त्र स० साधुको दा०

त्ति वा णो खलु मे कप्पति एयप्पगारे सगारे वयणे पडिसुणेत्तए अभिकखं-सि मे दातु इयाणि मेव दलयाहि सेणेव वदत परोवदेज्जा आउसतो समणा अणुगच्छाहि तो ते वय अण्णयर वत्थ दास्सामो से पुव्वामेव आलोएज्जा, आउसो ति वा भइणि ति वा णो खलु मे कप्पइ एयप्पगारे सगारे वयणे पडिसुणेत्तए अभिकखसि मे दातु इयाणिमेव दलयाहि से सेव वदतं परो णेत्ता वदे-

ऐसा मुख का वचन सुनना मुझे कल्पता नहीं है यदि वस्त्र देने की तुम्हारी इच्छा होवे तो अधुना ही देवो ऐसा सुन गृहस्थ कोई नहीं देवे मैं तुम को वस्त्र देऊंगा, तब साधु को कहना कि यहभी मुझे नहीं

व० वस्त्र सी० सीतल पानी वि० अचित्त उ० ऊष्ण पानी वि० अचित्तसे उ० धोकर प० साफकर स० साधुको दा० देवेंगे ए० ऐसा णि० शब्द सो० सुनकर णि० अवधारकर से० वे पु० पहिले ही आ० कहे आ० आयुष्मन् भ० भगिन मा० मत ए० यह तु० तुम व० वस्त्र सी० शीतोदक वि० अचितसे उ० ऊष्णोदक अचित्तसे उ० धोना प० साफकरो अ० इच्छतेहो से० शेष त० तैसेही आ० यावत् णो० नहीं प० ग्रहणकरे ॥ ११ ॥ स० वे घे० लेजानेवाला व० वाले आ० आयुष्मन् भ० भगिन आ० स्म ए०

से ण परो णेत्ता वदज्जा आउसो त्ति वा भइणि त्ति वा आहर एत वत्थ सीओदगवियडेण वा, उसीणोदगवियडेण वा, उच्छोलेत्ता वा, पधोवेत्ता वा, समणस्स दास्सामो एयप्पगारं णिग्घोसं सोच्चा णिसम्म से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसोत्ति वा, भइणि त्ति वा, मा एय तुमं वत्थं सीओदगवियडेण वा, उसीणोदगवियडेण वा, उच्छोलेहि वा, पधोवेहि वा, अभिकखसि मेस तहेव जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ ११ ॥ से ण परो णेत्ता वदेज्जा "आउसो त्ति वा भइणि

ष्मन् या भगिन, उस वस्त्र को यहां लाओ अपन उस को ठंडा या ऊष्ण पानी से धोकर साधु को देवेंगे, ऐसा सुन साधु या गृहस्थ से ऐसे करने की मनाइ करना, और कहना कि यदि तुम देना चाहते होतो ऐसा ही वस्त्र दो ऐसा कहने पर भी गृहस्थ साधु के लिये ठंडा या गरम पानी से वस्त्र धोकर देवे तो ग्रहण करना नहीं ॥ ११ ॥ साधु से लेजानेवाला गृहस्थ उस वस्त्र में कंद मूल, हरी आदि सचित्त वस्तु को

यह व० वस्त्र कं० कंदको जा० यावत् ह० हरी वनस्पति को वि० दूरकर स० साधुको दा० देवेंगे ए० ऐसा पि० शब्द सो० सुनकर पि० अवधारकर जा० यावत् भ० भगिनी मा० मत ए० यह तु० तुम कं० कंद जा० यावत् वि० दूरकरो णो० नहीं स० निश्चय मे० मुझे क० कल्पताहै ए० ऐसा व० वस्त्र प० ग्रहण करने को से० वे से० ऐसा व० बोलतेको प० अन्य कं० कंदको जा० यावत् वि दूरकरके द० देवे त० तैसा व० वस्त्र अ० अप्रासुक जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे ॥ १२ ॥ सि० कदाचित् से० वे

त्ति वा, आहरेत वत्थ कंदाणि वा जाव हरियाणि वा, विसोधेत्ता समणस्स दा-स्सामो" एयप्पगारं णिग्घोसं सोच्चा णिसम्म जाव भइणि त्ति वा मा एयाणि तुम कंदाणि वा जाव विसोहेहि णो खलु मे कप्पति एतप्पगारे वत्थे पडिग्गाहित्तए से सेव वदतस्स परो कंदाणि वा जाव विसोहेत्ता दलएज्जा तहप्पगारं वत्थ अफासुय जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १२ ॥ सिया से परो णेत्ता वत्थं णिसिरेज्जा, से पु-

दूरकर साधु को देवे ऐसा उन का वचन सुनकर साधु को कहना कि अहो आयुष्मन् गृहस्थ ! या बहिन ! तुम इस को मत दूर करो मनाई करने पर भी गृहस्थ देवे तो उसे अप्रासुक जानकर ग्रहण नहीं करना ॥ १२ ॥ साधु को वस्त्र देने के लिये लेजानेवाला गृहस्थ साधु को वस्त्र देवे तब पहिले

प० अन्य घे० लेजाने वाला व० वस्त्र पि० देवे से० वे पु० पहिले ही आ० कहे आ० आयुष्मन् भ० ब हिन तु० तुम घे० निश्चय सं० तुम्हारा यह व० वस्त्र भ० चारों तरफ प० देखूंगा के० केवल ज्ञानीने बू० कहा आ० पापस्थान ए० यह व० वस्त्र के पल्ले में ओ० बन्धाहो सि० कदाचित् कु० कुण्डल, गु० कन्दो रा हि० चांदी सु० सुवर्ण, म० मणि, जा० यावत् र० रत्नावली हार पा० प्राणी बी० बीज ह० हरी वन स्पति अ० अब भि० साधुको पु० पहिले उपदेश जा० यावत् जं० जो पु० पहिलेही व० वस्त्र अं० घा

व्वामेव आलोएज्जा "आउसो त्ति वा, भइणि त्ति वा, तुम चेवणं संतियं वत्थ अतो अतेण पडिलेहिस्सामि" केवली बूया "आयाणमेय" वत्थतेण ओबद्धेसिया कुंडले वा, गुणे वा, हिरण्णे वा, सुवण्णे वा, मणी वा, जाव रयणावली वा, पाणे वा, बीए वा, हरिए वा, अह भिक्खूण पुव्वोवदिठ्ठा जाव जं पुव्वामेव वत्थ अतोअंतेण पडि

से ही साधु उस गृहस्थ को कहे कि अहो आयुष्मन् गृहस्थ या बहिन इस वस्त्र को चारों तरफ देखे बाद ग्रहण करूंगा जो साधु अन्दर बाहिर चारों तरफ बिना देखे ग्रहण करेगा तो वह दोषपात्र होगा ऐसा केवलज्ञानी का फरमान है क्यों की उस के किसी विभाग में कुंडल, सांकल, चांदी सुवर्ण, मणि, या रत्न की माला वगैरह बंधे हुवे होवे अथवा उस को बीज जंतु धान्य आदि लगे हुवे होवे इस लिये

प० ग्रहण करे ॥ १ ॥ से० व भि० साधु साध्वी से० वे जं जो पु० फीर व० वस्त्र जा० जाने अ० अल्प अण्डे मा० यावत् सं० मकडीके जाने अ० पूर्ण थि० तरा धु० ध्रुव धा० धारन करने योग्य रो० दे पेतो रु० रुचतो त० तैसा प० प्र० प्रा० फासुक जा० यावत् प० ग्रहण करे ॥ १६ ॥ से व भि० साधु साध्वी णो० नहीं ण० नवा प मता व० वस्त्र चि० इति क० करके णो० नहीं प०प्रधुयोदा सि० सुगाभि द्रव्यसे जा० यावत प० लिप्त करस्ये ॥ १७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी णो० नहीं ण० नविन मे० मेरे

हज्जा ॥ १५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण वत्थ जाणेज्जा अप्पंड जाव स ताणग अल थिर, धुव, धारणिज्ज, रोइज्जतं रुच्चइ तहप्पगार वत्थ फासुय जाव प डिग्गाहज्जा ॥ १६ ॥ से भिक्खू वा [ २ ] णो णवए मे वत्थे चिकट्टु णो व हुदेसिएण सिणाणेण वा जाव पघंसेज्जा ॥ १७ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) णो

वस्त्र पसंद न आवे सो ग्रहण करना नहीं ॥१५॥ जो वस्त्र, अण्डे, जाले, आदि रहित, चाहिये इतना लम्बा, चौडा, नया, बहुत काल चले ऐसा, साधु को पहिनने योग्य, श्रावगा, स्त्रा के लिये उतारने दिया होवे और पसंद पडता होवे सो ग्रहण करना ॥ १६ ॥ साधु साध्वी को मेरा वस्त्र नया नहीं है अर्थात् पुराना होगया है ऐसा विचार कर उसे थोडा बहुत सुगंधि द्रव्य से उसे घसना नहीं मसलना नहीं ॥ १७ ॥

म० वस्त्र पि० ऐसा करके णो० नहीं ब० बहुधोदा सी० शीतोदक मि० अचित्तसे जा० यावत् प० धोवे ॥ १८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी दु० सराब मे मेरे व० वस्त्र पि० ऐसा क० करके णो० नहीं ब० ब[illegible] सि० सुगन्धि द्रव्य से त तसेही सी शीतोदक अचित्त से या० या उ० उष्णोदक अचित्त से [illegible]० आलापक. ॥ १९ ॥ से भि० साधु साध्वी अ० वांछे व० वस्त्र आ० तपाने को प० विशेष तपाने को त० तथा प्रकारका व० वस्त्र णो० नहीं अ० सचित्त पु० पृथ्वीपर णो० नहीं स० स्निग्ध मा० या

णवए मे वत्थे त्तिकट्टु णो बहुदेसिएण सीतोदगवियडेण वा जाव पधोवेज्जा ॥१८॥ से भिक्खू वा ( २ ) दुब्भिगंधे मे वत्थे त्तिकट्टु णो बहुदेसिएण सिणाणेण वा तहेव सीतोदगवियडेण वा, उसिणोदगवियडेण वा, (आलावओ) ॥ १९ ॥ से भिक्खू वा, ( २ ) अभिकंखेज्ज वत्थं आयावेत्तए वा, पयावेत्तए वा, तहप्पगारं वत्थं णो अणंतरहियाए पुढवीए णो ससणिद्धाए जाव सत्ताणाए आयावेज्ज वा पयावे

इस तरह पुराना वस्त्र को शीतल या उष्ण जल से भी धोना नहीं ॥ १८ ॥ साधु साध्वी को वस्त्र दुर्गन्धि वना हुवा मानकर सुगन्धि द्रव्य से या शीतोष्ण पानी से धोकर साफ करना नहीं ॥ १९ ॥ साधु साध्वी को वस्त्र सुकाने की जरूरत पडे तो सचित्त पृथ्वी या पानी हरी यावत् जालेवाली पृथ्वीपे सुकाना नहीं

स्य सं० आते युक्त आ० तपावे प० तवन तपावे ॥२०॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांच्छे व० वस्त्र आ त-
पानेको प० विशेष तपाने को त० तथा प्रकारका व० वस्त्र थू० स्थूणीपे, गि० द्वारपे, उ० ऊखलपर, का० स्नानके
पाटपर अ० अन्यतर वा० वा त० तथा प्रकारके अं० अंतरिक्ष रही हुइ दु० खराब बन्धि हुइ चु० अस्थिर च०
चल चल, णो नहीं आ० तपाने णो० नहीं, प० विशेष तपावे ॥ २१ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ०
वांच्छे व० वस्त्र आ० तपाने को प० विशेष तपाने को त० तथा प्रकारका व० वस्त्र कु० भितिपर, भि०

ज वा ॥ २० ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अभिकंखेज्जा वत्थ आयावेत्तए वा, पया-
वेत्तए वा, तहप्पगार वत्थं थूणंसि वा, गिहेलुगंसि वा, उसुयालंसि वा, कामजलंसि
वा अण्णयरे वा तहप्पगारे अतलिक्खजाए दुब्बद्धे, दुन्निक्खित्ते, अणिकंपे चलाच-
ले णो आयावेज्ज वा णो पयावेज्ज वा ॥ २१ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अभिक
खेज्जा वत्थं आयावेत्तए वा, पयावेत्तए वा, तहप्पगारं वत्थं कुलियांसि वा भित्तिंसि

॥ २० ॥ साधु साध्वी को वस्त्र सुकाने की जरूरत होवे तो काष्ट की स्थूणी पे, घरके द्वार पे, ऊखल,
स्नान का बाजोठ या अन्य कोइ ऐसा डगमगता स्थान पर सुकावे नहीं ॥ २१ ॥ साधु साध्वी को कपडा
सुकाने की जरूरत पडे तो मकान की भित्ति पर, नदी के तटपर, पहाड, सिला, या सचित्त कंकर पर

नदीतटपर, से० पाषाणपर, से० वेलुपर, अ० अन्य त० तथा प्रकार के अ० अंतरिक्ष जा० यावत् णो० नहीं आ० तपावे प० विशेष तपावे ॥ २२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांछे व० वस्त्र आ० तपाने को प० विशेष तपाने को त० तथा प्रकारका व वस्त्र खं० स्कंधपर म० मांचापर मा० मालेपर, पा० मा सादपर, ह० हर्म्यतलपर अ० अन्य अ० अंतरिक्ष जा० यावत् णो० नहीं आ० तपावे प विशेष तपावे ॥ २३ ॥ से० वे तं० उसे आ० ग्रहण कर ए० एकान्तमें ग० जावे अ० नीचे झा० दग्धजमीन जा० याव

वा, सेलंसि वा, लेलुंसि वा, अण्णतरे वा, तहप्पगारे अतलिक्खजाए जाव णो आया-वेज्ज वा पयावेज्ज वा ॥ २२ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अभिकंखेज्जा वत्थ आया-वेत्तए वा पयावेत्तए वा तहप्पगारे वत्थे खधंसि वा ( २३ ) मचंसि वा, मालंसि वा, पासायंसि वा, हम्मियतलंसि वा, अण्णयरे वा, अतलिक्खजाए जाव णो आया वेज्ज वा पयावेज्ज वा ॥ २३ ॥ से त मायाय एगत मवक्कमेज्जा अहेज्झामथंडिलं-

सुकावे नहीं ॥२२॥ साधु साध्वी को किसी वस्तुके ढगपर, मांचा, मालम, घर की हवेली, इत्यादि ऊंच स्थान पर वस्त्र सुकाना नहीं ॥ २३ ॥ साधु साध्वी को वस्त्र सुकाने की जरूरत होवे तब नीचे सपाट साफ भूमि कि जहां सचित्त मिट्टि, पानी, हरी आदि न होवे ऐसा एकान्त स्थान को द्रष्टि से देख कर रजोहरण से

सू अ० अन्य त० तथा प्रकारकी थं० स्थंडिलमें प० देख कर २ प० पूंजकर २ त० तत्र स० साधु व० वस्त्र आ० तपावे प० विशेष तपावे ॥ २४ ॥ पूर्ववत् ॥ २५ ॥

*　　*

से वे भि० साधु साध्वी अ० अथ ए० एषणिक व वस्त्र जा० याचे अ जैसा ग्रहण किया व० वस्त्र धा० धारणकरे णो० नहीं धो० धोवे णो० नहीं र० रंग णो० नहीं धो० धुपा या रंगाहुवा व० वस्त्र

सि वा जाव अण्णयरांसि वा तहप्पगारांसि थंडिलांसि पडिलेहिय २ पमज्जिय २ ततो संजयामेव वत्थ आयावेज्ज वा पयावेज्ज वा ॥ २४ ॥ एय खलु तस्स भि क्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ २५ ॥ इति वत्थेसणाज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो

*　　*　　*　　*

स भिक्खू वा ( २ ) अहेसणिज्जाइं वत्थाइं जाएज्जा अहापरिग्गहाइं वत्थाइं धा- रेज्जा णो धोएज्जा णो रएज्जा णो धोयरत्ताइं वत्थाइं धारेज्जा अपलिउंचमाणे गा

पूंजकर फिर वहां वस्त्र सूकावे ॥ २४ ॥ उक्त विधि अनुसार साधु साध्वी की वस्त्र ग्रहण करने की समाचारी है यह वस्त्रैषणा नामक चतुर्दश अध्ययन का प्रथम उद्देशा समाप्त हुआ आगे वस्त्र ग्रहण करने की आज्ञा बताते हैं

*　　*　　*

साधु साध्वी को वस्त्र अच्छा करना नहीं, जैसा मिले वैसाही पहिनना उस को धोना नहीं, रंगना नहीं,

धा० धारण कर अ० बिना छिपाये गा० अन्य ग्राम भो० तादृश वस्त्र धारन करने वाला ए० यह व० विषय व० वस्त्रधारी का सा० आचार ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थका कु० कुलमें पिं० आहार लेनेिये प० प्रवेश करने की इच्छा वाला, स० सर्व ची० वस्त्र आ० लेकर गा० गृहपतिके घर पिं० आहार लेनेिये णि० नीकले प० प्रवेशकरे ए० ऐसे ब० बाहिर वि० स्वाध्याय स्थान वि० स्थंडिल स्थान गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे अ० अथ पु० फीर ए० ऐसा जा० जाने ति० बहुविस्तार वाला वा० वर्षा वा० वर्षता हुवा पे० देखकर अ० जैसा पिं० आहारैषणा ण० विशेष स० सर्व ची० वस्त्र मा० ग्रहण कर ॥२॥

मनेरसु ओमचोलिए एय खलु वत्थधारिस्स सामग्गिय ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावइ कुलं पिंडवायपडियाए पविसिउकामे सव्वं चीवर मायाए गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए णिक्खमेज्ज वा पविसेज्ज वा ॥ एवं बहिया वियारभूमिं विहारभूमिं वा गामाणुगाम दूइज्जेज्जा अह पुण एवं जाणेज्जा तिव्वदेसियं वा वास वासमाणं पेहाए, जहा पिंडेसणाए णवर सव्वं चीवर मायाए ॥ २ ॥ से

और पोपा हुवा रंगाहुवा वस्त्र पहिनना नहीं और ग्रामान्तर जाते अपना वस्त्र छिपाना नहीं यह वस्त्रधारी मुनि का आचार है ॥ १ ॥ साधु तथा साध्वी को भिक्षा लेने जाते या स्थंडिल भूमि जाते अपना सर्व वस्त्र साथ लेकर जाना बादि वर्षा होवे तो पिंडैषणा में कहे मुजब वर्तना ॥ २ ॥ किसी मुनि की पास से

से० वे ए० कोइ मु० मुहूर्त मात्र प० पीछादेनेका व० वस्त्र जा० यावे जा० यावत् ए० एकदिन से, दु० दोदिनसे ति० तीन दिनसे च० चारदिनसे पं० पांचदिनसे वि० अन्य स्थान रहकर उ० आवे त० तथा प्रकारका व० वस्त्र णो० नहीं अ० स्वयं गि० ग्रहणकरे णो० नहीं अ० परस्पर दे० देवे णो० नहीं पा० उधार कु० करे णो नहीं व० वस्त्र से व० वस्त्र का बदला कु० करे णो०नहीं प० अन्य की उ० पा सजाकर ए० ऐसा व० को आ० आयुष्मन् स० श्रमण अ० इच्छवारे व० वस्त्र धा० धारण करने को प०

एगइओ मुहुत्तग पाडिहारिय वत्थ जाएज्जा जाव एगाहेण वा, दुयाहेण वा, तियाहेण वा, चउयाहेण वा, पंचाहेण वा, विप्पवासिय, उवागच्छेज्जा तहप्पगार वत्थ णो अप्पणा गिण्हेज्जा, णो अण्णमण्णस्स देज्जा, णो पामिच्च कुज्जा, णो वत्थेण व त्थपरिणाम करेज्जा णो पर उवसंकमित्तु एवं वदेज्जा "आउसंतो समणा ! अभिकस्ख

कोइ मुनि दो घडी, या एक, दो, तीन, चार या पांच दिन तक वस्त्र वापरने के लिये उधार मांगकर उत नादिन अन्य ग्राम जाकर फिर पीछा आते उस वस्त्र को पीछा देवे तो उस को मुनिने अपने लिये लेना नहीं, या दूसरेको दिलाना नहीं, और उधार भी रखना नहीं, अधुना तुम रखो, बाद में मुझे देना ऐसा भी करना नहीं, या उस के बदल दूसरा वस्त्र लेना नहीं, या दूसरे को भी ऐसा कहना नहीं कि तुम को चाहिये

छोडने को दि० मवतुन णो० नहीं प० टुकडाकर (०) प० परठवे त० तथा मकारका व० मीचाहुवा व० वस्त्र न० उसको दी णि० दुर णो० नहीं भ० आप मा० भोगवे ॥ ३ ॥ से० वे ए० कितनेक त० तथा प्रकार रा णि० उन्द मो० सुनकर णि० अवधारकर ज० जो भ० साधु त० तथा प्रकार का व० वस्त्र स० म पाइया मु० मुहूर्त केम्पिय जा० यावत् जा० पावत् ए० एकदिनमे दु० दोदिनमे, ति० तीन दिनमे च० चारदिन मे पं० पांचदिन मे वि० दूसर स्थान रहकर उ० आवे त० तथा प्रकार के व० वस्त्र णो० नहीं भ० मार ग० ग्रहणकर भ० परस्पर भ० देवे तं० उसे त० निश्चय जा० पावत् णो० नहीं सा० भोगवे

मि वत्थ धारेत्तए वा, परिहरित्तए वा थिर वा ण सतं णो पलिच्छिदिय २ परिट्ठवे ज्जा तहप्पगारं ससधित वत्थ तस्स चेव णिसिरेज्जा णो अत्ताणं साइज्जेज्जा ॥ ३॥ से एगतिओ तहप्पगारं णिग्घोस सोचा णिसम्म जे भयंतारो तहप्पगाराणि वत्था णि ससधियाणि मुहुत्तगं २ जाइत्ता जाव एगाहेण वा, दुयाहेण वा, तियाहेण वा, चउयाहेण वा, पंचाहेण वा, विप्पवासिय २ उवागच्छंति तहप्पगाराणि वत्थाणि णो अप्पणो गेण्हंति अण्णमण्णस्स अणुवयंति त चेव जाव णो सातिज्जति बहुवयणेण

गो भो, परि शह वस्त्र बहुत मूल्य वाले जैसा होवे तो उसे बांधना नहीं, परन्तु ऐसा वस्त्र जो पीछा देने को आवे होवे उन को दे देवे ॥ ३ ॥ उक्त कथनानुसार बहुत साधुओं के पास से बहुत साधु उधार वस्त्र प्रकार मन्न आप गये होवे और एक दो या पांच दिन बाद पीछे आकर उसी वस्त्र को पीछा देवे तो

व० बहु वचन से भा० कहना ॥ ८ ॥ से० वे इ० अवोधनार्थ म० मैं भी मु० मुहूर्तमात्र प० पीछादेने का
व० वस्त्र जा० याचकर जा० यावत् ए० एकादिन से दु० दोदिन से ति० तीनदिनसे च० चारदिनसे पं०
पांचदिनसे प० अन्यत्र रहकर उ० आवूंगा, अ० अपि ए० यह म० मेराही सि० कदाचित् मा० माया
स्थान सं स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क० करे ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी णो० नहीं व० अच्छ
व० वस्त्र वि० खराब क० करे णो० नहीं वि० खराब व० अच्छ क० करे अ० अन्य व० वस्त्र
ल० प्राप्त करूंगा त्ति० ऐसा क० करके अ० परस्पर दे० देवे णो० नहीं पा० उधार कु० करे णो०

मासियव्व ॥ ४ ॥ से हंता "अहमवि मुहुत्त परिहारियं वत्थ जाइत्ता जाव एगाहे
ण वा, दुयाहेण वा, तियाहेण वा, चउयाहेण वा, पंचाहेण वा, विप्पवसिय २ उवा
गच्छिस्सामि अवियाइ एयं ममेव सिया" माइट्ठाण संफासे णो एव करेज्जा ॥ ५ ॥
से भिक्खू वा (२) णो वण्णमंताइ वत्थाइ विवण्णमंताइ करेज्जा णो विवण्णाइ
वण्णमंताइं करेज्जा "अण्ण वा वत्थं लभिस्सामि त्तिकट्टु" अण्णमण्णस्स देज्जा, णो

उक्त विधि अनुसार वे साधु उसे रक्खें नहीं अपितु जो लाया होवे उसे ही दे देवे ॥४॥ उक्त बात सुनकर
कोइ साधु ऐसा चिन्तवे कि मैं इसी तरह उधारा वस्त्र लेकर दूसरे ग्राम जाकर वस्त्र को खराब कर लाऊंगा
तो वे वस्त्र मुझे ही मिलेगा जो ऐसा विचार करेगा वह दोषपात्र होगा इस लिये ऐसा विचार करना
नहीं ॥ ५ ॥ साधु साध्वी चोरों के डर से अपने वस्त्रों सुशोभित के खराब करे नहीं और खराब के सुशो

नहीं प० वस्त्रमें व० वस्त्र के बदल क० करे णो० नहीं प० अन्यकी पास उ० जाकर ए० ऐसा व० बोले आ आयुष्मन् स० श्रमण अ इच्छतेहो मे० मेरा व० वस्त्र धा० पहिनने को पा० या प० पीछादेने को थि० मजबूत स० होवे दुवे णो नहीं प० टुकडे कर २ के प० परिठवे ज० जैसे चे यह व० वस्त्र पा० पापकारी प० अन्य म० मानताहे प० दूसरे अ० चोरको प० मार्गमें पे० देखकर त० उस व० वस्त्र को णि० रखने में णो० नहीं ते० उनसे भी० डरकर उ० उन्मार्ग ग० जावे आ याव त अ० अल्प उत्सुक जा० यावत् व० वच स० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ ६ ॥ से०

पामिच्च कुज्जा, णो वत्थेण वत्थपरिणामं करेज्जा णो पर उवसंकमित्तु एवं वदेज्जा आउसंतो समणा ! अभिकंखासि मे वत्थं धारित्तए वा परिहरित्तए वा थिरं वा ण संतं णो पलिच्छिंदिय २ परिट्ठवेज्जा जहाचेयं वत्थं पावगं परो मण्णइ परं च ण अदत्तहारिं पडिपहे पेहाए तस्स वत्थस्स णिदाणे णो तेसिं भीओ उम्मग्गेण ग च्छेज्जा जाव अप्पुस्सुए जाव ततो संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ६ ॥ से

मित करे नहीं मुझे अन्य अच्छा वस्त्र मिलेगा इस विचार से अपना वस्त्र दूसरे साधु को देना नहीं किसी को उधार वस्त्र देना नहीं, अदल बदल भी करना नहीं दूसरे साधु को यह खराब वस्त्र लेने का पूछना नहीं जो खराब वस्त्र मजबूत पहनने जैसा होवे तो उसे फाडना नहीं डालना भी नहीं तथा रस्ते चलते चोरों को देख उन्मार्ग जाना नहीं किन्तु यत्नासे सदा विचरना ॥ ६ ॥ साधु साध्वी को विहार

व भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते अ० बिचमें वि० अटवि सि० कदाचित् से० वे ज्जं० को पु० फीर वि० अटवि जा० जाने इ० इस वि० अटविमें ब० बहुत आ० लूटारे व० वस्त्र कारिये स० छिपे हुवे णा० नहीं ते० उनसे भी डराकुना उ० उन्मार्ग ग० जावे जा० यावत गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ ७ ॥ से० व भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू विचरते अं० बिचमें आ० लूटारे सं० छिपेहुवे ग० जावे ते० वे आ० लूटारे ए० ऐसा व० बोले आ० आयुष्मन् स० श्रमण आ० ला ए० यह व० वस्त्र

भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगामं दूइज्जेज्जा अतरासे विहं सिया से ज्जं पुण विहं जाणेज्जा इमंसि खलु विहंसि बहवे आमोसगा वत्थपडियाए सपिंडिया णो तेसिं भीओ उम्मग्गेण गच्छेज्जा जाव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अतरासे आमोसगा सपिंडिया गच्छेज्जा ते ण आमोसगा एवं वदेज्जा "आउसतो समणा आहरेत वत्थ देहि निक्खिवाहि" जहा इरि

करते मार्ग में बड़ा जंगल आवे और वहां ऐसा मालूम पड़े कि यहां वस्त्र लूटने के लिये लूटारे छिपाये हैं तो धन से डरकर उन्मार्ग जाना नहीं किन्तु यत्नासे विहार करना ॥ ७ ॥ साधु साध्वी को विहार करते मार्ग में लूटारे मिले और कहे कि आयुष्मन्, तपस्वी यह वस्त्र ला या नीचे रखदे तो जैसे ईर्या अध्ययन में

२० ६ ति० नीरे म्म ज० जैमा इ० इगा अध्ययन में णा० विनेप व० यग कप्पिय ॥ ८ ॥ पुत्ता ॥१॥

गाए णाणत्त वत्थपडियाए ॥ ८ ॥ एय खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ज सव्वट्ठेहिं सहिएहिं मया जएज्जासि त्तिबेमि ॥ ९ ॥ इति वत्थेस णाज्झयणस्स बीओदेसो ॥ इति वत्थसणा चउद्दसमज्झयण सम्मत्त

हा ६ उम मुसाफीर पतना ॥८॥ उक्त प्रकार से वस्त्र धारन करनेकी साधु साध्वीकी समाचारी बतलाइ है इस मर भय मापने का मदा यत्नामे मरत ॥ ९ ॥ यह वस्त्रैषणा नामक चतुदश अध्ययन का द्वितीय उद्देशा समाप्त हुवा और चतुर्दश अध्ययन भी सपूर्ण हुवा आगे पात्र किस विधि से धारन करना यह बतान के लिय पात्रैषणा नामक पन्दरहवा अध्ययन कहते हैं ॥ * *

# ॥ पात्रैषणाख्य पंचदश मध्ययनम् ॥

से० वे भि साधु साध्वी अ० वांच्छे पा० पात्र ए० गवेषना करे से० वे अं० जो पु० और पा० पात्र जा० जान त० वह म० यथा ला० तुम्बी पात्र, दा० काष्ठ पात्र, म० मिट्टीपात्र त० तथा प्रकारका पा० पात्र प्र मा णि० साधु त युवान् मा पावत् थि दृढसंघयणी से पर ए एक पा० पात्र धा धा रण करे णा० नहीं बी० दूसरा ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी प० अधिक अ० अर्धयोजन से पा

से भिक्खू वा ( २ ) अभिकंखेज्जा पायं एसित्तए से ज्जं पुण पायं जाणेज्जा । त जहा लाउपायं वा, दारुपायं वा मट्टियापायं वा, तहप्पगारं पायं जे णिग्गंथे त रुणे जाव थिरसंघयणे से एगं पायं धारेज्जा णो बीयं ॥ १ ॥ से भिक्खू वा, भिक्खुणी वा परं अद्धजोयणमेराए पायपडियाए णो अभिसंधारेज्ज गमणाए

साधु साध्वी को जब पात्र की जरूरत होवे तब तुंबी का, काष्ठका, मिट्टी का, तथा ऐसा अन्य भी कोइ पात्र की याचना करना और जो मुनि युवान, बलवान तथा मजबूत होवे उन को पात्र एक ही पात्र रखना अपितु दूसरा नहीं रखना ॥ १ ॥ साधु साध्वी को पात्र की याचना करने को दो कोश से अधिक जाना

पात्र कल्पिय णा० नहीं अ० कल्पे ग० जाना ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज० जो पु० और पा० पात्र जा० जाने अ० इस केलिये ए० एक सा० साधु स० उद्देशकर पा० प्राणी ज० जैसा पिं० पिण्डैषा में च० चार आ० आलापक पं० पांचवा ब० बहुत स० साधु मा० ब्राह्मण प० गिनकर त० वैसे ही ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० असंयति भि० साधु केलिये ब० बहुत स० श्रमण मा० ब्राह्मण (व० वस्त्रैषणा का आ० आलापक ) ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज्ञा० जो पु० और

॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण पाय जाणेज्जा, अस्सिपडियाए एग सा हम्मिय समुद्दिस्स पाणाइं जहा पिंडेसणाए चत्तारि आलावगा पंचमे बहवे सम ण माहणा पगणिते तहेव ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) असंजए भिक्खुपडि याए बहवे समणमाहण ( वत्थेसणा लावओ ) ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा ( २ )

नहीं ॥ २ ॥ साधु तथा साध्वी को एक साधु के लिये प्राण, भूत, जीव, सत्व की घात कर जो पात्र तैयार किया होवे तो ग्रहण करना नहीं यहां पिण्डैषणा अध्ययन में कहे मुजब मानना ॥ ३ ॥ वैसे ही बहुत शाक्यादि साधु ब्राह्मण के आलापक वस्त्रैषणा अनुसार मानना ॥ ४ ॥ साधु साध्वी को सोने के, कथीर के, सीसे के, चांदी के सुवर्ण के पीतल के, पोलाद के, मणि के, काच के, कांसी के, शंख के,

पा॰ पात्र जा॰ जाने वि॰ विविध प्रकारके म॰ बहु मूल्यके तं॰ वह ज॰ यथा अ॰ लोहपात्र त॰ कथीर के पात्र त॰ ताम्रके पात्र सी॰ सीसेके, हि॰ सुवर्णके, री॰ पीतलके हा॰ पोलादके, पा॰ पात्र म॰ मणिके का॰ काचके कं॰ कांसीके स॰ शंख, सिं॰ शृंग, द॰ दांतके, चे कपडेके से॰ पाषाणके पा॰ पात्र च॰ चर्मके पात्र अ अन्य त॰ तथा प्रकारके वि॰ विविध म॰ बहुमूल्य पा॰ पात्र अ॰ अप्रासुक जा यावत् णो॰ नहीं प॰ ग्रहण करे. ॥ ५ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी से॰ वे ज्जा॰ जो पु॰ और पा॰ पात्र जा॰ जाने वि॰ विविध प्रकारके म बहुमूल्य बंधन वाले तं॰ वह ज॰ यथा अ॰ लोहेका बंधन वाले, जा॰

से ज्जं पुण पायाइं जाणेज्जा विरूवरूवाइं महद्धणमुल्लाइं त जहा अयपायाणि, वा, तओपायाणि वा, तंबपायाणि वा, सीसग हिरण्ण-सुवण्ण रीरिया-हारपुड पा याणि वा, मणि—काय—कंस—संख—सिंग—दंत—चेल—सेल पायाणि वा, चम्मपायाणि वा, अण्णयराणि वा, तहप्पगाराइं विरूवरूवाइं महद्धणमोल्लाइं पायाइं अफासु- याइं जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्जाइं पुण पाया इं जाणेज्जा विरूवरूवाइं महद्धणबंधणाणि वा तंजहा अयबंधणाणि वा जाव च

शृंग के दांत के, कपडे के, पाषाण के, चमडे के ऐसे अन्य भी किसी प्रकारके बहुमूल्य पात्र रखना नहीं ॥ ५ ॥ पूर्वोक्त पात्रों पर लोहेका या चर्मका या ऐसी किसी भी वस्तु का बहुमूल्य पट्टा लगाया

यावत् ब० बहुबंधन वाले अ० अन्य त० तथा प्रकार के म० बहुमूल्य बंधन वाले अ० अप्रासुक जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे इ० ये आ० पाप उ० उल्लंघकर ॥ ६ ॥ अ० अथ भि साधु जा० जाने च चार प० प्रतिज्ञासे पा० पात्र ए० गवेषनेको त० तहां ख० निश्चय इ० यह प० प्रथमा प० प्रतिमा से० वे भि० साधु भि० साध्वी उ० उद्देशकर २ पा० पात्र जा याचे तं० वह ज० यथा ला तुम्बीपात्र दा० काष्टपात्र म० मिट्टिका पात्र त० तथा प्रकारका पा पात्र स० स्वय जा० याचे जा० यावत् प० ग्रहण करे प० प्रथमा प्र० प्रतिज्ञा अ अथ अ० अपर दो० द्वितीया प० प्रतीज्ञा० से० वे भि० साधु साध्वी पे० देख कर २ पा० पात्र जा याचे त० वह ज० यथा गा० गृहस्थ

म्मबंधणाणि वा अन्नयराइं तहप्पगाराइं महद्धणबंधणाइं अफासुयाइं जाव णो पडिग्गाहेज्जा इच्चेयाइं आयतणाइं उवातिकम्म ॥ ६ ॥ अह भिक्खू जाणेज्जा च उहिं पडिमाहिं पायं एसित्तए तत्थ खलु इमा पढमा पडिमा से भिक्खू वा भि क्खुणी वा उद्दिसिय २ पायं जाएज्जा तंजहा लाउयपायं वा दारुपायं वा मट्टिया- पायं वा तहप्पगारं पायं सयं वा ण जाएज्जा जाव पडिग्गाहेज्जा पढमा पडिमा

होवे तो उस भी ग्रहण करना नहीं इस तरह पाप के स्थलसे दूर रहना ॥ ६ ॥ उक्त प्रकार से निर्दोष पात्र याचने के लिये साधु साध्वी चार प्रकार की प्रतिज्ञा धारण करते हैं (१) तुम्बे के, काष्ट के, मिट्टि के इन तीन प्रकार के पात्र में से जिस प्रकार के पात्र की इच्छा होवे उस का नाम लेकर पात्र याचे याचन से

जा॰ यावत् क॰ नोकरनी से वे पु॰ पहिले ही आ॰ कहे आ॰ आयुष्मन् भ॰ बहिन दा॰ दवोगे मे॰ मुझे ए॰ इसमें से अ॰ अन्यतर पा॰ पात्र तं॰ वह अ॰ यथा अ॰ तुम्बीपात्र दा॰ काष्टका पात्र म॰ मि ट्टिका पात्र त॰ तथा प्रकार का पा॰ पात्र स॰ स्वय जा॰ याचे प॰ अन्य से॰ वे दे देवे जा॰ यावत् प॰ ग्रहण करे दो॰ द्वितीया प॰ प्रतिज्ञा अ अथ अ॰ अपर त॰ तृतीया प॰ प्रतिज्ञा से॰ वे ज॰ जो पु और पा॰ पात्र जा॰ जाने स॰ अंगीकार किया वे॰ वपराया हुवा त॰ तथा प्रकारका पा॰ पात्र स॰

॥ अहावरा दोच्चा पडिमा से भिक्खू वा ( २ ) पेहाए २ पायं जाएज्जा तजहा— गाहावई वा कम्मकरी वा से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसोत्ति वा भइणित्ति वा दाहिसि मे एत्तो अण्णयर पाय तजहा लाउयपाय वा दारुपायं वा मट्टियापाय वा तहप्पगार पाय सय वा ण जाएज्जा परो वा से देज्जा जाव पडिगाहेज्जा दो च्चा पडिमा ॥ अहावरा तच्चापडिमा से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण पायं जाणेज्जा

या बिना याचे गृहस्थ देवे तो ग्रहण करे ( २ ) गृहस्थ के घर गये बाद तीनों प्रकार के पात्र पडे हो उसे देख गृहस्थ यावत् नोकरनी से कहे कि इस में से मुझे किसी प्रकार का पात्र देवोगे ! इस तरह याचते या गृहस्थ देवे तो ग्रहण करे ( १ ) गृहस्थने स्वयं उपभोग में लिया होवे या दूसरेने उपभोग में लिया होवे

स्वयं या० या या० यावत् प० ग्रहणकरे त० तृतीया प० प्रतिज्ञा अ०अथ अ० अपर च० चतुर्थी प० प्रति
ज्ञा से० वे भि० साधु साध्वी उ० न्हासने योग्य पा० पात्र जा० याचे जं० जिसको अ० अन्य ब० बहुत
स श्रमण मा माहण, ण० नहीं अ० इच्छे त० तथा प्रकारका पा० पात्र स स्वयं या० याचे जा०
यावत् प० ग्रहणकरे च चतुर्थी प प्रतिज्ञा इ० यह च० चार प० प्रतिज्ञा को अ० अन्य प० प्रतिज्ञा
( ज० जैसा पि० पिण्डैषणा में )॥७॥से०वे ए०ये ए०एषणाओंसे ए०गवेषते प०दूसरा पा० देखकर व० बोले

सगतिय वा वेजयंति वा तहप्पगारं पायं सयं वा जाव पडिग्गाहेज्जा तच्चा पडिमा ॥
अहावरा चउत्था पडिमा—से भिक्खू वा ( २ ) उज्झिय धम्मियंपायं जाणेज्जा
जं चण्णे बहवे समण माहण जाव वणिमग्गा णावकंखति तहप्पगारं पायं सयं वा पर
जाव पडिग्गाहेज्जा चउत्था पडिमा ॥ इच्चेयाणं चउण्हं पडिमाणं अण्णयरं पडिमं (ज-
हा पिंडेसणाए) ॥ ७ ॥ से णं एताए एसणाए एसमाणं परो पासित्ता वदेज्जा आ

तो उसे देख ग्रहण करे ( ४ ) जो पात्र फेंकने योग्य होवे और साधु, ब्राह्मण, भिखारी आदि कोइ भी
ग्रहण करता नहीं होवे उसे ग्रहण करना नहीं इन चारों प्रतिज्ञामेंसे कोइ भी प्रतिज्ञाके धारक मुनि को
अभिमान करना नहीं और दूसरेकी निन्दा करना नहीं किन्तु समभावसे रहना ॥ ७ ॥ वस्त्र ।षीये अनु

आ० आयुष्मन् स० श्रमण ए० आप मा० मासमें ( ज जैसे व० वस्त्रैषणामें ) ॥ ८ ॥ से० वे प० अन्य ले० लेजाने वाला व बोले आ० आयुष्मन् भ० बहिन आ० सम ए० यह पा० पात्र वे तेलसे घ० घृतसे ण० मक्खनसे व० चरबीसे अ मगाकर स० तैसेही सि० सुगंधि द्रव्य स० तैसेही सी० शीतोदक कंदादि स० तैसे ही ॥ ९ ॥ से० वे प० अन्य ण० लेजाने वाला प बोले आ० आयुष्मन् स० श्रमण मु० मुहूर्त माय २

उसतो समणा एज्जासि तुमं मासेण वा (जहा वत्थेसणाए) ॥ ८ ॥ से णपरो णेत्ता वदेज्जा आउसो त्ति वा भइणि त्ति वा आहरेय पाय तेल्लेण वा, घएण वा, णव-णीएण वा, वसाए वा, अब्भंगेत्ता वा, तहेव सिणाणाइ तहेव सीतोदगकंदादि तहे व ॥ ९ ॥ से णं परो णेत्ता वदेज्जा आउसतो समणा मुहुत्तगं २ अत्थाहि जाव ता

सार वस्त्रैषणा करते हुवे देख कभी कोइ गृहस्थ कहे कि महिने बाद, पंदरह दिन बाद, आठ दिन बाद, या एक मुहूर्त बाद आना मैं तुम को पात्र देऊंगा इत्यादि सब वस्त्रैषणा अध्ययन में कहे मुजब जानना ॥ ८ ॥ साधु तथा साध्वी को ले जानेवाला कोइ गृहस्थ कहे कि आयुष्मन् या बहिन, इस पात्र को यहां लाय उसे तेल, घी, मक्खन, चरबी, या सुगंधित द्रव्य से सुवासित कर या ठंडा या गरम पानी से धोकर या कंद या वनस्पति दूर करके मुनि को देवेंगे ऐसा सुन मुनि को तुरत ही इस बाबत में ना कहना और कहना कि यदि देना चाहते हो तो वैसे ही दो ऐसा कहने पर भी गृहस्थ देवे तो उसे लेना नहीं ॥९॥ साधु साध्वी को लेजानेवाला गृहस्थ कहे कि हे आयुष्मन् श्रमण तुम थोडी देर यहां ठेरो इतने में हम

भ० बैठो आ० यावत् ता० तावत् भ० हम भ० भम उ० बनावे उ० तैयार करे तो० तब ते० तुमको प० हम आ० आयुष्मन स० पानी सहित स० भोजन सहित प० पात्र दा० देवेंगे तु० खाली प० पात्र दि० देना स० साधु को णो० नहीं सु० अच्छा भ० होवे से वे पु० पहिलेही आ० कहे आ० आयुष्मन् भ० भगिन णो० नहीं ख० निश्चय मे० मुझे क० कल्पता है आ० आधाकर्मी भ० अशन पा० पानी, खा० खादिम सा० स्वादिम भो० भोगवने को पा० पीनेको मा० मत उ० बनाओ मा० मत उ० तैयार करो भ० इच्छते हो मे० मुझे दा० देनेको ए० ऐसेही द० देवो से० वे से० ऐसा व० बोलते को प० अन्य भ० भम

व अम्हे असण वा, उवकरेसु वा, उवक्खडेसु वा तो ते वयं आउसो सपाणं, सभोयणं पडिग्गहगं दास्सामो तुच्छए पडिग्गहए दिण्णे समणस्स णो सुठु साहु भवति से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसो त्ति वा भइणि त्ति वा णो खलु मे कप्पइ आधाकम्मिए असणे वा, पाणे वा, खाइमे वा, साइमे वा, भोत्तए वा, पायए वा, मा उवकरेहि मा उवक्खडेहि अभिकखसि मे दातु एमेव दलयाहि से सेवं वयंतस्स परो

भोजन तैयार कर लेवेंगे और तुम को भी भोजन सहित पात्र देवेंगे क्यों कि साधु को खाली पात्र देना अच्छा नहीं है ऐसे प्रसंग पर साधु को कहना कि हे आयुष्मन् या भगिन! मुझे मेरे लिये बनाये हुवे भोजन काम में आवेंगे नहीं, इस लिये मेरे लिये तुम तैयार मत करना यदि मुझे पात्र देना चाहते हो तो ऐसा ही

पा० या आ० यावत् उ० बनाकर उ० तैयारकर स० पानी सहित स० भोजन सहित प० पात्र द० देवे त० तथा प्रकार का प० पात्र अ० अप्रासुक आ० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे ॥ १० ॥ सि० कदाचित् स० ऐसेही णे० लेजानेवाला प० पात्र णि० देवे से० वे पु० पहिले ही आ० आयुष्मन् भ० बहिन सु० तुम सें० तुम्हारा यह अं० चारों तरफ प० देखूंगा के केवल ज्ञानीने वू० कहा आ० आदान मे० यह अं० अंदर पा० पात्रमें प०प्राणी बी०बीज ह०हरी वनस्पति आ यावत् भ०अथ भि० साधुको पु०पहि

असण वा जाव उवकरेत्ता उवक्खडेत्ता सपाणं सभोयणं पडिग्गहगं दलएज्जा तहप्पगार पडिग्गहं अफासुय जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १० ॥ सिया सेव परो णेत्ता पडिग्गहगं णिसिरेज्जा से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसो त्ति वा भइणि त्ति वा तुम चेवणं सातियअंतो अंतेण पडिलेहिस्सामि केवली बूया "आयाणमेयं" अं तो पडिग्गहंसि पाणाणि वा बियाणि वा हरियाणि वा जाव अह भिक्खूणं पु

दो इतना कहने पर भी गृहस्थ आहार पानी तैयार कर उस सहित पात्र देवे तो ग्रहण करना नहीं ॥ १० ॥ साधु साध्वी को लेजानेवाला गृहस्थ पात्र देने लगे तब पहिले से ही साधु को कहना कि "हे आयुष्मन् या बहिन यह पात्र तुम्हारा होने पर ही मैं चारों बाजु इस को देख कर लेऊंगा" यदि बिना देखा पात्र लेवे तो यह दोष पात्र है ऐसा केवलज्ञानी का कथन है क्यों कि कदाचित पात्र में जीव जंतु हरी वनस्पति आदि होवे इस लिये साधु को खास उपदेश है कि पहिले ही चारों बाजु पात्र देख कर बाद में ग्रहण

स उ० उपदेशा ए यह प० प्रतिज्ञा जं० जो पु० पहिले ही प० पात्र अं० चारों तरफ प० देखे ॥११॥ स० अण्डे सहित स० सर्व आ० आलापक ज० जैसे वस्त्रैषणा में णा० विशेष ते० तेलसे घ० घृतसे ण० मक्खनसे व० चरबीसे सि० सुगंधि द्रव्य जा० यावत् अ० अन्य त० तथा प्रकार की थं० स्थंडिलमें प० देखकर २ प पूंजकर २ त० तब आ० साधु आ० घसे ॥ १२ ॥ पूर्ववत् ॥ १३ ॥

न्योवद्दिट्ठा एस पतिण्णा जं पुव्वामेव पडिग्गहग अतोअतेण पडिलेहिज्जा ॥११॥ सअंडादि सव्वे आलावगा जहा वत्थेसणाए णाणत्तं तेल्लेण वा, घएण वा, णवणीए वा, वसाए वा, सिणाणादि जाव अण्णयरासि वा तहप्पगारासि थांडिलसि पडिलेहि य २ पमज्जिय २ तओ सजयामेव आमज्जेज्ज वा ॥ १२ ॥ एय खलु तस्स भि क्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गिय ज सव्वट्ठेहिं सहितेहिं सयाजएज्जासि त्तिबेमि॥१३॥ इति पत्तेसणा अज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो ॥ *

करना ॥ ११ ॥ सअंडादि सर्व आलापक वस्त्रैषणा में कहे मुजब जानना विशेष मात्र यह ही है कि यदि तैल, घृत, चरबी आदि से पात्र भराहुवा मालूम पडे तो अचित्त स्थान में आकर देख कर पूंजकर यत्नासे उसे घस कर साफ करना ॥ १२ ॥ यह साधु साध्वी का पात्र लेने का आचार कहा इस में सदैव यत्ना वंत रहना ऐसा मैं कहता हूं ॥ १३ ॥ यह पात्रैषणा नामक पंचदश अध्ययन का प्रथम उद्देशा पूर्ण हुवा आगे पात्रैषणा विषे विशेष कहते हैं * *

से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थ के घर पिं० आहार के लिये प० प्रवेशकरते पु० पहिलेही प० देखकर प० पात्र अ० दूरकर पा० प्राणी प० प्रमार्जकर र० रज त तब स० साधु गा० गृहस्थके घर पिं० आहार केलिये णि० निकले प० प्रवेशकरे क केवलीने बू० कहा आ० आदान मे० यह अ० अंदर प पात्रमें पा० प्राणी बी० बीज, र० रज प० रही है अ० अय भि साधुको पु० पहिले उ० उपदेशा ए० यह प० प्रतिज्ञा जं० जो पु० पहिलेही पे० देखकर प० पात्र उ० दूर

से भिक्खू वा (२) गाहावइकुल पिंडवायपडियाए पविट्ठेसमाणे पुव्वामेव पेहाए पडिग्गहग अवहट्टु पाणे, पमज्जिय रय ततो संजयामेव गाहावइकुल पिंडवायपडियाए णिक्खमेज्ज वा पविसेज्ज वा केवली बूया 'आयाणमय" अतो पडिग्गहसि पाणे वा बीए वा, रए वा परियावज्जेज्जा अह भिक्खूण पुव्वोवदिट्ठा एस पतिण्णा जं पुव्वामेव पेहाए पडिग्गह उवहट्टु पाणे, पमज्जिय रय ततो सजयामेव

साधु साध्वी को गृहस्थ के घर आहार लेने को जाते पहिले ही पात्र को देख कर, जीव जंतु दूर कर, रज को साफ कर यत्ना पूर्वक आहार लेने को जाना आना। यदि ऐसा न करे तो केवलज्ञानी ने पाप का स्थान बतलाया है क्यों कि कदाचित् उस में जीव जंतु लील फूलण या रज भी रही हुइ होवे इस लिये मुनि को यह उपदेश है कि पात्र को देख. पूंज तपासकर यत्ना पूर्वक आहार पानी लेने को जाना आना

[illegible] गृहस्थके घर पिं० आहार के लिये प० प्रवेश कर णि० नीकले ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थ जा० यावत् स० प्रवेश करते सि० कदाचित् से० वे प० अन्य अ० न्यासकर अ० अंदर प० पात्रमें सी० शीतोदक प० विभागकर णि० लाकर द० देवे त० तथा प्रकारका प० पात्र प० दूसरेके हाथमें प० दूसरे के पात्रमें अ० अप्रासुक जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे से० वे आ० कदाचित प० ग्रहण कीया आप सि० कदाचित् से० वे सि शीघ्रही उ० पानी में सा० लेजावे स० पात्र सहित आ० से

गाहावइकुल पिंडवायपडियाए पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा ॥ १ ॥ से भिक्खू या ( २ ) गाहावइ जाव समाणे सिया से परो अभिहट्टु अंतो पडिग्गहगंसि सीओदग परिभाएत्ता णीहट्टु दलएज्जा तहप्पगारं पडिग्गहगं परहत्थंसि वा परपायंसि वा अफासुयं जाव णो पडिग्गाहेज्जा सेय आहच्च पडिग्गाहिए सिया से खिप्पामेव उदगंसि साहरेज्जा सपडिग्गहं मायाए च णं परिट्ठवेज्जा ससणिद्धाए

॥ १ ॥ साधु साध्वी गृहस्थ के गृह भिक्षार्थ गये कदाचित् गृहस्थ अपने पात्र में शीतल जल डालकर मुनि को देवे तो गृहस्थ का हाथ के पात्र में रहाहुवा शीतल पानी को अप्रासुक जानकर ग्रहण करना नहीं कदाचित् अजानसे लेने में आजावे तो [ यह दातार को पीछा देना या लेने को ना कहे तो ] दूसरे कूवे विगे

कर प० परठवे स० मीनाशवाली भू० भूमिमें पि० रक्खे ॥ २ ॥ से० व भि० साधु साध्वी उ० पानी से भिजा स० भिनाशवाला प पात्र णो० नहीं आ० मसले जा यावत् प० तपाये अ० अथ पु फीर ए० ऐसा जा० जाने वि० पानी रहित मे० मेरा प० पात्र छि० सूका साफ त० तथा मकारका प० पात्र त० तब सं० साधु आ पूंछे आ० यावत् प० तपावे ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थके घर प० मवेश करने की इच्छा वाला स० पात्र सहित गा० ग्रहण कर गा० गृहस्थके

च ण भूमीए णियमेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा [ २ ] उदउल्ल वा, ससणिद्ध वा, पडिग्गह णो आमज्जेज्ज वा जाव पयावेज्ज वा, अह पुण एवं जाणेज्जा विगदोद-ए मे पडिग्गहे छिण्णसिणेहे तहप्पगार पडिग्गह ततो सजयामेव आमज्जेज्ज वा, जाव पयावेज्ज वा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) गाहावइकुल पविसिउकामे सपडिग्गह मायाए गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा

रह के पानी में डालना या भींजी जमीन पर परठाना ॥ २ ॥ साधु साध्वी को भींजा पात्र को पूंछना या मसलना नहीं परंतु ऐसा मालूम पड़े कि यह पात्र की भी नाश सूकगा है तब उसे ग्रहण करे पूंछे ॥ ३ ॥ साधु साध्वी को गृहस्थ के घर जाते पात्रों सहित जाना आना वैसे ही स्वाध्याय स्थान या स्थंडिल स्थान

पर पिं० आहार केलिये प० प्रवेश पिं० निकले प० ऐसे व० बाहिर वि० स्वाध्याय स्थान वि० स्थंडिल स्थान गा ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ ४ ॥ ति० तिव्रदेश में ज० जैसे बी० बीज व० वस्त्रैषणा में ण० वि शेष ए० यहां प पात्र ॥ ५ ॥ पूर्ववत् ॥ ६ ॥

✱ ✱

एव घहिया विचारभूमिं विहारभूमिं वा गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ ४ ॥ तिव्वदसि यादि जहा बीयाए वत्थेसणाए णवर एत्थ पडिग्गहतो ॥ ५ ॥ एय खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गिय ज सव्वट्ठेहिं सहितेहिं सयाजएज्जासि त्तिबेमि ॥६॥ इति पत्तेसणा ज्झयणस्स बीओद्देसो इति पत्तेसणा णाम पचदस मज्झयण सम्मत्त

जाने या ग्रामानुग्राम विचरते पात्रों सहित विचरना ॥ ४ ॥ पात्र लेने को जावे मार्गमें थोडा या बहुत वर्षा होवे तो जैसे आहारेषणा में कहा है वैसा करना ॥ ५ ॥ यह साधु साध्वी की पात्र ग्रहण करने की विधि सत स्यह उन को सर्व स्थान सावध रहना ऐसा मैं कहता हूं ॥ ६ ॥ यह पात्रैषणा नामक पचदश अध्ययन समाप्त हुवा आगे साधु को अवग्रह प्रतिज्ञा धारन करने के लिये अवग्रह प्रतिज्ञा नामक षोडश अध्ययन कहते हैं

✱ ✱

# ॥ अवग्रह—प्रतिमाख्य षोडश मध्ययनम् ॥

स॰साधु भ॰होवेंगा अ॰गृहस्त्यागी, अ॰धनत्यागी अ॰पुत्रत्यागी, अ॰पशुत्यागी, प॰दूसरेका दियाहुवा को भो॰ भोगवने वाला पा॰ पापकर्म णा॰ नहीं क॰ करूंगा स॰ सावधान स॰ सर्व भ हे पूज्य अ॰ अदत्ता दान का प॰ त्याग करताहूं ॥ १ ॥ से॰ वे भ प्रवेशकर गा॰ ग्राममें जा यावत् रा राजधानी में णे॰ नहीं ही स॰ स्वयं अ॰ अदत्त गि॰ ग्रहण करे णे॰ नहीं अ॰ अन्यकी पास भ अदत्त गि॰ ग्रहण करावे

समणे भविस्सामि, अणगारे, अकिंचणे, अपुत्ते, अपसू परदत्तभोई पावकम्म णो क रिस्सामिति, समुट्ठाए सव्व भंते अदिण्णादाणं पच्चक्खामि ॥ १ ॥ से अणुपविसित्ता गामं वा, जाव रायहाणिं वा, णेव सयं अदिन्नं गिण्हेज्जा, णे वण्णेणं अदिन्नं गिण्हा

मैं श्रमण हूं इस लिये घर, धन, पुत्र, कुटुम्ब तथा चतुष्पदादि सर्व वस्तु की ममत्व त्यागकर कर भिक्षा वृत्ति से अन्य की पास से जो कुच्छ मिलेगा इस से निर्वाह करता हुवा पापकर्म करूंगा नहीं इस लिये सावधान होकर मैं ऐसी प्रतिज्ञा अंगीकार करता हूं कि हे पूज्य मैं अन्य से नहीं दी हुइ कोइ भी वस्तु ग्रहण नहीं करूंगा ॥ १ ॥ ऐसी प्रतिज्ञावाले मुनि को ग्राम या नगर में जाकर विना दी हुइ वस्तु ग्रहण करना नहीं, या दूसरे से ग्रहण कराना नहीं, और जो ग्रहण करता होवे उसे अच्छा मानना नहीं, किंबहुना

ने० नहीं दे० अ० अन्य अ० अदत्त गि० ग्रहण करते स० अच्छा जाने जे० जीसकी स० साथ दे० दीक्षा लीहोवे ते० उनकाभी या० जो भि० साधु छ०छत्र,म०मात्रक द०दण्ड, च०चर्म छेदनक ते०उनकी पु०पहिलेही उ० अनुग्रह ( रजा ) अ० रजालिये विना अ० देखेविना अ०पूंजेविना णो० नहीं गि० ग्रहणकरना प०विशेष ग्रहण करना ते०उनकी पु०पहिलेही अ०आज्ञालेकर स०साधु प०देखकर२प० पूंजकर२त० तब गि०

वेजा, णेवण्णेणं अदिण्णं गिण्हंतं समणुजाणेज्जा, जेहिवि सद्धिं सपव्वइए तेसिंपि याइं भिक्खू छत्तयवा, मत्तयंवा, दंडगवा जाव चम्मच्छेदणग वा, तेसिं पुव्वामेव उग्गह अणणुण्णविय अपडिलेहिय अपमज्जिय, णो गिण्हेज्ज वा, पगिण्हेज्ज वा, तेसिं पुव्वामेव उग्गहं अणुण्णविय २ पडिलेहिय २ पमज्जिय २ तओ संजयामेव गिण्हेज्ज वा, पगि-

जिस की साथ दीक्षा ली होवे उन के (१) छत्र, २ मात्रक, ३ दंडक, ४ चर्म छेदन कभी उन की आज्ञा विना तथा विना देखा पूंजा ग्रहण करना नहीं किन्तु उन की अनुज्ञा लेकर देख कर पूंजकर ग्रहण करना

(१) छत्र मस्तकपर रखने का कम्बल, या कदाचित् कारणादि देश में रहने का प्रयोजन होवे तो वर्षा का छत्र धारन करना पड़े वह (२) मात्रक आहार पानी के लिये जो रखने में आते हैं वे ३ दण्ड नदी आदि उतरते को या वृद्ध साधु को अवलम्बन के लिये, (४) चर्म छेदनक पेर में कांटे पड़जाय तो बांधने में काम आता है

ग्रहणकर प० पापर ॥ २ ॥ से वे आ० मुसाफिर खानेमें अ० विचारकर उ० आज्ञा जा० याचे जे० जो त० तहां ई० ईश्वर जे० जो त तहां स० अधिकारी से० उनकी उ० आज्ञा अ० लेवे का० इच्छतेहो स० निश्चय आ० आयुष्मन् अ० जितना काल, अ० जितनी जगह प० रहे जा यावत् आ० आयुष्मान की उ० आज्ञा आ० यावत् सा० स्वधर्मी ता तावत् उ आज्ञा गि० ग्रहण करेंगे ते० उसके बाद वि० विचरेंगे ॥३॥

ण्हेज्ज वा, ॥ २ ॥ से आगतारेसु वा, ( ४ ) अणुवीइ उग्गहं जाएज्जा, जे तत्थ ईसरे जे तत्थ समाहिट्ठाए ते उग्गह अणुण्णवेज्जा, कामं खलु आउसो, अहालंदं अहापरिण्णातं वसामो, जाव आउसंतस्स उग्गहे, जाव साहम्मियाए, ताव उग्गह गिण्हिस्सामो, तेणं परं विहरिस्सामो ॥३॥ से किं पुण तत्थोग्गहंसि एवोग्गहियंसि ? जे

॥ २ ॥ मुसाफिरखाना गृह वगैरह में साधु रहने को इच्छे तब यह स्थान मुझे योग्य है ऐसा विचार कर फिर जहां उस का मालिक या अधिकारी होवे उस की पास जाकर कहे कि हे आयुष्मन यदि आपकी इच्छा हो तो जितना समय तक जितनी जगह वापरने के लिये देवोगे इतना कालतक इतनी ही जगह में हम रहेंगे या हे आयुष्मन्! जहां लग आपकी आज्ञा है वहां लग जितने हमारे समान धर्मी साधु आवेंगे उन की साथ हम रहेंगे बाद में विहार कर जावेंगे ॥ ३ ॥ रहने का स्थान प्राप्त किये बाद यहां जो कोइ सदा

स० वे किं० क्या पु० और त० तहां उ आज्ञा में प० करे जे० जो त० तहां सा० समान धर्मी स० स भोगी स० सदाचारी उ० आवे जे० जो ते० उनसे स० स्वयं ए० लाया हुवा अ० अन्न ते० उनसे ते० वे सा० स्वधर्मी स० सभोगिक स० सदाचारी उ० निमंत्रण करना णो नहीं प० दूसरे केलिये उ० ले लेकर उ० निमंत्रणा करे ॥ ४ से वे आ० मुसाफीरखाने में भा यावत् से० वे किं क्या उ० तहां उ० आज्ञामें प० करे । स जो त० तहां सा० समानधर्मी अ० अन्य सभोगिक स० सदाचारी उ० आवे जे० जो ते० उनमे सं स्वय ए० लायाहुवा पी० बाजोठ फ० पाटला से० शैया सं०संथारा ते० उनसे ते० वे सा०

तत्थ साहम्मिया सभोइया समणुण्णा उवागच्छेज्जा, जे तेण सयमेसियए असणे वा, ( ४ ) तेण ते साहम्मिया सभोइया समणुण्णा उवणिमंतेज्जा, णो चेवण परवडियाए उगिज्झिय २ उवणिमंतेज्जा ॥ ४ ॥ से आगतारेसु वा, ( ४ ) जाव से किंपुण तत्थोग्गहंसि एवोग्गहियासि, जे तत्थ साहम्मिया अण्णसंभोइया समणुन्ना उवागच्छेज्जा, जे तेणं सयमेसियए पीढे वा फलए वा, सेज्जा संथारए वा, तेण ते साहम्मिए

चारी सभोगी साधु आवे तो उन को अपना लाया हुवा आहार पानी में से निमंत्रण करना परंतु दूसरे का लाया हुवा आहार पानी में से लेकर लेकर निमंत्रित करना नहीं ॥ ४ ॥ रहने का स्थान प्राप्त किये बाद वहां जो सदाचारी समान धर्मी परंतु असंभोगी साधु आवे तो उन को मुनिने अपना लाया हुवा पाट

समान धर्मी अ० अन्यसंभोगिक स० सदाचारी उ० आमंत्रे णो० नहीं चे० निश्चय प० दूसरे क० लिये उ० ले लेकर उ० निमंत्रणा करे ॥ ८ ॥ से० वे आ० मुसाफिर खाने में जा० यावत् किं० क्या पु० और त० तहां उ० आज्ञा प० करे ? जे० जो त० तहां गा० गृहस्थ गा० गृहस्थ का पुत्र सू० सूइ पि० कतरणी क० कर्ण शोधनी ण० नखछेदोन का त० उसे अ० अपना ए० एक के लिये प० प्रातिहारिक जा० याचकर णो० नहीं अ० परस्पर दे० देवे अ० लेवे स० स्वयं क० करने योग्य ति० एसा क० करके से० वे त० उसे आ० ग्रहण कर त० वहां ग० जावे ग० जाकर पु० पहिलेही उ० ल

अण्णसंभोइए समणुण्णे उवणिमंतेज्जा णो चेवण परवडियाए उगिज्झिय २ उवणिमंतेज्जा ॥ ५ ॥ से आगंतारेसु वा, जाव से किंपुण तत्थोग्गहंसि एवोग्गहियंसि ? जे तत्थ गाहावईण वा, गाहावइपुत्ताण वा सूई वा, पिप्पलए वा, कण्णसोहणए वा, णहच्छेदणए वा, तं अप्पणा एगस्स अट्ठाए पडिहारियं जाइत्ता णो अण्णमण्णस्स देज्ज वा, अणुप्पदेज्ज वा, सयकरणिज्जं तिकट्टु से तमादाय तत्थ गच्छेज्जा गच्छित्ता पुव्वामेव उत्ताण

पलंग, स्थान, बिछोना, आमंत्रे परंतु अन्य का लाया हुवा पाटपाटला, बिछाना, खेंच खेंचकर आमंत्रे नहीं ॥ ८ ॥ जो साधु गृहस्थ की या उस के पुत्र की सूइ, कैंची, कानशलाइ, नेरणी, अपने एकिले के लिये लाया होवे तो उसे दूसरे साधु को देवे नहीं अपना कार्य किये पाद गृहस्थ के पास जाकर उस वस्तु को

न्रे ह० हाथ क० करके भू० जमीन पर ठं० रखके इ यह स० निश्चय चि० ऐसा आ० कहे णा० नहीं चे० निश्चय स० स्वयं पा० हाथ से प० दूसरे के पा०हाथ में प० देवे ॥ ६ ॥ से वे भि साधु सा ध्वी स० व जं जो पु० और उ० अवग्रह जा० जाने अ० सचित्त पु० पृथ्वी स० भीनाश वाली पु० पृथ्वी जा० यावत् स० जाले युक्त त० तथा प्रकार का उ० अवग्रह णो० नहीं उ० ग्रहण करे प० विशेष ग्रहणकरे ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से वे ज जो पु० और उ अवग्रह जा० जाने थु० स्तंभ पर त०तथा प्रकार के अ० अंतरिक्ष स्थान दु० खराब यथा जा० यावत् णो० नहीं उ० अवग्रह उ ग्रहणकरे

ए हत्थे कट्टु भूमीए वा ठवेत्ता इम खलु २ त्ति आलोएज्जा णो चेवण सय पा णिणा परपाणिंसि पच्चापिप्णेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण उग्ग हं जाणेज्जा अणंतरहियाए पुढवीए ससणिद्धाए पुढवीए जाव सताणाए तहप्पगार उग्गहं णो उगिण्हेज्ज वा पगिण्हेज्ज वा॥ ७ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण उग्गहं

अपना खुला हाथ में रख कर या भूमि पर रखकर कहना कि "यह तुम्हारी वस्तु, यह तुम्हारी वस्तु" परंतु साधु को गृहस्थ के हाथ में रखना नहीं ॥ ६ ॥ जो मकान सचित्त या भींजी हुई पृथ्वीवाला होवे या जीव जंतुवाला होवे तो उस की आज्ञा रहने के लिये ग्रहण करना नहीं ॥ ७ ॥ जो मकान स्तंभ पर,

प०विशेष ग्रहण करे ॥८॥ से० वे भि०साधु साध्वी से० ये ज्ञा० जो पु० और उ० अवग्रह मा० जाने कु० भित्तिपर मा० यावत् णा०नहीं उ०ग्रहण करे ॥९॥ से०वे भि०साधु साध्वी ख०स्तंभपर अ० अन्यतर त० तथा प्रकारका जा० यावत् णो० नहीं उ० ग्रहण करे ॥ १० ॥ से० ये ज्ञा० जो पु० और उ अव ग्रह जा० जाने स० गृहस्थ युक्त स० अग्नियुक्त स० उदकयुक्त स० स्त्री सहित स० क्षुद्र ( बालक ) सहित स० पशु सहित स० भक्त पानीयुक्त णो० नहीं प० प्रज्ञावन्त को णि० निकलना प० प्रवेश करना जा०

जाणेज्जा थुणंसि वा ( ४ ) तहप्पगारे अतलिक्खजाए दुब्बद्धे जाव णो उग्गह उगिण्हेज्ज वा पगिण्हेज्ज वा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण उग्गहं जाणेज्जा कुलियंसि वा जाव णो उगिण्हेज्ज वा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) खंधंसि वा अण्णयरे वा तहप्पगारे जाव णो उगिण्हेज्ज वा ॥ १० ॥ से जं पुण उग्गहं जाणेज्जाससागारियं, सागणियं, सउदयं, सइत्थिं, सखुड्डं सपसुं, सभत्तपाणं णो पण्णस्स णिक्खमणपवेसं जाव धम्माणुजोगचिंताए सेवं णच्चा त

पाले पर डगमग करता होवे तो उस की आज्ञा ग्रहण करना नहीं ॥ ८ ॥ जो मकान कच्ची भींत पर बंधा हुवा होवे उस की आज्ञा ग्रहण करना नहीं ॥ ९ ॥ जो मकान गढ या स्तंभ वगैरह पर ऊंचा बंधा हुवा होवे अथवा ऐसा कोइ दूसरा स्थान होवे तो ग्रहण करना नहीं ॥ १० ॥ जिस उपाश्रय में गृहस्थ, अग्नि,

यावत् ध० धर्मानुयोगचिन्तवन से० ऐसा ण० जानकर त० तथा प्रकारके उ० उपाश्रय में स० गृहस्थ सहित जा० यावत् स बालक सहित प० पशु भ० भात पानी सहित णो० नहीं उ० अवग्रह उ० ग्रहण करे ॥ ११ ॥ से० वे भि साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० फीर उ० अवग्रह जा० जाने गा० गृहस्थके घर में म० मध्यमें से ग० आने का पं० मार्ग में प० प्रतिबंध णो० नहीं प० प्रज्ञावंत को जा० यावत् ए० ऐसा ण जानकर त० तथा प्रकारके उ० उपाश्रय में णो० नहीं उ० अवग्रह उ० ग्रहण करे ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु और उ अवग्रह जा० जाने इ० यहां स० निश्चय गा० गृहस्थ जा०

हप्पगारे उवस्सए ससागारिए जाव सक्खुड पसु भत्तपाणे णो उग्गह उगिण्हेज्जवा, ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज पुण उग्गह जाणेज्जा गाहावइकुलस्स मज्झमज्झेण गतु पथे पडिवद्ध वा णो पण्णस्स जाव से एव णच्चा तहप्पगारे उवस्सए णो उग्गह उगिण्हेज्ज वा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण उग्गहं जाणेज्जा इह खलु गाहवई वा जाव कम्मकरीओ वा अण्णमण्ण अक्कोस

पानी, स्त्री, बालक, पशु, आहार पानी होवे और निकलने प्रवेश करने में या धर्म विचारणा में अडचण पडती होवे तो वहां रहना नहीं ॥ ११ ॥ जिस मकान का मार्ग गृहस्थ के घर के बिच में होकर निकलता होवे और वहां निकलने प्रवेश करने या स्वाध्याय में अडचण पडती होवे तो रहना नहीं ॥ १२ ॥ जिस मकान में गृहस्थ गृहस्थ की स्त्री, पुत्र, पुत्री यावत् नोकरनी परस्पर लडाइ झगडे करते होवे शरीर को

यावत् क नोकरनी अ० परस्पर अ० आक्रोश करे त० वैसेही ते० तेलादि सि० सुगंधि द्रव्यादि सी० शीतोदक वि० अचित्तादि ण०नम्नादि ज० जैसे से० शैया अध्ययन में आ०आलापक ण० विशेष उ० अवग्रह की व० वक्तव्यता ॥ १३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और उ० अवग्रह जा० जाने आ० चित्रमे सं० चितरा हुवा णो० नहीं प० प्रज्ञावन्त को जा० यावत् चि० चिन्तवन त० तथा प्रकारका उ० उपाश्रय में णो नहीं उ अवग्रह उ० ग्रहण करे. ॥ १४ ॥ पूर्ववत ॥ १५ ॥

ति वा तहेव तेल्लादि सिणाणादि सीओदगवियडादि णगिणादि य जहा सेज्जाए आलावगा णवर उग्गहवत्तव्वता ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण उग्गह जाणेज्जा आइण्णसलेक्ख णो पण्णस्स जाव चिंताए तहप्पगारे उवस्सए णो उग्गह उगिण्हेज्ज वा ॥ १४ ॥ एय खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गिय ॥ १५ ॥ इति उग्गहपडिमा ज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो

तेलादि लगाते होवे, स्नान करते होवे, नग्न कथा करते होवे, वगैरह सब शैय्याध्ययन में कहे मुजब जानना विशेष में उपाश्रय की आज्ञा लेना ॥ १३ ॥ जिस मकान में स्त्रियादि के विरूप चित्रों होवे और धर्मध्यान में अनुकूलता न होवे तो उस की आज्ञा ग्रहण करना नहीं ॥ १४ ॥ यह साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है कि उनोंने सर्व स्थान सावधान रहना ॥ १५ ॥ यह अवग्रह प्रतिमा नामक षोडश अध्ययन का प्रथम उद्देशा पूर्ण हुवा आगे रहने का मकान की पसंदगी तथा उन की ज्ञान प्रतिमा कहते है

से० व आ० मुसाफिरखाना में ( ८ ) अ० विचार कर उ० अवग्रह मा० याचे जे० जा त० तहां ई० मालिक स० अधिकारी ते० उनकी उ० आज्ञा अ० लेकर का० इच्छते हो स० निश्चय आ० आयुष्मान् अ० जितना काम अ० जितना स्थान व० रहेंगे जा० यावत् आ० आयुष्मन् आ० यावत् आ० आयुष्मन् की उ० मनुज्ञा जा० यावत् सा० समानधर्मी ता० तावत् उ० आज्ञा उ० ग्रहण करेंगे ते० उसके प० बाद वि० विहार करेंगे ॥ १ ॥ से० वे किं० क्या पु० फीर त० तहां उ० आज्ञामें प० करे ?

से आगतारेसु वा ( ४ ) अणुवीइ उग्गहं जाएज्जा जे तत्थ ईसरे समाहिट्ठाए ते उग्गहं अणुण्णविज्जा कामं खलु आउसो अहालंदं अहापरिण्णाय वसामो जाव आउसो जाव आउसतस्स उग्गहे जाव साहम्मियाए ताव उग्गहं उग्गिण्हि-स्सामो तेण परं विहरिस्सामो ॥ १ ॥ से किं पुण तत्थ उग्गहंसि एवोग्गहियंसि

साधु तथा साध्वी को मुसाफिरखाना वगैरह स्थलों में विमर्श पूर्वक स्थान की आज्ञा याचते उस का मालिक या रक्षक का ऐसा कहना कि हे आयुष्मन् जितना स्थल या जितना काल तक तुम्हारी इच्छा हो उतने में उतने काल तक रहेंगे, और अन्य समान धर्मी साधु आवेंगे उन को भी रखेंगे फीर विहार कर जावेंगे ॥ १ ॥ जिस मकान में रहे हो उस मकान में जो आस्यादि साधु ब्राह्मण के दंड, छत्र, चर्म छेदक

ज० जो त वहां स साधुका मा० ब्राह्मण का दं० दण्ड, छ० छत्र जा० यावत् च० चर्म छेदनक स० उसे णो० नहीं अ० अंदरसे बा० बाहिर णी० लेजावे प० बाहिर से णो० नहीं अं० अंदर प० लेजावे णा० नहीं सु० सोए हुवे को प० जगावे णो नहीं ते० उनको किं० किंचिदपि अ नहीं भाता प अत्यनीक क करे ॥ २ ॥ से० वे भि साधु साध्वी अ० वांच्छे अ० आम्रका वनमें उ० जाने तो जे० जा त० तहां ई० ईश्वर जे जो स० वहां स० अधिकारी ते० उनका उ अवग्रह अ० जनावे का० वांच्छा हो ए० निश्चय जा० यावत् वि० विचरेंगे ॥ ३ ॥ से० वे किं क्या पु० और त० वहां उ०

जे तत्थ समणाण वा, माहणाण वा, दंडए वा, छत्तए वा, जाव चम्मछेदणए वा, त णो अंतोहिंतो बाहिं णीणज्जा, बहियाओ वा णो अतो पवेसेज्जा, णो सुत्तं वा ण पडिबोहेज्जा णो तेसिं किंचिवि अप्पतियं पडिणीय करेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अभिकंखेज्जा अंबवण उवागच्छित्तए जे तत्थ ईसरे जे त त्थ समाहिट्ठाए ते उग्गह अणुजाणावेज्जा "कामं खलु जाव विहरिस्सामो" ॥ ३ ॥

शस्त्र पड़े होवे तो उन्हे अंदर से बाहिर लाना नहीं वैसे ही बाहिर से अंदर लेजाना नहीं, वे सोते हुवे होवे तो जगाना नहीं वैसे ही उन से प्रतिकूल कार्य करना नहीं ॥ २ ॥ साधु साध्वी आम्र के वन में विश्राम लेना चाहे तो उस के मालिक की या उस के अधिकारी की आज्ञा लेकर रहना ॥ ३ ॥ पूर्वोक्त रीत्या

अनग्रर प० करे अ अथ भि० साधु इ० वांच्छे अं० आम्र भो० खानेको से० वे ज० जो पु० और अ० आम्र जा० जाने स० अण्डेसहित जा०यावत् स०जाले सहित त० तथा प्रकार का अ० आम्र अ० अ फासुक जा० यावत् णो नहीं प० ग्रहण करे ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० आम्र जा० जाने अ० अल्प अण्डे जा० यावत् स जाले अ० विर्यक् नहीं छेदा अ० टुकडे नहीं किये अ० अफासुक जा यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ ५ ॥ से० भि० साधु साध्वी अं० आम्र जा० जाने अ०अल्प अण्डे जा०यावत् स०जाले ति०विर्यक् छेदा हुवा णो०टुकडेकिये हुवे फा०फासुक जा०यावत् प०

से किं पुण तत्थ उग्गहसि एवोग्गहियंसि अह भिक्खू इच्छेज्जा अंबं भोत्तए वा, से जं पुण अंब जाणेज्जा सअडं जाव ससंताण तहप्पगारं अंबं अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ४ ॥ सेभिक्खू वा, ( २ ) से जं पुण अंब जाणेजा अप्पडं जाव सताणग अतिरिच्छछिण्ण अवोच्छिण्णं अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण अंबं जाणेज्जा, अप्पडं जाव सताणग तिरिच्छछिण्णा

आम्र के वन में रहे बाद यदि आम्र खाने की इच्छा होवे तो अंडे जाले युक्त आम्र लेना नहीं ॥ ४ ॥ जो आम्र अण्डे और जाले रहित होवे परंतु छेदाये न होवे तो अयोग्य जानकर ग्रहण करना नहीं ॥ ५ ॥

ग्रहण करे. ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांछे अं० आधा आम्र अं० आम्रकी गुठली, अं० आम्रकी छाल, अं०आम्रका रस अं० आम्र के टुकडे भो०खानेको पा०पीनेको से०वे ज०जो पु०और जा०जाने अं०आधा आम्र जा०यावत् अं० आम्र के टुकडे स अण्डे सहित जा० यावत सं० जालेसहित अ० अफ़ासुक जा यावत् णो०नहीं प०ग्रहणकरे ॥७॥ से०वे भि० साधु साध्वी से वे ज०जो पु०और जा०जाने अं०आधा आम्र अ० अण्डे रहित जा०यावत् सं० जाले अ० नहीं छेदाया अ टुकडे नहीं किया अ० अफ़ासुक

वोच्छिण्णं फासुयं जाव पडिग्गाहिज्जा ॥ ६ ॥ सेभिक्खू वा ( २ ) अभिकंखेज्जा अं बभित्तय वा, अंबपेसियं वा अंबचोयग वा, अंबसालग वा, अंबदालगं वा, भोत्तए वा, पायए वा, से जं पुण जाणेज्जा अंबभित्तयं वा, जाव अंबदालगं वा, सअंडं जाव संताणगं अफासुयं जाव णो पडिग्गाहिज्जा ॥ ७ ॥ सेभिक्खू वा (२) से जं पुण जाणेज्जा अंबभित्तगं वा, अप्पंडं जाव संताणगं अतिरिच्छच्छिण्णं वा,

जो आम्र छेदे हुवे, निर्जीव अण्डे, जाले रहित, निर्दोष होवे तो धणी की आज्ञा लेकर ग्रहण करे ॥ ६ ॥ साधु साध्वी को आधा आम्र, आम्र की गुठली, आम्र की छाल, आम्र के टुकडे, आम्र का रस खाने की इच्छा होवे और वे जो अण्डे यावत् जाले सहित सदोष होवे तो उन्हे ग्रहण करना नहीं ॥ ७ ॥ आम्र

जा० यावत णो० नहीं प० ग्रहण करे ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और जा० जाने अं० आम्रका टुकडा अ० अण्डे रहित जा० यावत् सं० जाले ति० छेदाहुवा वो टुकडेकिये हुवे फा० फासुक जा यावत् प० ग्रहण करे ॥९॥ से वे भि० साधु साध्वी अ० वांच्छे उ० इक्षुकानन उ० जानेको न० जो त० तहां ई० मालिक जा० यावत् उ० अवग्रह में ॥ १ ॥ अ० अथ भि० साधु साध्वी इ० वांच्छे उ० इक्षु भो० खानेको पा० पीनेको से० वे जं० जो उ० इक्षुको जा० जाने अ० अण्डे सहित जा०

अवोच्छिण्ण वा, अफासुय जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ ८ ॥ सेभिक्खू वा, ( २ ) सेज्ज पुण जाणेज्जा अवभित्तग वा, अप्पंडं जाव सताणय, तिरिच्छच्छिण्णं, वोच्छिण्णं, फासुय जाव पडिग्गाहेज्जा ॥९॥ से भिक्खू वा ( २ ) अभिकखेज्जा उच्छु घण उवागच्छित्तए, जे तत्थ ईसरे जाव उग्गहसि ॥ १० ॥ अह भिक्खू वा (२) इच्छेज्जा उच्छुं भोत्तए वा, पायए वा, सेज्जं उच्छु जाणेज्जा सअंड जाव णो पडिगाहेज्जा

यावत् रस अण्डे, जाले रहित होवे परतु छेदायेभेदाये न होवे तो अयोग्य जानकर ग्रहण करना नहीं ॥ ८ ॥ किन्तु जो आम्र यावत् रस अण्डे, जाले रहित होवे, और छेद भेद कर निर्जीव किये होवे तो उसे ग्रहण करना ॥ ९ ॥ साधु साध्वी का इक्षु के वन में ठहरने की इच्छा होवे तो उस के मालिक की या उस के अधिकारी की आज्ञा लेकर ठेरे ॥ १० ॥ यहां यदि साधु का इक्षु खाने पीने की इच्छा होवे तो जो इक्षु किरीयों, जाले सहित होवे, बराबर कण हुवा न होवे व. लेना नहीं परंतु अण्डे जाले रहित होवे छेदन भेदन

यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे अ० नहीं छेदाया त० वैसेही ति० छेदाया हुवा त० वैसेही ॥ ११ ॥ स० वे भि० साधु साध्वी ज० जो पु० और अ० सांच्छे अं० इक्षुकी गांठ उ० इक्षुकी गहरी उ० इक्षुकी फ मीयां उ० इक्षुका रस उ० इक्षुके पारिक टुकडे भो खानेको पा० पीने को से० वे ज० जो पु० और जा० जाने अं० इक्षुकी गांठ जा० यावत् डा० इक्षुके टुकडे स० अण्ड सहित जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से वे ज० जो पु० और जा० जाने स० इक्षुकी गांठ जा० यावत् डा० इक्षुके टुकडे अ० अल्प अण्डे जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे अ० तिर्यक नहीं

अतिरिच्छच्छिण्णं तहेव तिरिच्छच्छिण्णं तहेव ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण अभिकखेज्जा अतरुच्छुयं वा, उच्छुगडिय वा, उच्छुचोयग वा उच्छुसालग वा, उच्छुडालग वा, मोत्तए वा, पायए वा से जं पुण जाणेज्जा अतरुच्छुय वा जाव डालग वा सअड जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १२ ॥ सेभिक्खू वा ( २ ) सेज्जं पुण जाणेज्जा अतरुच्छुयं वा जाव डालग वा अप्पडं जाव णो पडिग्गाहेज्जा अतिरिच्छ-

किया होवे रस निकाला होवे तो उसे निर्दोष जानकर ग्रहण करना ॥ ११ ॥ इक्षु के टुकडे रस विगैरह खाने की इच्छा होवे और वह अण्डे, कीडी नाले सहित होवे, तो उसे ग्रहण करना नहीं ॥ १२ ॥ यदि वह अण्डे रहित होवे परंतु छेदन भेदन किया न होवे तो उसे गृहण करना नहीं परंतु अण्डे

छेदा वि० तिर्यक छेदा हुवा त० तैसेहि प० ग्रहण करे ॥ १३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० पांच्छे ल्ह० लशुनवनमें उ० जानेको ति० तीनों आ० आलापक त० तैसेही ण० विशेष ल्ह० लशन ॥ १४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांच्छे ल्ह० लशन ल्ह० लशनका कन्द ल्ह० लशन की फली ल्ह०ल शनकी नाल भो० खाने को पा० पीने को से० वे जं० जो पु० और जा० जाने ल्ह० लशन जा० यावत् ल्ह० लशनका बीज स० अण्डे सहित जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे ए० ऐसेही अ० ति र्यक् नहीं छेदाया हुवा होवे तोभी ति० तिर्यक् छेदन होने पर प० ग्रहण करे ॥१५॥ से० वे भि० सा

च्छिण्णं ॥ तिरिच्छच्छिण्णं तहेव पडिग्गाहेज्जा ॥ १३ ॥ सेभिक्खू वा ( २ ) अभिकखेज्जा ल्हसुणवण उवागच्छित्तए तिण्णि आलावगा तहेव णवर ल्हसुण ॥१४॥ सेभिक्खू वा (२) अभिकखेज्जा ल्हसुण वा ल्हसुणकंद वा ल्हसुणचोयगंण वा ल्हसुण णालगं वा भोत्तए वा पायए सा सेज्ज पुण जाणेज्जा ल्हसुण वा जाव ल्हसुणबीय वा सअंडं जाव णो पडिग्गाहेज्जा, एवं अतिरिच्छच्छिण्णेवि तिरिच्छच्छिण्णे पडिग्गा हेज्जा ॥ १५ ॥ सेभिक्खू वा ( २ ) आगंतारेसु वा [ ४ ] जाव उग्गहियंसि जे

जाले रहित होवे छेदन भेदन किया होवे तो ग्रहण करना ॥ १३ ॥ साधु साध्वी को लसुण के वन में जाकर लसुण खाने की इच्छा होवे तो उक्त तीन कथनानुसार वर्तना ॥ १४ ॥ साधु साध्वी को लसुण लसुण का कंद, नाल, फली, डाली, खाने की इच्छा होवे तो जो अण्डे जाले सहित होवे छेदन भेदन न

सु साध्वी आ० मुसाफीरखाने में (४) जा० यावत् उ० अवग्रह में जे जो त० वहां गा० गृहस्थ का गा० गृहस्थ के पुत्र का इ० यह आ पाप कर्म उ० उल्लंघकर ॥ १९ ॥ अ० अब भि० साधु जा० जाने इ० यह स० सात प० प्रतिज्ञा से उ० आज्ञा उ० ग्रहण करने को त० तहां ख० निश्चय इ० यह प० प्रथमा प० प्रतिज्ञा से० वे आ० मुसाफीर खाने में (४) अ विचार कर उ० अवग्रह जा० याचे जा० यावत् वि० विचरेंगे प० प्रथमा प० प्रतिज्ञा (१) अ० अब अ० अपर दो० द्वितीया प० प्रतिज्ञा ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसा भ० होवे अ० मैं ख० निश्चय अ० अन्य भि० साधु के अ० लिये उ०

तत्थ गाहावईण वा गाहावइपुत्ताण वा इच्चेयाइं आयतणाइं उवातिकम्म ॥ १९ ॥ अह भिक्खू जाणेज्जा इमाहिं सत्तहिं पडिमाहिं उग्गहं उगिण्हित्तए तत्थ खलु इमा पढमा पडिमा से आगंतारेसु वा (४) अणुवीइ उग्गहं जाएज्जा जाव विहरिस्सामो पढमा पडिमा ॥ अहावरा दोच्चा पडिमा जस्स णं भिक्खुस्स एवं भवति अहं च खलु अण्णेसिं भिक्खूणं अट्ठाए उग्गहं गिण्हिस्सामि अण्णेसिं भिक्खूणं

किया होवे तो लेना नहीं किन्तु अण्डे कीडिकादि रहित होवे, छेदन भेदन किया होवे वो ग्रहण करना॥१८॥ साधु साध्वीको मुसाफिरखाना आदि स्थानों में रहे बाद गृहस्थों की कर्म बन्धक प्रवृत्ति से दूर रहना ॥१९॥ पूर्वोक्त आज्ञाओं को निर्दोषपने से पालन किये बाद साधु सात प्रकारकी प्रतिज्ञा धारन करते हैं (१) पहिली

अवग्रह गि०ग्रहण करूंगा अ० अन्य भि०साधु की उ आज्ञा उ० ग्रहण करने पर उ० लेऊंगा दो० द्वितीय प प्रतिज्ञा ( २ ) अ अथ अ अपर त० तृतीया प० प्रतिज्ञा ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसा भ० होवे अ० मैं अ अन्य भि० साधु केलिये उ आज्ञा गि० लेउगा अ० अन्य की उ० लेनेपर उ० आज्ञा णो नहीं उ लेऊंगा त० तृतीया प० प्रतिज्ञा ( ४ ) अ० अथ अ० अपर च० चतुर्थी प० प्रतिज्ञा ज० जिस भि साधु को ए० ऐसा भ० होवे अ० मैं स्व निश्चय अ० अन्य भि साधु केलिये उ० आज्ञा णो० नहीं उ० ग्रहण करूंगा अ० अन्य की उ० अवग्रह उ० ग्रहण करने पर उ० लेऊगा च० चतुर्थी प० प्रति

उग्गहिए उग्गहे उवल्लिस्सामि दोच्चा पडिमा ॥ अहावरा तच्चा पडिमा जस्स णं भिक्खुस्स एव भवति अह च खलु अण्णेसिं भिक्खूण अट्ठाए उग्गह गिण्हिस्सामि अण्णेसिं च उग्गहिए उग्गहे णो उवल्लिस्सामि तच्चा पडिमा ॥ अहावरा चउत्था पडिमा जस्स ण भिक्खुस्स एव भवति अह च खलु अण्णेसिं भिक्खूण अट्ठाए उग्गह णो उगिण्हिस्सामि अण्णेसिं च उग्गहे उग्गहिए उवल्लिस्सामि च-

प्रतिज्ञा यह है कि मुसाफिरखाना वगैरह जैसा मिले वैसा ही उन के मालिक की या अधिकारी की आज्ञा लेकर उस में रहना ( २ ) कोइ साधु ऐसी प्रतिज्ञा धारन करे कि मैं दूसरे के लिये आज्ञा लेऊंगा और दूसरे ने ली हुइ आज्ञा में मैं रहूंगा ( यह प्रतिज्ञा गच्छ में रहे साधु के लिये है ) ( ३ ) कोइ साधु ऐसा

ष्ठा (५) अ० अथ अ० अपर प० पचमी प० प्रतिज्ञा ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसा भ० होवे अ० मैं अ० अपने लिये उ० आज्ञा उ० ग्रहण करूंगा णो० नहीं दो० दोकेलिये णो० नहीं ति० तीन केलिये णो० नहीं च० चारकेलिये णो० नहीं पं० पांच केलिये पं० पचमी प० प्रतिज्ञा (६) अ० अथ अ० अपर छ० छठी प० प्रतिज्ञा से० वे भि० साधु साध्वी ज० जिसको उ० अवग्रह उ० भोगवे जे० जो त० तहां अ० यथा प्राप्त हुवे त० वह ज० यथा इ० घास ना० यावत् प० पराल त० उनकी ल० प्राप्ति में सं० रहे त० उसकी अ० अप्राप्ति में उ० उत्कटासन से णे० बैठे वि० विचरे छ० छठी प० प्रतिज्ञा (७) अ०

उत्था पडिमा ॥ अहावरा पंचमा पडिमा जस्स णं भिक्खुस्स एवं भवति अहं च खलु अप्पणो अट्ठाए उग्गहं उगिण्हिस्सामि णो दोण्हं, णो तिण्हं, णो चउण्हं, णो पचण्हं पचमा पडिमा ॥ अहावरा छट्ठा पडिमा से भिक्खू वा (२) जस्सेव उग्गहे उवल्लिएज्जा जे तत्थ अहा समण्णागते तंजहा इक्कडे जाव पलाले वा तस्स लाभे संवसेज्जा तस्स अलाभे उक्कुडए वा, णेसज्जिए वा, विहरेज्जा छट्ठा पडिमा ॥

अभिग्रह धारन करे कि मैं दूसरके लिये आज्ञा ग्रहण करूंगा परंतु दूसरेकी लीहुइ आज्ञा में रहूंगा नहीं (यह प्रतिज्ञा असांभोगिक मुनि जो आचार्यादिक के लिये आज्ञा लेते हैं उन के लिये है) (४) कोइ साधु ऐसा नियम करे कि मैं दूसरे के लिये आज्ञा नहीं ग्रहण करूंगा परंतु दूसरे की ग्रहण की हुइ आज्ञा में रहूंगा

थंब अ० अपर स० सप्तमी से० वे भि० साधु साध्वी अ० जैसा करा वैसाही उ० अवग्रह आ० याचे तं० वह अ० पर्था पु० पृथ्वी शिला क० काष्टकी शिला अ० जैसा करा त० उनकी ला० मासिमें सं० रहे त० उनकी अ० अमाप्तिमें उ० उत्कटासन से ने० बैठे वि० विहार करे स० सप्तमी प० प्रतिज्ञा इ० ये स० सात प० प्रतिज्ञा को अ० अन्य ज० जैसे पिं० पिण्डैषणा में ॥ १७ ॥ सु० सुना मे० मैंने आ० आयुष्मन् ते० उन भ० भगवन्तने

सत्तमा पडिमा से भिक्खू वा (२) अहा संथडमेव उग्गहं जाएज्जा तंजहा पुढ विसिलं वा कट्ठसिलं वा अहासंथडमेव तस्स लाभे संवसेज्जा तस्स अलाभे उ- क्कुडुओ वा णेसज्जिओ वा विहरेज्जा सत्तमा पडिमा ॥ इच्चेतासिं सत्तण्हं पडिमा ण अण्णयरं जहा पिंडेसणाए ॥ १७ ॥ सुयं मे आउसं तेणं भगवया एव म

(यह अभ्युद्यतविहारी या जिन कल्पी साधु के लिये) (५) कोइ ऐसी प्रतिज्ञा ग्रहण करे कि मैं मात्र मेरे लिये आज्ञा ग्रहण करूंगा परंतु दो, तीन, चार, पांच के लिये नहीं ग्रहण करूंगा(६)कोइ साधु ऐसा नियम करे कि रहने का स्थान में यदि मुझे पराल आदि मिलेगा तो उसे ग्रहण करूंगा, नहीं तो वैसा ही बैठा रहूंगा (७) कोइ साधु ऐसा नियम करे कि सीधा रखता हुवा पाषाण, काष्ट का पटिया मिलजायगा तो उसे ग्रहण करूंगा नहीं तो वैसा ही बैठा रहूंगा इन सातों प्रतिज्ञा में से यथाशक्ति प्रतिज्ञा धारन करे परंतु अभिमान या ईर्षा करे नहीं ॥ १७ ॥ अहो आयुष्मन् जम्बू भगवन्त के मुखारविन्द से मैंने सुना है

ए० एसा भ० करा इ० यहां ख० निश्चय थे० स्थविर भ० भगवानने पं० पांच प्रकार के उ० अवग्रह प० प्ररूपे तं० वह ज० यथा—दे० देवेन्द्रका अवग्रह रा० राजाका अवग्रह गा० गृहस्थ का अवग्रह सा० सागारिकका अवग्रह सा० स्वधर्मी का अवग्रह ॥ १८ ॥ पूर्ववत् ॥ १९ ॥ ✱

मस्साय इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं पंचविहे उग्गहे पण्णत्ते —तंजहा देविंदोग्गहे रायोग्गहे, गाहावइउग्गहे, सागारियउग्गहे, साहम्मियउग्गहे ॥ १८ ॥ एय खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिएहिं सयाजएज्जासि त्तिबेमि ॥ १९ ॥ इति उग्गह पडिमाज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो ॥ इति उग्गह पडिमा नाम सोलस मज्झयणं सम्मत्त ॥ ( प्रथमा चूला समाप्ता ) ✱

भगवन्तने पांच प्रकार का अवग्रह कहा हुआ है—देवेन्द्र का अवग्रह, राजा का अवग्रह, गाथापति का अवग्रह, सागारिक का अवग्रह, साधर्मिकका ॥१८॥ उक्त प्रकार से अनुज्ञा ग्रहण करने की विधि में साधु साध्वी को सदैव यत्ना पूर्वक प्रवर्तना ॥ १९ ॥ यह अवग्रह प्रतिमा नामक षोडश अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा और अवग्रह प्रतिमा षोडश अध्ययन भी संपूर्ण हुआ अब साधु को खडे रहने के लिये स्थान की विधि बताते हुवे स्थाने नाम सप्तदश अध्ययन कहते हैं ✱

# ॥ स्थानं नाम सप्तदश मध्ययनम् ॥

से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांच्छे ठा० स्थान ठा० खडे रहने को से० वे अ० प्रवेशकरे गा० ग्राम ण० नगर जा० यावत् स० सन्निवेस से वे अ० प्रवेशकर गा० ग्राममें जा० यावत् स सन्निवेश में से० से जं० जो ठा० स्थान जा० जाने स० अण्ड सहित जा० यावत् स० मर्कट जाले सहित त० उस त० तथा प्रकार का ठा स्थान अ० अप्रासुक अ अनेषणिक ला० प्राप्त होनेपर णो० नहीं प० ग्रहण करे

से भिक्खू वा (२) अभिकखेइ ठाण ठाइत्तए से अणुपविसेज्जा गाम वा, णगर वा, जाव सण्णिवेसं वा, से अणुपविसित्ता गाम वा, जाव सण्णिवेस वा से ज्ज पुण ठाणं जाणेज्ज। सअडं जाव समक्कडा सताणयं त तहप्पगार ठाणं अफासुय अणेसणिज्जं लाभेसते णो पडिग्गाहेज्जा एव सेज्जागमेणं णेयव्व, जाव उदय

साधु साध्वी को खडे रहने की जगह के लिये ग्राम, नगर यावत् सन्निवेश में जाते जो स्थान ईडा, मकडी वगैरह से भराहुवा मालूम पडे तो वैसा स्थान अयोग्य मानकर ग्रहण करना नहीं यह सब शैय्याध्ययन अनुसार मानना, यावत जो स्थान पानी से उत्पन्न होते हुवे कंदादिक से व्याप्त होवे वैसा स्थान ग्रहण करना नहीं ॥ १ ॥ पूर्वोक्त कर्म जनक स्थानों से अलग रह कर साधुओंने चार प्रतिज्ञाओं से खडा रहने

प० एमे से० शैयागत पे० मानना मा० यावत् उ० पानी प्रसूत ॥ १ ॥ इ० ये आ पापस्थान उ० उल्लं घन अ० अय भि० साधु इ० इच्छे च० चार प प्रतिमासे ठा० स्थान ठा० रहे रहने को त० तहां इ० यह प प्रथमा प प्रतिज्ञा अ० अचित्त स निश्रय उ० सहारा अ० अवलम्बन कर का० कायासे वि आकुंचन प्रसारणादि स० पादविहरण ठा० स्थान ठा० करूंगा अ अय अ० अपर दो० द्वितीया प० प्रतिज्ञा अ० अचित्त को उ० सहारे अ अवलम्बनकरे का० कायासे वि आकुंचन प्रसारणादि

पसुतं ॥ १ ॥ इच्चेयाइं आयतणाइं उवातिकम्म अह भिक्खू इच्छेज्जा चउहिं पडिमाहिं ठाणं ठाइत्तए—तत्थिमा पढमा पडिमा—अचित्तं खलु उवसज्जेज्जा अवलंबेज्ज काएण विपरिकम्मादि सवियारं ठाणं ठाइस्सामि पढमा पडिमा । अहावरा दोच्चा पडिमा—अचित्तं खलु उवसज्जेज्जा अवलंबेज्जा काएण विपरिकम्माइ णो सवियारं ठाणं ठाइस्सामि दोच्चा पडिमा । अहावरा तच्चा पडिमा—अचित्तं खलु उ-

का स्थान मुकरर करना (१) पहिली प्रतिज्ञा अचित्त स्थान में खड़ा रहना, अचित्त वस्तु का अवलम्बन करना। हस्त पाद का आकुंचन प्रसारण करना और थोड़ा बहुत चलने का रखना यह पहिली प्रतिज्ञा (२) दूसरी प्रतिज्ञाः—अचित्त स्थान में रहना अचित्त स्थान का अवलम्बन करना हस्त पाँव का आकुंचन प्रसारण करना किन्तु चलने का बंध रखना यह दूसरी प्रतिज्ञा (३) तीसरी प्रतिज्ञा —अचित्त

णो• नहीं स० पादविहरण ठा० स्थान ठा० सदा रहूंगा दो० द्वितीया प० प्रतिज्ञा अ अथ अ• अपर त तृतीया प० प्रतिज्ञा अ• अचित्तको स० निश्चय उ० सदा रहे अ• अवलम्बन करे णो० नहीं का• कायासे वि० आकुंचन प्रसारणादि स० पादविहरण, ठा• स्थान ठा० रहूंगा चि॰ ऐसा त० तृतीया प• प्रतिज्ञा अ० अथ अ• अपर च• चौथी प• प्रतिज्ञा अ अचित्त उ० सहारे णो० नहीं अ० अवलम्बन करे का०कायासे णो० नहीं वि• आकुंचन प्रसारणादि णो• नहीं स० पादविहारण ठा• स्थान ठा० रहूंगा

वसज्जेज्जा अवलंबेज्जा णो काएण विपरिकम्माइ, णो सवियारं ठाणं ठाइस्सामि त्ति तच्चा पडिमा। अहावरा चउत्था पडिमा अचित्त खलु उवसज्जेज्जा णो अवलंबेज्जा काएण णो वियरिकम्मादि णो सवियार ठाणं ठाइस्सामि त्ति वोसट्ठकाए वोसट्ठ-केसमंसुलोमणहे_ साणिरुद्ध वा ठाण ठाइस्सामि त्ति चउत्था पडिमा। इच्चेयासिं च-

स्थान में रहना अवलम्बन कुच्छ भी करना नहीं हस्त पाँव का आकुंचन प्रसारण करना और फिरने का बंध रखना यह तीसरी प्रतिज्ञा (४) चौथी प्रतिज्ञा अचित्त स्थल में रहना नहीं, अचित्त स्थल का अव लम्बन करना नहीं हस्त पावादिक का आकुंचन प्रसारण करना नहीं वैसे ही चलना फिरना नहीं, परंतु शरीर, केश, स्मश्रु लोम और नख को वोसिराकर निष्कंपपने रहना यह चौथी प्रतिज्ञा इन चारों प्रति ज्ञाओं में कोइ भी प्रतिज्ञा धारन कर विचरना कदापि कोइ इन प्रतिज्ञा धारन न कर सके तो उन का

वो० वोसरार का० काया वो० वोसरग्या के० केश मं० दाढी लो० लोम न० नख सं० निरुद्ध ठा० स्थान में ठा० रहूंगा चि० ऐसा च० चतुर्थी प० प्रतिमा इ० इन० च चार प० प्रतिमाओं में से अ० यावत् प० विरागीपने वि० विचरे णो० नहीं त० वहां किं० किंचिदपि व० बोले ॥ २ ॥ पूर्ववत् ॥ ३ ॥

उण्हं पडिमाणं जाव पग्गहियतराय विहरेज्जा णो तत्थ किंचिवि वदेज्जा ॥ २ ॥

एय खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जाव जएज्जासि त्तिबेमि॥३॥

इति ठाणसत्तक्किय सत्तरहमज्झयण सम्मत्त ॥ ठाण सत्तक्किय समत्त पढम ॥

अवर्णवाद नहीं बोलना ॥ २ ॥ यह ही साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है उन को सर्व बातों में सावधानपने से रहना ॥ ३ ॥ यह खडे रहने की विधि बतानेवाला स्थान नामक सप्तदश अध्ययन समाप्त हुवा आगे अभ्यास करने का स्थान की विधि बतानेवाला निषीधिका नामक अष्टादश अध्ययन कहते हैं

# ॥ निषीथिका नामक अष्टादश मध्ययनम् ॥

से वे भि साधु साध्वी अ वांच्छे णि स्वाध्याय ग० जाने को से० वे ज० जो पु० और णि० स्वाध्याय जा० जाने स० अण्डे सहित स० प्राणी सहित जा० यावत म० मर्कट स० जाल त तथा प्रकार का णि स्वाध्याय स्थान अ०अनेषणिक ला० प्राप्त होने पर णो० नहीं चे०करे॥१॥ से०वे भि०साधु साध्वी अ० वांच्छता है णि स्वाध्याय को ग जाने को से वे ज० जो पु० और णि० स्वाध्याय जा० जाने अ० अण्डे रहित अ० प्राण रहित जा० यावत् म० मर्कट स० जाले त० तथा प्रकारका णि० स्वाध्याय

से भिक्खू वा ( २ ) अभिकंखेज्जा णिसीहिय गमणाए सेज्ज पुण णिसीहिय जाणेज्जा सअंडं सपाणं जाव मक्कडासंताणयं तहप्पगारं णिसीहियं अणेसणिज्जं लाभेसंते णो चेतिस्सामि ॥ १ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अभिकंखइ णिसीहियं गमणाए से ज्ज पुण णिसीहिय जाणेज्जा अप्पंडं, अप्पपाणं जाव मक्कडासंताणयं त

साधु साध्वी अपना उपाश्रय छोडकर अन्य स्थान में स्वाध्याय करने को आवे और जो वह स्थान जीव जंतु यावत् जाले सहित होवे तो वहां उनका स्वाध्याय करना नहीं॥१॥साधु साध्वी स्वाध्याय करने को स्वस्थान छोडकर अन्यत्र जाते जो वह स्थान जीव जंतु रहित होवे तो वह योग्य जानकर ग्रहण करे इस तरह सर्व बिना ढोम्या अध्ययनमें करे सुगम जानना॥२॥ जो वहां दो-दो, तीन तीन, चार चार, पांच पांच

स्थान में फा० फासुक ए० एषणिक स० प्राप्त होने पर चे० करूंगा ए० ऐसेही से० शय्यागम णे० जानना जा० यावत् उ० पानी प्रसूत त्ति० ऐसा ॥ २ ॥ जे० जो त० वहां दु० दो दो ति० तीन तीन च० चार चार प० पांच पांच अ० धारे णि० स्वाध्याय ग० जाने को ते० वे णो० नहीं अ० परस्पर की का० काया को आ० आलिंगन करे वि० लिपटे चु० चुम्बन करे दं० दांत से ण० नख से अ० छेदे ॥३॥पूर्ववत्॥४॥

हप्पगार णिसीहिय फासुय एसणिज्ज लाभेसंते चेतिस्सामि एवं सेज्जागमेण णेयव्व जाव उदयपसूयाए त्ति ॥ २ ॥ जे तत्थ दुवग्गा वा, तिवग्गा वा, चउवग्गा वा पंचवग्गा वा, अभिसंधारेइ णिसीहिय गमणाए, ते णो अण्णमण्णस्स कायं आलिंगेज्ज वा, विलिंगेज्ज वा चुंबेज्ज वा, दंतेहिं वा, णहेहिं वा, अच्छिंदेज्ज वा ॥ ३ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिए समिए सयाजएज्जा सेयमिणं मण्णेज्जासि त्तिबेमि ॥ ४ ॥ इति णिसीहिया णाम मट्ठारह मज्झयणं सम्मत्त निसीहियासत्तिक्कियं सम्मत्त बीइयं

* *

साधुओं वैसी स्वाध्याय भूमि में जावे तो वहां उन के परस्पर शरीर को आलिंगन के स्पर्श या दंत से नख से छेदन करना नहीं ॥ ३ ॥ यह सब साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है उन्होंने सर्व कार्य में सावधान रहकर उपशान्त रहना और यह ही कल्याण कारक है ऐसा मानना ॥ ४ ॥ यह स्वाध्याय स्थान में बैठन की विधि बतानेवाला निषीधिका नामक अष्टादश अध्ययन समाप्त हुवा आगे स्थंडिल जाने की विधि बतानेवाला उच्चार पासवण सत्तक्किय नामक एकोनविंश अध्ययन कहते हैं

# ॥ उच्चार प्रश्रवणं नाम एकोनविंश मध्ययनम् ॥

से० वे भि० साधु साध्वी उ० बडीनीत पा० लघुनीत कि० क्रियासे उ० बाधाहोते स० स्वय का पा० भाजन म० नहोवे त० तब प० पीछेसे सा० समान धर्मीका जा० याचे ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने स० अण्डे सहित स० प्राणी सहित जा० यावत् म० मकडी जं० जाले त० तथा प्रकार की थं० स्थंडिल में णो नहीं उ० बडी नीत पा० लघुनीत वो० वोसिरावे ॥ २ ॥ से० वे भि०साधु साध्वी से० वे जं०जो पु०और थं० स्थंडिल जा०जाने अ०प्राणी रहित अ०

से भिक्खू वा ( २ ) उच्चारपासवणकिरियाए उव्वाहिज्जमाणे सयस्स पायपुच्छणस्स असतीए तओ पच्छा साहम्मिय जाएज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्जं पुण थंडिलं जाणेज्जा सअंडं, सपाणं जाव मक्कडासंताणय तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्जं पु

साधु साध्वी को बडीनीत लघुनीत की बाधा होवे तो अपना पात्र में करना यदि अपनी पास पात्र न होवे तो दूसरे साधु की पास से याचकर उस में करना ॥ १ ॥ जो स्थान अण्डे कीडे जाले युक्त होवे वहां लघुनीत् बडीनीत नहीं करना ॥ २ ॥ जहां अण्डे, जाले न होवे वहां लघुनीत बडीनीत करना ॥ ३ ॥

बीज रहित जा० यावत् म० मर्कट स० भाले त० तथा प्रकार का थं० स्थंडिल में उ० बड़ीनीत पा० लघु नीत वो० करे ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो थ स्थंडिल जा० जाने अ० इसकेलिये ए० एक सा० साधु को स उद्देशकर अ० इस के लिये ब० बहुत सा साधु स० उद्देशकर अ० इसकेलिये ए० एक सा० साध्वी को स० उद्देशकर अ इसकेलिये ब० बहुत सा० साध्वी को स० उद्देशकर अ० इसकेलिये ब० बहुत स० श्रमण, मा० ब्राह्मण, ग० गिन गिनकर स० उद्देशकर पा० प्राणी जा० यावत् उ० धावकर चे० बनावे त० तथा प्रकार का थं० स्थंडिल पु पुरुषान्तर कृत जा० यावत् ब० बाहिर

ण थंडिल जाणेज्जा अप्पपाण अप्पबीयं जाव मक्कडासंताणयं तहप्पगारंसि थंडिलंसि उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा, ( २ ) से जं पुण थंडिल जाणेज्जा अस्सिंपडियाए एगं साहम्मियं समुद्दिस्स, अस्सिंपडियाए बहवे साहम्मिया समुद्दिस्स अस्सिंपडियाए एगं साहम्मिणिं समुद्दिस्स, अस्सिंपडियाए बहवे साहम्मिणीओ समुद्दिस्स अस्सिंपडियाए बहवे समण—माहण पगणिय २ समुद्दिस्स, पाणाइ ( ४ ) जाव उद्देसियं चेतेति तहप्पगारं थंडिलं पुरिसंतरकडं जा

साधु साध्वी को ऐसा मालूम पड़े कि यह स्थंडिल स्थान एक साधु के लिये, या बहुत साधु के लिये, बनाया है, या एक साध्वी के लिये या बहुत साध्वी के लिये बनाया है, या बहुत शाक्यादि साधु ब्राह्मण को उद्देश

णी॰ निकाला अ॰ अन्य त तथा प्रकारके थं॰ स्थंडिल स्थान में णो॰ नहीं उ॰ वडीनीत पा॰ लघुनीत वो॰ करे. ॥ ४ ॥ से॰ वे भि साधु साध्वी से वे जं॰ जो पु॰ और थं॰ स्थंडिल जा जाने ब॰ ब हुत स श्रमण, मा॰ ब्राह्मण कि॰ कृपण व भिखारी अ॰ अतिथि स॰ उद्देशकर पा॰ प्राणी उ॰ घात कर चे बनावे त तथा प्रकार का थं॰ स्थंडिल स्थान अ॰ अपुरुषान्तर कृत जा॰ यावत् ब॰ बाहिर अ॰ नहीं से गया अ॰ अन्य त॰ तथा प्रकारका थं॰ स्थंडिल में णो॰ नहीं उ॰ वडीनीत पा॰ लघुनीत वो करे ॥ ५ ॥ अ॰ अब पु फीर ए॰ ऐसा जा॰ जाने पु पुरुषान्तर कृत जा॰ यावत् ब॰ बाहिर

व बहिया णीहड वा अण्णयरंसि वा तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण थंडिल जाणेज्जा बहवे सम ण—माहण किवण वणीमग अतिही समुद्दिस्स पाणाइं ( ४ ) जाव उद्देस्सियं चे तेति तहप्पगारं थंडिल अपुरिसंतरकड जाव बहिया अणीहडं वा अण्णयरंसि वा तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ ५ ॥ अह पुण एवं जा

कर २ तथा बहुत जीवों की हिंसा करके स्थान में आया है इस तरह जो उद्देशिक दोष युक्त स्थान भोगता होवे या न होवे तो उस में लघुनीत वडीनीत करना नहीं ॥ ४ ॥ जो स्थान बहुत श्रमण, ब्राह्मण, अतिथि, भिखारी, तथा मुसाफिरों के लिये सामान्यपने करने में आया होवे वैसा स्थान अपुरुषान्तर कृत और काम में नहीं लाया हुवा होवे तो वहां वडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ ५ ॥ परंतु ऐसा स्थान

णी० निकाल्म अ० अन्य त० तथा प्रकारका थ० स्थंडिलमें उ० बडीनीत पा० लघुनीत वो० करे ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज्जं० जो पु० फीर जा० जाने थं० स्थंडिल जा० जाने अ० इस के लिये क० किया का० कराया पा० उधार लिया, छ० छेदाया, घ० घुमारा, लि० लिपा, म० साफ किया स० धूपदिया, अ० अन्य त० तथा प्रकारका थ० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत वो० करे ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज्जं० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने इ० यहां ख०

णेज्जा पुरिसंतरकडं जाव बहिया णीहडं वा अण्णयरंसि तहप्पगारंसि थंडिलंसि उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण थंडिलं जाणेज्जा अस्सिंपडियाए कयं वा, कारियं वा, पामिच्चियं वा, छण्णं वा, घट्ठं वा, लित्तं वा, मट्ठं वा, संपधूमितं वा, अण्णयरंसि तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण थंडिलं जाणेज्जा इह खलु

पुरुषांतर कृत और उपभोग में लिया हुवा होवे तो वहां लघुनीत बडीनीत करना ॥ ६ ॥ जो स्थंडिल स्थान साधु साध्वी के लिये कराया होवे उधारा लिया होवे, सुधराया होवे लीपाया होवे, साफ कराया होवे, धूपादि दिया होवे, और इस प्रकारके अन्य भी आरंभिक काय किये होवे तो उस में लघुनीत बडीनीत करना नहीं॥७॥जिस मकान में से गृहस्थ, गृहस्थ के पुत्र, कंद, मूल, हरी, धान्य, वगैरह अंदरसे बाहिर लाये

स्थ गा० गृहस्थका पुत्र कं० कंद, मू० मूल जा० यावत ह० हरी वनस्पति अं० अंदर से
। निकाया बा० बाहिर से अं० अंदर सा० लेजावे अ० अन्य त० तथा मकारका थं०
णो नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत वो० करे. ॥ ८ । से० वे भि० साधु साध्वी से०
थोर थ० स्थंडिल जा० जाने खं० स्थंभ पर पी० पाटपर म० मांचापर मा० मा
त्री पर, पा० मासाद पर अ० अन्य थं० स्थंडिल में णो० नहीं उ० बडीनीत
वो० करे ॥ ९ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० थोर थं०

ा, गाहावइपुत्ता वा, कंदाणि वा, मूलाणि वा, जाव हरियाणि वा, अता
णीहरित वाहाओ वा अतो साहरति अण्णयरासि वा तहप्पगारासि थंडि
उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण
ाणेज्जा खधसि वा, पीढासि वा, मचासि वा, मालसि वा, अट्टासि वा, पासाय
अण्णयरासि थंडिलंसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू

अंदर रखे होवे ऐसे मकान में साधु को बडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ ८ ॥ साधु साध्वी
ठ, मांचा, माल, अगासी, मासाद के या ऐसी अन्य जगह पर बडीनीत लघुनीत करना
साधु साध्वी को सचित्त मिट्टि वाली जमीन में, भींजी मिट्टि वाली जमीन में, कची मिट्टि वाली

स्थण्डिल जा० जाने म० सचित्त पु० पृथ्वी स० स्निग्ध पु० पृथ्वीपर स० कच्ची पु० पृथ्वीपर म० भित्ति म० मकरंद चि सचित्त सि० शिला सचित्त से० कंकर सचित्त को० सरा दा० काष्ठ जी० जीव भवेशकीये होवे जा० यावत् म० मकरंद मं० जाले अ० अन्य स तथा प्रकारका थ स्थण्डि ल में णो नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत वो० करे ॥ १० ॥ से० वे भि साधु साध्वी से० वे ज० जो पु और थ० स्थण्डिल जा० जाने इ० यहां ख० निश्चय गा० गृ स्थ गा गृहस्थ

वा ( २ ) से ज्ज पुण थण्डिलं जाणेज्जा अणंतरहियाए पुढवीए ससणिद्धाए पुढवी ए ससरक्खाए पुढवीए मट्टियामक्कडाए चित्तमंताए सिलाए, चित्तमंताए, लेलुए चि त्तमंताए कोलावासंसि वा, दारुयंसि वा जीवपइट्ठियंसि वा जाव मक्कडा संताण यंसि वा अण्णयरंसि वा तहप्पगारंसि थण्डिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा॥१०॥से भिक्खू वा (२) से ज्ज पुण थण्डिलं जाणेज्जा इह खलु गाहावई वा, गाहावइपुत्ता वा,

जमीन में, सचित्त भिन्न में, सचित्त पाषाणमें कीडे युक्त काष्टपर, या ऐसी अन्य जीव जन्तु युक्त जमीन में बडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ १० ॥ जिस स्थान में गृहस्थ या गृहस्थ का पुत्रों कंद, मूल, या बीज गत काष्ठ में भरा वर्तमान काल में भरता है और आगामी काल में भरेंगे ऐसा स्थान में साधु साध्वी को

का पुत्र क० कर जा० यावत् वी० बीज प० रखेये, प० रखेंगे प० रखेंगे अ० अन्य त तथा प्रकारका थ० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत वो० करे ॥ ११ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० व ज० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने इ० यहां गा० गृहस्थ गा० गृहस्थ का पुत्र सा० साल, वी० व्रीहि, मु० मूंग, मा अडद ति० तिल, कु० कुलस्थी ज० जव ज जुवारी प० बोइथी प० बोतेहै प० बोयेंगे अ० अन्य त तथा प्रकारका थं० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत वो० करे ॥ १२ ॥ से वे भि० साधु साध्वी पु०

कराणि वा, जाव वियाणि वा, परिसाडेंसु वा, परिसाडेंति वा, परिसाडिस्संति वा, अण्णयरांसि वा, तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण थंडिल जाणेज्जा—इह खलु गाहावई वा गाहावइपुत्ता वा, सालीणि वा, वाहीणि वा मुग्गाणि वा, मासाणि वा, तिलाणि वा, कुलत्थाणि वा, जवाणि जवजवाणि वा, पतिरिंसु वा, पतिरिंति वा, पतिरिस्संति वा, अण्णयरांसि वा, तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा

लघुनीत बडीनीत करना नहीं ॥ ११ ॥ जिस स्थान में शालि, मुंग, उडद, तिल, कुलत्थी, जव, जुवारी इत्यादि धान्य बोया होवे, बोते होवे या बोने का होवे, तो वहां बडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ १२ ॥

और थं०स्थंडिल जा०माने आ०कचरकापुंज प०फटीजमीनमें मि०सन्ववाली जमीनपर वि०किचडमें खा०खीले लगे हाथ एसी जमीन क० करब वाली जमीन, प० खाड, द० गुफा, प० कोग्डी, स० समस्थान, वि० विषम स्थान अ० अन्य त० तथा मकार का थं० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत वो० करे ॥ १२ ॥ से वे भि० साधु साध्वी से वे ज्जं० जो पु० और थ० स्थंडिल जा० जाने मा० मनुष्य केलिये भोजन बनाने का स्थान म० महिष, व० वल, अ० अश्व, कु० मूर्गा, ला० लवा, व० बटेर, ति०

( २ ) से ज्जं पुण थंडिलं जाणेज्जा आमोयाणि वा, घसाणि वा, भिलुयाणि वा, वि-ज्जुलाणि वा, खाणुयाणि वा, कडवाणि वा, पगडाणि वा, दरीणि वा, पदुगाणि वा, समाणि वा, विसमाणि वा, अण्णयरंसि वा, तहप्पगारंसि थंडिल णो उच्चारपासव णं वोसिरेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्जं पुण थंडिल जाणेज्जा माणु सर धणाणि वा, महिसकरणाणि वा, वसभकरणाणि वा, अस्सकरणाणि वा, कुक्कु डकरणाणि वा, लावयकरणाणि वा, वट्टयकरणाणि वा, तित्तरकरणाणि वा, कवोय

। ऐसे ढग में फटी जमीन पर, संधवाली पर, कीचड में, जहां स्थंभ पडे होवे, जहां करब घास पडा होवे वहां, गत्ताओं में, गुफाओं में कोठ किठे आदि विषम स्थान में लघुनीत बडीनीत करना नहीं ॥ १२ ॥ जिस स्थान में मनुष्यों के लिये भोजन तैयार होता होवे या जहां महिष, पाडा, वृषभ, घोडा, कुर्कट, ला

तितर क० कपोत क० कपिंजल ( काबर ) अ अन्य त० तथा प्रकारका थ० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ बडीनीत पा लघुनीत वो० करे. ॥१४॥ से० वे भि० साधु साध्वी स वे जं० जो पु० और थ० स्थंडिल जा० जाने वे० फांसी स्थान गि० गृद्धपक्षीसे मराने के स्थान, त० वृक्षमे गिरकर मरने का स्थान मे०पर्वतसे पर मरने का स्थान वि विषभक्षण कर मरने का स्थान, अ० अग्निमें जल मरने का स्थान अ० अन्य त० तथा प्रकार का थ० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ०बडीनीत पा०लघुनीत वो०करे ॥१५॥ से वे

करणाणि वा, कपिंजलकरणाणि वा, अण्णयरंसि वा, तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ १४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा वेहासट्ठाणेसु वा, गिद्धपिट्ठट्ठाणेसु वा, तरुपतणट्ठाणेसु वा, मेरुपवडणट्ठाणेसु वा विसभक्खणयट्ठाणेसु वा, अगणिकवडयट्ठाणेसु वा अण्णयरंसि तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ १५ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से जं पुण थंडिलं

चक, चतक, तितर, कबूतर, या कपिंजल वगैरह रखने में प्राप्त होवे वैसे स्थल में साधु साध्वीको लघुनीत बडीनीत करना नहीं ॥ १४ ॥ जिस स्थान में मनुष्य फांसी लेते होवे, अपने को गृद्ध भक्षण कराते होवे, वृक्षपरसे गिरते होवे, या पर्वत परसे झंपापात करते होवे, या जहां विष खाकर मरते होवे, या जहां अग्नि में प्रवेश करते होवे, वैसे स्थल में लघुनीत बडीनीत करना नहीं ॥ १५ ॥ साधु साध्वी को बाग में, बगीचे में,

भि० साधु साध्वी से० वे ज्ज० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने आ० बगीचे में उ० उद्यान में व० वनमें, व० वनखण्ड में, दे० देवालय में स० सभामें प० पानीकी प्रपामें अ० अन्य त तथा प्रकार का थं० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ० बडीनीत पा लघुनीत वो० करे ॥१६॥ से०वे भि०साधु साध्वी से० वे ज्जं जो पु० और थं स्थंडिल जा० जाने अ द्वारपर कोठा च० रास्ता, दा० द्वार गो नगरके द्वार अ० अन्य त तथा प्रकार के थं० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ० बडीनीत पा०लघुनीत वो करे ॥१७॥

जाणेज्जा आरामाणि वा, उज्जाणाणि वा, वणाणि वा, वणसंडाणि वा, देवकुलाणि वा, सभाणि वा, पवाणि वा, अण्णयरसि वा, तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासव णं वोसिरेज्जा ॥ १६ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण थंडिल जाणेज्जा अट्टा लयाणि वा, चारियाणि वा, दाराणि वा, गोपुराणि वा, अण्णयरसि तहप्पगारसि थंडि लसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ १७ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण

वन में, देवल, सभा या पानी की प्रपा में वगैरह स्थल में बडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ १६ ॥ मकानके ऊपर का स्थान, रास्ता, दरवज्जा, नगरद्वार, और अन्य भी ऐसे स्थानों में साधु साध्वी लघुनीत बडीनीत करे नहीं ॥ १७ ॥ त्रिद्वारी स्थान, चौद्वारी स्थान, बहुद्वारी, चौमुख रस्ता और अन्य भी ऐसे स्थान में

मे० वे भि० साधु साध्वी जं० जो पु० और थ० स्थंडिल स्थान जा० जाने ति० त्रिक स्थान च० चौक स्थान च० चौटा में च० चतुर्मुख अ० अन्य त० तथा प्रकारके थं० स्थंडिल में णो० नहीं उ०वडीनीत पा० लघुनीत वो० करे ॥ १८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से वे जं० जो पु० और थ० स्थंडिल जा० जाने इं० निंभाडे में, खा० क्षारकी भट्टी में, म० स्मशान में म० मृतक के स्तूप में म मृतकके चैत्य में अ० अन्य त० तथा प्रकार के थ० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं व वडीनीत पा० लघुनीत वो करे ॥ १९ ॥ से० वे

थंडिलं जाणेज्जा तियाणि वा, चउक्काणि वा, चच्चराणि वा, चउम्मुहाणि वा, अण्णय रंसि वा तहप्पगारंसि थंडिल्लंसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ १८ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण थंडिल जाणेज्जा इंगालडाहेसु वा, खारडाहेसु वा, मडयडाहेसु वा, मडयथूभियासु वा, मडयचेइएसु वा, अण्णयरंसि वा, तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ १९ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पु-

वडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ १८ ॥ कुंभार का निभाडा में, क्षार की भट्टी में, स्मशान में, कबरों में, मरेहुवे पर बनाये हुये स्तूप पर, मरेहुवे पर बनायेहुये चैत्यों पे, और अन्य भी ऐसे स्थानों में वडीनीत लघु नीत करना नहीं ॥ १९ ॥ नदी के किनारे, तीर्थस्थान, पानीलोग के कीचड करे सो तीर्थस्थान, परंपरासे

भि० साधु साध्वी से० वे ज्जं० जो पु० और थ० स्थंडिल जा० जाने ण० नदीके तीर्थस्थान प० कादव के तीर्थस्थान उ० पानीके परम्पराके तीर्थस्थान से० पानी सींचने के तीर्थस्थान अ० अन्य त० तथा प्रकार के थ० स्थंडिल में णो० नहीं उ० बडीनीत लघुनीत वो० करे ॥ २० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० ये ज्जं० जो पु० और थ स्थंडिल जा० जाने ण नवीन म० मृत्तिका की खदान ण० नवीन गो० गौचर स्थान ग पशुका घास खाना ख खदान अ०अन्य त० तथा प्रकार के थ स्थंडिल स्थानमें णो० नहीं उ० बडीनीत पा०लघुनीत वो० करे ॥२१॥ से० वे भि० साधु साध्वी से ये ज्जं० जो पु० और थ० स्थं

ण थंडिल जाणेज्जा णदियायतणेसु वा, पकायतणेसु वा उग्घायतणेसु वा, सेयणव हांसि वा अण्णयरंसि वा, तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ २० ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्ज पुण थंडिल जाणेज्जा णवियासु वा म ट्टियखाणियासु वा, णवियासु वा गोप्पलेहियासु वा, गवादणीसु वा, खणीसु वा अ ण्णयरंसि वा, तहप्पगरंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ २१ ॥

पूजाते आये ऐसे पिपलादि को पानी सिंचे सो तीर्थस्थान, और अन्य भी ऐसे लोकमान्य तीर्थस्थान में बडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ २० ॥ नई मिट्टि की खान, नये गौचर स्थान, पशु का घास का स्थान खदान तथा अन्य भी एसे स्थान में बडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ २१ ॥ दारुके, शाकके, कंदमूल के,

दिन जा० जाने दा० दालके स्थल, सा० शाक के स्थल, मू० कंदमूलके स्थल, ह० दस्तारु वनस्पति का स्थान अ० अन्य त० तथा प्रकारके थं० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ०बडीनीत पा०लघुनीत वो०करे ॥ २२ ॥ स० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज्जं० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने अ० बीया वृक्षके वन स० शणके वन, धा० धावडीका वन, के० केतकी कानन अं० आम्रका वन अ० अशोक वृक्षका वन णा० नाग वृक्षका वन पु० पूनाग वृक्षका वन चु० चूर्ण वृक्षका वन अ० अन्य त० तथा प्रकार के प० पत्र पर पु० पुष्प पर, फ० फलपर बी० बीजपर, ह० हरीपर णो०नहीं उ०बडीनीत पा०लघुनीत वो० करे

से भिस्सू वा ( २ ) से ज्ज पुण थडिल जाणेज्जा डागवर्चसि वा, सागवर्चसि वा, मूलगवच्चसि वा, हत्थकरवच्चसि वा, अण्णयरसि वा तहप्पगारंसि थंडिलसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ २२ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) से ज्जं पुण थंडिल जाणेज्जा असणवणसि वा, सणवणसि वा, धायईवणंसि वा, केयईवणसि वा अववणसि वा, असोगवणसि वा णागवणसि वा पुण्णागवणसि वा, चुण्णगवणसि वा, अण्णगरेसु वा, तहप्पगारेसु वा, पत्तोवएसु वा पुप्फोवएसु वा, फलोवएसु वा, बीओव-

और अन्य भी ऐसे स्थान में लघुनीत बडीनीत करना नहीं ॥ २२ ॥ बीया के वन में शण के वन में, धावडी के वन में, केतकी के वन में, आम्र के वन में, अशोक के वन में, नागवृक्ष के वन में, पुनागवृक्ष के

॥ २१ ॥ से• मे भि• साधु साध्वी स० अपना पात्र वा• या प० अन्य का पात्र ग० ग्रहण कर से० फिर त० उसे आ० लेकर ए एकान्त अ० जावे अ० मौन अ• अदृश्य अ० आपी रहित जा• यावत् म• मर्कट सं• जाले अ• अथ आ० बगीचे में उ० उपाश्रय में उ० बडीनीत लघुनीत बो करे बोसराकर से० फीर त० उसे आ• लेकर ए० एकान्त अ जावे अ० मौन जा० यावत् म० मर्कट सं० जाले अ०

एसु वा, हरिओवएसु वा, णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ २३ ॥ से भिक्खू वा (२) सयपाययं परपायय वा गहाय सेत मायाए एगंत मवक्कमेज्जा अणावायंसि वा असलोइयसि अप्पपाणासि जाव मक्कडासताणयसि अहारामंसि वा उवस्सयासि उच्चारपासवण वोसिरेज्जा वोसिरित्ता से त मायाय एगत मवक्कमेज्जा अणावाय सि जाव मक्कडासताणयसि अहारामंसि वा ज्झामथंडिलसि वा अण्णयरसि वा तहप्पगारसि थंडिलंसि अचित्तासि ततो सजयामेव उच्चारपासवणं परिट्ठवेज्जा

चूर्ण वृक्ष के, इत्यादि वनों में जहां फल, फूल, बीज, पडे होवे तो वहां लघुनीत बडीनीत करे नहीं ॥२३॥ साधु साध्वी को अपना या अन्य का पात्र लेकर एकान्त में जहां कोइ आव नहीं, तथा जहां कोइ देखे नहीं, वैसा निर्जीव स्थल में बडीनीत लघुनीत करना, करके उस पात्र को लेकर आराम में, जलाहुवा स्थल में, या

अथ मा० शरीर में श० मर्द मे० साधु उद्या० दृश्य जमीन में अ० अम्य त० तथा प्रकारके थं० स्थान में प० भाशिप में श० मर्द प० साधु उ० बडीनीत लघुनीत प० परिठवे ॥ २४ ॥ पूर्ववत् ॥ २५ ॥

॥ २४ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जाव जएज्जासि त्तिबेमि ॥ २५ ॥ इति उच्चारपासवर्ण सत्तिक्कयनामं एकोनवीस मज्झयण स म्मत्त उच्चारपासवण सत्तिक्कय सम्मत्त तइयं

ऐसे ही ऐसा प्रकार का कोई भविष्य स्थान में यत्ना पूर्वक परिठवना ॥ २४ ॥ यह सर्व साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है उनोंने सब स्थानों में यत्न रखना ॥ २५ ॥ यह बडीनीत लघुनीत परिठाने की विधि बतानेवाला एकोनीश अध्ययन समाप्त हुवा आगे शब्द विषय से निवृत्ति बतानेवाला शब्द नामक तीसरा अध्ययन कहते हैं

# ॥ शब्द नामकं विंशतितम मध्ययनम् ॥

से० वे मि० साधु साध्वी मु मृदंग का शब्द नं तबले का शब्द झ झालर का शब्द अ० अन्य त० तैसे वि० विविध प्रकार के वि० विशेष भवाजवाले स० शब्द क० कर्णश्रोत्र के लिये णो० नहीं अ० धारे ग० जानेको ॥ १ ॥ से० वे मि० साधु साध्वी अ० अथ ए० एकेक स० शब्द सु सुने तं० यह व०यथा वी०वीणाके शब्द वि०विपचीके शब्द व०बद्धीसकके शब्द तु०तारके शब्द प०पणवके शब्द तुं०तुम्बीकी वीणाके शब्द ढु० ढुंढुणी के शब्द अ० अन्य त० तैसे वि० विविध प्रकार के स० शब्द त० सामान्य अ

से भिक्खू वा ( २ ) मुइंगसद्दाणि वा, नंदीमुइंगसद्दाणि वा, झल्लरिसद्दाणि वा, अण्णयराणि वा तहप्पगाराणि विरूवरूवाणि विततांइ सद्दाइं कण्णसोयपडिया-ए णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ १ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा वीणासद्दाणि वा, विपंचिसद्दाणि वा, बद्धीसगसद्दाणि वा, तुणयसद्दाणि वा, पणयसद्दाणि वा तुंबवीणियसद्दाणि वा, ढुंकुलसद्दाणि वा, अण्ण पराइं वा तहप्पगाराइं विरूवरूवाणि सद्दाणि तताइं कण्णसोयपडियाए णो अ

साधु साध्वी को मृदंग, तबले, झालर आदि वादित्रों के शब्द सुनने की इच्छा से किसी स्थान जाना नहीं ॥ १ ॥ वीणा के, वद्धमुखी के, बद्धीसक के, सवार के, पत्ते की सतारके, तुम्बी पात्र की सतारके, ढींढुणी के और भी ऐसे तारकी जात के वादित्र के सामान्य अवाजवाले के शब्द सुनने को जाना नहीं

पाज,धासे क० कर्णश्रोत कालिय णो नहीं अ० धारे ग० जानेका ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० अथ वे० एकेक स० शब्द सु० सुने त० यह ज० यथा ता० तालके शब्द क० कंसतालके शब्द ल० कं सिकाके शब्द गो० गोमिण्डा के शब्द कि० किराकिरी के शब्द अ० अन्य त तैसे वि० विविध प्रकार के ता०तासके क०सुननेको अ०शब्द णो०नहीं अ०धांच्छे ग०जाने को ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० अथ वे० एकेक स० शब्द सु० सुने त० वह ज० यथा सं० शंख के शब्द वे० वेणुके शब्द, वं० बांसके शब्द ख० खरमुखी के शब्द पि० पींपी के शब्द अ० अन्य त तैसे वि० विविध प्रकारके स० शब्द सु०

भिसंधारेज्जा गमणाए ॥ २ ॥ से भिक्खु वा ( २ ) अहावेगइयाइ सद्दाइ सुणे ति तजहा तालसद्दाणि वा, कंसतालसद्दाणि वा, लत्तियसद्दाणि वा, गोहियसद्दाणि वा किरिकिरियसद्दाणि वा अण्णयराणि वा, तहप्पगाराइ विरूवरूवाइं तालसद्दाइं कण्णसोयपडियाए णो अभिसधारेज्जा गमणाए ॥ ३ ॥ से भिक्खु वा ( २ ) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेत्ति तंजहा संखसद्दाणि वा, वेणुसद्दाणि वा, वंससद्दाणि वा खरमुहीसद्दाणि वा, पिरिपिरियसद्दाणि वा, अण्णयराइ वा तहप्पगाराइ विरूवरूवाइं

॥ २ ॥ ताल, कंसताल, झांझ, कंशिका, गोमिलणी आदि तालजाति के शब्द सुनने को जाना नहीं ॥ ३ ॥ शंख के, वंशी के, रणशींगा के, पीपी के और अन्य भी ऐसे फूकने से बजे ऐसे वादित्र के शब्द सुनने को

फूकने के क० कर्णश्रोत केलिये णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० एकेक स० शब्द सु० सुन तं० वह ज०यथा प०वप्पारे फ० खाइ जा यावत स०तालाव स०तालावकी पंक्ति स० समुद्र अ० अन्य त० तैसे वि० विविध प्रकार के स० शब्द क० कर्णश्रोत केलिये णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० एकेक स० शब्द सु० सुने तं० वह ज० यथा क० पानी के कच्छका णू० वनस्पति के झूमका ग० गहन वनस्पतिका व० वनदुर्गका, प० पर्वत प० पर्वत दुर्गस्थान अ० अन्य त० तैसे वि० विविध प्रकार के स० शब्द क० सुनने केलिये णो० नहीं अ० धारे

सद्दाइं झूसिराइं कण्णसोयपडियाए णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा (२) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा वप्पाणि वा फलिहाणि वा, जाव सराणि वा, सरपंतियाणि वा, सरसरपंतयाणि वा, अण्णयराइं वा, तहप्पगाराइं विरूवरूवाइं सद्दाइं कण्णसोयपडियाए णो अभिसंधारेज्जा गमणाए॥ ५॥ से भिक्खू वा, (२) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा कच्छाणि वा, णूमाणि वा, गहणाणि वा, वणाणि वा, वणदुग्गाणि वा पव्वयाणि वा पव्वयदुग्गाणि वा, अण्णयराइं वा, तहप्पगाराइं वि

जाना नहीं ॥ ४ ॥ साधु साध्वी को क्यार, खाइ, यावत् तालाव, समुद्र इत्यादि स्थानों में होते हुवे शब्दों सुनने को जाना नहीं ॥ ५ ॥ गहूज व मदेश, वृक्षोंकी घन जाल, झाडी, पहाड, पर्वत दुर्ग, इत्यादि स्थानोंमें

ग० जाने को ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० एकेक स० शब्द सु० सुने तं० वह ज० यथा गा० ग्रामके ण० नगरके णि० निगमके रा० राजधानी के आ० आश्रम के प० पाटनके सं० सन्निवेश के अ० अन्य त० तैसे स० शब्द णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० ए० एक स० शब्द सु० सुने त० वह ज० यथा आ० बागमें, उ० उद्यान में व० वनमें व० वनखण्ड में दे० देवल में स० सभामें प० पानी की प्रपामें अ० अन्य त० तैसे स० शब्द णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥८॥

रूवस्त्वाइ सद्दाइं कण्णसोयपडियाए णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा गामाणि वा, णगराणि वा णिगमाणि वा, रायहाणिओ वा, आसमपट्टणसण्णिवेसाणि वा, अण्णयराइं वा, तहप्पगाराइं सद्दाइं णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा आरामाणि वा उज्जाणाणि वा, वणाणि वा, वणसंडाणि वा, देवकुलाणि वा, सभाणि वा, पवाणि वा, अण्णयराइं वा, तहप्पगाराइं सद्दाइं णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अहावेगइया

होते हुवे शब्दों सुनने को वहां जाना नहीं ॥ ६ ॥ ग्राम, नगर, निगम, राजधानी, आश्रम, पाटन या सन्निवेश में होते हुवे शब्दों सुनने को जाना नहीं ॥ ७ ॥ आराम, उद्यान, वन, वनखंड, देवल, सभा, पानी की प्रपा विगैरह स्थलों में होते हुवे शब्दों सुनने को जाना नहीं ॥ ८ ॥ घरों में, महेल की चांदनीपर, नगर

स० से भि० साधु साध्वी अ० एकेक स० शब्द सु० सुने तं० वह ज० यथा अ० चांदनी में अ० कोटपर च० मार्गपर वा द्वारपर गो० नगर पोलमें अ० अन्य त० वैसे स० शब्द णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ ९ ॥ से० से भि० साधु साध्वी अ० एकेक स० शब्द सु० सुने तं० वह ज० यथा ति० त्रिमुख च० चौक, च० [illegible]णी रस्ता च० चातुर्मुखी अ० अन्य त० वैसे स० शब्द णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ १० ॥ से० से भि० साधु साध्वी म० महिष स्थान, व० वृषभ स्थान, अ० अश्व स्थान ह० हस्ती का

इ सद्दाइ सुणेति तंजहा अट्टाणि वा, अट्टालयाणि वा, चारियाणि वा, दाराणि वा, गोपुराणि वा, अण्णयराई वा, तहप्पगाराइं सद्दाइं णो अभिसंधारेज्जा गमणाए॥९॥ से भिक्खू वा ( २ ) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेत्ति तंजहा तियाणि वा, चउक्काणि वा, चच्चराणि वा, चउम्मुहाणि वा, अण्णयराइं वा, तहप्पगाराइं सद्दाइं णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ १० ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा महिसट्ठाण—करणाणि वा, वसभट्ठाण—करणाणि वा, अस्सट्ठाण करणा-

कोटपर रस्ते में, दरवज्जे पर होवे हुवे शब्दों सुनने को जाना नहीं ॥ ९ ॥ साधु साध्वी को त्रिमुख, चौमुख, स्थान में, या मार्ग में गानवान होता होवे तो उसे सुनने को जाना नहीं ॥ १० ॥ साधु साध्वी को महिष, वृषभ, अश्व, हस्ती, आदि पशु के स्थान तथा कपिंजल आदि पक्षियों के स्थान में होते हुवे शब्दों

स्थान वा यावत् क० कापरका स्थान अ० अन्य त० तैसे स० शब्द णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ ११ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० एकेक स० शब्द सु० सुने त० वह ज० यथा म० महिष का युद्ध व० वृषभका युद्ध अ० अश्व का युद्ध जा० यावत् क० कपिंमल का युद्ध अ० अन्य त० तथा प्रकार का णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० एकेक स० शब्द सु० सुने तं० वह ज० यथा पु० पूर्व जु० युद्ध स्थान ह० अश्वका युद्ध स्थान ग० गजका युद्ध स्थान अ० अन्य

णि वा, हत्थिट्ठाण-करणाणि वा जाव कविंजलट्ठाण-करणाणि वा, अण्णयराइ वा, तहप्पगाराइ सद्दाइ णो अभिसधारेज्जा गमणाए ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अहावेगइयाइ सद्दाइ सुणेति तंजहा महिसजुद्धाणि वा, वसभजुद्धाणि वा, अस्सजुद्धाणि वा, हत्थिजुद्धाणि वा, जाव कविंजलजुद्धाणि वा, अण्णयराइ तहप्पगाराइ णो अभिसधारेज्जा गमणाए ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा पुव्वजूहियट्ठाणाणि वा, हयजूहियट्ठाणाणि वा, गयजूहिय ट्ठाणा-

सुनने को जाना नहीं ॥ ११ ॥ साधु साध्वी को महिष, वृषभ अश्व, हस्ती, कपिंमल वगैरह का युद्ध सुनकर वहां जाना नहीं ॥ १२ ॥ साधु साध्वी मनुष्य के युद्ध स्थान, अश्व के युद्ध स्थान, हस्ती के युद्ध

त० तैसा णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ १३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् सु० सुने तं० वह ज० यथा अ० कथा स्थान मा० मान अनुमान का स्थान म० मोटे णा० नाच गीत वा० वार्दित्र तं० वीणा त० करतल ता० कंसताल तु० मृदंग प० पडह वा० वार्दित्र स्थान अ० अन्य त० तैसे णो नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ १४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा यावत् सु० सुने तं० वह ज० यथा क० क्लेश डिं० स्वपक्षी का ड परपक्षी का दो० दोराज्यका वि० विरुद्ध राज्य का अ० अन्य त०

णि वा, अण्णयराइं वा तहप्पगाराइं णो अभिसधारेज्ज गमणाए ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव सुणेति तजहा—अक्खाइयट्ठाणाणि वा, माणुम्माणियट्ठाणाणि वा, महयाहयणट्ट गीय—वाइय—तंति—तलताल—तुडिय—पडुप्प—वाइयट्ठाणाणि वा, अण्णयराइं वा तहप्पगाराइं णो अभिसधारेज्ज गमणाए ॥ १४ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव सुणेति तजहा कलहाणि वा, डिंबाणि वा, डमराणि वा, दोरज्जाणि वा,

स्थान में होते हुवे शब्दों सुनने को जाना नहीं ॥ १३ ॥ जहां काम कथा, युद्ध कथा, व्यापार कथा, होती होवे या तोल, माप होता होवे या जहां महानृत्य गीत, या वीणा, ताल मृदंगादिक के वार्दित्र होते होवे ऐसे स्थलों में शब्द सुनने को जाना नहीं ॥ १४ ॥ जहां दो राजाओं को वैर विरुद्धता से क्लेश.

जैसे जो० नहीं श्र० घोरे ग जाने को ॥ १८ ॥ से० वे मि० साधु साध्वी जा० यावत् स० शब्द सु० सुने सु० जैसे बा० बालिका प० परवरी मं० मंडित अ० अलंकृत नि० लेजाते अ० अभुसे वे० देखकर प० एक पु० पुरुष को व० वध करने को नी० लेजाते दे० देख अ० अन्य त० तैसे णो० नहीं ग० गमन्छ ग० जाने को ॥ १९ ॥ से० वे मि० साधु साध्वी अ० अन्य नि० विविध प्रकार के म० महोत्सव प० ऐसा जा० जाने व० बह ग० यथा म० बहुत शकट ब० बहुत रथ ब० बहुत म्लेच्छ ब० बहुत चोर म अन्य त०

विरूवरूवाणि वा अण्णयराइं वा तहप्पगाराइं णो अभिसंधारेज गमणाए ॥१९॥ से भिक्खू वा ( २ ) जाव समाई सुणेति सुखिय, दारियं, परिभुयं, मंडियालंकियं निवु समाणियं पेहाए एगं पुरिसं वा वहाए णीणिजमाणं पेहाए अण्णयराइं तहप्प गाराइं णो अभिसंधारेज गमणाए ॥ २० ॥ से भिक्खू वा ( २ ) अण्णयराइं विरूवरूवाइं महासवाइं एवं जाणेजा तंजहा बहुसगडाणि वा, बहुरहाणि वा,

भिन्नार्थ, स्वचक्री की सेना परचक्री की सेना के कथन होते होवे वहाँ उसे सुनने को जाना नहीं ॥ १८ ॥ कन्योत्सवादि प्रयोजन से किसी बाल कुमारिका को अभ्यङ्ग करा के प्रकाश्यण से सजाकर बहुत मनुष्यों के परिवार से लेजाते होवे या किसी घातकी पुरुष को मत करने के लिये लेजाते मे जाता होवे तो वहाँ जाना नहीं ॥ १९ ॥ अनेक प्रकारके महा आश्रव स्थान कि जहाँ बहुत गाडी, बहुत रथ, बहुत म्लेच्छ का

तैसे वि० विविध प्रकार के म० महोत्सव क० कर्णश्रोत केलिये णो० नहीं अ० वांच्छे ग० जाने को ॥१७॥ से० वे भि० साधु साध्वी वि० विविध प्रकारके म० महोत्सव ए० ऐसा जा० जाने तं० वह ज० यथा इ० स्त्री, पु० पुरुष थे स्थविर [ वृद्ध ] ड० बालक म० युवान आ० वस्त्राभूषण से भूषित गा० गाते वा बजावे ण० नाचे ह० हसे र० रमे मो० मोहित होवे वि० बहुत अ० अन्न पा० पानी खा० खादिम सा० स्वादिम प० खावे प० विभाग करे वि० न्हाखे वि० रक्खे अ० अन्य त० तैसे वि० विविध

बहुमिलक्खूणि वा, बहुपंचताणि वा, अण्णयराइ तहप्पगाराइ विरूवरूवाइं महास वाइं कण्णसोयपडियाए णो अभिसंधारेज्ज गमणाए ॥ १७ ॥ से भिक्खू (२) वा विरूवरूवाइं महुस्सवाइ एव जाणेज्जा तजहा इत्थीणि वा, पुरिसाणि वा, थेराणि- वा, डहराणि वा, मज्झिमाणि वा, आभरणविभूसियाणि वा, गायताणि वा, वायताणि वा, णच्चताणि वा, हसताणि वा, रमताणि वा, मोहताणि वा, विपुल असणपाण खाइमसाइम, परिभुंजंताणि वा, परिभाइंताणि वा, विच्छड्डयमाणाणि वा, विग्गोवय

आसपास के लोको भावे होवे ऐसे स्थानों में शब्द सुनने को जाना नहीं ॥ १७ ॥ साधु साध्वी को अनेक प्रकारके महोत्सव कि जहां स्त्री, पुरुष, वृद्ध, बाल, तथा युवानों शृंगार से सुशोभित होकर गाते होवे, बजाते होवे, नाचते होवे, हसते होवे, रमते होवे, मोहित होते होवे, बहुत अशन, पान, खादिम, स्वादिम, आहार जिमते होवे, परस्पर लेना देना होता होवे, त्यजता होवे, या संग्रह कर रखता होवे तो वैसे महोत्सव

माणाणि वा अण्णयराइ वा तहप्पगाराइ विरूवरूवाइं महुस्सवाइं कण्णसोयपडियाए णो अभिसंधारेज्ज गमणाए ॥ १८ ॥ से भिक्खू वा ( २ ) णो इह लोइएहिं सद्देहिं णो परलोइएहिं सद्देहिं णो सुतेहिं सद्देहिं णो असुतेहिं सद्देहिं णो दिट्ठेहिं सद्देहिं णो अदिट्ठेहिं सद्देहिं णो सज्जेज्जा, णो रज्जेज्जा, णो गिज्झेज्जा णो मुज्झेज्जा णो-अज्झोववज्जेज्जा ॥ १९ ॥ एय खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जाव जएज्जासि त्तिबेमि॥ २०॥इति सद सत्तक्कयं विसमज्झयणं सम्मत्त सद सत्तिक्कय चउत्थं

मकारके म० महात्सव क० कणश्रोत केलिये णो० नहीं अ० जावे ग० जान को ॥ १८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी णो० नहीं इ० इसलोक के शब्द णो० नहीं प० दूसरा लोक का शब्द णो० नहीं सु० सुना स० शब्द णो० नहीं अ० नहीं सुना स०शब्द णो० नहीं दि०देखा हुवा णो०नहीं अ०नहीं देखा हुवा शब्द णो० नहीं स० आसक्त होवे णो० नहीं र० रक्तहोवे णो० नहीं गि० गृद्ध होवे णो० नहीं मु० मुग्ध होवे णो० नहीं अ० तल्लीन बने ॥ १९ ॥ पूर्ववत् ॥ २० ॥ ❀ ❀ ❀

में शब्द सुनने को जाना नहीं ॥ १८ ॥ साधु साध्वी को स्वजातीय मनुष्यादिक के शब्दों, और विजातीय देवादिकके शब्दों, सुने हुवे शब्दों, अनसुने शब्दों, देखे हुवे शब्दोंमें आसक्त, रक्त, गृद्ध या मोहित बनना नहीं ॥ १९ ॥ यह साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है उनोंने सर्व बाबतों में सदा यत्नावंत रहना

## ॥ रूपाख्य मेकविंशतितम मध्ययनम् ॥

से० वे मि० साधु साध्वी अ० एकेक रू० रूप पा० देखे तं० वह ज० यथा गं० गूथे हुवे वे० वींटे हुवे पू० पूरे हुवे स० सन्धे हुवे क० काष्ठ कर्म पो० पुस्तक चि० चित्र कर्म म० मणि कर्म, द० दांत के कर्म मा० मालारे कर्म प० पत्रछेदके कर्म वि० विविध वे० वेष्टित अ० अन्य त० वैसे वि० विविध प्रकार के च० चक्षुदर्शन केलिये णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ १ ॥ ए० ऐसे णे० जानना ज० जैसे स०

से भिक्खू वा ( २ ) अहावेगइयाइं रूवाइं पासइ तंजहा गंथिमाणि वा, वेढिमाणि वा, पूरिमाणि वा, संघाइमाणि वा, कट्ठकम्माणि वा, पोत्थकम्माणि वा, चित्तकम्माणि वा, मणिकम्माणि वा, दंतकम्माणि वा, मालकम्माणि वा, पत्तच्छेज्जकम्माणि वा, विविधाणि वा, वेढिमाइ अण्णयराइ तहप्पगाराइं विरूवरूवाइ चक्खुदंसणपडियाए णो अभिसंधारेज्ज गमणाए ॥ १ ॥ एवं णेयव्वं

साधु साध्वी को कुसम से गूंथे हुवे स्वास्तिकादि, वस्त्र से बनाये हुवे पूतलादि, भरतसे पूरा हुवा पुरुषाकारादि, तन्दुल सन्धकर बनाया हुवा मंडलादि, रंगादि से चित्रित किया हुवा चित्रामणादि, मणि रत्नादि जडित भूषणादि, हस्ती आदि के दांतों से बनाया हुवा सराबलादि, सुवर्ण रूपादि माला, पत्र छेदके बनाया हुवा द्रोणादि वह गुंथनादि अनेक कसबके कार्य आंखों से देखना नहीं ॥ १ ॥ बाकी का सर्व अधिकार

वांच्छे णो नहीं तं० उसे णि० करावे सि० कदाचित् से० उसका प० अन्य पा० पाँव लो० लोद्रसे क० कर्क से चु० चूर्ण से व० सुगन्धि द्रव्य से उ० घसे उ० लेपकर णो० नहीं तं० उसे सांच्छे णो नहीं त० उसे णि कराबे सि० कदाचित् से० उसका प० दूसरा प० पगको सी० शीतोदक अचित्तसे उ० उष्णोदक अचित्तसे से उ० प्रक्षालन करे प० धोवे णो० नहीं तं उने सा० वाच्छे णो० नहीं तं० उस णि० करावे सि० कदाचित् से० उसका प० अन्य पा पाँव अ० अन्य तर त्रि० त्रि लेपनकी जाति से आ० लिपनकरे वि विशेष लिपनकरे णा० नहीं तं० उसे सा० वाच्छे णो० नहीं तं०

। सिया से परो पादाइ लोद्देण वा, कक्केण, वा चुण्णेण वा, वण्णेण वा, उल्लोलेज्ज वा उवलिंपेज्ज वा, णो तं सातिए णो त नियमे। सिया से परो पादाइ सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलेज्ज वा, पधोएज्ज वा णो त सातिए णो त नियमे। सिया से परो पादाइ अण्णयरेण विलेवणजातेण आलिंपेज्ज वा विलिंपेज्ज वा णो त सातिए णो त नियमे । सिया से परो पादाइ

तेल, घी, चरबी से मसले, लोद, क्षार, या चूर्ण से घसे या लेप करे, ठंडा या उष्ण पानी से सिंचे या धुवे अनेक प्रकारके विलेपन से लीपे या धूप से धूपित करे, या पाँव में से कीला या कांटा निकाल कर

उसे णि० कराने सि० कदाचित् मे० उसके प० अन्य पा० पाँव अ० अन्य धू धूपकी जातिसे धू० धूप देवे पि० विशेष धूपदेवे णो० नहीं तं० उसे सा० वांच्छे णो० नहीं त उसे णि० करावे सि० कदाचित् से० उसके प० अन्य पा० पांवसे खा० कीला, कं० कंटक णी० नकाले वि० साफ करे णो० नहीं सा० वांच्छे णो० नहीं त० उसे णि० करावे सि० कदाचित से० वे प० अन्य पा० पगसे पू० राध सो रक्त णी० नीकाले वा या पि० साफकरे णो नहीं तं० उसे सा० वांच्छे णो० नहीं त० उसे नि० करावे॥२॥

अण्णयरेण धूवजाएण धूवेज्ज वा, पधूवेज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे। सिया से परा पादाओ—खाणुं वा कंटय वा, णीहरेज्ज वा विसोहेज्ज णो तं सातिए णो तं नियमे। सिया से परो पादाओ—पूयं वा सोणियं वा णीहरेज्ज वा, विसोहेज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे ॥ २ ॥ सिया से परो कायं आमज्जेज्ज वा, पमज्जेज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे। सिया से परो कायं संवाहेज्ज वा, पलिमद्देज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे। सिया से परो कायं तेल्लेण वा, घएण वा, वसाए वा, मक्खेज्ज वा, अब्भंगेज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे।

स्वच्छ करे या राध और लोही नीकाल कर साफ करे तो उसे वांच्छना नहीं और ऐसा करना नहीं ॥ २ ॥

सिया से परो कार्य लोद्देण वा, कक्केण वा, चुण्णेण वा, वण्णेण वा, उल्लोलेज्ज वा, उव्वलेज्ज वा णो त सातिए णो तं नियमे। सिया से परो काय सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलेज्ज वा, पहोएज्ज वा णो तं सातिए णो त नियमे। सिया से परो काय अण्णयरेण विलेवणजातेण आलिंपेज्ज वा विलिंपेज्ज वा, णो त सातिए णो त नियमे। सिया से परो काय अण्णयरेणं धूवेणजातेण-धूवेज्ज वा पधूवेज्ज वा णो तं सातिए णो त नियमे ॥ ३ ॥ सिया से परो कायसि वणं आमज्जेज्ज वा, पमज्जेज्ज वा, णो तं सातिए णो त नियमे। सिया से परो कायसि वणं संबाहेज्ज वा पलिमद्देज्ज वा णो त सातिए णो त नियमे। सिया से परो कायसि वणं तेल्लेण वा घएण वा, वसाए वा, मक्खेज्ज वा भिलिंगेज्ज वा णो त सातिए णो त नियमे। सिया से परो कायंसि वणं लोद्देण वा, कक्केण वा, चुण्णेण वा वण्णेण वा, उल्लोढेज्ज वा उव्वलेज्ज वा णो त सातिए णो

भावार्थ पूर्वोक्त सूत्रानुसार जानना विशेष इतना ही कहना कि यहां पग की क्रिया वरन काया की क्रिया करे. ऐसा शरीर को कार्य कराने का वांछे नहीं और करावे नहीं ॥ १ ॥ यहां विशेष इतना

त नियमे । सिया से परो कार्यसि वणं सीतोदगवियडेण वा, उसिणोदगवियडेण वा, उच्छोलेज्ज वा पधोवेज्ज वा णो त सातिए णो त नियमे । सिया से परो कायंसि वण अण्णयरेण सत्थजातेणं अच्छिदेज्ज वा विच्छिदेज्ज वा णो त सातिए णो त नियमे । सिया से परो अण्णयरेणं सत्थजातेणं अच्छिदित्ता विच्छिदित्ता पूयं वा सोणियं वा णीहरेज्ज वा विसोहेज्ज वा णो त सातिए णो त नियमे ॥ ४ ॥ सिया से परो कायंसि गंडं वा, अरतियं वा, पुलयं वा, भगंदलं वा, आमज्जेज्ज वा पम ज्जेज्ज वा णो तं सातिए णो तं नियमे सिया से परो कायंसि गंडं वा, जाव भगंदलं वा संवाहेज्ज वा पलिमद्देज्ज वा णो तं सातिए णो त नियमे सिया से परो कायंसि गंडं वा जाव भगंदलं वा तेल्लेण वा, घएण वा, वसाए वा, मक्खेज्ज वा भिलिंगेज्ज वा णो त सातिए णो त नियमे सिया से परो कायंसि गंडं वा जाव भगंदलं वा, लोद्धेण वा कक्केण वा,

ी करना कि शरीर में व्रण ( घाव ) वगैरहको उक्त प्रकारके कार्य करे या शस्त्र से छेद भेद कर राध लोही नीकाले, साफ करे उसे वांछना नहीं और कराना भी नहीं ॥ ४ ॥ यदि पर शरीर में भगंदर, जलोदर आदि रोगों आश्रय करना ॥ ५ ॥

सि० कदा चेत् से० उसकी प० अन्य का० शरीर से से स्वदे ज मेल णी० नीकाले वि साफकरे णा० नहीं ० उसे सा०वांच्छे णो०नहीं तं उसे नि०करावे ॥ ३॥ सि०कदाचित् में०उसको प० अन्य अ० आंखका मेल, क० कर्ण का मेल, प नखका मेल, णी० नीकाले वि० साफकरे णो० नहो तं० उसे सा०

चुण्णेण वा वण्णेण वा उल्लोडेज्ज वा उव्वलेज्ज वा णो त सातिए णो तं नियमे सिया से परो कायसि गड वा जाव भगंदलं वा सीतोदगवियडेण वा उसीणोदग वियडण वा उच्छोलेज्ज वा पधोवेज्ज वा णो तं सातिए णो त नियमे । सिया से परो कायसि गंड वा जाव भगंदल वा अण्णयरेण सत्थजाएण अच्छिदेज्ज वा विच्छिदेज्ज वा सिया से परो अण्णयरेणं सत्थजाएणं अच्छिदित्ता वा पूय वा सोणिय वा णीहरेज्ज वा णो त सातिए णो तं नियमे ॥ ५ ॥ सिया से परो काया ओ सेय वा जल्ल वा णीहरेज्ज वा विसोधेज्ज वा णो त सातिए णो त नियमे । ॥ ६ ॥ सिया से परो अच्छिमलं वा कण्णमल वा णहमल वा णीहरेज्ज वा वि

साधु साध्वी के शरीर का स्वेद या मेल कोइ गृहस्थ साफ करे तो उसे वांच्छे नहीं और करावे भी नहीं ॥ २ ॥ आंख का मल, कान का मेल, नख का मेल जो कोइ गृहस्थ नीकाले तो उसे वांच्छे नहीं और करावे नहीं ॥ ७ ॥ और किसी मुनि का बाल, रोम, भ्रमर तथा गुह्य प्रदेश के रोम लम्बे देख कर

वांच्छे णो॰ नहीं त॰ उसे णि कराने ॥ ७ ॥ सि॰ कदाचित् से॰ उसको प॰ अन्य दी॰ दीर्घ वा॰ वाल दी॰ दीर्घ रो॰ रोम दी॰ लम्बी भ॰ भ्रमर दी॰ दीर्घ कांखके वाल दी॰ दीर्घ व॰ गुह्य प्रदेशक वाल क॰ काटे स॰ अच्छाकरे णो॰ नहीं तं उसे सा॰ वांच्छे णो॰ नहीं त उसे णि॰ करावे ॥ ८ ॥ सि॰ कदाचित् से॰ उसके प अन्य सी॰ शीरसे लि॰ लीख वा॰ या जू॰ यूका णी॰ नीकाले वि॰ शुद्धकरे णो नहीं त॰ उसे सा वांच्छे ॥ ९ ॥ सि॰ कदाचित् से॰ उसका अ॰ गोदमें प॰ पलंगमें तु॰ सुलावे पा॰ पांव आ मसले प॰ विशेष मसले ए॰ ऐसे हे॰ निम्नोक्त पा॰ पांवादिक का भा॰ जानना सि॰ कदाचित् से॰ उसको प अन्य अं॰ गोदमें प पलंग में तु॰ सुलावे हा॰ हार, अ॰ अर्धहार उ॰ उरस्य आ

सोहेज्ज वा णो त सातिए णो तं नियमे ॥ ७ ॥ सिया से परो दीहाइ वालाइं, दीहाइ रोमाइ दीहाइ भमुहाइ, दीहाइं कक्खरोमाइ, दीहाइ वत्थिरोमाइ, कप्पेज्ज वा संठवेज्ज वा णो त सातिए णो त नियमे ॥ ८ ॥ सिया से परो सीसाओ लिक्खं वा जूयं वा णीहरेज्ज वा विसोहेज्ज वा णो तं सातिए णो त नियमे ॥९॥ सिया से परो अकंसि, पलियंकसि वा तुयट्टावेज्ज वा पादाइ आमज्जेज्ज वा, पमज्जेज्ज वा, एव हेट्ठिमो गमो पायादि भाणियव्वो सिया से परो अकंसि वा, पलियंक

कोइ उसे काटे या अच्छा करे तो उसे साधु को वांच्छना नहीं और करना नहीं ॥ ८ ॥ कोइ गृहस्थ मुनि के शिरमें से यूका लीख निकाले तो उसे वांच्छे नहीं और करावे नहीं ॥ ९ ॥ कोइ गृहस्थ साधु को

मरण गे० ग्रेवाभरण म० मुकुट पा० माल्म सु० सुवण सुत्र आ० विंधे पि० पहिनावे णो० नहीं त० उस मा० वांच्छे ॥ १० ॥ सि० कदाचित् से० उसको प० दूसरा आ० बागमें उ० उद्यान में णी० लेजाकर नि० उद्धकर पा० पांव आ० मसले प० विशेष ममले णो० नहीं त० उसे सा० वांच्छे ए० ऐसा णे० जानना अ० अन्योन्य की कि क्रिया भपि ॥ ११ ॥ सि० कदाचित् से० उसको प० अन्य सु० गृ

सि वा, तुयट्टावेत्ता हार वा, अद्धहार वा, उरच्छं वा, गेवेय वा मउड वा पाल र्थ या सुवण्णसुत्त वा, आविंधेज्ज वा पिणिंधेज्ज वा, णो त सातिए णो त नियमे॥१०॥ सिया से परो आरामसि वा उज्जाणसि वा णीहरित्ता वा विसोहित्ता वा पायाइ आ मज्जेज्ज वा पमज्जेज्ज वा णो तंसातिए । एवं णेयव्वा अण्णमण्ण किरियात्ति ॥ ११ ॥

गोद में या पलंग पर सुलाकर हस्त पांव वगैरह की पूर्वोक्त क्रियाओं करे या हार अर्धहार उरस्थ आ भरण ग्रैवा भरण मुकुट माला सुवण सुत्र पहिनावे तो उसे इच्छना नहीं और कराना नहीं ॥ १० ॥ उक्त प्रकार से कोइ गृहस्थ साधु को वनमें लेजाकर उसके पाँव मसले तो भी वांच्छे नहीं और करावे नहीं इसी तरह + परस्पर की क्रिया केलिये भी समझना ॥११॥ कोइ गृहस्थ शुद्ध या अशुद्ध विद्यामंत्र के बल

\+ पूर्वोक्त कार्यों यदि साधु स्वय करने को समर्थ होवे तो वह नतो गृहस्थ की पास करावे और न अन्य साधु की पास करावे यह उत्सर्ग मार्ग जानना

प० पागमस से ते० चिकित्सा मा० कराना सि० कदाचित् से० उसको प० अन्य अ० अशुद्ध व० वाक्स्त से ते० चिकित्सा आ० करावे सि० कदाचित् से० उसको प० अन्य गि० रोगीको स० सचित्त कं० कन्द मू० मूल त० त्वचा, ह० हरि स० सोदके, क० काढके क० कटवाके ते० चिकित्सा मा० करे णो० नहीं

सिया से परो सुद्धेणं वतिबलेण तेइच्छं आउट्टे सिया से परो असुद्धेण वतिबले णं तेइच्छं आउट्टे सिया से परो गिलाणस्स सचित्ताइं कंदाणि वा मूलाणि वा तयाणि वा, हरियाणि वा, खणेण वा, कड्डेण वा, कड्डावेण वा, तेइच्छं आउट्टेमा णो त सातिए० कडु वेयणा पाण भूतजीवसत्ता वेयण वेदेंति ॥ १२ ॥ एयं ख लु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिते समिते सयाजए

से या जडीबूटी कंदमूल छाल आदि हरीका छेदन कर रोगी साधु की चिकित्साकरेतो साधु उसे वांच्छे नहीं और करावे नहीं क्योंकी सर्व प्राणी, भूत जीव और सत्व स्वयं कृत कर्म का फल ( सुख दुःख ) भोगते हैं अर्थात् गतकाल में जैसे अन्य को दुःख दियाहै वैसेही दुःख यहां प्राप्त हुवा है, ऐसा विचारना ॥ १२ ॥ साधु साध्वी के आचार की यह ही पूर्णता है, इसलिये उनको सर्व तरह से समिति युक्त यत्ना वंत रहना और इसमें ही श्रेय मानना ऐसा मैं कहता हूं ॥ १२ ॥ यह दूसरेसे क्रिया कराने का छठा

तं० उसे सा० पांच्य क० करके वे० वेदना पा० प्राण भू० भूत जी० जीव स० सत्व वे० वेदना वे० वेदते हैं ॥ १२ ॥ पूर्ववत् ॥ ११ ॥ * * * *

सेय मिण मण्णेज्जासि त्तिबेमि ॥१३॥ इति छट्ठ सचिक्कयं—दुवाविसमज्झयणं सम्मत्त

सचित्तकाय समाप्त हुवा और बावीसवा अध्ययन भी समाप्त हुवा आगे परस्पर क्रिया निषेध का सातवा सातिकाय चलता है और तेवीसवा अध्ययन का प्रारंभ करते हैं

# ॥ भावनाख्यं चतुर्विंशतितम मध्ययनम् ॥

तेण कालेण तेणं समएण समणे भगवं महावीरे पंचहत्थुत्तरेयावि होत्था हत्थुत्तराहिं चुए चइत्ता गब्भं वक्कंते हत्थुत्तराहिं गब्भाओ गब्भं साहरिए हत्थुत्तराहिं जाए हत्थु

त० उस का० कालमें ते० उस स० समयमें स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर पं० पांचहस्तोत्तरवाले (उत्तरा फाल्गुनी) हो० थे ह० हस्तोत्तर में चु० चवे च० चवकर ग० गर्भमें व० उत्पन्न हुवे ह० हस्तोत्तरमें ग० गर्भसे ग० गर्भमें सा० साहरण किया ह० हस्तोत्तरमें जा० जन्महुवा ह० हस्तोत्तर में स० सर्वसा सर्वथा प्रकारे मुं० मुण्डित भ० होकर अ० गृहसे अ० साधुपना प० अंगीकार कीया ह० हस्तो

उसकाल उस समय में श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामीके सम्बन्ध में पांच वक्त उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र का संयोग बना (१) दशम देवलोक से चवे + चवकर यहां गर्भमें उत्पन्न हुवे (२) यहां देवानन्दाजी की कुक्षिसे गर्भका हरण कर त्रिसलादेवीजी की कुक्षी में साहरण हुवा (३) यहां उसी नक्षत्र में जन्म लिया (४) उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में ही सर्व प्रपंच से मुक्तहो साधु बने (५) और उत्तरा फाल्गुनी

+ नारकके जीव मरकर उपर आते हैं इस लिये उसे उद्वर्तन कहा है, और देव लोक के जीव मरकर नीचे आते हैं इस लिये उसे चवना बोलते हैं

... अ० अनंत अ० प्रधान क० केवल व० श्रेष्ठ णा० ज्ञान दं० दर्शन स० उत्पन्न हुवा सा० स्वान्ति में भ० भगवान प० मोक्ष पधारे ॥ १ ॥ स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर इ० इस ओ० अवसर्पिणीके सु० सुषम सुषमा स० समय वी० वीतगया सु० सुषम स० समय वी० व्यतिक्रान्त हुवा सु० सुषम दुषम स० समय वी० व्यतीत हुवा दु० दुषम सुषम स० समय ब० बहुत वी० व्यतीत हुवा प० पचत्तरह वा० वर्ष मा० मास अधिक अ० आधा ण० नवमा से०

त्तराहिं सव्वओ सव्वत्ताए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए हत्थुत्तराहिं कसिणे पडिपुण्णे अव्वाघाए निरावरणे अणते अणुत्तरे केवलवरणाण दंसणे समुप्पण्णे साइणा भगव परिणिव्वुए ॥ १ ॥ समणे भगवं महावीरे इमाए ओसप्पिणीए सुसमसुसमाए समाए वीतिक्कंताए सुसमाए समाए वीतिक्कंताए सुसमदुसमाए समाए वीतिक्कंताए, दुसमसुसमाए समाए बहु वीतिक्कंताए, पण्णत्तरीए वासेहिं मासेहिय अद्धणवमसेसेहिं, जे से गिम्हाणं चउत्थे

नक्षत्र में सम्पूर्ण, प्रतिपूर्ण, अव्याघात अनन्त, उत्कृष्ट केवल ज्ञान केवल दर्शन की प्राप्ति हुई और स्वान्ति नक्षत्र में सब कर्मका क्षय कर निर्वाण पधारे ॥ १ ॥ इस अवसर्पिणीका सुषमसुषमा, सुषमा, सुषम दुषम ये तीन आरे व्यतीत हुवे और चौथा दुषमसुषम आराके ७५ वर्ष साढे आठ [ ८॥ ] मास बाकी रहे

घराहिं सव्वओ सव्वत्ताए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए हत्थुत्तराहिं कसिणे प

डिपुण्णे अव्वाघाए निरावरणे अणंते अणुत्तरे केवलवरणाण दसणे समुप्पण्णे साइणा भगव

परिणिव्वुए ॥ १ ॥ समणे भगवं महावीरे इमाए ओसप्पिणीए सुसमसुसमाए समाए वीतिक्कंताए

सुसमाए समाए वीतिक्कंताए सुसमदुसमाए समाए वीतिक्कंताए, दुसमसुसमाए समाए बहु

वीतिक्कंताए, पण्णत्तरीए वासेहिं मासेहिय अद्धणवयसेसेहिं, जे से गिम्हाण चउत्थे

सरमें क० कृत्स्न प० प्रतिपूर्ण अ० अव्याघात नि० निरावरण अ० अनंत अ० प्रधान के० केवल व० श्रेष्ठ णा० ज्ञान द० दर्शन स० उत्पन्न हुवा सा० स्वाति में भ० भगवान प० मोक्ष पधारे ॥ १ ॥ स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर इ० इस ओ० अवसर्पिणीके सु० सुषम सुषमा स० समय वी० वीतगया सु० सुषम स० समय वी० व्यतिक्रान्त हुवा सु० सुषम दुषम स० समय वी० व्यतीत हुवा दु० दुषम सुषम स० समय ब० बहुत वी० व्यतीत हुवा प० पचत्तरह वा० वर्ष मा० मास साधिक अ० आधा प० नवमा से०

नक्षत्र में संपूर्ण, प्रतिपूर्ण, अव्याघात अनन्त, उत्कृष्ट केवल ज्ञान केवल दर्शन की प्राप्ति हुई और स्वाति नक्षत्र में सर्व कर्मका क्षय कर निर्वाण पधारे ॥ १ ॥ इस अवसर्पिणीका सुषमसुषमा, सुषमा, सुषम दुषम ये तीन आरें व्यतीत हुवे और चौथा दुषमसुषम आराके ७५ वर्ष साढे आठ [ ८॥ ] मास बाकी रहे

तप त० ना मे० ने ग्री० ग्रीष्मका भ चतुर्थ मा० मास अ० अष्टम प० पक्ष आ० अषाढ सुदी त उस मा० आषाढ सुदी छ छठ ह० हस्तोत्तर ण० नक्षत्र जो० योग उ० प्राप्तहोने पर म० महा विजय सि० सिद्धार्थ पु० पुष्पोत्तर प० प्रवर पुं पुंडरिक दि दिशा सो स्वास्तिक व० वर्धमान म० महाविमान वी० वीस सा० सागरका आ० आयुष्य पा० पालकर अ० आयुष्य का क्षय से भ० भव क्षयसे ठि० स्थिति क्षयसे चु० चव च चवकर इ० यहां जं० जम्बूद्वीप भा० भारत क्षेत्र में दा० दक्षिण भरत दा० दक्षिण मा० ब्राह्मण कु० कुण्डपुर स० सन्निवेश में उ० ऋषभदत्त मा० ब्राह्मण की को० कोडालगोत्रीकी

मासे अट्ठमे पक्खे आसाढ सुद्धे तस्सणं आसाढसुद्धस्स छट्ठीपक्खेणं हत्थुत्तरा ण क्खत्तेणं जोगोवगएणं महाविजय सिद्धत्थ पुप्फुत्तर पवर पुंडरीय दिसासोवत्थिय वद्धमा णाओ महाविमाणाओ, वीस सागरोवमाइं आउयं पालइत्ता, आउक्खएणं, भवक्खएणं ठितिक्खएणं चुए चइत्ता इहखलु जम्बुद्दीवे दीवे, भारहेवासे, दाहिणड्ढ भ रहे दाहिण माहण कुडपुर सण्णिवेसंसि उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगोत्तस्स

तप अषाढ शुक्ल षष्ठी कदिन उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र का योग आये महाविजय, सिद्धार्थ, प्रवरपुंडरिक और दिशास्वास्तिक नामसे प्रसिद्ध पुष्पोत्तर विमानमें वीस सागरोपम का आयुष्य पूर्ण भोगव कर, आयुः भव तथा स्थितिका क्षय होने पर वहांसे चवकर यहां जंबूद्वीप में भरतक्षेत्र में दक्षिणार्ध में ब्राह्मण कुंडपुरस्था

व उस आ आश्विनवदी का ते० त्रयोदशी को ह० हस्तोत्तर ण० नक्षत्र में जो० योग प्राप्त होनेपर बा० ब्यासी रा० रात्रिदिवस वी० व्यतीत हुए ते० ब्यासीका रा० रात्रिदिन का प० पर्याय व वर्तता हुवा दा० दक्षिण मा० माहण कु० कुंडपुर सं० सन्निवेश में से उ० उत्तर ख० क्षत्रिय कुंडपुर से० सन्निवेश में णा० ज्ञात कुली ख० क्षत्रियों में सि० सिद्धार्थ क्षत्रिय का का० काश्यपगोत्र का ति० त्रिशला ख० क्षत्रियाणी वा० वासिष्ठ गोत्री अ० अशुभ पो० पुद्गल अ० अपहार क० करके सु० शुभ पो० पुद्गल का प० प्रक्षेप क०

महुलस्स तेरसी पक्खेणं हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगोवगतेण बासीतीहिं रातिदिएहिं वीतिक्कतेहिं तेसितिमस्स रातिंदियस्स परियाए वट्टमाणे दाहिण माहणकुंडपुरसंणिवेसाओ उत्तरखत्तियकुंडपुरसंणिवेससि णायाण खत्तियाण सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवगोत्तस्स तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठसगोत्ताए असुभाण पोग्गलाण अवहार करेत्ता सुभाण पोग्गलाण पक्खेव करेत्ता कुच्छिसि गब्भ साहरिए, जे

नुसार वर्षा ऋतु के तीसरे मास में पांचवा पक्ष में आश्विन कृष्णा त्रयोदशी के दिने उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में ब्यासी दीन व्यतीत हुवे बाद ब्यासी वे दिन में दक्षिण ब्राह्मण कुंडपुर स्थान से उत्तर में आये हुवे क्षत्रिय कुंडपुर स्थान में ज्ञातवंशी काश्यप गोत्रीय सिद्धार्थ राजा के गृह वासिष्ठ गोत्र की त्रिशला क्षत्रिया

करके कु० कुक्षिमें ग गर्भ सा० सहरा जे० जो ति० त्रिशला ख० क्षत्रियाणी के कु० कुक्षिमें ग० गर्भ सं० रखेमी दा० दक्षिण मा० माहण कुंडपुर सन्निवेश में उ० ऋषभदत्त मा ब्राह्मण का को कोडाल गोत्रीका दे देवानंदा मा० ब्राह्मणी जा० जालंधर गोत्री की कु० कुक्षिमें ग० गर्भ सा० सहारा ॥ ४ ॥ स० श्रमण भ० भगवान् म० महावीर ति० तीनज्ञान सहित हो० थे सा साहरण करेंगे त्ति० ऐसा जा० जानते थे सा० साहरण किया त्ति० ऐसा जा० जानते थे सा० साहरण करते समय भी जा० जानते थे स० श्रमण आ० आयुष्मन् ॥ ५ ॥ ते० उस का० काल ते० उस स० समय ति० त्रिशला ख० क्षत्रिया

त्रिय तिसलाए खत्तियाणिए कुच्छिसि गब्भे तपिय दाहिण माहणकुंडपुर सणि वेसासि उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगोत्तस्स देवाणंदाए माहणीए जालंधरा यणसगोत्ताए कुच्छिसि गब्भ साहरिए ॥ ४ ॥ समणे भगवं महावीरे तिणाणो वगए यावि होत्था साहरिज्जिस्सामि त्ति जाणइ, साहरिएमित्ति जाणइ, साहरिज्जमा णे वि जाणइ समणाउसो ॥ ५ ॥ ते ण कालेण ते ण समएण तिसला खत्ति

णिकी कुक्षिमें से अशुभ पुद्गलों को दूर कर शुभपुद्गल का प्रक्षेप कर गर्भ में रखे ॥ ४ ॥ इस समय भगवान् तीन ज्ञान युक्त थे संहरण होवेगा ऐसा जानते थे, संहरण हुवा ऐसा जानते थे, और संहरण होते समय भी जानते थे ॥ ५ ॥ उस काल उस समय में त्रिशलादेवी क्षत्रियाणी को नव मास पूर्ण हुवे और साढी

विपिक्क वि० विमानवासी दे० देव दे० देवीयोंने स० श्रमण भगवन्त महावीर को को० कौतुक कर्म भू० भूतिकर्म ति० तीर्थकराभिषेक क० किया ॥ १ ॥ ज० जबसे भ० भगवान् महावीर ति० त्रिसला क्षत्रियाणी की कु० कुक्षिमें ग गर्भमें आ० आये त० तब से तं० यह कु० कुल वि० बहुत हि० चांदीसे सु० सुवर्ण से ध० धनसे ध० धान्यसे मा० माणिक्यसे मो० मोतिसे सं शंख सि० शिला प० प्रवाल अ० अतीव प० बढा त० तब स० श्रमण भगवन्त महावीर का अ० मातापिता ए० यह अ० अर्थ जा० जानकर णि० दशादिन निवर्त्या वो० व्यतिक्रांत स विस्तार में वि० बहुत अ० अशन पा० पान खा० खादिम

समणस्स भगवओ महावीरस्स कोतुगभूतिकम्माइ तित्थराभिसेयं च करिंसु ॥ १ ॥ जतो ण पभिति भगव महावीरे तिसलाए खत्तियाणीए कुच्छिसि गब्भं आहूए ततोणं पभिति तं कुल विपुलेणं हिरण्णण, सुवण्णेण, धणेण, धण्णेणं, माणिक्केण, मोत्तिएण, सखसिलप्पवालेण, अतीव परिवड्ढइ ततो ण समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मापियरो एयमट्ठ जाणित्ता णिव्वत्तदसाहसि वोक्कंतसि सु विभूतसि विपुल असणपाणखाइमसाइम उवक्खडावति विपुल असणपा

वान श्री महावीर स्वामी कुक्षि में आये उस ही दिन से उन के कुल में सुवर्ण, रजत, धन, धान्य, माणिक्य, मोती, उत्तम वस्त्र, पत्थर, और प्रवाल की बहुत वृद्धि हुइ जिस से भगवान् के मात पिताने जन्म के दश

खा० स्वादिम उ० बनाया बि० बहुत अ० असन ( ४ ) ब० बनाकर मि० मित्र णा० ज्ञाति स० स्वजन स० संबन्धिवर्ग उ० आमंत्रे उ० आमंत्रितकर व० बहुत स श्रमण मा० माहण कि० कृपण व भिक्षारी भि० मगव पं० अपंगको वि दिया वि० गुप्तदिया वि० प्रगटदिया दा० दातार में दा० देने की वस्तु का प विभाग कीया वि० देकर वि० गुप्तदेकर वि० प्रगटदेकर दा० दातार मे दा० दायका वि० विभाग करके मि० मित्र णा ज्ञाति स० स्वजन स० संबंधिवर्ग भुं० जिमाये मि० मित्रज्ञाति स्वजन और संबन्धिवर्ग

पाणसाइमसाइम उवक्खडावेत्ता मित्तणातिसयणसंबंधि वग्ग उवणिमंतेति उवणिमंतेत्ता बहवे समण—माहण—किवण—वणीमग—भिच्छडग—पडगा रतीण विच्छड्डेति विभोवेंति विस्साणेंति दातारेसु ण दाय पज्जाभाएति विच्छड्डित्ता विभोवित्ता, विस्साणित्ता दायारेसु ण दाय पज्जाभाइत्ता मित्तणाइसयणसंबंधि वग्ग भुजावेंति मित्तणाइसयणसंबंधिवग्ग भुजावेत्ता मित्तणाइसयणसंब

दिन बीते बाद बहुत आहार, पानी, पक्वान्न मुखवास तैयार कराया बहुत मित्र, ज्ञाति, स्वजन, परजन, को बोलाये बहुत श्रमण शाक्यादि साधु ब्राह्मण, दरिद्री, भिक्षारी, अन्धे, पांगले, कुष्टी, रोगी, को यथा इच्छित वस्तु देकर संतोषित किये और स्वजन मित्र को आदर पूर्वक जिमाये बाद में उन के

को मु० मिमाकर मि मित्र स्वजन संबंधिवर्ग से इ० यह णा० नामधेय क० किया ज० जबसे इ० यह कु० कुमार ति० त्रिसला क्षत्रियाणी के कुं० कुक्षिमें ग० गर्भमें आ० आये त० तब से इ० यह कु० कुल वि० बहुत हि० हिरण्य सु० सुवर्ण ध० धान्य ध० धन मा० माणिक्यसे मो मोतिसे स० शंख शि० शिला प० प्रवाल से अ० अति प० बढा त इसलिये हो० होवे कु कुमार व० वर्धमान ॥ १० ॥ त० तब स० श्रमण भ भगवान् म० महावीर प० पांच धा० धायसे प० परवरे तं० वह ज० यथा खी० दुध पीलाने

धिज्जगण इमेयारूवं णामधेज्जं करेंति जओ णं पभिइ इमे कुमारे तिसलाए खत्तियाणीए कुच्छिंसि गब्भे आहूए ततो णं पभिइ इमं कुलं विपुलेणं, हिरण्णेणं, सुवण्णेणं, धण्णेणं, धणणं, माणिक्केणं मोत्तिएणं संखसिलप्पवालेणं अतीव २ परिवड्ढइ त होउ णं कुमारे वद्धमाणे ॥ १० ॥ तओ णं समणे भगवं महावीरे पंचधातिपरिवुडे तंजहा खीरधाईए मज्जणधाईए मंडावणधाईए खेल्लावणधाईए अ-

कुम्भ धन धान्यादिक की वृद्धि हुइ तदनुसार वर्धमान कुमार ऐसा नाम रक्खा ॥ १० ॥ श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी के लिये पंच धायी रखने में आइ थी (१) दुध पीलानेवाली, [ २ ] स्नान करानेवाली ३ भूषण पहिरानेवाली ४ खेलानवाली, ५ गोद में रमानेवाली, और एक गोद से दूसरी गोद पर करने

वाली धार म० मजन करानेवाली म० मलालंकार पहिरानेवाली खे० खेलानेवाली अ० गोदमें लेने वाली अं० गोदमें से अं० गोदमें सा० लेजाते र० रम्य म० कोहिम मणिकावस्था वाली गि० पर्वतकी गुफा माफिक ली० रकीहुइ च० चंपाका पादप जैसे अ० अनुक्रमे सं० बढे ॥ ११ ॥ त० तब स० श्रमण भगवंत महावीर वि० विज्ञान प० परिणत वि० निवर्ते बा० बालभावसे अ० अनुत्सुक उ० उदार मा० मनुष्य सबन्धि पं० पांच प्रकारके का० कामभोग स० शब्द फ० स्पर्श, र० रस रू० रूप गं० गंध प० भोगवते हुवे भो० सावद्यसे वि० विचरते थे ॥ १२ ॥ स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर का० काश्यप गोत्रीय

कधाईए अंकाओ अंक साहरिज्जमाणे रम्मे मणिकोट्टिमतले गिरिकंदरसमल्ली-
णे व चंपयपायवे अहाणुपुव्वीए संवड्ढइ ॥ ११ ॥ तओणं समणे भगवं
महावीरे विण्णायपरिणये विणियत्तबालभावे अप्पुस्सयाइं, उरालाइं, माणुसगाइं,
पंचलक्खणाइं, कामभोगाइं सद्दफरिसरसरूवगंधाइं परियारेमाणे ओमवत्ति विह-
रति ॥ १२ ॥ समणे भगवं महावीरे कासवगोत्ते इमे तिण्णि णामधेज्जा ए-

हुवे रम्य रत्नमंडित मकान में रह कर गिरि गुफा में रहा हुवा चंपक वृक्षकी जैसे बढने लगे ॥ ११ ॥ तब भगवान् बाल अवस्था से मुक्त होकर विज्ञान अवस्था को प्राप्त हुवे तब उत्सुकता रहित मात्र भोगावली कर्म क्षय करते पांचो इन्द्रियों के काम भोग भोगवते विचरने लगे ॥ १२ ॥ भगवान् काश्यप गोत्रीय थे उन के

ए० पे ति० तीन ना० नामधेय ए० ऐसे प० करते हैं अ० मातापिता से स० दिया व० वर्धमान स० सहज गुणों से स० श्रमण, भी० रौद्र भ० भयंकर भे० दारुण उ० उदार अ० वस्त्र रहित प० परिषह स० सहे इ० ऐसा क० करके दे० देवोंने से० ऐसा णा० नाम क० किया स० श्रमण भगवान् महावीर ॥ १३ ॥ स० श्रमण भगवान् महावीर के पि० पिता का० काश्यप गोत्रीय त० उसका ति० तीन णा० नाम ए० ऐसे आ० कहते हैं त० वह ज० यथा सि० सिद्धार्थ से० श्रेयांस ज० यशस्वी ॥ १४ ॥ स० श्रमण भगवान् महावीर की अ० माता वा० वाशिष्ट गोत्रीय ती० उनके ति० तीन णा० नाम ए० ऐसे आ० बोलते हैं

य माहिज्जंति अम्मापिउसंतिए "वद्धमाणे" सह समुदिए "समणे" भीमभयभेरवं, उरालं, अचेलयं, परीसह सहइ त्तिकट्टु देवेहिं से णामं कयं "समणे भगवं महावीरे" ॥१३॥ समणस्स भगवओ महावीरस्स पिता कासवगोत्तेणं तस्सणं तिण्णि णामधेज्जा एवमाहिज्जंति तंजहा सिद्धत्थेति वा, सेज्जंसेति वा, जससेति वा, ॥ १४ ॥ समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मा वासिट्ठसगोत्ता तीसेणं तिण्णि णामधेज्जा ए

तीन नाम कहे जाते हैं (१) मातपिताने वर्धमान नाम दिया, गुणों करके श्रमण नाम पड़ा और भयंकर महान् अचेल परिषह सहन करने से देवोंने श्रमण भगवान् नाम रक्खा ॥ १३ ॥ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पिता काश्यप गोत्रीय थे, उन के तीन नाम सिद्धार्थ, श्रेयांस और यशस्वी ॥ १४ ॥ श्रमण भगवान् महावीर की माताके तीन नाम त्रिशला देवी, विदेहदिन्ना और प्रियकारिणी; और वे

से० वह न० यथा ति० त्रिसला वि० विदेहदिन्ना पि० प्रियकारिणी ॥ १५ ॥ स० श्रमण भगवान् महावीर का पि० काका सु० सुपार्श्व का० काश्यप गोत्रीय स० श्रमण भगवन्त् महावीरस्स जे० ज्येष्ठ भा० भ्राता णं नन्दिवर्धन का० काश्यप गोत्रीय स० श्रमण भगवान् महावीर की जे० ज्येष्ठ भ० भगिनी सु० सुदर्शना का० काश्यप गोत्रकी स० श्रमण भगवन्त महावीर की भ० भार्या ज० यशोदा गो० गोत्रसे को० कौडिन्या स० श्रमण भगवान् महावीरकी पु० पुत्री का० काश्यपगोत्रकी धी० उसका दो० दो णा नाम

य माहिज्जति तजहा—तिसलाति वा, विदेहदिण्णाति वा, पियकारिणीति वा, ॥ १५ ॥ समणस्स ण भगवओ महावीरस्स पित्तियए 'सुपासे' कासवगोत्तेण, समणस्स ण भगवओ महावीरस्स जेट्ठे भाया णंदिवद्धणे कासवगोत्तेणं, समणस्स ण भगवओ महावीरस्स जेट्ठा भइणी सुदसणा कासवगोत्तेणं, समणस्स ण भगवओ महावीरस्स भज्जा जसोया गोत्तेण कोडिण्णा, समणस्सणं भगवओ महावीरस्स धू

वासिष्ट गोत्र के थे ॥ १५ ॥ भगवान् के काका सुपार्श्व, बड़ा भाई नन्दिवर्धन, बड़ी बहिन सुदर्शना ये तीन काश्यप गोत्रीय थे भगवान की भार्या यशोदा कौडिन्य गोत्र की, भगवान की पुत्री काश्यप गोत्र की, उन का दो नाम अनवद्या, प्रियदर्शना) और दौहित्री कौशिक गोत्र की, उन का दो नाम शेष

ए० ऐसे आ० कहते हैं तं० यह ज० यथा अ० अनवद्या पि० प्रिय दर्शना स० श्रमण भगवान् महावीर की ध० दौहित्री को० कौशिक गोत्रकी ती० उसका दो० दो णा० नाम आ० कहते हैं तं० यह ज० यथा से० शेषवती ज० यशोमती ॥ १६ ॥ स श्रमण भगवान् महावीर के अ० माता पिता पा० पार्श्व संता निय स० श्रमणो पासक हो० थे ते० इससे ब० बहुत वा० वर्ष पर्यंत स० श्रमणो पासक की प० पर्याय पा० पालके छ० षट् जी० जीव निकाय को सं० संरक्षण निमित्त आ० आलोचकर नि० निंदकर ग०

या कासवगोत्तेण तीसेण दो णामधेज्जा एवमाहिज्जति तजहा अणोज्जाति वा पियदसणाति वा, समणस्सण भगवओ महावीरस्स णत्तुई कोसियागोत्तेण ती सेण दो णामधेज्जा एव माहिज्जति तंजहा सेसवतीत्ति वा जसवतीति वा ॥ १६ ॥ समणस्सण भगवओ महावीरस्स अम्मापियरो पासावच्चिज्जा समणोवासगा यावि होत्था ते ण बहूइ वासाइ समणोवासगपरियाण पालयित्ता छण्ह जीवनिका

वती, यशोमती ॥ १६ ॥ भगवत महावीर स्वामी के माता पिता श्री पार्श्वनाथ स्वामी के संतानिय श्रमणों के श्रावक थे. बहुत कालतक श्रावकपना पालकर, षट्काय के जीवों की रक्षार्थ पाप की आलोचना कर, स्वात्माकी निन्दा कर, गुरु की साक्षि से घृणाकर, पाप से निवृत्ति कर, यथा योग्य प्रायश्चित

विशेष निन्दकर प० पापका प्रायश्चित्त कर अ० जैसाकहा वैसा उ० उत्तरगुण का पा० प्रायश्चित्त प० अंगीकार कर कु० कुशका संथारा दु० बिछाकर भ० भक्त का प० प्रत्याख्यान किया भ० भक्त का प्र त्याख्यान करके अ० फीर नहीं म० मरणान्तिक स० शरीर की सं० संलेषणासे झु निर्बलकर स० शरीर को का० कालके आ० आनेपर का० काल कि करके तं उस स० शरीर को वि० छोडकर अ० अच्युत कल्प दे० देवता में उ० उत्पन्न हुवे त० वहां से आ० आयुष्यक्षयसे भ० भवक्षय से ठि० स्थिति का क्षय

याणं संरक्खणनिमित्तं आलोइत्ता, निंदित्ता, गरहित्ता, पडिक्कमित्ता, अहारिहं उत्त-रगुणपायच्छित्तं पडिवज्जित्ता कुससंथारं दुरूहित्ता भत्तं पच्चक्खाइंति, भत्तं पच्च क्खाइत्ता अपच्छिमाए मरणंतियाए सरीरसंलेहणाए झुसियसरीरा कालमासे कालं किच्चा तं सरीरं विप्पजहित्ता अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववण्णा, तओणं आ उक्खएण भवक्खएण ठिइक्खएण चुए, चइत्ता महाविदेहवासे चरिमेणं ऊसा

ले कर, परालके बिछोने पर बैठ कर, भत्त प्रत्याख्यान कर, अन्तिमश्वासोश्वास तक संलेषणा से शरीर का शोष करके, आयुके पूर्ण होने से शरीर का त्याग कर बारवां अच्युत देवलोक में देवता हुवे वहां से आयुष्य का क्षय होने पर चवकर महाविदेह क्षेत्र में संयम अंगीकार कर अन्तिम उश्वासमें सिद्ध,

स पु० पवे घ० चवकर म० महाविदेह क्षेत्रमें प० छेल्ला उ० उश्वास से सि० सिद्ध होवेंगे, मु० मुक्त होवेंगे प० निर्वाण पधारेंगे स० सर्व दु० दुःख का अं० अन्त क० करेंगे ॥ १७ ॥ ते० उसकाल स० उस समय में स० श्रमण भगवंत महावीर णा० जगत् विख्यात णा० ज्ञातपुत्र णा० ज्ञातकुल चंद्र णा० ज्ञात कुलात्मज वि० विशिष्टदेह युक्त वि० विदेहापुत्र वि० कंदर्पभेत्ता वि० गृहस्थावासमें उदास ती० तीसवर्ष वि० गृहवास में चि० एसा क० करके अ० अगारमध्ये व० रहकर अ० माता पिताके का० कालकर चार दे० देवलोक का म० मास हुवे बाद स० प्रतिज्ञा पूर्णमान चि० छोडकर हि० चांदि चि० छोडकर सु० सुवर्ण

सेण सिज्झिस्संति बुज्झिस्सति मुच्चिस्सति परिणिव्वाइस्सति सव्वदुक्खाण अं-त करिस्संति ॥ १७ ॥ तेण कालेणं तेणं समएण समणे भगवं महावीरे णाए, णायपुत्ते, णायकुलचंदे, णायकुलणिव्वत्ते, विदेहे, विदेहदिण्णे, विदेहजच्चे, विदे-हसुमाले तीसं वासाइं विदेह चिकट्टु अगारमज्झवसित्ता अम्मापिउहिं कालगएहिं देवलोगमणुपत्तेहिं समत्तपइण्णे चिच्चा हिरण्णं, चिच्चा सुवण्णं, चिच्चा बलं, चिच्चा वा

बुद्ध मुक्त सर्व कर्म रहित होंगे ॥ १७ ॥ उस काल उस समय में जगत् विख्यात सिद्धार्थ राजाके पुत्र, ज्ञातवंशात्मज, विशिष्ट देहधारी, विदेहापुत्र, कंदर्पभेत्ता, गृहवास स सदा उदास ऐसा श्री श्रमण भगवान् महावीर स्वामीने तीस वर्ष तक गृहवास में रह कर मातपिता स्वर्ग पधारे तब गर्भ में की हुई प्रतिज्ञा पूर्ण

छि० छोडकर वा० वाहन चि० छोडकर ध० धन ध० धान्य क० कनक र० रत्न स० बहुमूल्य सा० द्रव्यको वि० देकर वि० गुप्तकर वि० मकन्देकर दा० दातार में दा० दानका प० विभाग करके स० संवत्सर दान द० देकर से० वो ह० हेमन्त ऋतुका प० प्रथम मासमें प० प्रथमपक्षमें म मार्गशीर्षवदी द० दस म० मार्गशीर्ष वदी द० दशमी पक्षमें ह० उत्तरा फाल्गुनी न० नक्षत्रके जो० योग में अ० निकलने का अ० अभिप्राय हो० हुआ ॥ १८ ॥ सं० वर्षमें हो० होगा भ० निकलना जि० जिनवरेन्द्रका तो० तब

हण विच्छाधणधण्णकणयरणयसंतसारसावदेजं विच्छड्डेत्ता, विगोवित्ता, विस्सा-णित्ता, दायारेसु णं दाय पज्जाभातित्ता संवच्छरं दाणं दलइत्ता जे से हेमंताणं पढमे मासे पढमे पक्खे मग्गसिरबहुले तस्स णं मग्गसिरबहुलस्स दसमीप क्खेण हत्थुत्तराहिं णक्खत्तेण जोगोवतेण अभिणिक्खमणाभिप्पाए यावि हो त्था ॥ १८ ॥ संवच्छरेण होहिंति अभिणिक्खमणतु जिणवरिंदाणं तो अत्थि सं

हुए जानकर सुवर्ण, चांदी, वाहन, धन, धान्य, कनक रत्न तथा और भी अनेक बहुमूल्य वस्तु को दानार्थ छोडकर, बारह मास वर्षी दान देकर हेमन्त ऋतु के पहिले पक्ष में मृगशर वदी १० मी के दिन उत्तराफाल्गु नी नक्षत्र का योग में दीक्षा लेने का विचार किया ॥ १८ ॥ श्री श्रमण भगवान वर्ष के अन्त में दीक्षा

अ० थी सं० संपदाकी प० प्रवृत्ति पु० पहिले सु० सूर्योदय से (१) ए० एक हि० हिरण्य कोटी अ० आठ अ० पूरा स लक्ष सू० सूर्योदय से आ० लेकर दि० देवेथे जा० यावत् पा० भोजन तक (२) ति० तीन को० कोटिशत अ अठ्यासी हो होवे को० कोटि अ० अस्सी स० शतसहस्र (लक्ष) ए० ऐसे मे सवत्सर में दि० दिया (३) ॥ १९ ॥ वे० वैश्रमण कु० कुंडलधारी, दे० देवता लो० लोकान्तिक म० महर्धिक बो बोधदेते हैं ति० तिर्थंकर को प० पदरह क० कर्मभूमिमें (४) ब० ब्रह्म क०

पदाण(१)एगा हिरण्णकोडी अट्ठेव अणूणया सयसहस्सा सूरोदयमादीयं दिज्जइ जा पायरासो त्ति(२)तिण्णेव य कोडिसया अट्ठासीति च होंति कोडीओ असियच सयसहस्सा एय सवच्छरे दिण्ण(३)।१९। वेसमण कुडलधरा देवालोगतिया महिड्ढीया बोहति य तित्थयर पण्णरससु कम्मभूमीसु।४।बमंमि य कप्पमि य बोद्धव्वा कण्हराइणोमज्झे लोगतिया विमाणा अट्ठसुवत्था

लनेवाले हैं इस लिये सूर्य का उदय होवे ही दान की प्रवृत्ति करने में आती थी प्रतिदिन सूर्योदय से एक प्रहर में एक क्रोड आठ लाख सोनामहोरों दान में देते थे वैसे ही एक वर्ष में तीन सो अठासी क्रोड अस्सी लाख सोनामहोरों दान में दी ॥ १९ ॥ वर्षिदान दिये बाद पांचवे स्वर्ग के नजीक आठ कृष्ण राजी के अन्तर में आठ लोकान्तिक देवता के रहने का विमान असख्यात योजन का है जिस में एक विमान मध्य में है इस में सारस्वत, आदित्य, वन्हि, वरुण, गर्धतोय, तोषित, अव्याबाध, और आरिष्ट ये नव

कल्प में पो० जानना कृ० कृष्ण राजिमें लो० लोकान्तिक वि० विमान अ० आठ प्रकारका व० विस्तार वास्ते अ० असंख्याता (५) ए० य द० देवोंका समुह भ० भगवान को बो० बोधते हैं जि० जिनवर जि० वीर स० सब ज० जगत्के जी० जीवका हि० हित भ० भदन्त ति० तीर्थ का प० प्रवर्तावो [६] ॥२०॥ त० तब स श्रमण भगवत महावीर का अ० निकलने का अ० अभिप्राय जा० जानकर भ० भवनपति वा० वाणव्यन्तर जो० ज्योतिषिक वि० विमानवासी दे० देवता दे० देवी स० अपने २ रू० स्वरूप म० भ

असंखज्जा ॥५॥ एते देवणि काया भगवं बोहिंति जिणवर वीरं, सव्वजगज्जीवहियं अरहं तित्थं पवत्तेहि (६)॥२०॥ तओणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अभिणिक्खमणाभिप्पायं जाणित्ता भवणवइ—वाणमंतर—जोइसिय—विमाणवासिणो देवा य देवीओ य सएहिं२ रूवेहिं सएहिं२ णेवत्थेहिं सएहिं२ चिंधेहिं सव्विड्ढीए सव्वजुईए सव्वबलसमुदएणं सयाइं २ जाणविमाणाइं दुरूहंति सयाइं २ जाण विमाणाइं दुरूहित्ता अ

भावि के देव गहते हैं उन का भीताचार यह है कि पंद्रह कर्मभूमि में जो तीर्थंकर होते हैं उन को दीक्षा के अवसर में संक्षेप इस रीत्यानुसार श्री महावीर प्रभु को भी बोध किया कि हे भदन्त! तीर्थ प्रवर्तावो सर्व जीवों का कल्याण करो ॥ २० ॥ फीर भगवान का दीक्षा अंगीकार करने का अभिप्राय जानकर चारों जाति के देव, देवी अपने २ रूप, वेश, चिन्हों को धारण कर सर्व ऋद्धि, द्युति, तथा सेना को साथ लेकर

पने २ णे० वेषसे स० अपने२ चि० चिन्हसे स० सबधुतिसे स०सर्वऋध्दिसे स० सबबलसमुदायसे स०अपना२ आ० यान विमानपर दु० चढे स० अपना २ आ० विमानपर दु० बैठकर अ० यथा बा० बादर पो० पुद्गल प० छोड अ० जैसे बा० बादर पो० पुद्गल प० छोडकर अ० यथा सु० सूक्ष्म पो० पुद्गल प० ग्रहण किया अ० यथा सूक्ष्म पु० पुद्गल प०ग्रहणकर उ०ऊर्ध्व उ०उडे उ०ऊर्ध्व उ०उडकर ता० उस उ० उत्कृष्ट सि० शीघ्र च० चपल तु० त्वरित दि० दिव्य दे० देवगतिसे अ० नीचे उ० उतरते २ ति० तिर्यक् से अ० असंख्याता दी० द्विप समुद्र मी० उल्लंघता हुवा २ जे० जहां जं० जम्बूद्वीप द्विप है जहांही उ० आके उ०

हाबादराई पोग्गलाइ परिसाडेंति, अहाबादराइ पोग्गलाइं परिसाडित्ता अहासुहुमाइ पोग्गलाइ परियाइस्ति अहासुहुमाइ पोग्गलाइ परियाइत्ता उड्ढ उप्पयति उड्ढ उप्पइत्ता ताए उक्किट्ठाए, सिग्घाए, चवलाए, तुरियाए दिव्वाए, देवगइए, अहेणं उवयमाणा २ तिरिएणं असंखेज्जाइं दीव—समुद्दाइं वीतिक्कममाणा २ जेणे वं जम्बू दीवे दीवे तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता जे णेव उत्तरखत्तियकुंडपुरसाणि

अपने २ विमानों पर आरूढ होकर, बादर पुद्गलोंको त्याग कर, सूक्ष्म पुद्गलोंको धारन कर, ऊंचा जाकर, अत्यंत शीघ्रता तथा चपलता युक्त दिव्य देवगति से नीचे उतरकर, तिर्यक् लोक में असंख्याता द्विप समुद्र का उल्लंघन कर जम्बूद्विप के दक्षिण भरत में क्षत्रियकुंड नगर की ईशान कोन में शीघ्र २ आ पहुंचे

भाकर मे० भिसवरफ उ० उत्तर स० क्षत्रिय कुंडपुर सनिवेश ते० उसी तरफ उ० आये उ० आकर अ० भिसवर्फ उ० उत्तर क्षत्रिय कुंडपुर संनिवेश में उ० ईशान दि विशा विभाग में वे० वहां भा० आते थे वे० वेगसे उ० पहुंचने को ॥ २१ ॥ त० सब स० शक्र दे० देवेन्द्र दे० देवराज स० धीरे २ आ० विमान ठ० स्थापन किया स० धीरे २ वि० विमान को ठ० स्थापन करके स० धीरे २ आ० विमान से प० नीचे उतरे स० धीरे २ आ० विमानसे प० नीचे उतर कर ए० एकान्त अ० गये ए० एकान्त अ० भाकरके म०

वेसे तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता जे णेव उत्तरखत्तियकुण्डपुरसंणिवेसस्स उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए तेणेव झाति वेगेण ठवट्ठिया ॥ २१ ॥ तओण सक्के देविंदे देवराया सणिय २ जाणविमाणं ठवेति सणिय २ विमाणं ठवेत्ता सणिय २ जाण विमाणाओ पच्चोतरति सणियं २ जाण विमाणाओ पच्चोतरित्ता एगत मवक्कमेति एगतमवक्कमेत्ता महया वेउव्विएण समुग्घाएण समोहणति

॥ २१ ॥ फिर शक्र नामक देवेन्द्रने धनैः २ विमान को स्थंभित किया और उस में से उतरकर एकांत में जाकर वैक्रेय समुद्‌घात करके एक महान मणि, सुवर्ण, रत्नमडित शुभ मनोहर रूप देवच्छंदक बनाया उस की मध्य में वैसा ही रमणिक मनोहर पाद पीठिका युक्त सिंहासन बनाया फिर जहां भगवान थे वहां भगवान् को तिन बार प्रदक्षिणा कर, वंदना नमस्कारकर, जहां देवच्छंदक सिंहासन था वहां भगवान् को

महान् वै० वैक्रय स० समुद्घात से स० मोहित किया म० महान् वै० वैक्रय स० समुद्घात से स० मोहित कर ए० एक महान् ना० विविध प्रकारकी म० मणि क० सुवर्ण र० रत्न भ० भाव भात के चि० चित्र वाला सु० शुभ चा० मनोहर रूप वाला दे० देवच्छंदक वि० बनाया त० उस दे० देवच्छंदक की ब० बहुमध्य में ए० एक म० महान् स० पादपीठिका सहित सी० सिंहासन ना० विविध प्रकारके म० मणि क० सुवर्ण र० रत्न भ० भात भावके चि० चित्र युक्त सु० शुभ चा० मनोहर रूपवाला वि० बनाया वि०

महया वेउव्विएण समुग्घाएण समोहणित्ता एग मह णाणामणिकणगरयण भत्तिचित्त सुभ चारुकंतरूव देवच्छंदय विउव्वति तस्सण देवच्छंदयस्स ब हुमज्झदेसभाए एग मह सपायपीढ सीहासणं णाणामणि कणयरयणभत्तिचि त्त सुभं चारुकंतरूव विउव्वइ विउव्वित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उ वागच्छति तेणेव उवागच्छित्ता समण भगव महावीर तिक्खुत्तो आयाहिण पया-

स्थापकर पूर्व दिशा में सिंहासन पर बैठाये फीर (१) शतपाक और (२) सहस्रपाक तेल से भगवान् के शरीर को मर्दन कर गंध कापायिक वस्त्र से (३) पुछ कर पवित्र जल से स्नान कराकर लक्ष मूल्यवाला एक गोशीर्ष चंदन तैयार कर लेप किया फिर निश्वास की किंचित वायु से उडे ऐसे मासिद्ध नगर या

(१२) सो तथा हजार औषधि के पाक से बनाहुवा (३) सुगंधवासित और पीला रंग का

पनाकर जे० जहां स० श्रमण भगवान् महावीर थे० वहांही उ० गये ते० वहांही उ० जाकर स० श्रमण भ गवान् महावीर को ति० तिनवार आ० आदान प० प्रदक्षिणा क० की स० श्रमण भगवंत महावीर का ष० वन्दनाकी न० नमस्कार कीया व० वंदनाकर न० नमस्कार कर स० श्रमण भगवंत महावीर को ग० लेकर जे० जहां दे देवच्छंदक ते० तहां उ० गये उ०आकर स०धीरे २ पु०पूर्वाभिमुख वाला सी० सिंहा सनपर णि० बैठाये स० धीरे धीरे पु० पूर्वाभिमुख में णि० बैठाकर स० शतपाक स सहस्रपाक वाला ते० तेलसे अ० मसलन उ० मसलकर गं० गधकाषायिक वस्त्र से उ० पूंछा उ० पूंछकर सु० शुद्ध उदक से

हिण करेइ समण भगवं महावीरं वदति णमसति, वदित्ता नमसित्ता समण भग व महावीर गहाय जणव देवच्छंदए तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता साणिय २ पुरत्थाभिमुहे साहासणे णिसीयावेइ, साणिय २ पुरत्थाभिमुहं णिसीयावेत्ता स यपागसहस्सपागेहिं तेल्लेहिं अब्भगेति, अब्भगेत्ता गधकासाइएहिं उल्लोलति उल्लोलित्ता सुद्धोदएण मज्जावेइ मज्जावित्ता जस्सय मुल्ल सय सहस्सेहिं ति प

पान्य में धने हुवे, चतुरजनों में प्रशंसा पायहुवे, घोडे की फेन सदृश मनोहर, चतुर कारिगरोंने सुवर्ण के तार स बनाय हुवे, हस समान श्वेत दो वस्त्र भगवान् को पहिनाये फिर अठारसरा, नवसरा, हार, उरस्थ, एकावलि, मलंय, कंदोरा, मुकुट, रत्नमालादि आभरण पहिनाये फिर भिन्न भिन्न जाति के पुष्प की मालाओं से

म० स्नान कराया म० स्नान कराके ज० जिसका मु० मूल्य स० लक्ष प० मास फग्क प० विशपकर सी० ठंडा गो० गोशीर्ष र० रक्त च चन्दन मे अ० विलेपन किया अ० विलेपन करके इ० थोडा नि० निश्वास वायु से उड ऐसा व श्रेष्ठ ण० नगर प० पाटण में उ० बना हुवा कु० कुशल ण० नरमें प० प्रशसा पाया हुवा अ० अश्वकी ला फनकी सदृश पे० रमणिक छ० चतुर कारिगर क० कनक से स० सींचा हुवा क० कम इ० इसका लक्षणवाला ( वस्त्र ) प० पट जु युगल णि० पहिनाये पि० पहिनाकर हा० हार अ० अर्धहार उ० उरस्थ ए० एकावली पा मालंब सु० सुमपट्ट म० मुकुट र० रत्नकी मालादिक

ढोलभिचए पमाहिएण सीतएणं गोसीरच्चचदणण अणुलिंपति अणुलिंपि चा इसि णिस्सासवातवोज्झ, वरणगरपट्टणुग्गय, कुसलणरपसासित, अस्स लालापेलव, छ्यायारियकणगखचियतकम्म, हसलक्खण, पट्टजुयल, णियसा- वेइ।गेयसावेचा हार अद्धहार, उरत्थ, एगावलि, पालंब—सुतपट्ट—मउड रयणमा लाइ आविधावति आविधावेचा गंठिम—वेढिम—पुरिम—संघातिमेण मल्लेण कप्परु

पुष्पवत् की तरह अलंकृत किये फिर सहस्र मनुष्य उठासके ऐसी एक बडी चंन्द्रप्रभा नामे पालखी इन्द्रने वक्रेयसमुद्घात करके बनाइ वह पालखी ईहामृग, बैल, घोडे, मनुष्य मगर, पक्षी, वानर, हस्ती, अष्टा पद, सरभ, चवरीगाय, व्याघ्र, सिंह, वन की लता, तथा अनेक विद्याधर युग्म के यत्र योग सहित थी,

भा० परिनाये भा० पहिनाकर ग० गुथीहुइ पुष्पकी माला, वे० पुष्पका दडा पु० पूरिम स माला में माल्य संचित म० मालासे क कल्प वृक्ष की सदृश स० अलंकृत किया स० अलंकृत करके दो० दूसरी षक्त म० घरी वे० वैक्रेय स समुद्घात स० की स० करके ए० एक म० महान् च० चन्द्रप्रभा सि० शिबिका ( पालखी ) स० सहस्रवाहिनी वि० विकुर्वी त० वह न यथा इ ईहामृग ( शाहमृग ) उ० वृषभ, तु० अश्व, ण मनुष्य म० मगर, वि पक्षी, वा० वानर, कुं० हाथी रु० हरण स अष्टापद च० चमरी गाय स व्याघ्र सी सिंह व० वनलता प पद्मलता वि० विचित्र वि० विद्याधरके जु० युगल मं० यन्त्रयोग जु० युक्त अ० सूर्य के किरण की स० सहस्र मा० माला वाली सु० रमणीय मि० झगझगाय

मल्लामिव समालंकेति समालंकेत्ता दोच्चपि महया वेउव्वियसमुग्घाएण समोहणइ, समोहणित्ता एग मह चंदप्पभ सिविय सहस्सवाहिणि विउव्वइ —त जहा ईहामिय—उसभ—तुरग—णर—मकर—विहग—वाणर—कुंजर—रुरु—सरभ—चमर—सद्दूल—सीह—वणलय—पउमलय—विचित्तविज्जाहरमिहुणजुगल——जतजोग——जुत अच्चीसहस्समालीणिय——सुणिरूवित मिसिमिसित रूवगसहस्सकलिय इसिं भिस——

और सहस्रों तेजराशि से भरपुर थी, रमणीय झगमग करते हजारों चित्रों से परिपूर्ण और देदीप्यमान और चक्षु से न देखसके ऐसी थी, अनेक मोतियों से विराजित सुवर्णमय, मसरयुक्त थी, और झूलती मोतियों की माला, हार, अर्धहार, वगैरह भूषणों से सुशोभित थी, अतीव दर्शनीय थी, पद्मलता, अशोकलता

मान रू चित्रोंसे क० कलित दे० देदीप्यमान च० चक्षु च० नहीं देखसके ऐसा मु० मोतिके हार मु० मोतियोंकी माल स स० विराजित त० सवर्ण प० पांखडी की पास ल रूपादीसे प० स्टकती हुइ मु० मोति की दा० माला हा० हार म० अर्धहार भू० भूषण, स शोभिती अ० अधिक पे० देखने योग्य प पद्मल ता म० भांति चि० चित्रित अ० अशोकलता भ० जैसे चि० चित्रित क० कंदलता भैसी चि० चित्रित णा० नाना प्रकार की ल० लता से चि० चित्रित सु० शुभ चा मनोहर आकृतिवाली णा० अनेक प्र० मणि प० पंचवर्णी घ० घंग प० पताका में प० मंडित अ० अग्रशिखरवाली सु० शुभ चा० मनोहर आ कृति वाली पा मनोहर द० दर्शनीय सु० रम्य देखाववाली ॥ २२ ॥ सि० शिबिका उ० स्थान में आर

माण चक्खुल्लोयणलेस्सं, मुताहड, मुतजालतरोपियतवणयिपयरलंभूण, पलं—
बंतमुतदाम, हारद्धहारभूसणसमोणय, अहियपेच्छणिज्ज, पउमलयभत्तिचित्तं,
असोकलयभत्तिचित्त, कंदलयभत्तिचित्त, णाणालयभत्तिविरइयं, सुभ, चा—
रुकतरूव, णाणामणिपचवण्णघटापडायपरिमंडियग्गसिहर, सुभ, चारुकत रूव,
पासादीय, दरिसणीय, सुरूवं ॥ २२ ॥ सीया उवणीया जिणवरस्स जरम

वगैरह लताओं से चित्रित थी, शुभ तथा मनोहर आकारवाली थी, अनेक प्रकारकी पंचवर्णी मणियुक्त घंटा तथा पताकासे शोभित अग्रभागवाली थी, तथा मनोहर, देखनेलायक और रम्य आकृतिवाली थी ॥ २२ ॥

जि० जिनवर म० मग म० मरण से वि० रहित ज० पानी म० पुष्पकी दा० माला म० भक्त स्थलका दि० दिव्य कु० पुष्पों से ( १ ) सि शिबिका के म० मध्य में दि दिव्य व० श्रेष्ठ र० रत्नरूप चे० देदीप्यमान सी० सिंहासन म० बहुमूल्य स पाद पिठिका सहित जि० जिनवर का ( २ ) आ० धारण की मा माला म० मुकुट भा देदीप्यमान शरीरवाले व० श्रेष्ठ आ० आभरण का धारण करने वाले खो० क्षौमिक व० वस्त्र पि० पहिननेवाले ज० जिसका मो० मूल्य स० लक्ष का [ ३ ] छ० दो उपवास से अ० अध्यवसाय सो० अच्छा जि० जिन ले० लेश्यासे वि० विशुद्ध आ चढ उ० उत्तम सि० शिवि

रणत्तिप्पमुक्कस्स उत्तसतमल्लदामा जलथलय दिव्वकुसुमेहिं (१) सिविंयाइ म
ज्झयारे दिव्व वररयणरूवचवतिय, सीहासण महरिह सपादपीठ जिणवरस्स (२)
आलइय मालमउडे भासुरबोंदी वराभरणधारी, खोमयवत्थणियत्थो जस्सय मो
ल्लं सयसहस्स ( ३ ) छट्ठेणठ भत्तेण अज्झवसाणेण सोहणेण जिणो

जलस्थल से उत्पन्न हुये दिव्य पुष्पों की मालाओंसे सुशोभित पालखी जन्म मरण से मुक्त जिनवर के लिये प्राप्त हुइ उस की मध्य में पाद पीठिका सहित रत्नरूप, प्रकाशमान, बहुमूल्य सिंहासन स्थापन किया लक्ष मूल्य का उत्तम क्षौमिक वस्त्रों ( मखमल मसलीन ) पहिन कर माला मुकुटादि आभरणों से प्रकाशित बनकर

का। २२ ४ ] ॥ २३ ॥ सी० सिंहासनपर णि० बैठे हुवे म० शक्र इ० इशान दो० दो पा० बाजु वी० विंजते है चा० चमर स म० मणि र० रत्न से चि० युक्त द० दण्ड वाले ( ५ ) ॥ २४ ॥ पु० पहिले उ० उठाइ मा० मनुष्योंने सा० सहर्ष रो रोमपुलकितमें प पिछम ह० हुवे दे० देवता, सु० सुर अ० असुर ग० गरुड णा० नागेन्द्र ( ६ ) पु० पूर्वमें सु० देवता व० वहते अ० असुर पु० और दा० दक्षिण की पा० बाजु में अ० पश्चिम में व० वहते ग० गरुड णा० नाग पु० और उ० उत्तर दिशामें [ ७ ] ॥ २५ ॥

लेसाहि विसुज्झता आरुहइ उत्तम सिय (४) ॥ २३ ॥ सीहासणे णिविट्ठो सक्कीसाणाय दोहि पासेहिं, वीयति चामराहिं मणिरयणविचितदंडाहिं ( ५ ) ॥ २४ ॥ पुव्विउक्खित्ता माणुस्सेहिं साहट्ठरोमपुलएहिं पच्छा हवंति देवा सुर असुर गरुल णागिंदा (६) पुरओ सुरा वहति असुरा पुण दाहिणम्मि पासम्मि, अवरे वहति गरुला णागा पुण उत्तरे पासे ॥७॥२५॥ वणसंड व्व कुसुमिय पउ-

दो उपावास कर पवित्र परिणाम और शुभ लेश्या सहित जिनेश्वर देव पालखी उपर चढे ॥ २३ ॥ शक्र और इशानेन्द्र सिंहासन की दोनों बाजु बैठकर मणिरत्न दंड युक्त चंवर अपना हस्त में लेकर भगवान् को ढोलते थे ॥ २४ ॥ पालखी को पहिले, मनुष्योंने हर्ष सहित उठाइ फिर सुर, असुर, नाग आदि देवोंने सुमक्ष रहकर उठाइ पूर्व दिशा में देवों, दक्षिण में असुरों, पश्चिम में गरुडों और उत्तर में नाग आदि के देवों पालखी उठाते समय रहते थे ॥ २५ ॥ जिस समय भगवान् दीक्षा ग्रहण करने को जाते थे उस समय

व० वनखंड प० प्रचुर कु० कुसुमभारसे प० पद्मसर ज० जैसे स० शरदऋतु में सो० शोभता है कु० कुसुम का भ० भारसे इ० यह ग० गगनतल सु० देवताओं के समुहसे (८) सि० सरसव का वन अ जैसे क० कणियर का वन च० चपाका सो शोभताहै कु० कुसुम का भारसे इ० यह ग० गगनतल सु० देवसमुहों से (९) ॥ २६ ॥ प० श्रेष्ठ प० पटह भे० भेरी झ० झालर स० शंख स० लक्ष तू० वादिंत्र ग० गगनतल में ध० धरणितल में तु० वादिंत्रो का नि० आवाज प० परम र० रम्य (१०) त० तत वि०

मसरो वा जहा सरयकाले, सोहइ कुसुमभरेण इय गगणतल सुरगणेहिं (८)
सिद्धत्थवण वा, जहा कणियारवण वा, चंपयवण वा, सोहइ कुसुमभरेण इय गग
णतल सुरगणेहिं (९) ॥ २६ ॥ वरपडह—भेरी—झल्लरी—संख—सयसहस्सिए
हि तूरेहिं, गगणतले धरणितले तुरियणिणाओ परमरम्मो (१०) ततवितय घण
सुसिरं आउज्ज चउविहं बहुविहीय वायंति तत्थ देवा बहुहिं आणट्ट

देवता से आकाश ऐसा शोभित हो रहा था कि जैसे पुष्पों से वनखंड शोभता होवे, अथवा शरदऋतु में पद्म विकसित होवे, अथ सरसव का वनखंड तथा कणियर या चंपा का वन विकसित पुष्पों से शोभित होता होवे ॥ २६ ॥ उस समय पटह, भेरी, झालर, शंख आदि चारों प्रकार के लाखो वादिंत्रो आकाश में देवता और पृथ्वीतलपे मनुष्य बजा रहे थे तत, वितत, घन और शुषिर ये चारों प्रकारवाले वादिंत्रो को

वितत घ० घन मु० शुषिर अ/० वार्दित्र च चार प्रकार के ब० बहुत प्रकार के वा० बजाते स० त हो दे० देवता ब० बहुत आ० आनर्तक सहित (११) ॥ २७ ॥ ते उस का० काल से० उस स० स मय में से० जो से० वे हे० हेमन्तका प०प्रथम मास प० प्रथम प० पक्ष म० मृगशर वदी द० उस म० मृग शरवदी की द० दशमी के दिन सु० सुव्रत नाम दि० दिवस में वि०विजय नाम मु० मुहूर्त में ह० हस्तोत्तरा नक्षत्र का जो० योग में पा० पूर्वमें गती छा० छाया वि० छेड़ा पो० प्रहर में छ० छठ भक्त अ० पानी रहित ए० एक सा० पट भा० लेकर चं० चन्द्रप्रभा नामक सि० शिबिका में स० सहस्र वाहिनी स० देव

गसएहिं (११) ॥ २७ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं जे से हेमंता ण पढमे मासे पढमे पक्खे मग्गसिरबहुले तस्सणं मग्गसिरबहुलस्स दसमी पक्खेणं सुव्वएणं दिवसेणं विजएणं मुहुत्तेणं हत्थुत्तराणक्खत्तेणं जोगो वगतेणं पाईणगामिणीए छायाए वियत्ताए पोरिसीए छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं एकसाडगमायाए चंदप्पहाए सिवियाए सहस्सवाहिणीए सदेवमणुयासुरापरिसाए

देवता नाटक की साथ बजाते थे ॥ २७ ॥ उस काल उस समय में मृगशर वदी १० मी के सुव्रत नामे दिन में विजयमुहूर्त में उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र का योग में अन्तिम प्रहर में चौविहार बेला सहित एक वस्त्र धारन कर, सहस्रवाहिनी चंद्रप्रभा नामक शिबिका में बैठकर देव, मनुष्य, असुरों के समूह की साथ चलते २

सरिस म० मनुष्य अ० असुर की प० परिषदा से स  निकलते हुवे उ० निकलते हुवे उ० उत्तर क्षत्रिय कु० कुंडपुर सन्निवेश के म  मध्यमें णि० निकलकर जे० जिस दिशामें णा० ज्ञातखंड उ० उद्यान ते० तहां उ० गये उ० जाकर ई  थोडिसी ( एक हाथ ) प० प्रमाण अ० ऊंचे भू० भूमिका भाग स० धीरे २ चं० चंद्रप्रभा नामक सि० शिबिका स० सहस्र वाहिनी ठ० रखसी ठ० रखकर स० धीरे २ च० चंद्रप्रभा सि० शिबिका में से स० सहस्र वाहिनी प० नीचे उतरे प० नीचे उतरकर स० धीरे २ पु० पूर्वाभिमुख सी० सिंहासनपर णी० बैठे आ० आभरणालंकार उ० उतारे त० तब वे० वैश्रमण दे० देवने जं० गोडु

समभिज्जमाणे समभिज्जमाणे उत्तरखत्तियकुडपुरसणिवेसस्स मज्झमज्झेण णिगच्छित्ता जेणेव णायसंडे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता इसिरयणिप्पमाणं अच्छेप्पेण भूमिभागेण सणिय २ चंदप्पभं सिवियं सहस्सवाहिणिं ठवेइ ठवेत्ता सणिय २ चंदप्पभाओ सिवियाओ सहस्सवाहिणीओ पच्चोयरइ पच्चोयरइत्ता सणिय २ पुरत्थाभिमुहे सीहासणे णिसीयेइ, आभरणालंकारं ठमुयइ, त

क्षत्रिय कुंडपुर सन्निवेश के मध्य में होकर जहां ज्ञातखण्ड नामक उद्यान था वहां भगवान् पधारे वहां भूमि से एक हाथ ऊपर शिबिका धीरे से स्थापी उस में से धीरे २ उतरकर पूर्वाभिमुख सिंहासन पर विराजमान होकर वस्त्राभूषण उतारने लगे तब वैश्रम देवोनेभ गोदोहासनसे रहकर श्वेत वस्त्रों में भगवान् के आभरणा

आचाराङ्ग सूत्रका—द्वितीय श्रुतस्कन्ध

हासने स० श्रमण भगवन्त महावीर का इ० श्वेत प० पटसे आ० आभरणालंकार को प० ग्रहण किया त० तब स० श्रमण भगवंत महावीरने दा दक्षिण से दा० दक्षिण वा बाँये हाथ से वा० बाँयी बाजुका प० पंचमुष्टिक लो० लोच क० किया त० तब स शक्र दे देवेन्द्रने दे० देवराजा स० श्रमण भगवंत महावीर को गं० गोदुहासने प० हिरेके था० स्थाल में के० केश प० ग्रहण किया प० ग्रहण कर अ० मानो भं० ऐपूज्य वि० ऐसा क करके क्षी० क्षीर समुद्र सा० क्षेमये त० तब स० श्रमण भगवत महावीर ने दा दक्षिण हाथ से द० दक्षिण का वा० वाम हाथसे वा० वाम का प० पंचमुष्टिक लो० लोच क०

ओण वेसमणे देवे जतुवायपढिए समणस्स भगवओ महावीरस्स हंसलक्खणे ण पढेण आभरणालकार पडिच्छइ, तओणं समणे भगव महावीरे दाहिणेण दाहिण वामेण वामं पचमुट्ठिय लोय करेइ, तओण सक्के देविंदे देवराया स-मणस्स भगवओ महावीरस्स जतुवायपडिए वयरामयेण थालेण केसाइ पडि च्छइ पडिच्छित्ता "अणुजाणेसि भते" त्तिकट्टु खीरोयसायर साहरइ, तओणं सम-

संस्कार ग्रहण किये फिर भगवान्ने सीधे हाथ से सीधी बाजु का और बाँये हाथ से बाँयी बाजु के केशों का पचमुष्टि से लोच किया तब शक्रेन्द्रने गोदोहासन से रहकर भगवान् के केशको हीरे का थाल में ग्रहण कर भगवन्त को बनाकर क्षीर समुद्र में पहोंचाये इस तरह भगवानने लोच कियेबाद सिद्ध को

करक सि० सिद्धको न० नमस्कार क० किया क० करके स० सर्व मे० मुझे अ० अकरणीय पा० पापकर्म ति० ऐसा क० करके सा० सामायिक च० चारित्र प० अंगीकार किया सा० सामायिक च० चारित्र प० अंगिकार कर दे० देव परिषदा म० मनुष्य की प० परिषदा आ० चित्रित चि० सदृश ह० हुई॥२८॥ दि० देवता के मा० मनुष्य के घो० अवाज तु० वार्दित्र के णि० निनाद स० शक्र के व० वचन से खि० शीघ्र णि० स्तब्ध हुवा जा० जब प० अंगीकार किया च० चारित्र (१) प० अंगीकार कर च०

णे भगवं महावीरे दाहिणेणं दाहिणं वामेण वामं पञ्चमुट्ठियं लोयं करेत्ता सिद्धाण णमोक्कारं करेइ करेत्ता "सव्वं मे अकरणिज्जं पावकम्मं" त्तिकट्टु सामाइयं चरित्तं पडिवज्जइ सामाइयं चरित्तं पडिवज्जेत्ता देवपरिसं च मणुयपरिसं च आलेक्खचित्तभूयमिव ठवेइ ॥ २८ ॥ दिव्वो मणुस्स घोसो तुरियणिणाओ य सक्कवयणेणं, खिप्पामेव णिलुक्को जाहे पडिवज्जइ चरित्तं । १ । पडिवज्जितु चरित्तं अहोणिसिं

नमस्कार करके " मुझे कुच्छ भी पाप करना नहीं है " ऐसी प्रतिज्ञा धारण कर सामायिक चारित्र अंगीकार किया उस समय देव तथा मनुष्यों की परिषदा चित्रामण सदृश स्तब्ध बनगई ॥ २८ ॥ भगवन्तने चारित्र लिये बाद शक्रेन्द्र की आज्ञा से देव मनुष्य के शब्दों और वादित्रों सब बंध रहें और सर्व हर्षित

चारित्र अ० अहोरात्रि स० सर्व पा० प्राण भू० भूत का हि० हित सा सहर्ष लो० रोम से पु० पुलकित प० सावधपनासे दे० देखता नि सुनते थ (२) ॥ २९ ॥ त० तब स० श्रमण भगवंत महावीर का सा० सामायिक खा० क्षायोपशमिक च० चारित्र प० अंगीकार किये बाद म० मनःपर्ययज्ञान णा नामक णा० ज्ञान स० उत्पन्न हुवा अ अढाइद्वीप में दो० दो स० समुद्र में स० संज्ञी के प० पंचेन्द्रिय के प० पर्याप्ता के वि० रहित म० मन म० मनोगत मा० भाव जा० जाण्या ॥ ३० ॥ त० तब स श्रमण भ० भगवान् म० महावीर म० मनुष्यों क्षेत्रे मि० मित्र णा ज्ञाति स० स्वजन सं०

सव्वपाणभूतहित साहट्टुलोमपुल्या, पय्या देवा निसामति ॥ २ ॥ २९ ॥
तओण समणस्स भगवओ महावीरस्स सामाइय खाओवसमिय चरित्त पडिवन्न
स्स मणपज्जवणाणे णाम णाण समुप्पन्न अड्ढाइज्जेहिं दीवेहिं दोहिंय समुद्देहिं स
ण्णीण पचेंदियाण पज्जत्ताण वियत्तमणसाण मणोगयाइ भावाइ जाणइ ॥ ६० ॥
तओण समणे भगवं महावीरे पव्वइत्ते समाणे मित्त—णाइ—सयण—संबंधिवग्ग

पुलकित मन करके सावधपने से देखते सुनते थे ॥ २९ ॥ इस तरह भगवान्ने क्षायोपशमिक सामायिक चारित्र अंगीकार किये बाद उन का मनःपर्यय ज्ञान उत्पन्न हुवा जिस से अढाइ द्वीप तथा दो समुद्रमें प र्याप्त और व्यक्त मनवाले सभी पंचेन्द्रिय के मनोगत भाव जानने लगे ॥ ३० ॥ दीक्षा ग्रहण किये बाद

संयभिवर्ग को प० विसर्जित किये प० विसर्जित कर त० तब इ० यह ए० ऐसा अ० अभिग्रह अ० ग्रहण किया बा० द्वादश वा० वर्ष वो० सभी का० काया च० छोड़ादेह जे० जो के०कोइ उ० उपसर्ग स० आवेंगे तं० यह ज० यथा दि० देवताका मा० मनुष्य का ते० तिर्यंच का ते० वे स० सर्व उ० उपसर्ग स० मास होने पर स० सम्यक् प्रकारे स० सहूंगा ख० खमूंगा अ० अहियासूंगा ॥ २१ ॥ त० तब स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर इ० यह ए० एसा अ० अभिग्रह अ० ग्रहणकर वो० वोसिराकर का० काया च०

पडिविसज्जेति, पडिविसज्जित्ता तओणं इम एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ "बार-स वासाइं वोसट्ठकाए चत्तदेहे जे केइ उवसग्गा समुप्पज्जति तंजहा—दिव्वा वा, माणुस्सा वा, तेरिच्छिया वा, ते सव्वे उवसग्गे समुप्पन्ने समाणे सम्म सहिस्सामि, खमिस्सामि अहियासइस्सामि ॥ २१ ॥ तओण समणे भगवं महावीरे इमे यारूव अभिग्गह अभिगिण्हित्ता वोसट्ठकाए चत्तदेहे दिवसे मुहुत्तसेसे कुम्मारगा

भगवान्‌ने अपने मित्र, ज्ञाति, स्वजन समाधि को विसर्जित किये, विसर्जित करके ऐसा अभिग्रह किया कि बारह वर्ष पर्यंत में शरीर की संभाल करूंगा नहीं और देव, मनुष्य, या तिर्यचों से जो उपसर्ग होगा वे सर्व सहूंगा ॥ २१ ॥ ऐसा अभिग्रह लेकर शरीर की ममत्वासे रहित होते हुवे एक मुहूर्त जितना दिन होते

देहको छोड़कर दि० दिनका मु० मुहूर्त शेष में कु० कुमार ग्रामको स० पहुंचे ॥ १० ॥ त० तब स० श्र
मण भ० भगवान् महावीर वो० वोसराई च० सजी दे० देहको अ० प्रधान आ० स्थान मे अ० प्रधान
वि० विहार स ऐ० ऐसे स० संयम प नियम स संवर त० तप ब० ब्रह्मचर्य ख० क्षांति मो० मुक्ति
तु० संतोष स० समिति गु० गुप्ति ठा० स्थान क० कर्म सु० अच्छा फ० फल णे० निर्वाण का मु० मुक्ति
मार्ग से अ० आत्मा को भा० भावते वि० विचरते थे॥ ११ ॥ ऐ० ऐसे वि० विचरते को जे० जो के० कोई
उ० उपसर्ग स० उत्पन्न हुवे दि० देवता के मा० मनुष्य के ते० तिर्यंच के से० वे० स सर्व उ० उपसर्ग

म समणुप्पन्ने ॥ १२ ॥ तआण समणे भगवं महावीरे वोसट्टचत्तदेहे अणुत्तरे
ण आलएण, अणुत्तरेणं विहारेण, एव संजमेण, पग्गहेण, संवरेण, तवेण, ब
म्भचेरवासेण, खंतीए, मोत्तीए, तुट्टीए, समितीए, गुत्तीए, ठाणेण, कम्मेणं, सुच
रियफलणेव्वाणमुत्तिमग्गेण, अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ १२ ॥ एव वा विह
रमाणस्स जे केइ उवसग्गा समुप्पज्जिंसु—दिव्वा वा, माणुस्सा वा, तेरिच्छिया वा,

कुमार गाम में आये ॥ १२ ॥ फिर भगवान् उत्कृष्ट आलय, उत्कृष्ट विहार वैसे ही वैसा संयम, नियम,
संवर, तप, ब्रह्मचर्य, क्षान्ति, त्याग, संतोष, समिति, गुप्ति, स्थान, कर्म, तथा अच्छा फल देनेवाला निर्वाण
मार्ग से स्वतः को भावते हुवे विचरते थे ॥ ११ ॥ यों विचरते को देव मनुष्य और तिर्यंचों की तरफ से

स० उत्पन्न होते अ० शुद्धमन से अ० निडरपने अ० दीनता रहित ति० त्रिविध म० मन व० वचन का० काय गु०गुप्त स०सम्यक् प्रकारे स०सहन किया ख०क्षम्या ति०सहन किया अ०अध्यासा॥३४॥त०तब स०श्रम ण भगवान् म० महावीर का ए इस वि० विहार से वि० विचरते हुवे बा० बारह वा० वर्ष वी व्यतीतहुवे ते० तेरह में वा० वर्षका प०पर्याय व० वर्तते न० जब गि० ग्रीष्म का दो० द्वितीय मास का च० चौथा पक्ष व० वैशाख सुदी द० दस व० वैशाख सुदी की द दशमी के दिन सु० सुव्रत दि० दिनमें वि० विजय मु० मुहूर्त ह० उत्तरा फाल्गुनी ण० नक्षत्र का जो० योग होने पर पा पूर्वमें गती छा० छाया में वि०

ते सव्वे उवसग्गे समुप्पणे समाणे, अणाइले, अव्वहिते, अदीणमणस्स तिविह म णवयणकायगुत्ते सम्म सहइ, खमइ, तितिक्खइ अहियासेइ ॥ ३४ ॥ तओ ण समणस्स भगवओ महावीरस्स एतेण विहारण विहरमाणस्स बारस वासा वितिक्कता तेरसमस्स वासस्स परियाए वट्टमाणस्स जे से गिम्हाण दोच्चे मा स चउत्थे पक्खे वइसाहसुद्धे—तस्सण वइसाहसुद्धस्स दसमीपक्खेणं सुव्वए

जो जो उपसर्ग हुवे उन सब को भगवान्ने स्वच्छ भाव में रहकर अपीडाते, अदीन मन करके मन वचन और कायाको गोप कर, सम्यक् प्रकार से सहन किये ॥ ३४ ॥ इस तरह विचरते भगवान् को बारह वर्ष व्यतिक्रमे और तेरमें वर्षमें उन्हाला का दूसरा मास का दूसरा पक्ष-वैशाख सुदी १० मी को सुव्रत नाम

आचाराङ्ग सूत्रका—द्वितीय श्रुतस्कन्ध

व्यतीत हुए पा० पखरसी में जं० जंभिका ग्राम ण० नगर की व० बाहिर ऋ० नदीके उ० ऋजु पा लिका के उ० उत्तर कू० किनारे सा० श्यामाक गा० गाथापतिका क० कर्षणक्षेत्र में वे० व्या वृत्त चै० चैत्य के उ० ईशान दि० दिशा विभाग में सा० शालवृक्ष की अ० नजीक उ० उत्कट मन स गो० गोदुह आसने आ० आतापनासे आ० आतापनालेते हुवे छ० दोउपवास से अ० विना पानीका उ० ऊर्ध्वजानु अ० नीचेमस्तक कर प० धर्म ध्यान में लीन झा० ध्यान रूप को० कोठा में व०

ण दिवसेण विजएणं मुहुत्तेणं हत्थुत्तराहिं णक्खत्तेणं जोगोवगतेणं पाई णगामिणीए छायाए वियत्ताए पोरिसीए जंभियगामस्स णगरस्स बहिया णदीए उ जुवालियाए उत्तरकूले सामागस्स गाहावइस्स कट्ठकरणंसि वेयवत्तस्स चेइयस्स उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए सालरुक्खस्स अदूरसामंते उक्कुडुयस्स गोदोहियाए आयावणाए आयावेमाणस्स छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं उड्ढंजाणु अहोसिरस्स ध

का विजय मुहूर्त में उत्तरा फाल्गुनी के योग में पूर्व दिशा में छाया जाते अंतिम प्रहर में, जंभिका नामक नगरके बाहिर, ऋजुवालिका नदी के उत्तर किनारे, श्यामाक गाथा पतिका कर्षण स्थल में, व्यावृत्त नामक चैत्य के ईशान कोनमें शालवृक्ष के नजीक बैठे हुवे उत्कट गोदुहासन से आतापना करते हुए, चौविहार दो उपवास में जंघाओं उंची रखकर मस्तक नीचे डालकर ध्यान कोष्ट में रहते हुवे शुक्ल ध्यान में वर्तत

भाग शु० शुक्ल ध्यान में व० रहते हुवे नि० निर्वाण का क० कृत्स्न प० प्रतिपूर्ण अ० अव्याघात णि निरावरण अ अनंत अ० अनुत्तर के० केवल व० श्रेष्ठ णा० ज्ञान दं० दर्शन स० प्राप्त हुवा ॥ ३५ ॥ से० अब भ भगवान् अ० अर्हत् जि० जिन के० केवली स० सर्वज्ञ स० सर्व भाव दर्शी स देव, मनुष्य असुर सहित लो० लोककी प० पर्याय को जा० जाणी त० वह ज यथा आ आगति ग० गति ठि स्थिति च० चवन उ० उपपात भु खाया हुवा पी० पीयाहुवा क किया हुवा प० प्रतिसेवित आ० प्रकट कर्म र० गुप्त कर्म ल० बोला हुवा क० कहा हुवा म मनका

ज्झाणकोट्ठोवगयस्स सुक्कज्झाणंतरियाए वट्टमाणस्स निव्वाणे, कसिणे, पडिपुण्णे, अव्वाहए, णिरावरणे, अणते, अणुत्तरे, केवलवरणाणदसणे समुपण्णे ॥ ३५ ॥ से भयवं अरहा, जिणे, जाए, केवली, सव्वण्णू, सव्वभावदरिसी, सदेवमणुयासुरस्स लोयस्स पज्जाए जाणइ तजहा आगतिं, गतिं, ठितिं, चवण, उववाय, भुत्त, पीय, कडं, पडिसेवियं, आवीकम्म, रहोकम्मं, लवियं, कहियं

भावित, सपूर्ण, प्रतिपूर्ण, अव्याघात, निरावरण, अनंत, उत्कृष्ट केवल ज्ञान केवल दर्शन उत्पन्न हुवा ॥ ३५ ॥ अब भगवन्त अर्हत, जिन, केवली सर्वज्ञ, सर्वभावदर्शी होकर देव, मनुष्य, असुरादि सर्व लोक के पर्याय जानने, देखने, लगे अर्थात् इन की आगति, गति, स्थिति, चवन, उपपात, खाया पीया,

मा० विचार स० सर्व लोकमें स० सर्वजीवों का स० सर्व भाव जा० जानते हुवे पा० देखते हुए ए० ऐसे वि० विचरते थे ॥ २६ ॥ जं० जिस दि० दिवस में स श्रमण भगवान् महावीर को प० निर्वाण का क० असम्भित आ० यावत् स० उत्पन्न हुवा त० उसदिन भ भवनपति वा० वाण व्यंतर जो० ज्योतिषिक वि० विमानवासी दे० देवोंके दे० देवीयोंके उ० उतरने से जा० यावत उ० उत्सव भूत हो० हुआ ॥ २७ ॥ त तब स० श्रमण भगवान् महावीर उ० उत्पन्न हुवा णा ज्ञान दं० दर्शन का

मणामाणसिय, सव्वलोए सव्वजीवाणं सव्वभावाइं जाणमाणे पासमाणे एवं वा ए विहरइ ॥ २६ ॥ जण्ण दिवस समणस्स भगवओ महावीरस्स णेव्वाणे कासिण जाव समुप्पण्णं तण्णं दिवसं भवणवइ–वाणमंतर–जोइसिय–विमाणवासि देवेहिं य एवोहिय उव्वयंतेहिय जाव उप्पिंजलगभुएयाविहोत्था ॥ २७ ॥ तओणं सम

कीया, कराया, मगनकार्य, गुप्त कार्य, बोलाहुवा, कराहुवा, ऐसे सर्व लोक में सर्व भाव जानते हुवे देखते हुवे विचरने लगे ॥ २६ ॥ जिस दिन श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को केवल ज्ञान, केवल दर्शन उत्पन्न हुवा उस दिन भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषिक और वैमानिक चारों जाति के देव देवीयों के आने जाने म आकाश उद्योत तथा भव बनरहा था ॥ २७ ॥ इस तरह उत्पन्न ज्ञान दर्शन क धारक श्री महावीर

धारक अ० आत्मा को च० और लो० लोक को अ० जानकर पु० पहिले दे० देवों को ध० धर्म आ० क हा त तब प० पश्चात् म० मनुष्यों को ॥ ३८ ॥ त० तब स० श्रमण भगवान् महावीर उ० उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक गो० गौतमादि स० श्रमणों को णि निर्ग्रंथों को पं० पांच म० महाव्रत स भावना सहि त छ० षट्जीवनिकाय को आ० कहा भा० बोला, प प्रकट किया प० प्ररूपा तं० वह ज० यथा पु० पृथ्वीकाय जा० यावत् त० त्रसकाय ॥ ३९ ॥ प० प्रथम भं० हे पूज्य म० महाव्रत का प० प्रत्याख्यान

ण भगवं महावीरे उप्पण्णणाणदंसणधरे अप्पाणं च लोगं च अभिसमेक्ख पुव्वं देवाणं धम्म माइक्खइ तओ पच्छा मणुस्साणं ॥ ३८ ॥ तओणं समणे भगवं महावीरे उप्पण्णणाणदंसणधरे गोयमाईणं समणाणं णिग्गंथाणं पंच महव्वयाइं सभावणाइं छज्जीवनिकायाइं आइक्खइ, भासइ, पण्णवेइ परूवेइ तंज हा पुढविकाए जाव तसकाए ॥ ३९ ॥ पढमं भंते महव्वयं पच्चक्खामि सव्वं पा

प्रभुने अपने को तथा संपूर्ण लोक को देख कर पहिले देवताओंको बाद में मनुष्यों को धर्म सुनाया ॥ ३८ ॥ बाद में उत्पन्नहुवा ज्ञानदर्शन के धारक श्रमण भगवन्त महावीर प्रभुने गौतमादिक श्रमण निर्ग्रन्थोंको भावना सहित पंचमहाव्रत तथा पृथ्वी काय वगैरह छ जीवनिकाय कह सुनाये ॥ ३९ ॥

स्या

करताहूं स० सर्व पा० प्राणातिपात से० वे सु० सूक्ष्म वा० या बा० बादर त० त्रस वा० या था०
वर णा० नहीं क स० स्वयं पा० प्राणातिपात क० करे ( १ ) जा० यावज्जीवनपर्यंत ति तिन प्रकार
ति० तीन प्रकार से म० मन से व० वचन से का० कायासे त० उसका भं० हेपूज्य प० प्रायश्चित करता
हूं निं० निन्दताहूं ग० विशेष निन्दताहूं अ० आत्मा का स्वभाव को वो० त्यागताहूं त० उसकी इ० ये प०
पांच भा० भावना भ० होतीहैं त० वहां इ० यह प० प्रथम भा० भावना इ० ईर्या समिति से से० वे णि०
निर्ग्रन्थ ण० नहीं अ० विनाईर्या स० समिति से के० केवलीने हूं कहा अ० ईर्या रहित स० समिति वाला

पाणाइवाय से सुहुम वा, बायर वा, तस वा, थावरं वा, णेव सय पाणाइवाय करेज्जा
( २ ) जावज्जीवाए तिविह तिविहेणं मणसा वयसा कायसा तस्स भंते पडिक्क-
मामि, निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि। तस्सिमाओ पंच भावणाओ भवंति
तत्थिमा पढमा भावणा—इरियासमिए से णिग्गंथे णो अणइरिया समिए त्ति के

पहिला महाव्रत —हे भगवान् मैं सर्व प्राणातिपात का त्याग करता हूं—वह इस तरह सूक्ष्म, या बा
दर, त्रस और स्थावर जीवों की यावज्जीव पर्यंत मन वचन काया करके त्रिविधे मैं घात करूंगा नहीं अन्य
की पास कराऊंगा नहीं और घात करनेवाले को अच्छा जानूंगा नहीं और उस जीवघात से निवर्तता हूं
उस को निंदता हूं खेद प्रकट करता हूं, और ऐसा स्वभाव को वोसिराता हूं इस महाव्रत की पांच भा

णि० निर्ग्रंथ पा० प्राणी को अ० हणे व० एकठा करे प० परितापना दे ले० रगडे उ० उद्वेग उपजावे ई० ईर्या समिति वाला णि निर्ग्रन्थ णो नहीं ई० ईर्या असमिति त्ति० ऐसा प० प्रथमा भावना। अ० अथ अ० अपर दो द्वितीया भा० भावना म० मन प० जाने से वे णि० निर्ग्रन्थ जे० जो म मन पा० पापकारी सा० सावद्य स० क्रिया वाला अ० आश्रवकारी छे० छेदकारी भे० भेदकारी अ० कलहकारी पा० द्वेषकारक प० परितप्त पा० प्राणातिपातवाला भू० जीवों की घात करने वाला त० तथा प्रकार का

घली भूया अणइरिया समिते णिग्गथे पाणाइ ( ४ ) अभिहणेज्ज वा, वत्तेज्ज वा, परियावेज्ज वा, लेसेज्ज वा, उद्दवेज्ज वा, इरियासमिए से णिग्गंथे णो इरिया अस मिए त्ति पढमा भावणा। अहावरा दोच्चा भावणा—मण परिजाणाइ से णिग्गथे जे मणे पावए, सावज्जे, सकिरिए, अण्हयकरे, छेयकरे, भेयकरे, अधिकरणिए, पाठसिए, परितावित्ते, पाणातिवादिते, भूतोवघातिए, तहप्पगारं मण णो पधारेज्जा, मण परिजा

धना करी है उस में से पहिली भावना यह है कि मुनि को ईर्यासमिति सहित विचरना परंतु ईर्यासमिति रहित विचरना नहीं क्यों कि जो साधु ईर्या समिति रहित विचरता है वह साधु प्राणी आदि की घात करता है इस लिये ईर्या समिति सहित वर्तना यह प्रथम भावना दूसरी भावना यह है कि मुनि को मन

म० मन पा० नहीं प० धारण करे म० मनको प० जानने वाला से० वे णि० साधु जे० जो म० मन अ० पाप रहित त्ति० ऐसा दो० द्वितीया भा० भावना अ० अथ अ० अपर त० तृतीया भा० भावना व० वचन प० जाने से वे णि साधु जा० जो व० वचन पा० पापकारी सा० सावद्य स० सक्रिय जा० या वत् भू जीवोंकी घात करने वाला त० तथा प्रकार का व० वचन णो० नहीं उ० बोले व० वचनको प० जानने वाला से वे णि० साधु जा० जो व० वचन अ० पापरहित त्ति० ऐसा त तृतीया भा० भावन

णाति, से णिग्गथे जेय मणे अपावते त्ति दोच्चा भावणा। अहावरा तच्चा भावणा वर्ति परिजाणाति से णिग्गथे जाय वती पाविया, सावज्जा, सकिरिया, जाव भूतोव घाइया तहप्पगारं वाइं णो उच्चारिज्जा वइं परिजाणाइ से णिग्गथे जाय वई अपावियत्ति तच्चा भावणा। अहावरा चउत्था भावणा—आयाणभंडणिक्खेवणा-

परिचानना अर्थात् जो मन पाप युक्त, सदोष, सराग, क्रिया सहित, कर्म बन्धकारी, छेदकारी, भेदकारी, क लहकारी, द्वेष से भराहुवा, परितप्त तथा अन्य जीव का घातक होवे ऐसा मन नहीं करना ऐसा जानकर मन पाप रहित रखना यह दूसरी भावना तीसरी भावना यह है कि निर्ग्रन्थ को वचन परिचानना—अर्थात् जो वचन पाप पूर्ण, सदोष, सराग, क्रियावाला यावत् भूतोपघातक होवे ऐसा मन वचन उच्चरना नहीं, इस तरह वचन को जानकर पाप रहित वचन बोलना यह तीसरी भावना चौथी भावना यह है कि साधु को

अ० अथ अ अपर च० चौथी भा० भावना आ० आदान भं० भंड णि० रखने में स० समितिवन्त णि० निर्ग्रन्थ णो नहीं आ० आदान भं० भंड णि० रखने में अ० असमितिवन्त णि० साधु क० केवलीने बू० कहा आ० आदान भं भंडको णि० रखने का अ० असमिति वाला णि० साधु पा० प्राणी (४) अ० इणे जा० यावत उद्वेग उपजावे आ आदान भ० भंड णि० रखने में स० समितिवंत स० से णि० साधु णो० नहीं आ० आदान भं० भंड णि० रखने में अ० असमिति त्ति० एसा च० चौथी भा० भावना अ० अथ अ० अपर पं० पञ्चमी भा० भावना आ० देखकर पा० पानी भो० भोजनकरे (भोगवे) से० वे

सामिए से णिग्गथे णो आयाणभडणिक्खेवणा समिए णिग्गथे केवली बूया आ याणभडणिक्खेवणा असमिए णिग्गथे पाणाइ (४) अभिहणेज्ज वा जाव उद्दवे ज्ज वा आयाणभडणिक्खेवणा समिए से णिग्गंथे णो आयाणभडणिक्खेवणा अस मिए त्ति चउत्था भावणा। अहावरा पञ्चमा भावणा—आलोइय पाणभोई से णि ग्गथे णो अणालोइय पाणभोयणभोई से णिग्गथे पाणाइ (४) अभिहणेज्ज

भडोपकरण रखवे लेवे समिति सहित वर्तना क्यों कि, केवल ज्ञानी कहते हैं कि आदान भंड निक्षेपना समि ति रहित निग्रन्थ प्राणादिक की घात करता रहता है, इस लिये साधु को समिति सहित वर्तना यह चौथी भावना पंचमी भावना यह है कि साधु को आहार पानी देखकर काम में लेना बिना देखे वापरना नहीं

पि० साधु णो० नहीं अ० विनादेखे पा० पानी भो० भोजन भो० भोगनने वाला से० वे पि० साधु पा० प्राणी अ० इनेमा० मारे ध० मारे व० इसलिये आ० देखकर पा० पानी भो० भोजन भो० खानेवाला से०वे पि साधु णो०नहीं अ० विनादेखे पा० पानी भो० भोगवने वाला पं० पंचमी भा० भावना ए० इतने से म०महाव्रत स०सम्यक का०कायासे फा०स्पर्शा हुवा पा०पाला हुवा ती पारकिया हुवा कि० कीर्तित अ० अवस्थित आ०आज्ञा आ०आराधित,भ०होवे प०प्रथम भं०पूज्य म०महाव्रत माणातिपातसे वि० निवर्तना॥४०॥

वा, जाव उद्देवेज्ज वा, तम्हा आलोइय पाणभोयणभोई से णिग्गथे णो अणालोइय पाण भोईत्ति पचमा भावणा। एत्तवताव महव्वए सम्म काएण फासिए पालिए तीरिए किट्टिते अवट्ठिते आणाए आराहिए यावि भवति पढमे भते महव्वए पाणाइवा-याओ वेरमण ॥ ४० ॥ अहावर दोच्च महव्वय पच्चक्खामि सव्व मुसावय च

क्यों कि केवल ज्ञानी कहते है कि विना देखे आहार पानी वापरनेवाला साधु प्राणादिक की घात करता है इस लिये साधु को आहार पानी देखकर वापरना यह पचमी भावना इन भावनाओं से महाव्रत अच्छी तरह काया से स्पर्शित, पालित, पार पहा हुवा, कीर्तित, अवस्थित और आज्ञा प्रमाणे आराधित होता है यह प्रथम प्राणातिपात विरमण रूप महाव्रत है ॥ ४० ॥ दूसरा महाव्रत—सर्वथा मृषावाद दोष का

अ० अथ अ० अपर दो० द्वितीय म० महाव्रत प० पच्चक्खता हूं स० सर्व मु० मृषावाद व० वचन का दो
प से० वे को० क्रोध से वा० या लो० लोभसे भ० भयसे हा० हास्यसे ण० नहीं स० स्वय मु० मृषा भा०
बोले णे० नहीं अ० अन्य की पास मु० मृषा भा० बोले अ० अन्य को मु० मृषा भा० बोलते को ण०
नहीं स० अच्छा जाने ति० त्रिविध ति० तीन प्रकार से म० मन से व० वचन से का० काया से त० उ
सका भं० पूज्य प० निवर्तता हूं जा० यावत् वो० त्यजता हूं त० उसकी इ० यह पं० पांच भा० भावना
भ० होती है त० तहां इ० यह प० प्रथम भा० भावना अ० विचार कर भा० बोलने वाले से० वे णि०

णे तिवोस से कोहा वा, लोहा वा, भया वा, हासा वा, णेव सय मुसं भासेज्जा णेवन्नेण मुसं भासावेज्जा, अण्णपि मुसं भासतं ण समणुजाणेज्जा तिविहं तिविहेण मणसा वयसा कायसा तस्स भंते पडिक्कमामि जाव वोसिरामि। तस्सिमाओ पंच भावणाओ भवंति तत्थिमा पढमा भावणा अणुवीइ भासी से णिग्गंथे णो

त्याग करता हूं:—क्रोध, लोभ, भय, हास्यसे यावज्जीव मृषा भाषण मन वचन काया करके करूंगा नहीं, कराऊं
गा नहीं और मृषा भाषण करनेवालेको अच्छा मानूंगा नहीं और गत कालमें जो मृषा भाषण किया होवे तो उस
को मैं निन्दता हूं यावत् वैसा स्वभावको तजता हूं इस महाव्रतकी रक्षा के लिये ये पांच भावना हैं इसमें से
पहिली भावना यह है कि साधु को विचार करके बोलना विना विचारे बोलना नहीं क्यों कि केवल

साधु णो० नहीं अ० बिना विचारे भा० बोलने वाले के० केवलीने वू० कहा अ० बिना विचारे भा० बो लने वाल से ये णि० साधु स वाले मो० मृषा व० वचन से अ विचार कर भा० बोलने वाला से० वे णि० साधु णो नहीं अ० बिना विचारे भा० बोलने वाला त्ति० ऐसा प० प्रथमा भा० भावना अ० अथ अ० अपर दो० द्वितीया भा० भावना को० क्रोध को प० जानने वाला से० वे णि० साधु णो० नहीं को० क्रोधी सि० होवे के० केवलीने वू० कहा को क्रोध प्राप्त को० क्रोधी स० बोले मो० मृषा व० व चन से को० क्रोध को प० जानकर से० वे णि० साधु ण० नहीं को० क्रोधी सि० होवे दो० द्वितीया

अणणुवीइ भासी केवली बूया—अणणुवीइ भासी से णिग्गथे समावदेज्जा मोस वयणाए अणुवीइ भासी से णिग्गथे णो अणणुवीइ भासी त्ति पढमा भावणा। अहावरा दोच्चा भावणा कोहं परिजाणाइ से णिग्गथे णो कोहणे सिया केवली बूया कोहप्पत्ते कोही समावदेज्जा मोस वयणाए कोहं परिजाणाइ से णिग्गं

ज्ञानी फरमाते हैं कि बिना विचारे बोलनेवाला साधु मृषा वचन बोले इस लिये साधु को विचार कर बोलना बिना विचारे बोलना नहीं यह प्रथम भावना दूसरी भावना यह है कि साधु को क्रोध का स्वरूप जानकर क्रोधित होना नहीं क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि क्रोध के वशीभूत होनेवाला क्रोधी जीव मृषा बोले इस लिये साधु को क्रोध का स्वरूप जानकर क्रोधी बनना नहीं यह दूसरी भावना तीसरी भावना यह है

भावना अ० अथ अ अपर त० तृतीया भा० भावना लो० लोभको प० जानने वाला से० वे णि० साधु णो० नहीं लो० लोभी सि० होवे के० केवलीने वू कहा लो० लोभ प्राप्त लो० लोभी स० बोले मो० मृषा व वचन से लो० लोभ को प० जानने वाला से० वे णि० साधु णो० नहीं लो० लोभी सि० होवे त० तृतीया भावना अ० अथ अ अपर च० चतुर्थी भा० भावना भ० भय प० जानने वाला से वे णि० साधु णो० नहीं भ० भयभीरू सि० होवे के० केवल ज्ञानीने वू कहा भ० भय प्राप्त भी भीरू स० बोले मो० मृषा व० वचन से भ० भयको जानता हुवा से० वे णि० साधु णो० नहीं भ० भयभीरू सि०

थे णय कोहणे सियत्ति दोच्चा भावणा। अहावरा तच्चा भावणा लोभं परिजाणाइ से णिग्गंथे णोय लोभणसिया केवली बूया लोभपत्ते लोभी समावदेज्जा मोस वय णाए लोभ परिजाणइ से णिग्गथे णोय लोभणए सियात्ति तच्चा भावणा। अहा वरा चउत्था भावणा भय परिजाणइ से णिग्गथे णा भयभीरूए सिया कवली

कि लोभ का स्वरूप जानकर लोभी बनना नहीं क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि लाभ के वशीभूत लोभी जीव मृषा बोले इस लिये लाभ का स्वरूप जानकर लोभी होना नहीं यह तीसरी भावना चौथी भावना यह है कि भय का स्वरूप जानकर भयभीरू बनना नहीं, क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि भीरू पुरुष मृषा बोले इस लिये भीरू बनना नहीं, यह चौथी भावना पंचमी भावना यह है कि हास्य का स्वरूप समझकर

होत च० चौथी भा० भावना भ० भय अ० अपर पंचमी भा० भावना हा० हास्य को प० जानने वाला से० वे णि० साधु णो० नहीं हा० हास्य करने वाला सि० होवे क० केवल ज्ञानी बू० कहा हा० हास्य प्राप्त हा० हास्यकारी म० षाय मा० मृषा व० बोलने का हा० हास्यका प० जानने वाला से० वे णि० साधु णो० नहीं हा० हास्य करने सि० होव सि० ऐसा पं० पंचमी भावना ए० इससे म० महाव्रत स० सम्यक् का० कायाके फा० स्पर्शित ना० पालन भा० आज्ञासे भा० आराधित भ० होवे दो० दूसरा भ० पूज्य म० महाव्रत ॥ ४१ ॥ अ० अथ अ० अपर त० तीसरा म० महाव्रत स० प० पच्चक्खाण करताहूं स० सब अ०

मृषा वएज्जे भीरू समावदेज्जा मोस वयणाए भय परिजाणइ से णिग्गंथे णो भयभीरू सिया त्ति चउत्था भावणा। अहावरा पंचमा भावणा हास परिजाणइ से णिग्गंथ णो य हासणए सिया केवली बूया—हासप्पत्ते हासी समावदेज्जा मोस वयणाए हास परिजाणइ से णिग्गंथे णो य हासणिए सियत्ति पंचमा भावणा। एत्तावताव महव्वए सम्मं काएण फासिए जाव आणाए आराहिते यावि भवति। दोच्चं भंते महव्वयं(२)॥४१॥अहावरं तच्चं महव्वयं

साधु को हास्य करनेवाला न होना क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि हास्य करनेवाला पुरुष मृषा बोले इस लिये साधु को हास्य करना नहीं यह पंचमी भावना इन पांचों भावनाओं से महाव्रत काया से अच्छीतरह स्पर्शित पालन आज्ञानुसार आराधित होता है यह दूसरा महाव्रत ॥ ४१ ॥ तीसरा महाव्रत सर्व अदत्ता

अदत्तादान स० से गा० ग्राम में वा० या ण० नगर में अ० अरण्य में अ० अल्प ब० बहुत अ० छोटा थू० बड़ा चि०सचित्त अ०अचित्त णे०नहीं स०स्वय अ०नहीं दिया गि० ग्रहण करे णे०नहीं अ० अन्य की पास अ० नहीं दिया गे० ग्रहण करावें अ० अन्यको भी अ० अदिन्न गि०ग्रहण करते को ण० नहीं स० अच्छा जाने जा० यावज्जीव जा० यावत् वो० त्यजता हूं त० इसकी इ० यह प० पांच भा० भावना भ० है त० वहां इ० यह प० प्रथमा भा० भावना अ० विचार कर मि० परिमित उ० अवग्रह जा० याचने वाला से०

पच्चक्खामि सव्व अदिन्नादाण से गामे वा, णगरे वा, अरण्णे वा, अप्प वा, बहु वा, अणु वा, थूल वा, चित्तमंत वा, अचित्तमंत वा, णेव सय आदिण्ण गिण्हेज्जा, णेवण्णेहिं अदिण्ण गेण्हावेज्जा अण्णपि अदिण्ण गिण्हतं ण समणुजाणेज्जा जावज्जीवाए जाव वोसिरामि ॥ तस्सिमाओ पच भावणाओ भवति तत्थिमा पढमा भावणा—अणुवीइ मिउग्गहजाई से णिग्गथे णो अणणुवीइ मिउग्गहजाई से णिग्गथे केवली बू

दान त्यजता हूं—ग्राम में, शहेर में, या जगल में थोडा बहुत, छोटा बडा, सचित्त, अचित्त विनादिया मन, वचन और काया करके लेऊंगा नहीं, लेवाऊंगा नहीं और लेनेवाले को अच्छा मानूंगा नहीं और गत काल का अदत्तादान का मैं निंदता हूं और ऐसा स्वभाव को वोसिराता हूं इस महाव्रत की पांच भावना जिस में से पहिली भावना यह है कि साधु को विचार पूर्वक परिमित अवग्रह मांगना परंतु विना

व णि० साधु णा नहीं अ० विना विचार मि० परिमित उ० अवग्रह जा० याचने वाला से० वे णि० सा धु क० केवल ज्ञानी बू० कहा अ० विना विचार मि० परिमित उ० अवग्रह जा० याचने वाला से० वे णि० साधु अ० नहीं दियाहुवा गि० ग्रहण करे अ० विचार कर मि० परिमित उ० अवग्रह याचने वाला णि० साधु णा० नहीं अ० विना विचार उ० अवग्रह याचन वाला त्ति० एसा प० प्रथम भावना अ० अथ अ० अपर दो० द्वितीया भा० भावना अ० विचारकर पा० पानी भो० भोजन भो० खाने वाला, से० वे णि० साधु णो० नहीं अ० विना विचारे पा० पानी भा० भोजन भो० खानेवाला के० केवल ज्ञानी बू०

या अणणुवीइ मितोग्गहजाइ से णिग्गंथे अदिण्णं गिण्हेज्जा अणणुवीइ मिउग्गहजाई स णिग्गंथ णो अणणुवीइ मितोग्गहजाई त्ति पढमा भावणा। अहावरा दोच्चा भावणा—अणुण्णविय पाणभोयणभोइ से णिग्गंथे णो अणणुण्णविय पाणभोयणभोइ केवली बूया अणणुण्णविय पाणभोयण भोइ से णिग्ग

विचारे परिमित अवग्रह याचना नहीं, क्योंकि केवलज्ञानी कहते हैं कि बिना विचारे परिमित अवग्रह याचनवाला निग्रन्थ अदत्त लेनेवाला होता है इस लिये विचार कर परिमित अवग्रह याचना यह प्रथम भावना दूसरी भावना यह है कि साधु को आज्ञा लेकर आहार पानी ग्रहण करना बिना आज्ञा आहार पानी ग्रहण करना नहीं क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि बिनाआज्ञा लिये आहार पानी

करा अ० बिना विचारे पा पानी भोजन भो० खान वाला से० वे णि० साधु अ० बिना दिया भु० खावगा त० इसलिये अ० विचार कर पा० पानी भोजन भो० खाने वाला णि० साधु णो० नहीं अ० बिना विचारे पा० पानी भोजन भा० खाने वाला चि० ऐसा दो० दूसरी भा० भावना अ० अथ अ० अपर त तीसरी भा० भावना णि० साधु उ० अवग्रह उ० मांगे ए० इस प्रकार उ अवग्रह याचने वाले सि० हाय क केवलीने बू० कहा णि साधु उ० अवग्रह उ० ग्रहण करे ए० इस प्रकार अ० अवग्रह नहीं याचने वाल अ० नहीं दिया हुवा गि० ग्रहण करे णि० साधु उ० अवग्रह उ० याचे ए इस प्रकार उ०

थे अदिण्ण भुंजेज्जा तम्हा अणुण्णवियपाणभोयणभोई से णिग्गथे, णो अणणुण्णवियपाणभोयणभोइ त्ति दोच्चा भावणा। अहावरा तच्चा भावणा णिग्गथेण उग्गहासे उग्गहितासि एत्तावताव उग्गहणसीलए सिया, केवली बूया—णिग्गथेण उग्गहासि उग्गहितासि एत्तावताव अणोग्गहणसीले अदिण्ण गिण्हेज्जा णिग्गथेण उग्गहासि उग्गहितासि एत्तावताव उग्गहणसीलए सिय त्ति तच्चा भावणा

वापरनेवाला निर्ग्रंथ अदत्त लेनेवाला होता है इस लिये आज्ञा लेकर आहार पानी वापरना यह दूसरी भावना तीसरी भावना यह है कि साधु को अवग्रह मांगते प्रमाण सहित अवग्रह लेना क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि प्रमाण बिना अवग्रह लेनेवाला निर्ग्रंथ अदत्त लेनेवाला हो जावे इस लिये प्रमाण सहित अव

अवग्रह याचने वाला सि० होवे त्ति० ऐसा त० तीसरी भा० भावना अ० अथ अ० अपर च० चौथी भा० भावना णि० साधु उ० अवग्रह उ० याचते अ० बारम्बार उ० अवग्रह याचने वाला सि० होवे के० केवल ज्ञानीने वू० कहा णि० साधु को उ० अवग्रह उ० याचते उ० बारम्बार अ० अवग्रह नहीं याचने वाला अ० अदत्त गि० ग्रहण करे णि० साधु उ० अवग्रह उ० ग्रहण करते अ० बारम्बार उ० अवग्रह याचने वाला सि० होवे त्ति० ऐसा च० चौथी भावना अ० अथ अ० अपर प० पंचमी भा० भावना अ० विचार कर मि० परिमित उ० अवग्रह भा० याचने वाला स० से णि० साधु सा० समान धर्मी में णो० नहीं अ०

अहावरा चउत्था भावणा—णिग्गथेण उग्गहंसि उग्गहियंसि अभिक्खणं (२) उग्गहणसीलए सिया, केवली बूया—णिग्गथेण उग्गहंसि उग्गहियंसि अभिक्खणं (२) अणोग्गहणसील अदिण्णं गिण्हेज्जा णिग्गंथे उग्गहंसि उग्गहियंसि अभिक्खणं (२) उग्गहणसीलए सिय त्ति चउत्था भावणा। अहावरा पंचमा भावणा अणु-

ग्रह लेना यह तीसरी भावना चतुर्थी भावना यह है कि साधु को अवग्रह मांगते बारम्बार हद बांधते रहना क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि बारम्बार हद नहीं बांधनेवाला पुरुष अदत्त लेनेवाला होता है, (होजाय) इस लिये बारम्बार हद बांधनेवाला होना पंचमी भावना यह है कि विचार पूर्वक अपने साधर्मी की पास से

बिना विचारे मि० परिमित उ० अवग्रह जा० याचन वाला के० केवल ज्ञानने क० कहा अ० बिना विचारे मि० परिमित उ० अवग्रह जा० याचने वाला से० वे भि० साधु सा० समान धर्मी में अ० बिना दिया उ० ग्रहण करेगा अ० विचार कर परिमित उ० अवग्रह याचने वाला से० वे भि० साधु सा० समान धर्मी में णो० नहीं अ० बिना विचारे मि० परिमित उ० अवग्रह जा० याचने वाला प० पंचमी भा० भावना ए० इस तरह म० महाव्रत स० सम्यक् जा० यावत् आ० आज्ञासे आ० आराधित भ० होवे त० तीसरा म० महाव्रत ॥ ४२ ॥ अ० अथ अ० अपर च० चतुर्थ म० महाव्रत प० पच्चक्खता हूं स० सर्व मे

वीइ मितोग्गहजाई से णिग्गंथे साहम्मिएसु णो अणणुवीइ मिउग्गहजाई कथली बूया—अणणुवीइ मिउग्गहजाई से णिग्गंथे साहम्मिएसु अदिण्ण उगि ण्हेज्जा, अणुवीइ मितोग्गहजाई से णिग्गंथे साहम्मिएसु णो अणणुवीइ मितोग्ग हजाई पचमा भावणा एत्तावताव महव्वए सम्म जाव आणाए आराहिते आवि भवति तच्च महव्वय ॥ ४२ ॥ अहावर चउत्थ महव्वय पच्चक्खामि सव्वं मेहु

परिमित अवग्रह मांगना क्यों कि केवली कहते हैं कि वैसा नहीं करनेवाला निर्ग्रंथ अदत्त लेनेवाला होजाय इस लिये साधर्मी की पास से भी विचार कर परिमित अवग्रह मांगना परंतु अपरिमित अवग्रह मांगना नहीं इन भावनाओं से महाव्रत अच्छी तरह से आज्ञानुसार आराधित होता है यह तीसरा महाव्रत ॥ ४२ ॥

मेथु[न] से० इस प्रकार दि० देवता संबंधि मा० मनुष्य संबंधि ति० तिर्यंचयोनि संबंधि णे० नहीं स० स्वय मे मैथुन केलिये ग० जावे त० यह अ० अदत्तदान की व० वक्तव्यता मा० कहना जा० यावत् वो० वमता हूं त० उसकी इ० यह प० पांच भा० भावना भ० होवे त० तहां इ० यह प० प्रथमा भा० भावना णो० नहीं णि० साधु अ० बारम्बार इ० स्त्री की क० कथा क० कहने वाला सि० होवे के० केवल ज्ञानीने बू० कहा णि० साधु को अ० बारम्बार इ० स्त्री की क० कथा क० करते हुवे स० शान्ति भेदसे

ण से दिव्वं वा, माणुसं वा, तिरिक्खजोणियं वा, णेव सयं मेहुणं गच्छे, तं चेव अदिण्णादाण वत्तव्वया भाणियव्वा जाव वोसिरामि । तस्सिमाओ पंच भावणा ओ भवंति तत्थिमा पढमा भावणा णो णिग्गंथे अभिक्खणं २ इत्थिणं कहं कहइत्तए सिया केवली बूया–णिग्गंथेणं अभिक्खणं २ इत्थीणं कहं कहमाणे संतिभेदा, संतिविभंगा संतिकेवलिपण्णत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा तम्हा णो णि

चौथा महाव्रत, सर्वथा प्रकार मैथुन का त्याग करता हूं देव, मनुष्य और तिर्यंच संबंधि मैथुन यावज्जीव मन, वचन और काया से सेवुं नहीं, सेवाउं नहीं और सेवनेवाले को अच्छा जानूंगा नहीं, गत पाप के प्रायश्चित्त युक्त आगामी कालके पाप का त्याग करता हूं इस महाव्रत का रक्षण के लिये पांच भावना है पहिली भावना यह है कि साधु को बारम्बार स्त्री की कथा करना नहीं, क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि

सं० शान्ति भंगसे सं० शान्ति के० केवलि प० प्ररूप्या धर्म से भं० भ्रष्ट होवे त० इसलिये णो० नहीं णि० साधु का अ० वारंवार इ० स्त्रीकी क० कथा क० करने वाला सि० होवे त्ति ऐसा प० प्रथमा भा० भावना अ० अथ अ० अपर दो० दूसरी भा० भावना णो० नहीं णि० साधु इ० स्त्री के म० मनोहर इं० इन्द्रियों आ० देखने वाला णि० चिंतवने वाला सि० होवे के० केवलीने वु० कहा णि० साधु म० मनोहर इं० इन्द्रियों को आ० देखते णि० चिन्तवते सं० शांतिभेद सं० शान्ति विभग जा० यावत् भ० धर्म से भ्र० पडे णो० नहीं णि० साधु इ० स्त्री की मॅ० मनोहर इ० इन्द्रियों आ० देखने वाला णि० चिंतवने वाला सि० होवे

ग्गथे अभिक्खणं २ इत्थीण कह कहएसियात्ति पढमा भावणा। अहावरा दोच्चा भावणा—णो णिग्गथे इत्थीण मणोहराइ इंदियाइ आलोइत्तए णिज्झाइत्तए सिया केवली बूया णिग्गथेण मणोहराइ इंदियाइ आलोएमाणे णिज्झाएमाणे सतिभेदा सतिविभगा जाव धम्माओ भसेज्जा णो णिग्गथे इत्थीण मणोहराइ इंदियाइ आलोइत्तए णिज्झाइत्तए सिया त्ति दोच्चा भावणा। अहावरा तच्चा भावणा णो

बारम्बार स्त्री की कथा करने से साधुपना से तथा केवली भाषित धर्म से भ्रष्ट होवे, इस लिये साधु को स्त्री की कथा बारम्बार करना नहीं दूसरी भावना यह है कि साधु को स्त्रीयों की मनोहर इन्द्रियों देखना चिन्तवना नहीं क्योंकि केवलज्ञानी कहते हैं कि ऐसा करने से, शांतिभंग होने से, धर्म भ्रष्ट होवे, इस

चि० एसा दो० दूसरी भा० भावना अ० अथ अ० अपर त० तीसरी भा० भावना णो० नहीं णि० साधु इ० स्त्रीके पु० पूर्वरत पु० पूर्व की० क्रीडा सु० याद करने वाला सि० होवे के० केवली ज्ञानीने बू० कहा णि साधु को इ० स्त्री का पु० पूर्वरत पु० पूर्वक्रीडा स० याद करते सं शांति भेदसे जा० यावत भ० भ्रष्ट होवे णो० नहीं णि० साधु पु० पूर्वरत पु पूर्वक्रीडा स० यादकरने को सि होवे चि० ऐसा त० तीसरी भा० भावना अ० अथ अ० अपर च० चौथी भा० भावना ण० नहीं अ० बहुत पा पान भो० भोजन भो० खाने वाला से० वे णि० साधु णो० नहीं प० पानी जैसा र० रसको भो० खाने वाला के०

णिग्गथे इत्थीण पुव्वरयाइ पुव्वकीलियाइ सुमरित्तए सिया केवली बूया—णिग्ग थेणं इत्थीण पुव्वरयाइ पुव्वकीलियाइं सरमाणे सतिभेया जाव भसेज्जा णो णि ग्गंथे पुव्वरयाइ पुव्वकीलियाई सरित्तए सियत्ति तच्चा भावणा । अहावरा चउत्था भावणा—णातिमत्तपाणभोयणभोई से णिग्गथे णो पणियरसभोयणभोई के वली बूया—अतिमत्तपाणभोयणभोई से णिग्गथे पणियरसभोयणभोई य-

लिये साधु को स्त्रीयों की मनोहर इन्द्रियों देखना नहीं यह दूसरी भावना तीसरी भावना यह है कि साधु को स्त्रीयों साथ पहिले की हुइ क्रीडा याद करना नहीं, क्योंकि केवलज्ञानी फरमाते हैं कि पूर्व कृत क्रीडा याद करने से शांति का भंग होता है जिस से धर्म भ्रष्ट होजाय इस लिये पूर्वकृत क्रीडा का स्मरण करना

केवल ज्ञानीने वू० कहा भ० विशेष पा० पान भोजन खाने वाला स० मे नि० साधु प पानी जैसे रस वाला भो० भोजन खाने वाला नि० ऐसे स शांति भेदसे जा० यावत् भं० भ्रष्ट होवे णो० नहीं भ० अधिक पान भोजन खानेवाला से० वे नि० साधु प० पानीयरस जैसा भोजन खाने वाला त्ति० ऐसा च० चौथी भा० भावना भ० अथ भ० अपर पं पंचमी भा० भावना णो० नहीं नि० साधु इ० स्त्री प० पशु पं० नपुसक सं० युक्त स० शयनासन से० सेवने को सि होवे के० केवलज्ञानीने वू० कहा नि० साधु इ० स्त्री प पशु प० नपुसक स० युक्त स० शयनासनसे० सेवते स० शांतिभेद जा० यावत् भ० भ्रष्ट होवे णो०

त्ति सातिभेदा जाव भंसेज्जा णो तिमत्तपाणभोयणभोई से णिग्गंथे णो प णियरसभोयणभोइ त्ति चउत्था भावणा । अहावरा पंचमा भावणा णो णिग्ग थेण इत्थीपसुपंडगसंसत्ताइं सयणासणाइ सेवित्तए सिया, केवली बूया णि ग्गथेण इत्थीपसुपडगससत्ताइ सयणासणाइं सेवमाणे सतिभेया जाव भ

नहीं यह तीसरी भावना चौथी भावना यह है कि साधु को अधिक खान पान वापरना नहीं वैसे ही सरवे रसवाले खानपान वापरना नहीं क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि अधिक तथा सरता खान पान भोगवने से शांति का भंग होवे, जिस से धर्मभ्रष्ट होजाय इस लिये साधु को अधिक तथा सरता रसवाला खान पान भोगवना नहीं यह चौथी भावना पंचमी भावना यह है कि साधु को स्त्री, पशु तथा नपुंसक

नहीं णि साधु इ० स्त्री पशु नपुंसक न० युक्त स० शयनासन से० सेवने को सि० होवे चि० एसा पं०पंचमी भावना ए० इस तरह म० महाव्रत स० सम्यक् का० काया से आ० आराधित भ० होवे च० चौथा भ० पूज्य म० महाव्रत ॥ ८२ ॥ अ० अथ अ० अपर प पचमा भं० पूज्य म० महाव्रत स० सर्व प० परिग्रह का प० प्रत्याख्यान करताहूं से वे अ० अल्प ब० बहुत अ० छोटा थू स्थूल चि० सचित्त अ० अचित्त ण नहीं स० स्वयं प० परिग्रह गि० ग्रहण करे णे० नहीं अ० अन्य की पास प० परिग्रह गि० ग्रहण

सेज्जा णो णिग्गंथे इत्थीपसुपडगससत्ताइं सयणासणाइं सेविचए सिय त्ति प समा भावणा एत्तावताव महव्वए सम्मं काएण जाव आराहित यावि भवति च उत्थ भंते महव्वयं ॥ ४३ ॥ अहावर पचमं भंते महव्वयं सव्वं परिग्गहं पच्च क्खामि से अप्पं वा, बहुं वा, अणुं वा, थूलं वा, चित्तमंतं वा, अचित्तमंतं वा, णेव सयं परिग्गहं गिण्हेज्जा णेवण्णेणं परिग्गहं गिण्हावेज्जा अण्णंपि परिग्गहं गि

वाले शैय्या, आसन, भोगवना नहीं क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि वैसे शैय्या आसन सेवते शांतिभंग होने से धर्म भ्रष्ट होवे इस लिए साधु को स्त्री, पशु नपुंसकवाले शैय्यासन सेवना नहीं इस तरह महाव्रत अच्छी तरह काया से स्पर्शित यावत् आराधित होता है यह चौथा महाव्रत ॥ ८२ ॥ पंचमा महाव्रत सर्व परिग्रह को त्यागता हूं थोडा बहुत, छोटा बडा, सजीव निर्जीव मैं ग्रहण करूंगा नहीं, दूसरे से

करावे अ० अन्य को भी प० परिग्रह गि० ग्रहण करते को ण० नहीं स० अच्छा जा० जाने जा० यावत् वो० वोसि रावे त० उसकी इ० यह पं पांच भा० भावना म है, त० तहां इ० यह प० प्रथमा भा० भावना सो० कर्ण से जी० जीव म० मनोज्ञ अ० अमनोज्ञ स० शब्द सु० सुने म० मनोज्ञ अमनोज्ञ स शब्द में णो० नहीं स० आसक्त होवे णो नहीं र रक्त होवे णो० नहीं गि० गृद्ध होवे णो० नहीं मु० मुग्ध होवे णो नहीं अ० तल्लीन होवे णो नहीं वि० विनिर्घात आ० करे के० केवल ज्ञानीने बू० कहा णि० साधु म० मनोज्ञ अमनोज्ञ स० शब्द में स० आसक्त होते जा० यावत् वि० विवेक भ्रष्ट होते स० शांति भेद

ण्हंत ण समणुजाणज्जा जाव वोसिरामि तस्सिमाओ पंच भावणाओ भवंति त त्थिमा पढमा भावणा सोतेण जीवो मणुण्णामणुण्णाइ सद्दाइ सुणइ मणुण्णा मणुण्णेहिं सद्देहिं णो सज्जेज्जा, णो रज्जेज्जा, णो गिज्झेज्जा, णो मुज्झेज्जा, णो अज्झो ववज्जेज्जा णो विणिग्घाय मावज्जेज्जा केवली बूया—णिग्गंथे ण मणुण्णा मणुण्णेहिं स द्देहिं सज्जमाणे जाव विणिग्घाय मावज्जमाणे संतिभेया संतिविभंगा संतिकेव

ग्रहण कराऊंगा नहीं और ग्रहण करनेवाले को अच्छा जानूंगा नहीं यावत् वैसा स्वभाव को वोसिराता हूं इस महाव्रत की पांच भावना है जिस में से पहिली भावना यह है कि कर्ण से अच्छे बुरे शब्द सुनते उस में आसक्त, रक्त, गृद्ध, मोहित, तल्लीन के विवेक भ्रष्ट बनना नहीं, क्योंकि केवलज्ञानी कहते हैं कि ऐसे

से स० शान्ति विभग से सं० शान्ति के० केवलिप्ररूपाधर्म से भ० भ्रष्ट होवे ण० नहीं स० शक्य ण० नहीं सो० सुनने को शब्द सो० श्रोत विषय को आ० आये हुवे रा० रागद्वेष से जे०जो त०उसमें सं० उ सको भि० साधु प० छोडदेवे सो० कर्ण से जी० जीव म० मनोज्ञ अमनोज्ञ स० शब्द सु० सुने प० प्र थमा भा० भावना अ० अब अ० अपर दो० द्वितीया भा० भावना च० चक्षुसे जी० जीव म० मनोज्ञ अम नोज्ञ रू० रूप पा० देखे म० मनोज्ञ अमनोज्ञ रू० रूप में णो० नहीं स० आसक्त होवे णो० नहीं र रक्त

लि पण्णत्ताओ धम्माओ भसेज्जा ॥ गाथा ॥ ण सक्का ण सोउं सद्दा सोयविसोय मागता रागदोसाउ जे तत्थ त भिक्खू परिवज्जए (१) ॥ सूत्र ॥ सोयओ जी वो मणुण्णामणुण्णाइं सद्दाइं सुणेति पढमा भावणा अहावरा दोचा भावणा च क्खूओ जीवो मणुण्णामणुण्णाइं रूवाइं पासइ मणुण्णामणुण्णेहिं रूवेहिं णो स ज्जेज्जा णो रज्जेज्जा जाव णो विणिग्घाय मावज्जेज्जा केवली बूया मणुण्णामणुण्णेहिं

होवे शान्ति का भंग होनेसे केवली भाषित धर्मसे भ्रष्ट होजाय कर्णमें आते हुवे शब्दोंको संवित तो नहीं कर सकते हैं परंतु इस में जो रागद्वेष का परिहार करे वह ही साधु है इस तरह कर्ण से अच्छे बुरे शब्दों सुनकर रागद्वेष करना नहीं यह प्रथमा भावना द्वितीया भावना यह है कि चक्षु से जीवको अच्छेबुरे रूप देखते उसमें आसक्त यावत् विवेक भ्रष्ट नहीं बनना, क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि ऐसे होते शान्ति भंग होने से धर्म

होय जा० यावत् णा० नहीं वि० विवक विकल मन के० केवल ज्ञानीने वु० कहा म० मनोज्ञ अमनोज्ञ रू० रूप में स० आसक्त होत र० रक्त होते जा० यावत् वि० विवेक विकल बनते स० शान्ति भगसे ज० यावत् भ० भ्रष्ट होय ण० नहीं स० शक्य रू० रूपका अ० नहीं देखना च० चक्षुवि पय का आ० आया हुवा रा० रागद्वेष स० जं० जो त० उसमें त० उसे भि० साधु प० छोड च० चक्षुसे जी० जीव म० मनोज्ञ अमनोज्ञ रू० रूप पा० देखता है दो० द्वितीया भावना अ० अथ अ० अपर त० तृतीया भा० भावना घा० घ्राण स जा० जीव म० मनोज्ञ अमनोज्ञ ग० गंध अ० सुंघ म० मनोज्ञ अमनोज्ञ

रूवाहिं सज्जमाणे रज्जमाणे जाव विणिग्घाय मावज्जमाणे संतिभेया संतिविभंगा जाव भसज्जा ॥ गाथा ॥ ण सक्का रूव मदट्ठु चक्खुविसय मागयं रागदोसाउ जं तत्थ तं भिक्खू परिवज्जए ॥ सूत्र ॥ चक्खूओजीवा मणुण्णामणुण्णाइं रूवाइं पासाति दोच्चा भावणा । अहावरा तच्चा भावणा घाणतो जीवा मणुण्णामणुण्णाइं गंधाइं अग्घायइ मणुण्णामणुण्णेहिं गंधेहिं णो सज्जेज्जा णो रज्जेज्जा जाव णो

भ्रष्ट होजाता है चक्षु में रूप पडते उस को रुंधित तो नहीं कर सकते हैं परन्तु वहां रागद्वेष का परिहार कर सकते हैं इस तरह चक्षु से रूप देख कर जीवों को रागद्वेष करना नहीं यह द्वितीया भावना तृतीया भावना यह है कि घ्राण से अच्छी बुरी गंध सूंघते आसक्त यावत् विवेक भ्रष्ट बनना नहीं क्यों कि

ग० गंधमें णा० नहीं स० आसक्त होवे णो० नहीं र० रक्त होवे जा० यावत् वि० विवेक विकल बने के० कवल ज्ञानीन बू कहा णि० साधु म० मनोज्ञ अमनोज्ञ गं० गंध में स० आसक्त र० रक्त जा० यावत् वि विवेक विकल होवे सं० शान्ति भदसे स० शान्ति विभग से जा यावत् भं० भ्रष्ट होवे णो० नहीं स० शक्य गं० गंध अ नहीं सुंघना णा० नासिका के विषय में आ० आइ हुइ रा० रागद्वेष से जे० जा भ० यहां त० उसे भि० साधु प० छोडे घा० घ्राणसे जी० जीव म० मनोज्ञ अमनोज्ञ ग० गंध अ० सूंघ त० तृतीया भा० भावना अ० अथ अ० अपर च० चौथी भा० भावना जि० जिव्हा से जी० जीव

विणिग्घायमा वज्जेज्जा केवली बूया णिग्गंथेणं मणुण्णामणुण्णेहिं गंधेहिं सज्जमाणे रज्जमाणे जाव विणिग्घाय मावज्जेमाणे संतिभेदा संतिविभगा जाव भंसेज्जा ॥ गाथा ॥ णा सक्का गंधमग्घाउ णासाविसय मागय ॥ रागदोसाउ जे तत्थ तं भिक्खू परि वज्जए ( ३ ) घाणओ जीवो मणुण्णामणुण्णाइ गंधाइ अग्घायति तच्चा भावणा ॥ अहावरा चउत्था भावणा जिब्भाओ जीवो मणुण्णामणुण्णाइं रसाइ अस्सा

केवलज्ञानी कहते हैं कि ऐसे होवे शान्तिभग होने से धर्म भ्रष्ट बनजाता है आती हुइ गंध तो रूकती नहीं है परन्तु उस में रागद्वेष का परिहार करनेवाला ही साधु है इस तरह घ्राण से अच्छी बुरी गंध लेता रागद्वेष करना नहीं यह तृतीया भावना चतुर्थी भावना यह है कि अच्छे बुरे रस का स्वाद लेवे उस में आस

म० मनोज्ञ अमनोज्ञ र० रसको आ आस्वादे म० मनोज्ञ अ० अमनोज्ञ र० रसमें णो० नहीं स रक्त होवे ना०पावत् वि० विवेक विकल बने के० केवल ज्ञानीने बू० कहा णि० साधु म०मनोज्ञ अमनोज्ञ र० रसमें स आसक्त होते जा० यावत् वि० विवेके विकल मनन म० शान्ति भेदसे स० शान्ति विभंगसे जा० यावत् भं० भ्रष्ट होव णो नहीं स शक्य र रस म नहीं स्वादलेने का जी० जिव्हा विषय को आ०आया हुवा रा०रागद्वेष से जे०जो० त०वहां सं०उसे भि०साधु प०छोडे जी०जिव्हासे जी०जीव म०मनोज्ञ अमनोज्ञ र० रस आ० आस्वादते है च० चौथी भा० भावना अ अथ अ० अपर पं० पंचमी भा० भाव

देति मणुण्णामणुण्णेहिं रसेहिं णो सज्जेज्जा जाव णो विणिग्घाय मावज्जेज्जा केवली बूया णिग्गथेणं मणुण्णामणुण्णेहिं रसेहिं सज्जमाणे जाव विणिग्घाय मावज्जमाणे सतिभेदा सतिविभगा जाव भसेज्जा ॥ गाथा ॥ णो सक्का रस मणासतु जीहाविसय मागय राग दोसाउ जे तत्थ त भिक्खू परिवज्जए ॥ जीहाओ जीवो मणुण्णा मणुण्णाइ रसाइ अस्सादति चउत्था भावणा । अहावरा पचमा भावणा मणुण्णाम

क यावत् विवेक भ्रष्ट मनता नहीं क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि वैसा होते शान्ति भग होने से धर्म भ्रष्ट मनता है आया हुवे रस रूक सकता तो नहीं है परन्तु उसमें रागद्वेष का परिहार करनेवाला यति है ऐसे जिव्हासे अच्छे बुरे रसका स्वाद लेवे रागद्वेष करना नहीं यह चतुर्थी भावना पचमी भावना यह है कि अच्छे बुरे

ना म० मनोज्ञ अमनोज्ञ फा० स्पर्श प० वेदे म० मनोज्ञ अमनोज्ञ फा० स्पर्श में णो० नहीं स० आसक्त होवे णो० नहीं र० रक्त होवे णा० नहीं गि० गृद्ध होवे णा० नहीं मु० मुग्ध होवे णो० नहीं अ० तल्लीन बने णो० नहीं वि० विरक्त भष्टपन क० केवल ज्ञानीने वू० कहा णि० साधु म० मनोज्ञ अमनोज्ञ फा० स्पर्श स० आसक्त हाव ना० यावत् वि० विरक्त भ्रष्ट होवे सं० शान्ति भेदसे म० शान्ति भंगसे सं० शान्ति के० केवलि भरू पा धर्म स भ० भ्रष्ट होवे णो० नहीं स० शक्य फा० स्पर्श प० नहीं वे० वेदन को फा० स्पर्श विषय को आ० आया हुवा रा० रागद्वेष में अ० भो स० सदा सं० वसे भि० साधु प० छोडे फा० स्पर्श से० सी० सी

ण्णाइं फासाइं पडिसंवेदेति मणुण्णामणुण्णेहिं फासेहिं णो सज्जेज्जा, णो रज्जेज्जा, णो गिज्झज्जा, णो मुज्झज्जा, णो अज्झोववज्जेज्जा, णो विणिग्घाय मावज्जेज्जा केवली बूया–णिग्गंथेण मणुण्णामणुण्णेहिं फासेहिं सज्जमाणे जाव विणिग्घाय मावज्जमाणे संतिभेदा, संतिविभंगा, संतिकेवलिपण्णत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा ॥ गाथा ॥ णो सक्का फास ण वेदेतु फासविसय मागय राग दोसाउ जे तत्थ त भिक्खू परि-

स्पर्श अनुभवत उस में आसक्त यावत् विरक्त भष्ट बनना नहीं क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि वैसा होने से शांतिभंग होन से केवली प्ररूपा धर्म से भ्रष्ट होता है आते हुवे स्पर्श को रूक सकता नहीं है, परंतु उस में रागद्वेष नहीं करनेवाला ही साधु है इस तरह स्पर्शेन्द्रिय से अच्छे बुरे स्पर्श का अनुभव कर रागद्वेष करना नहीं यह पंचमी भावना इस तरह महाव्रत अच्छी तरह काया से [illegible]

म म मनोज्ञ अमनोज्ञ का स्पर्श प० वेदे पं० पंचमा भा० भावना ए० यह म० महाव्रत स० सम्यक् का० काया से फा० स्पर्शित पा० पालित ती पारकिया हुवा कि० कीर्तित अ० अवस्थित आ० आज्ञा में आ० आराधित भ० होवे प० पंचमा भं० हेपूज्य म० महाव्रत ॥ ४४ ॥ इ० इन म० महाव्रत की प० पचीस भा भावना से स०संपन्न अ०अनगार अ० यथाश्रुत अ०यथाकल्प अ० यथामार्ग को स०सम्यक् प्रकार का० कायासे फा०स्पर्शा पा०पाला ती०पारकिया कि०कीर्तित आ आज्ञासे आ० आराधित भ० होवे ॥४५॥

वज्जए ( ५ ) फासओ जीवो मणुण्णामणुण्णाइ फासाइ पडिसंवेदेति पंचमा भावणा एत्तावताव महाव्वते सम्म काएण फासिए, पालिए, तीरिए किट्टिए, अहिट्ठिते, आणाए आराहिये यावि भवति पंचम भंते महव्वय ॥ ४४ ॥ इच्चेतेसिं महव्व तेसिं पणवीसाहिंय भावणाहिं संपण्णे अणगारे अहासुय, अहाकप्प, अहामग्गं, स म्म काएण फासित्ता, पालित्ता, तीरित्ता, किट्टित्ता, आणाए आराहियावि भवति ॥ ४५ ॥ इति भावणाज्झयण चउवीस सम्मत्तं

* *

हुवा, कीर्तित, अवस्थित और आज्ञा से आराधित होवे यह पंचमा महाव्रत ॥ ४४ ॥ उक्त पांच महाव्रत की पचीस भावना से संपन्न अणगार सूत्र, कल्प तथा मार्ग को यथार्थपने काया से स्पर्शा करसकता है, पालसकता है, पूर्ण कर सकता है, कीर्तित कर सकता है और आज्ञा का आराधक भी बन सकता है ॥ ४५ ॥ श्री श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के चरित्र तथा पांच महाव्रत की पचीस भावना युक्त यह भावनारूप चतुर्विंशतितम अध्ययन संपूर्ण हुवा आगे अनित्यादिक पांच अधिकार का पंचविंशतितम अध्ययन करते हैं

# ॥ विमुक्ति नामक पचविंशतितम मध्ययनम् ॥

अ० अनित्य भा आवास में उ० जाते हैं जं० जीवों प० विचार करो सु० सुनकर इ० यह प० प्रधान वि० छोडे वि० विज्ञ अ० गृहवास म० निडर आ० आरंभ परिग्रहको च० छोड ॥१॥ त० तथागत भि० साधु अ० अनन्तमें स संयमी अ अद्वितीय वि० विद्वान च० विचरते का ए० एषणा में हु० दु स्व सहते हैं वा वाचा स अ० उपन्न करे म० मनुष्य रा० ग्राममें स० संग्राम में रहा हुवा कु० हाथी त तथा प्रकार के म मनुष्योंमें ही० हिलना कराया हुवा स शब्द फा० स्पर्श फ कठोर उ० उपजावे ति० स

अणिच्चमावास मुवेंति जंतुणो, पलोयए सुच्च मिद अणुत्तरं, विऊसिरे विन्नु अगा रबंधणं, अभीरू आरंभपरिग्गहं चए ॥ १ ॥ तहागअ भिक्खु मणत संजय, अ णेलिस विन्नु चरत मसणं, तुदंति वायाहिं अभिद्दय णरा सरेहिं संगामगय व कुंजर(२)तहप्पगारेहिं जणेहिं हीलिए, ससद्दफासा फरुसा उदीरिया, तितिक्खए णा

प्रथम अनित्यत्वाधिकार कहते हैं—अहो विज्ञ पुरुष ! अनित्य एकेन्द्रियादि गति में जंतु उत्पन्न होते हैं, ऐसा प्रधान जिन प्रवचन सुनकर विचार करें और अगाररूपी बंधन छोडकर अभीरु बनकर परिग्रह रंभ से अपनी आत्मा का बचावें ॥ १ ॥ द्वितीय धैर्यताधिकार जैसे पर्वत वायु से कम्पित नहीं होता है, वैसे ही सर्व, दयालु, उत्कृष्ट और विज्ञ भिक्षुओं को, कोइ मनुष्य संग्राम में रहाहुवा हस्ती की मुवाफिक वचन से तथा प्रहार से मारे, या अपकीर्ति बोले, या कठोर शब्दादिक से पीडित करे तो उन सब को वे

हन करे णा० ज्ञानी अ० अखुष्ट चे० मन से गि० पर्वत महश वा० वायु से स० चलायमान ॥ २ ॥ उ० उपेक्षा करता हुआ कु० कुशल सं० रहे अ० अप्रिय दुःख त० त्रस था० स्थावर दु० दु खी अ० नहीं हण ता हुआ स० सर्व स० सहन करने वाला म० महामुनी त० वैसे से० वे सु० सुसाधु स समाधिवत वि० वि द्वान ण नम्र ध० धर्मपद अ अनुत्तर वि० तृष्णा रहित मु० साधु को झा० ध्यान धारी स० समाधिवत अ० अग्नि शिखाकी माफक त० तजस्वी त० तप प० प्रज्ञा ज० यश व० बढता है दि० सर्वज्ञ अ० अ

णी अखुद्ध चेतसा गिरिव्व वातेण ण सपवेवए ( ३ )॥ २ ॥ उवेहमाणे कुसले

हिं सवसे अकंतदुक्खा तस थावरा दुही अलूसए सव्वसहे महामुणी तहाहि स

सुस्समणे समाहिए ( ४ ) विदू णते धम्मपय अणुत्तर विणीयत ण्हस्स मु

णिस्स झायओ समाहियस्स ग्गिसिहाव तेयसा तवोय पण्णा य जसो य वड्ढति

( ५ ) दिसोदिसि णताजिणे ण ताइणा महव्वया खेमपदा पवेदिता महागुरू णि

अदृष्टाशय से सहन करे परंतु चलायमान होवे नहीं ॥ २ ॥ भावार्थ—जो पुरुष विज्ञपुरुषों की साथ मध्यस्थ भाव से रहकर दुःखी त्रस स्थावर में से किसी जीव की घात न करे वह ही क्षमानिधि महामुनि उत्तम साधु कहा गया है विद्वान, धर्मपदानुचारी, तृष्णारहित निर्मल ध्यानध्यानेवाले, समाधिवाले मुनि के तप, प्रज्ञा और यश, अग्नि, शिखानुसार प्रकाशते हैं जीवों की रक्षा करनेवाले अनंत जिनेश्वर

मत जि० जिन छा० ज्ञाता म० महाव्रत खे० खेमप्रद प० कहाहै म० महागुरु नि० कर्म को दूर करने वाला उ० प्रकाश करने वाला त० अन्धकार ते तेज ति० तीनों दिशाको प० प्रकाश करने वाला सि गृहस्थ में भि० साधु अ० अबद्ध प० विचरे अ० संगरहित इ० स्त्रीयों में च० छोडे पू० पूजा को अ० निश्रा विनाका लो० लोक इ० इमत० तैसे प० अन्य ण० नहीं म० स्वीकार करे का० काम गुणोंको पं० पंडित ति० त्रिविध से वि० रहित प० परिज्ञा को आचरने वाला धि० धैर्यवन्त दु० दुःख को सहन करने वाला भि० साधु वि० शुद्ध करे ज० जो म० मैल पु० पहिले किया स० वायुसे प्रेरित रु० चांदिका मैल की मु

सयरा उदीरिता तम व तेऊ तिदिस पगासया (६) सितेहिं भिक्खू असितो परिव्वए असज्ज मित्थीसु चएज्ज पूअण अणिस्सिओ लोग मिणं तहा पर ण मज्जनि कामगुणेहिं पंडिए (७) तिहा विमुक्कस्स परिण्ण चारिण्णो धितीमतो दुक्खखमस्स भि भिक्खुणो विसुज्झए जासि मल पुरेकडं समीरिय रुप्पमल व जोइणा (८) ॥३॥

ऐसा भगवत कहे हैं कि महाव्रत सब को क्षेम के करनेवाले हैं वे ही महागुरु कर्म के हरण करनेवाले और प्रकाश करनेवाले हैं, जैसेकी तेजसे सर्वत्र अन्धकार का नाश होता है साधु संसार में रहकर भी त्यागीरूपे विचरते हैं और स्त्रीयों से दूर रहकर, मान को छोडकर इसलोक तथा परलोक की निश्रा छोड कर, काम गुणों को सेवते नहीं हैं त्रिविधे मुक्त साधु परिज्ञा धारण करके धैर्यता से सर्व दुःख सहन करते हैं

वाफीक नो० अग्निसे ॥ ३ ॥ से० वे प० परिज्ञा समय में वँ० प्रवर्ते णि० शंका रहित उ० मैथुन धर्म से धर्म से निवर्तवाले च विचरे भु० सर्प जु० जीर्ण त्वक् (कांचली) ज० जैसे ज० छोडे वि० मुक्तव से० वे दु० दुःखावली मा साधु ॥ ४ ॥ ज जिसको आ० कहते है ओ ओघ स० पानी अ० नहीं पारहो सके ऐसा म० महान समुद्र की सरख भु० भुजासे इ० दुस्तर अ० ऐसेही प० नाना प० पंडित से० वे मु० मुनी अं० अन्तकर्ता त्ति एसा वु० कहागया है ज० जैसे बं बधाया इ० यहा मा० मनुष्यों से

सेहु प्परिण्णा समयमि वट्टइ णिरासते उवरयमेहुण चरे, भुजगमे जुण्णतय जहाजहे विमुच्चति से दुहसेज माहण (९) ॥ ४ ॥ ज माहुआह सलील अपारग, महासमुद्दव भुयाहिं दुत्तर अहेवण परिजाणाहि पंडिए सेहु मुणी अतकडेत्तिवुच्चइ १० जहाहि बद्ध इह माणवेहिं जहाय तेसिं तु विमोक्ख आहिओ, अहातहा बध विमोक्ख जे विऊ

एसे ज्ञानीयों के कर्म रूप मेल नष्ट होता है, जैसे कि अग्नि मे चांदीका मेल चलाजाता है ॥ ३ ॥ भुजंगाधिकारः जैसे सर्प पूर्णीत्वचा ( कांचली ) छोडता है वैसे ही मुनि सदैव सद्बुद्धि युक्त क्रिया करते हैं, मैथुन और तृष्णा से सदैव दूर रहते हैं और दुःखावली का त्याग करते हैं ॥ ४ ॥ समुद्राधिकार -बहुत पानी वाला महासागर भुजासे तीरना जैस मुश्किल है ऐसाही यह संसार समुद्र है एसा जाननेवाला मुनि उसका अंत कर सकता है जैसे यहां मनुष्यों कर्म से बधाते हैं, और इस से मुक्त होते हैं वैसे ही बंध मोक्ष का स्वरूप को जो पहिचानते हैं वे ही संसार का अंत कर सकते है इसलोक में और परलोक में जिस को काइ प्रकार का बंधन नहीं है तथा जो निरालम्बी और अप्रतिबद्ध है वह संसार मार्ग में परिभ्रमण नहीं

ज नेम त० उनको वि० विमोक्ष आ० कहा अ० यथातथ्य व यथ मि० विमोक्ष का ज० जा मि० जा नन वाला म० वे मु० साधु अ० अंतकर्ता सि० ऐसा बु० कहा जाता है इ० इस लो० लोकमें प अन्य य० य दो० दोनों ण० नहीं वि० है बं० बंधन ज जिसका किं किंचिदपि से० वे णि० निरावलम्बी अ० अप्रतिबद्ध क० संसार मार्ग से वि० मुक्तावाहै ✵ ✵

से हु मुणी अतकडेत्ति वुच्चइ ( ११ ) इममि लोए परते य दोसुत्रि, ण विज्जइ बंधण जस्स किंचित्रि, से हु णिरालंबणे अप्पतिट्ठे, कलंकली भावपह विमुच्चइ त्तिवेमि ( १२ ) ॥ ५ ॥ इति विमुत्तिनाम पंचवीस मज्झयण सम्मत्त ✵

करता है यह श्री सुधर्मा स्वामी फरमाते हैं कि अहो जम्बू जैसा मैंने श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी के मुखारविन्द से सुनाहै वैसा ही यह आचारांग प्रथमांग का भाव तेरे प्रत्य कहा यह विमुक्त नामक पची सवा अध्ययन समाप्त हुवा और सदाचार नामक द्वितीय श्रुतस्कन्ध भी समाप्त हुवा ✵ ✵

सदाचार नामको द्वितीय श्रुतस्कन्ध समाप्त

# इति आचारांग सूत्रम् समाप्तम्.

( वि २४४२ आषाढ वदी १ शाशनि )

श्रुतस्कन्ध के अन्त में श्री महावीर स्वामी का जीवन वृत्तान्त कहा है

इस आचारांग सूत्र का अनुवाद करने में मुख्यता में तो राजकोट मे छपे हुवे आचारांग सूत्र की सहायता है, और गौणता में कच्छदेश पावन कर्ता आठ कोटी मोटी पक्ष के परमपूज्य श्री कर्मसिंहजी महाराज के ज्येष्ठ शिष्यवर्य श्री नागचन्द्रजी महाराज के भेजे हुवे धनपतसिंह बाबू वाले आचारांग के और मारवाड देश ( नागोर ) से हसराजजी श्रावक का भेजा हुवा हस्तलिखित आचारांगजी की सहायता ली है उक्त तीनों प्रतो तथा एक हस्तलिखित मेरे पास की प्रतों यों चारों प्रतों से मिलाकर यथामति अनुसार शुद्ध कर पाठ व अनुवाद लिखागया है इस लिये उक्त ग्रन्थ भेजने वाले महाशयों का आभार माना जाता है और नम्र निवेदन किया जाता है कि उपयोग शुन्यता से व दृष्टि दोष से इस में दोष रहा हो उसे शुद्ध करने की कृपा करें,

---

# आचारांग सूत्र की विषयानुक्रमणिका

इत्यानुक्रमणिका

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषि महाराज के सम्प्रदायके बालब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलकऋषिजी ने सीर्फ तीन वर्ष में ३२ ही शास्त्रों का हिंदी भाषानुवाद किया, उन ३२ ही शास्त्रों की १०००-१००० प्रतों को सीर्फ पांच ही वर्ष में छपवाकर दक्षिण हैद्राबाद निवासी राजा बहादूरलाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी ने सब को अमूल्य लाभ दिया है!

## मुख्याधिकारी

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के शुद्धाचारी पूज्य श्री खूबा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य हा तपस्वीजी श्री केवल ऋषिजी महाराज! आप श्रीने मुझे साथ ले महा परिश्रम से हैद्राबाद जैसा बडा क्षेत्र साधुमार्गीय धर्म में प्रसिद्ध किया व धर्मोपदेश से राजाबहादुर दानवीर लाला सुखदेव सहायजी ज्वाला प्रसादजी को धर्मप्रेमी बनाये उनके प्रतापसे ही शास्त्रोद्धारादि महा कार्य हैद्राबाद में हुए इस लिये इस कार्य के मुख्याधिकारी आपही हुए जो जो भव्य जीवों इन शास्त्र द्वारा महालाभ प्राप्त करेंगे व आपही के कृतज्ञ होंगे



## उपकारी महात्मा

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के कविवरेन्द्र महा पुरुष श्री तिलोक ऋषिजी महाराज के पाटवीय शिष्य वर्य, पूज्य पाद गुरु वर्य श्री रत्नऋषिजी महाराज!

आप श्री की आज्ञासे ही शास्त्रोद्धार का कार्य स्वीकार किया और आप के परमाशिर्वाद से पूर्ण कर सका इस लिये इस कार्य के परमोपकारी महात्मा आप ही हैं आप का उपकार केवल मेरे पर ही नहीं परन्तु जो जो भव्यों इन शास्त्रोंद्वारा लाभ प्राप्त करेंगे उन सबपर ही होगा

कच्छ देश पावन कर्ता मोटी पक्ष के परम पूज्य श्री कर्मसिंहजी महाराज के शिष्यवर्य महात्मा कविवर्य श्री नागचन्दजी महाराज!

इस शास्त्रोद्धार कार्य में आद्योपान्त आप श्री मार्मिक शुद्ध पाठ, हुंडी, गुटका और समय२पर आवश्यकीय शुभ सम्मति द्वारा मदत देते रहनसेही मैं इस कार्य को पूर्ण कर सका इस लिये केवल मैं ही नहीं परन्तु जो जो भव्य इन शास्त्रद्वारा लाभ प्राप्त करेंगे वे सब ही आप के आभारी होंगे





शुद्धाचारी पूज्य श्री खूबा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य, आर्य मुनि श्री चेना ऋषिजी महाराजके शिष्यवर्य बालब्रह्मचारी पण्डित मुनि श्री अमोलक ऋषिजी महाराज! आपने बडे साहस से शास्त्रोद्धार जैसे महा परिश्रम वाले कार्य का जिस उत्साहसे स्वीकार किया था उस ही उत्साह से तीन वर्ष जितने स्वल्प समय में अहर्निश कार्य को अच्छा बनाने के शुभाशय से सदैव एक भक्त भोजन और दिन के सात घंटे लेखन में व्यतीत कर पूर्ण किया और ऐसा सरल बनादिया कि कोई भी हिन्दी भाषा सहज में समज सके, ऐसे ज्ञानदान के महा उपकार तले दबे हुवे हम आप के बडे आभारी हैं

संघकी तर्फ से

अपनी छती ऋद्धि का त्याग कर हैद्राबाद और न्याबादमें दीक्षा धारक बाल ब्रह्मचारी पण्डित मुनि श्री अमोलक ऋषिजीके शिष्यवर्य ज्ञानानंदी श्री देव ऋषिजी वैय्यावृत्यी श्री राम ऋषिजी तपस्वी श्री उदय ऋषिजी और विद्याविलासी श्री मोहन ऋषिजी इन चारों मुनिवरोंने गुरु आज्ञाका बहुमानसे स्वीकार कर आहार पानी आदि सुखोपचार का संयोग मिला दो प्रहर का व्याख्यान, अमगीसे वाताल्प काय दक्षता व समाधि भाव से सहाय दिया, जिस से ही यह महा कार्य इतना शीघ्रता से हमारे पूर्ण सके इस लिये इस कार्य परत्व उक्त मुनिवरों का भी बडा उपकार है





पंजाब देश पावन करता पूज्य श्री सोहन लालजी, महात्मा श्री माधव मुनिजी, शतावधानी श्री रत्नचन्द्रजी तपस्वीजी माणकचन्दजी, कविवर श्री अमी ऋषिजी, सुवक्ता श्री दोलत ऋषिजी व श्री नथमलजी पं श्री जोरावरमलजी कविवर श्री नानचन्दजी मसतिनी सतीजी श्री पार्वतीजी गुणज्ञ सतीजी श्री रंभाजी वोराजी सर्वज्ञ भंडार भीनासरवाले कनीरामजी बहादरमलजी बाँठीया, लीबडी भंडार, कुचेरा भंडार, इत्यादिक की तरफ से शास्त्रों व सम्मति द्वारा इस कार्य को बहुत सहायता मिली है इस लिये इन का भी बहुत उपकार मानते हैं

दक्षिण हैदराबाद निवासी जौहरी वर्ग में श्रेष्ठ दृढधर्मी दानवीर राजा बहादुर लालाजी साहेब श्री सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी!

आपने साधु सेवा के और ज्ञान दान जैसे महा लाभके लोभी बन साधुमार्गीय जैन धर्म के परम माननीय व परम आदरणीय बत्तीस शास्त्रों को हिन्दी भाषानुवाद सहित छपाने का रु २००००, का खर्च कर अमूल्य देना स्वीकार किया और यूरोप युद्धारंभ से सब वस्तु के भाव में वृद्धि होने से रु ४०००० के खर्च में भी काम पूरा होनेका संभव नहीं होते भी आपने उस ही उत्साह से कार्य को समाप्त कर सबको अमूल्य महालाभ दिया, यह आप की उदारता साधुमार्गीयों को गौरव दर्शक व परमादरणीय है!



शोधाना ( काठियावाड ) निवासी धर्म प्रेमी कार्यदक्ष सुज्ञ मणिलाल शिवलाल शेठ! इन्होंने जैन ट्रेनिंग कालेज रतलाम में संस्कृत प्राकृत व अंग्रेजी का अभ्यास कर तीन वर्ष उपदेशक रह अच्छी कौशल्यता प्राप्त की इन से शास्त्रोद्धार का कार्य अच्छा होगा ऐसी सूचना गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज से मिलने से इन को बोलाये इन्होंने अन्य प्रेस में शुद्ध अच्छा और शीघ्र काम होता नहीं देख शास्त्रोद्धार प्रेस कायम किया और प्रेस के कर्मचारियों को उत्साही कार्य दक्ष बना काम लिया तैसे ही भाषानुवाद की प्रेसकॉपी बनाइ यद्यपि यह माह पगार से रहे थे तथापि इन्होंने इस कार्य की सेवा वेतन के प्रमाण से अधिक की इस लिये इनका भी धन्यवाद देते हैं